



CKS

कुम्भ अध्ययन में प्रमाणपत्र कार्यक्रम

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड -1 : कुम्भ की अवधारणा		
इकाई-1	: कुम्भ का अर्थ, अवधारणा एवं पौराणिक आख्यान	04
इकाई-2	: कुम्भ का इतिहास	11
इकाई-3	: कुम्भ और शंकराचार्य	26
इकाई-4	: कुम्भ एवं नागा सम्प्रदाय	34
खण्ड-2 : कुम्भ के विभिन्न परिप्रेक्ष्य		
इकाई-5	: नदियों, मासों एवं पर्वों का महत्व तथा वैज्ञानिकता	40
इकाई-6	: कुम्भ का सांस्कृतिक वैभव	53
इकाई-7	: कुम्भ का सामाजिक परिप्रेक्ष्य	59
इकाई-8	: कुम्भ का आर्थिक परिप्रेक्ष्य	66
खण्ड- 3 : राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता		
इकाई-9	: विविधता में एकता का प्रतीक – कुम्भ	83
इकाई-10	: वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ का महत्व	89
इकाई-11	: आस्था का प्रतीक कुम्भ	94
इकाई-12	: सामाजिक समरसता एवं कुम्भ	114
खण्ड-4 : विभिन्न अखाड़ों एवं सम्प्रदायों का सामान्य परिचय		
इकाई-13	: प्रमुख अखाड़ों का परिचय	119
इकाई-14	: विभिन्न सम्प्रदायों का परिचय	126
इकाई-15	: योग एवं सूर्य नमस्कार	136
इकाई-16	: कुम्भ और ज्ञान परम्परा	163
खण्ड-5 : तीर्थराज प्रयाग और कुम्भ		
इकाई-17	: प्रयाग का माहात्म्य एवं राजसी स्नान	170
इकाई-18	: प्रयागराज की धार्मिक परम्पराएँ	190
इकाई-19	: प्रयाग के ऐतिहासिक एवं धार्मिक दर्शनीय स्थल	197
इकाई-20	: कुम्भ मेला प्रशासन – प्रबन्धन और स्वास्थ्य योजनाएँ	219
खण्ड-6 : कुम्भ पर्व की शाश्वतता		
इकाई-21	: कुम्भ एवं सर्वसमावेशी भारतीय संस्कृति	234
इकाई-22	: भारतीय साहित्य में कुम्भ	245
इकाई-23	: पर्यावरण और कुम्भ	256
इकाई-24	: आध्यात्मिक पर्यटन और कुम्भ	261

CKS
कुम्भ अध्ययन में प्रमाणपत्र कार्यक्रम
उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक :

आचार्य सत्यकाम

कुलपति

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति :

प्रोफेसर सत्यपाल तिवारी	निदेशक, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीरा पाल	प्रोफेसर, स्वास्थ्य विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 गिरीश कुमार द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 स्मिता अग्रवाल	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 रामजी मिश्रा	निवर्तमान वरिष्ठ कार्यक्रम अधिकारी, आकाशवाणी प्रयागराज
डॉ0 अतुल कुमार मिश्र	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक :

प्रोफेसर सत्यपाल तिवारी	निदेशक, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 1 एवं 5)
प्रो0 मीनू अग्रवाल	आचार्य, प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, एस0एस0 खन्ना महिला महाविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 6,12 एवं 16)
डॉ0 गिरीश कुमार द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 15 एवं 21)
डॉ0 त्रिविक्रम तिवारी	सहायक आचार्य, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 23)
डॉ0 स्मिता अग्रवाल	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय प्रयागराज (इकाई- 3,4,17,18 एवं 19)
डॉ0 दीपशिखा श्रीवास्तव	सहायक आचार्य, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय प्रयागराज (इकाई 10)
डॉ0 अतुल कुमार मिश्र	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 14 एवं 24)
डॉ0 गौरव संकल्प	सहायक आचार्य, प्रबन्धन अध्ययन विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय प्रयागराज (इकाई- 20)
डॉ0 शिवेन्द्र प्रताप सिंह	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 13)
डॉ0 अनिल कुमार यादव	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 8)
डॉ0 शैलेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 7 एवं 9)
श्री अनुपम	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई- 22)
कौमुदी शुक्ला	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय प्रयागराज (इकाई- 2 एवं 11)

सम्पादक :

डॉ0 गिरीश कुमार द्विवेदी	सह-आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 स्मिता अग्रवाल	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिभाषक :

प्रोफेसर सत्यपाल तिवारी	निदेशक, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
-------------------------	---

समन्वयक

डॉ0 स्मिता अग्रवाल	सहायक आचार्य, मानविकी विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
--------------------	---

ISBN: 978-93-48987-53-2

प्रकाशक : कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई है। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

प्रकाशन : उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रक : चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज- 211002

कुम्भ – अध्ययन में प्रमाण–पत्र कार्यक्रम (सी.के.एस.)

Certificate Course in Kumbh Studies (CKS)

खण्ड 1 एवं 2

कार्यक्रम परिचय

इन खण्डों में हम कुम्भ की अवधारणा तथा उसके महत्त्व का अध्ययन प्रस्तावित है। विभिन्न परिप्रेक्ष्य में हम कुम्भ का अध्ययन करेंगे। इस प्रश्नपत्र में दो खण्ड हैं – 1. कुम्भ की अवधारणा तथा 2. कुम्भ के विभिन्न परिप्रेक्ष्य। दोनों खण्ड में चार-चार इकाईयाँ हैं। प्रथम खण्ड में कुम्भ की अवधारणा, इतिहास, शंकराचार्य तथा नागाओं के विषय में अध्ययन करेंगे। द्वितीय खण्ड में कुम्भ का आर्थिक व सामाजिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करेंगे तथा नदियों, मासों तथा पर्वों के महत्त्व का तथा उसकी वैज्ञानिकता का अध्ययन करेंगे।

खण्ड 3 एवं 4

राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता में कुम्भ का महत्त्व

कार्यक्रम परिचय

इन खण्डों में हम राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता में कुम्भ के महत्त्व का अध्ययन करेंगे। इस प्रश्नपत्र में दो खण्ड – 1. राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता तथा 2. विभिन्न अखाड़ों एवं सम्प्रदायों का सामान्य परिचय हैं। वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ का महत्त्व, सामाजिक समरसता में कुम्भ आदि महत्त्वपूर्ण विषयों का अध्ययन कर सकेंगे। दोनों खण्डों में चार-चार इकाईयाँ हैं।

खण्ड–5 एवं 6 : कुम्भ के विविध आयाम

कार्यक्रम परिचय

इन खण्डों में कुम्भ अध्ययन में प्रमाण–पत्र कार्यक्रम के तीन प्रश्नपत्रों में से इस तीसरे अंतिम प्रश्नपत्र में दो खण्ड हैं। दोनों खण्डों में चार-चार इकाईयाँ हैं। पाँचवें खण्ड में विशेष रूप से प्रयागराज के माहात्म्य, धार्मिक परम्पराओं तथा दर्शनीय स्थलों का वर्णन है। आयोजित होने वाले कुम्भ के सापेक्ष मेला–प्रशासन, स्वास्थ्य, प्रबन्धन आदि का वर्णन है। छठें खण्ड में सर्वसमावेशी भारतीय संस्कृति, भारतीय साहित्य में प्राप्त कुम्भ का वर्णन, पर्यावरण तथा पर्यटन में कुम्भ का प्रभाव आदि का विवरण है।

इकाई-01 : कुम्भ का अर्थ, अवधारणा एवं पौराणिक आख्यान

इकाई की रूपरेखा

- 1.0 प्रस्तावना
- 1.1 उद्देश्य
- 1.2 कुम्भ का अर्थ
- 1.3 अवधारणा
- 1.4 पौराणिक आख्यान
 - 1.4.1 प्रथम आख्यान
 - 1.4.2 द्वितीय आख्यान
 - 1.4.3 तृतीय आख्यान
- 1.5 सारांश
- 1.6 अभ्यास के प्रश्न
- 1.7 चर्चा के बिन्दु
- 1.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 1.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.0 प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति और पौराणिक परंपराओं में 'कुम्भ' महापर्व है। हिन्दू आस्था का प्रभाव है। कुम्भ का तात्पर्य है—'घड़ा' है, जो जीवन की अभिकल्पना और धारण क्षमता का प्रतीक है। कुम्भ पर्व हिन्दू जीवन को विभिन्न मान्यताओं और अवधारणाओं को समेटे हुए है। 'कुम्भ' भारतीय संस्कृति, दर्शन और पौराणिक परंपराओं में अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुआयामी शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ 'घड़ा' या 'कलश' है, जो सृजन, धारण और संरक्षण का प्रतीक है। कुम्भ केवल भौतिक घड़े तक सीमित नहीं है यह गहन दार्शनिक और आध्यात्मिक अर्थों को भी समेटे हुए है। यह जीवन के मूलभूत सिद्धांतों सृष्टि, संतुलन और ज्ञान का प्रतीक है। कुम्भ की अवधारणा भारतीय पौराणिक कथाओं में गहराई से जुड़ी है, विशेष रूप से समुद्र मंथन की कथा में, जहां इसे अमृत, या अमरत्व के घड़े के रूप में देखा गया है। इस पौराणिक आख्यान के माध्यम से 'कुम्भ' जीवन के संघर्ष, संतुलन और आत्मज्ञान की खोज को दर्शाता है। इसके साथ ही यह भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन में अनिवार्य स्थान रखता है। कुम्भ मेला, जो इस शब्द से प्रेरित है, न केवल धार्मिक आस्था का उत्सव है, बल्कि मानवता, एकता और आध्यात्मिक शुद्धि का प्रतीक है। 'कुम्भ' की गहराई को समझना, भारतीय संस्कृति की गहराई को जानने का माध्यम है।

पौराणिक आख्यानों में कुम्भ का उल्लेख समुद्र मंथन की कथा से जुड़ा है, जिसमें देवताओं और असुरों ने अमृत प्राप्त करने के लिए भगवान विष्णु के कहने पर समुद्र मंथन किया था। अमृत के घड़े, जिसे कुम्भ कहा गया, के लिए संघर्ष ने धर्म, आध्यात्म और जीवन के सिद्धांतों को नया दृष्टिकोण प्रदान किया। चार पवित्र स्थलों — प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में कलश से अमृत की कुछ बूंदें छलकीं और कुम्भ मेले के आयोजन का आधार बनी। यह केवल एक धार्मिक आयोजन नहीं, बल्कि आध्यात्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है। कुम्भ का अर्थ "घड़ा" है, जो ज्ञान, अमृत और जीवन का प्रतीक माना जाता है। इस अमृत को प्राप्त करने के लिए देवताओं और असुरों में संघर्ष हुआ।

कुम्भ का आयोजन न केवल आस्था का पर्व है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति में सामाजिक समरसता, मानवता और विश्व बंधुत्व का संदेश भी देता है। चार पवित्र स्थानों — प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक—पर हर 12 वर्ष में बारी-बारी से कुम्भ मेले का आयोजन होता है। यह आयोजन मानव सभ्यता के इतिहास में सबसे बड़े धार्मिक सम्मेलनों में से एक है, जिसमें देश-विदेश से लाखों श्रद्धालु और संत भाग लेते हैं। कुम्भ केवल धार्मिक अनुष्ठानों

तक सीमित नहीं है यह हमारी सांस्कृतिक धरोहर, ज्ञान-विज्ञान और पर्यावरण संरक्षण के पहलुओं को भी उजागर करता है। इसकी अवधारणा भारतीय समाज को एकता, सहिष्णुता और आध्यात्मिक चेतना के मार्ग पर ले जाती है। कुम्भ मेला, अपने अद्भुत इतिहास और गहराई के साथ, भारतीय परंपरा का जीवंत उदाहरण है।

कुम्भ मेला, जो विश्व का सबसे बड़ा आध्यात्मिक और सांस्कृतिक आयोजन है, न केवल धार्मिक आस्था का केंद्र है, बल्कि मानवता, एकता और सहिष्णुता का भी प्रतीक है। इस विषय की चर्चा हमें भारतीय संस्कृति की गहराई, समृद्धि और सार्वभौमिक संदेशों को समझने का अवसर प्रदान करती है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप –

- कुम्भ शब्द के व्युत्पत्ति एवं उसके विभिन्न अर्थों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- कुम्भ से जुड़े पौराणिक आख्यों जैसे समुद्रमंथन की कथा, अमृत की प्राप्ति एवं देव-दानव के संघर्ष को समझ सकेंगे।
- कुम्भ को भारतीय संस्कृति, धार्मिक मान्यताओं और भारतीय दर्शन के साथ जोड़ते हुए उसकी भूमिका का आकलन कर सकेंगे।

1.2 कुम्भ का अर्थ

कुम्भ भारत की धार्मिक आस्था और सांस्कृतिक चेतना का महापर्व है। हिन्दू विचार और विश्वास का संवाहक है। इस अवसर पर एक स्थान पर एक समय में और एक साथ सम्पूर्ण भारत का दर्शन किया जा सकता है। कुम्भ धर्म का संरक्षक है। अर्थ का विस्तारक है। मोक्ष का दाता है। कुम्भ लौकिक जीवन को फलदायी तो बनाता है कुम्भ की संकल्पना भारतीय साहित्य में प्राचीन काल से ही बहुत व्यापक रूप में प्राप्त होती है। कुम्भ आध्यात्मिक उन्नति के साथ ही जीवन का प्रवाह है। कुम्भ जल और जीवन का सम्बन्ध है। कुम्भ ऊर्जा का स्रोत है। यह लोक-परलोक पाप-पुण्य ज्ञान-अज्ञान, अन्धकार और प्रकाश का दिग्दर्शक है। कुंभ नदी, नगर और नागर का समुच्चय है, कुम्भ वहीं लगता है जहाँ नदियों होती हैं, नगर होते हैं। मानव समुदाय वहीं एक साथ एकत्र होता है। कुम्भ स्थान विशेष पर निश्चित समय पर विशिष्ट ग्रहों के निश्चित राशियों में प्रवेश के योग से कुंभ पर्व का योग बनता है। भारतीय साहित्य में कुम्भ के अनेक अर्थ बताये गये हैं। शास्त्रीय और प्रतीकात्मक दोनों ही अभिप्राय कुम्भ की महत्ता को स्थापित करते हैं वेदों और पुराणों में कुंभ की महत्ता का प्रतिपादन किया गया। शाब्दिक अर्थ में कुम्भ का तात्पर्य 'घड़ा' 'कलश' अथवा 'करवा' होता है। कुम्भ का अभिप्राय कुंभ राशि और कुम्भ पर्व से भी लिया जाता है। कुम्भ का व्युत्पत्तिपरक अर्थ होता है *कुः पृथिवी उभ्यतेऽनुगृहते उत्तमोत्तम महात्म संगमै तदीप हितोपदेशैः यस्मिन् सः कुम्भः*। उत्तमोत्तम महात्माओं के संगम तथा उनके द्वारा कहे गये हितोपदेशों से पृथ्वी अनुगृहीत होती हो, उसे कुम्भ कहते हैं। कुम्भ के अर्थ को बताते हुए कहा गया है—कुम्भ वह है जो अमृतमय जल से पूरा हो, भूख, प्यास आदि अनेक प्रकार के द्वन्द्वों से मुक्ति देता हो वेदों में कुम्भ वर्णन अनेकों बार आया है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद तथा सामवेद में कुम्भ की महिमा का वर्णन किया गया है।

वेदों के साथ ही पुराणों में कुम्भ की महत्ता और प्रभाव का वर्णन बड़े ही मनोहर रूप में किया गया है। कालिका पुराण, गरुड़पुराण, स्कन्द पुराण, वायु पुराण आदि में कुम्भ की उत्पत्ति और देवताओं तथा मनुष्यों के लिए इसके महत्व और उपयोगिता को बताया गया है। विष्णु पुराण में कुम्भ अवसर पर व्यक्ति द्वारा किये जाने वाले स्नान को अश्वमेध और बाजपेय यज्ञों से भी बढ़कर बताते हुए कहा गया है—

अश्वमेध सहस्राणि वाजपेय शतानि च।

लक्षप्रदक्षिणा पृथ्व्या कुम्भ स्नाने तत् फलम्॥ —विष्णुपुराण।

कुंभ लोक मंगल और कल्याण का विधायक होता है। जल से भरा हुआ मंगल चिन्हों से अंकित जौ, गोबर, तथा आम्रपल्लव से सुसज्जित कुम्भ भारतवासियों के मांगलिक कार्यों में प्रयुक्त होता है। इसके अभाव में भारतीय संस्कृति का कोई भी शुभ कार्य सम्भव ही नहीं होता है। किसी शुभ कार्य की शुरुआत करने से पूर्व कुम्भ जिसे कलश भी कहा जाता है, की स्थापना की परम्परा है। कुम्भ के पावन पर्व पर कल्पवासी अपनी पर्णकुटी में भरे हुए

सुसज्जित कलश की स्थापना के साथ कल्पवास की शुरुआत करते हैं। हमारे दार्शनिकों और मनीषियों ने भी मानव शरीर को घट या कुंभ माना है। जिसमें ज्ञानरूपी अमृत भरा रहता है। इस ज्ञानरूपी अमृत से ही मनुष्य आध्यात्मिक और धार्मिक सद्वृत्तियों से युक्त होता है। जो कामनाओं का पूर्ण करने वाला तथा मोक्ष प्रदान करने वाला है। कुम्भ के अवसर पर पर्णकुटी बनाकर रहने वाले लोग एक महीने तक सन्यासियों जैसा जीवन बिताते हैं नित्य स्नान, दान तथा ध्यान में लगे रहते हैं। इसी लिए कुम्भ को मोक्षदायक कहा जाता है।

1.3 अवधारणा

कुम्भ पर्व की अवधारणा के विकास से सम्बन्धित कई विचार हैं। वेदों में धार्मिक और आध्यात्मिक उन्नायक के रूप में कुम्भ का वर्णन मिलता है। कुम्भ कालचक्र के रूप में तथा तीनों लोकों के पालक के रूप में वर्णित किया गया है।

पूर्णः कुम्भोऽधिकाल अहितस्तं वै पश्यामो को बहुधा नु सन्तः।

स इमा विश्वा भुवनानि प्रत्यङ्कालं तमाहुः परमे व्योमन॥

कुम्भ हिन्दुत्व और सनातन का संरक्षक और संवर्धक है। जब-जब भारतीय समाज और सांस्कृतिक जीवन में विशृंखलता आयी है, धार्मिक जीवन दूषित हुआ है, तब हमारे ऋषियों, मनीषियों सन्तों महात्माओं में उन विकृतियों तथा अवरोधों को दूर करने के लिए अनेकों प्रयत्न किया है। धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन को समरस बनाने के लिए विचार गोष्ठियों, तथा विमर्शों का आयोजन किया है। इस प्रकार के आयोजन प्राचीन भारत में होते रहे हैं। नैमिशारण्य की महागोष्ठी का आयोजन इसी प्रकार का आयोजन था जो 12 वर्षों तक चली थी। 80 हजार विद्वानों ने भाग लिया था। वेदों, पुराणों उपनिषदों का वर्तमान स्वरूप उसी में स्थिर किया गया था। कुम्भ इसी प्रकार की गोष्ठियों और वैचारिकी की देन है। जहाँ विभिन्न मतों के सन्त, महात्मा, विद्वान के साथ ही अनेक मतों को मानने वाले गृही भी भाग लेते हैं। सनातन के स्वरूप में आयी कमियों विकृतियों के बारे में विचार करते हुए नवीन समाजोपयोगी, धार्मिक और आध्यात्मिक उन्नति में सहायक विचारों की स्थापना करते हैं सामाजिक और धार्मिक समरसता को बढ़ावा देते हैं।

कुम्भ भारत की धार्मिक एकता का परिचायक है। सांस्कृतिक समन्वय के लिए किया जाने वाला सारस्वत प्रयास है। इसको संबंधित और जनव्यापी बनाने के लिए ऋषियों महर्षियों, साधु- सन्तों, विद्वानों- मनीषियों, भोगियों, योगियों, गृहस्थियों द्वारा समय-समय पर भागीरथ प्रयास किये गये हैं। कुम्भ महापर्व है। उमंग उत्साह बढ़ाने वाला उत्सव है। विभिन्न प्रकार के विचारों, सहभोजों, सहजभोजों का सम्मेलन है। राष्ट्रीय एकता सहिष्णुता और सामाजिक समरसता का पर्व है। भारतीय ज्ञान परम्परा का संवाहक है। इस महापर्व पर भारत के कोने-कोने से गृही-विरागी, योगी-भोगी, सन्त-असन्त, राजा-रंक, किसान- मजदूर, धनी-निर्धन, विद्वान- चिंतक, बाल-युवा, बद्ध सभी आते हैं मंत्री- प्रधानमंत्री, स्त्री-पुरुष सभी अपने-अपने रंग-ढंग से आते हैं बिना किसी आमंत्रण-निमंत्रण स्वस्फूर्तभाव से आते हैं। एक मास तक नदियों की रेती पर पर्णकुटी बनाकर रहते हैं। गृही भी विरागी जैसा जीवन बिताते हैं। प्रतिदिन- स्नान-ध्यान, दान के साथ ही धार्मिक चर्चा-परिचर्चा में भाग लेते हैं। समाज की कुरीतियों और कमियों के निवारण पर विचार किया जाता है। व्यक्ति-समाज-राष्ट्र के निर्माण पर विमर्श होता है। मानव मूल्यों की स्थापना और संवर्धन पर विचार होता है।

कुम्भ आगाध श्रद्धा, अहेतु की भक्ति और पराज्ञान की त्रिवेणी है। प्रेम, सौहार्द तथा सामाजिक समरसता की त्रिपथगा है। प्रयाग में माघ के महीने में मकर राशि में सूर्य के संक्रमण के अवसर पर जब यह गंगा-यमुना-सरस्वती की त्रिवेणी से परस्पर एकमेव होती है तो देवलोक ही उतर आता है। तुलसीदास जी ने इसीलिए कहा है “देव, दनुज नर किन्नर श्रेणी सादर मज्जहिं आय त्रिवेणी।” धार्मिक सहिष्णुता, राष्ट्रीय एकता तथा विश्वबन्धुत्व इसकी विशेषता है। भारतीय संस्कृति की विराटता का उद्घोष है। विश्वशान्ति और मानव जाति का कल्याण ही इसका मंत्र है। जिससे प्रभावित होकर विश्व के अनेक देशों के निवासी यहाँ खिंचे चले आते हैं स्नान-दान-दर्शन से अपने को धन्य मानते हैं हिन्दुत्व का विराट जागरण है जहाँ इसके उदर चरित्र का दर्शन होता है।

कुम्भ ज्ञान आधार है, कुम्भ सनातन तत्व।

कुम्भसमष्टि परमेष्टि है, यही पूर्ण हिन्दुत्व॥

यहाँ आकर व्यक्ति आनन्द से प्रफुल्लित और ज्ञान से प्रमुदित होता है। “कुम्भ वह महासंगम है जहाँ जलधाराओं की तरह ही विभिन्न जन धाराएं एक-दूसरे में घुल-मिल जाती है। यहाँ तक की साधु समाज की

दिव्यता और आम समाज की दीनता भी यहाँ खो जाती है। फिर न कोई दिव्य सन्यासी रह जाता है और न दीन संसारी। यहाँ सभी अहंकर, आडंबर त्यागकर शील— सदाचारी श्रद्धालु बन जाते हैं। ”

कुंभ ईश्वरीय शक्तियों और देवताओं को भी आकर्षित करता रहा है। विभिन्न प्रकार का रूप धारण कर देवता भी इस अवसर पर स्नान और दर्शन सुख का संवरण नहीं कर पाते हैं और यहाँ आकार एक माह तक रहकर आनन्द करते हैं

यह केवल एक स्थान पर एक साथ एक स्वर से हर—हर गंगे और हर—हर महादेव की गर्जना के साथ स्नान—ध्यान करने हेतु एकत्रित हुए वैश्विक समाज का मेल ही नहीं अपितु हिन्दुत्व की महागाथा तथा राष्ट्रीय जागरण का उद्घोष भी है। कुम्भ जिस दिन या रात प्रारम्भ होता है, वह समय आकाशीय ग्रहों की विशेष स्थिति होने पर काल एवं स्थान—विशेष में अधिक पुण्य देने वाला संयोग बन जाता है। जो धार्मिक और आध्यात्मिक उन्नयन के लिए अति महत्वपूर्ण होता है इस स्थान तथा काल विशेष के साथ स्नान और दान का महत्वपूर्ण योग भी बनता है। इसी लिए कुम्भ नदियों पर ही लगता है। यही करण है कि ऐसे पवित्र अवसर पर लोग पुण्याजन करने लौकिक तथा पारलौकिक जीवन को सुधारने के लिए उस स्थान विशेष पर समय विशेष में आकर नदी जल में स्नान करते हैं।

भारत के ज्योतिषाचार्यों ने भी कुंभ पर विस्तार से अध्ययन करते हुए विचार किया है इनका मानना है कि ज्योतिष में कुंभ दो रूपों में माना जाता है। राशियों की गणना में कुम्भ राशि को ग्यारहवें स्थान पर रखा गया है। जब राशि रूप वर्णित कुम्भ नवग्रहों में श्रेष्ठ सूर्य के साथ बैठ जाता है, तो इसे 'घट' कहा जाता है। 'घट' को 'घड़ा' या 'कुंभ' रूप में जाना जाता है। कुम्भ पर्व के लिए सूर्य और चन्द्र के साथ विभिन्न राशियों में से निश्चित राशि का संयोग होना आवश्यक है। उदाहरण के लिए चन्द्र एवं सूर्य जब मेष राशि में अवस्थित होते हैं और सिंह राशि में वृहस्पति होते हैं, तब वैशाख मास कृष्ण पक्ष की अमावस्या तिथि में उज्जैन में कुम्भ पर्व मनाया जाता है। जहाँ विशाल जनसमूह एकत्रित होता है। 'चन्द्र' को अमृत का प्रदाता माना जाता है। राशियों के संयोग से वह अवसर आता है। जब चन्द्र अमृत की वर्षा कर 'घट' को भर देता है। इस अमृत— जल के पान के लिए ही विशाल जन समूह एकत्रित होता है।”

सूर्योन्दुगुरु संयोगस्तद्राशौ यत्र वस्सरे।

सुधाकुम्भप्लवे भूमौ कुम्भौ अतिनान्यथा।।

तात्पर्य है कि राशि में सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति के स्थित होने पर यह अमृत—कुंभ रूपी चन्द्र पृथ्वी पर हरिद्वार प्रयाग, उज्जैन और नासिक जैसे कुम्भ प्रधान तीर्थ स्थलों में अपने शुभ प्रभाव रूपी अमृत की वृद्धि करता है। उसी की पिपासा में उक्त स्थलों में दिक्—दिवंगत से साधु, संत महात्मा भक्त और श्रद्धालु सामान्यजन एकत्रित होकर पुण्य अर्जित करने हेतु इस महापर्व का संकीर्तन करते हैं” (डॉ. राजेन्द्र त्रिपाठी 'रसरज'— प्रयागराज— कुम्भ—कथा पृ. 25)।

1.4 पौराणिक आख्यान

कुम्भ पर्व के विकास एवं परिव्याप्ति से सम्बन्धित कई पौराणिक कथाएं समाज में प्रचलित हैं। हड़प्पा और सिन्धु सभ्यता के प्रकाश में आने बाद मानव विकास की गाथा की शुरुआत वहीं से होती है। कुछ विद्वानों ने कुम्भ का प्रारम्भ भी यहीं से माना है। खुदाइयों से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर यह बात प्रचलित है। वेदों में 'कुम्भ' ऋग्वेद में प्रयुक्त हुआ है। यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में कुम्भ पर्व चार स्थानों पर मनाये जाने का वर्णन मिलता है। अथर्ववेद में कुम्भ के सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होती है।

‘चतुरः कुम्भाश्चतुर्धा क्षीरेण पूर्णा उदकेन दध्ना।’

एतास्त्वाधारा उपयुन्तुः सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत।

पिन्वमाना उपत्वा तिष्ठन्तु पुष्कारिणीः समन्ताः।। (अथर्ववेद 4/34/7)

कुम्भ के विकास को लेकर तीन पौराणिक कथाएं प्रचलित हैं। दो कथाओं का सम्बन्ध यत्किंचित् भेद होते हुए समुद्र मंथन से है तथा तीसरी कथा कश्यप ऋषि की दो पत्नियों कद्रु तथा विनता से सम्बन्धित है।

1.4.1 प्रथम आख्यान

प्रथम कथा का प्रसंग इन्द्र और महर्षि दुर्वासा के मिलन तथा शाप दिये जाने की है। एक समय महर्षि दुर्वासा दिव्य शक्तियों से युक्त माला धारण किये हुए जा रहे थे रास्ते में इन्द्र मिल गये तो दुर्वासा ने प्रसन्न होकर वह माला उन्हें धारण करने के लिए दिया लेकिन इन्द्र इसे तुच्छ समझकर एरावत के मस्तक पर रख दिया इस अपमान से नाराज होकर दुर्वासा ने इन्द्र को 'श्रीहीन' होने का शाप दे दिया। जिससे सम्पूर्ण त्रैलोक में दुर्भिक्ष तथा अकाल पड़ गया लोग भूखों मरने लगे। देवता तथा ऋषि मुनि और मानव सभी मिलकर विष्णु के पास निवेदन करने के लिए गये तथा विष्णु के परामर्श से समुद्र मंथन हुआ जिससे लक्ष्मी जी सहित 14 रत्न निकले। लक्ष्मी जी के बाद अमृत निकला। उस अमृत को प्राप्त करने के लिए देवताओं और दानवों में संघर्ष छिड़ गया। लक्ष्मी जी ने अमृत बांटने का काम अपने हाथ में लिया। अमृतपान से वंचित दानवों ने इसे ले जाकर नागलोक में छिपा दिया। अमृत कलश के रक्षा का भार नागों को सौंप दिया। शक्तिशाली गरुड़ ने अमृत कलश का उद्धार किया। क्षीर सागर तक ले जाकर विष्णु को देने में जिन जिन स्थानों पर अमृत कलश को रखा उसी स्थान पर कुंभ पर्व मनाया जाने लगा।

1.4.2 द्वितीय आख्यान

कुम्भ पर्व मनाने की दूसरी पौराणिक घटना का सम्बन्ध कश्यप ऋषि की पत्नियों कद्रू तथा विनता से संबंधित है। "सूर्य के घोड़े की पूँछ काली है या सफेद है" इस विषय को लेकर दोनों में शर्त लगी कि जिसकी बात झूठ निकलेगी वह दासी बनेगी। विनता शर्तहार गयी। क्योंकि कद्रू के पुत्र साँप घोड़े की पूँछ में लिपट गये जिससे घोड़े की पूँछ सफेद से काली हो गयी। इससे विनता को दासी बनना पड़ा। दासीत्व से मुक्ति तभी सम्भव है जब देवलोक से अमृत कलश कद्रू के पास लाया जाय जिससे कद्रू पुत्र अमृत पान कर सके। विनता के पुत्र गरुड़ ने अपने पराक्रम से अमृत कलश को प्राप्त कर लिया और उसे लेकर चल दिये। इन्द्र ने अमृत कलश गरुड़ को ले जाते हुए देखकर उनपर आक्रमण कर दिया। इस छीना-झपटी में अमृत कलश से अमृत की बूँदे धरती के जिन स्थानों पर गिरी उस स्थान पर कुम्भ पर्व मनाया जाने लगा।

1.4.3 तृतीय आख्यान

तीसरी कथा का सम्बन्ध थी समुद्र मंथन से ही है। जिसका वर्णन स्कन्दपुराण में विस्तार से दिया गया है। देवता और दानवों ने मिलकर समुद्र मंथन किया जिससे 14 रत्न निकले इन्हीं 14 रत्नों में अमृत कलश हाथ में लिए भगवान धन्वन्तरि भी उत्पन्न हुए। मोहिनी रूप धारण किए हुए विष्णु ने देवताओं को अमृत पान करा दिया। राहू इस घटना को देख रहा था। उसने भी छिपकर अमृत पान कर लिया दानवों को जब पता चला कि अमृत कलश का अमृत देवताओं को मिला है उनको नहीं मिला तब वे उसे पाने के लिए संघर्ष करने लगे। इससे इन्द्र के संकेत से उनका पुत्र जयन्त अमृत कलश को लेकर स्वर्ग की ओर जाने लगा। दानव उसकी पीछा करने लगे। अमृतकलश की सुरक्षा में लगाये गये में शनि, वृहस्पति, सूर्य एवं चन्द्रमा से दानवों का संघर्ष हुआ। इस संघर्ष में अमृतकलश से अमृत की बूँदे आज जहाँ हरिद्वार, प्रयाग, नासिक और उज्जैन स्थित है, वहाँ गिरी। इन्हीं स्थानों पर कुंभ पर्व मनाया जाने लगा।। ऐसी अवधारणा विकसित हुई कि निश्चित तिथि में जो भी इन स्थानों पर स्नान करेगा, जलपान करेगा वह अमृत रस का भागीदार होगा। इससे इन स्थानों पर बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू समाज एकत्रित होने लगा। इस कुम्भ महापर्व में जो भी सम्मिलित होता है उसके सारे पाप-दोष दूर हो जाते हैं वह पुण्य का लाभ प्राप्त करता है।

पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते ।

चतुःस्थले नितनात् सुधा कुम्भस्य भूतले ।।

चन्द्रप्रसवणादरक्षांसूर्योविस्फोटनात् दधौ ।

दैत्येभ्यश्च गुरु रक्षां सौरिदेवेंद्रजात् भयात् ।।

इन कथाओं से कुम्भ के सनातन काल से मानये जाने का प्रमाण मिलता है। पुराण साहित्य के अतिरिक्त कुम्भ पर्व मनाये जाने का प्रमाण सम्राट हर्षवर्धन (612-647ई.) से भी मिलता है चीनी यात्री ह्वेनसांग (629-645 ई.) ने अपनी यात्रा विवरण में बताया है कि कन्नौज का हिन्दू शासक हर्षवर्धन पाँचवे वर्ष में प्रयाग में आकर प्रभूत मात्र में एकत्रित की हुई सम्पत्ति दान करता था। स्नान-ध्यान और दान करके वह वापस अपने राज्य में चला जाता है।

यह कुम्भ उसके पूरे शासन काल में मनाया जाता रहा। इसी से कुछ विद्वानों ने कुंभ आयोजन का श्रेय हर्ष को देना चाहते हैं। लेकिन कुम्भ पर्व केवल प्रयाग में ही आयोजित नहीं होता है, वह तो अन्य तीन स्थानों पर भी मनाया जाता है। इसलिए इस मत में बहुत सार्थकता नहीं दिखाई देती है। कुंभ के वर्तमान स्वरूप, महत्ता और व्यापक रूप से मनाये जाने का श्रेय आदि शंकराचार्य को दिया जाता है। आदि शंकराचार्य ने सनातन धर्म के प्रचार-प्रचार के क्रम में परम्परागत कुंभ पर्व को महत्व देते हुए कुंभ अर्थात् 'घड़े' को इस पर्व का चिन्ह बना दिया। जिससे कुम्भ पर्व हिन्दू समाज के साथ ही सम्पूर्ण भारत में चर्चित हो गया है। उन्होंने हरिद्वार में लगने वाले कुम्भ पर्व को राष्ट्रीय महापर्व का रूप दिया। देश के चार महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों जहाँ पवित्र नदियाँ स्थित हैं कुम्भ पर्व मनाने की परम्परा की शुरुआत किया इनमें हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन व नासिक चार प्रमुख स्थान हैं।

बोध-प्रश्न

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. कुम्भ का शाब्दिक अर्थ क्या है ?

.....
.....

2. भारत में कौन-कौन से नगर कुम्भ मेले के लिए प्रसिद्ध है ?

.....
.....

3. कुम्भ से सम्बन्धित कितनी कथाएं मुख्य रूप से प्रसिद्ध है ?

.....
.....

1.5 सारांश

भारतीय संस्कृति और पौराणिक परंपराओं में 'कुम्भ' महापर्व है। कुम्भ का तात्पर्य है—'घड़ा' है, जो जीवन की अभिकल्पना और धारण क्षमता का प्रतीक है। यह न केवल भौतिक वस्तु के रूप में, बल्कि आध्यात्मिक और सांस्कृतिक संदर्भों में भी विशेष महत्व रखता है। कुम्भ पर्व हिन्दू जीवन की विभिन्न मान्यताओं और अवधारणों को समेटे हुए है। इसका शाब्दिक अर्थ 'घड़ा' या 'कलश' है, जो सृजन, धारण और संरक्षण का प्रतीक है। पौराणिक आख्यानों में कुम्भ का उल्लेख समुद्र मंथन की कथा से जुड़ा है, जिसमें देवताओं और असुरों ने अमृत प्राप्त करने के लिए भगवान विष्णु के कहने पर समुद्र मंथन किया। अमृत के घड़े, जिसे कुम्भ कहा गया, के लिए संघर्ष ने धर्म, आध्यात्म और जीवन के सिद्धांतों को नया दृष्टिकोण प्रदान किया। यह घटना चार पवित्र स्थलों— प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में कुम्भ मेले के आयोजन का आधार बनी। कुंभ लोक मंगल और कल्याण का विधायक होता है। जल से भरा हुआ मंगल चिन्हों से अंकित जौ, गोबर, तथा आम्रपल्लव से सुसज्जित कुम्भ भारतवासियों के मांगलिक कार्यों में प्रयुक्त होता है। कुम्भ पर्व की अवधारणा के विकास से सम्बन्धित कई विचार हैं। वेदों में धार्मिक और आध्यात्मिक उन्नायक के रूप में कुंभ का वर्णन मिलता है। जब-जब भारतीय समाज और सांस्कृतिक जीवन में विश्रृंखलता आयी है, धार्मिक जीवन दूषित हुआ है, तब हमारे ऋषियों, मनीषियों सन्तों महात्माओं में उन विकृतियों तथा अवरोधों को दूर करने के लिए अनेकों प्रयत्न किया है। कुम्भ आगाध श्रद्धा, अहेतु की भक्ति और पराज्ञान की त्रिवेणी है। प्रेम सौहार्द तथा सामाजिक समरसता की त्रिपथगा है। प्रयाग में माघ के महीने में मकर राशि में सूर्य के संक्रमण के अवसर पर जब यह त्रिवेणी, गंगा-यमुना-सरस्वती की त्रिवेणी से परस्पर एकमेव होती है तो देवलोक ही उतर आता है। कुम्भ पर्व के विकास एवं परिव्याप्ति से सम्बन्धित कई पौराणिक कथाएं समाज में प्रचलित हैं।

1.6 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भ का शाब्दिक अर्थ क्या है ?

2. भारतीय संस्कृति में कुम्भ की अवधारणा का क्या महत्व है ?
3. कुम्भ से संबंधित पौराणिक कथाओं का वर्णन करें।
4. कुम्भ पर्व का धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व क्या है ?
5. कुम्भ मेले की परंपरा की शुरुआत कब और कैसे हुई ?
6. कुम्भ के आयोजन का समाज पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
7. कुम्भ को आध्यात्मिक उन्नति के संदर्भ में क्यों महत्वपूर्ण माना जाता है ?
8. कुम्भ मेले के आयोजन के लिए प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक का महत्व क्या है ?

1.7 चर्चा के बिन्दु

1. कुम्भ मेला केवल धार्मिक आयोजन है या यह सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी प्रतीक है, चर्चा कीजिए।
2. आधुनिक समय में कुम्भ मेले के आयोजन की चुनौतियों और समाधान पर चर्चा कीजिए।

1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. कुम्भ का शाब्दिक अर्थ 'घट' या 'कलश' होता है।
2. भारत में कुम्भ मेले के लिए— हरिद्वार, प्रयागराज, उज्जैन तथा नासिक नगर प्रसिद्ध हैं।
3. कुम्भ से सम्बन्धित मुख्यरूप से तीन कथाएँ प्रसिद्ध हैं।

1.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. अग्रवाल, मीनू, कुम्भपर्व प्रयाग (2013), प्रकाशक— राजपाल एवं कम्पनी, इलाहाबाद।
2. चतुर्वेदी, हेरम्ब, कुम्भ ऐतिहासिक वाङ्मय (2019) प्रकाशक— वाणी प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. टण्डन, हरिमोहनदास, प्रयागराज।
4. Dubey, D.P., Prayag, The Site of Kumbh Mela (2001) Publisher- Aryan Books International, New Delhi
5. पोखरियाल, रमेश (निशंक), विश्वधरोहर महाकुम्भ।

इकाई – 02 कुम्भ का इतिहास

इकाई की संरचना

- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 उद्देश्य
- 2.3 वेदों के अनुसार कुम्भ का ऐतिहासिक वर्णन
- 2.4 पुराणों के अनुसार कुम्भ का ऐतिहासिक वर्णन
- 2.5 रामायण में कुम्भ का वर्णन
- 2.6 महाभारत में कुम्भ का वर्णन
- 2.7 कुम्भ और आदि शंकराचार्य का योगदान
- 2.8 ज्योतिषशास्त्रीय दृष्टिकोण से कुम्भ मेले का इतिहास
- 2.9 हर्षवर्धन काल में कुम्भ मेले का ऐतिहासिक वर्णन
- 2.10 गुप्त काल में कुम्भ मेला
- 2.11 मुग़ल काल में कुम्भ मेला
- 2.12 ब्रिटिश काल में कुम्भ मेला
- 2.13 कुम्भ मेले के अन्य ऐतिहासिक साक्ष्य
- 2.14 सारांश
- 2.15 अभ्यास के प्रश्न
- 2.16 चर्चा के बिन्दु
- 2.17 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 2.18 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

कुम्भ पर्व को देश और काल के एक खास संयोग से उत्पन्न होने वाला परम पुण्य का अवसर माना जाता है। इस दौरान बृहस्पति, सूर्य, चंद्र, शनि आदि ग्रहों का एक विशेष समय पर एक विशेष राशि में आना एक बहुत बड़ा पुण्यदायी योग बन जाता है।

कुम्भ पर्व की प्राचीनता का पता हमें ऋग्वेद के एक मंत्र से मिलता है, हालांकि, जब हम इस विषय पर गहराई से अध्ययन करते हैं तो पता चलता है कि आजकल जिस तरह से कुम्भ पर्व मनाया जाता है, उसकी शुरुआत भगवान शंकर के अवतार आद्य शंकराचार्य ने की थी।

हालांकि वेदों और पुराणों में कुम्भ का उल्लेख मिलने से इसकी प्राचीनता सिद्ध होती है, फिर भी आद्य शंकराचार्य के समय से ही कुम्भ पर्व की निर्बाध परंपरा को सभी मानते हैं। तब से लेकर आज तक कुम्भ पर्व के चारों प्रमुख तीर्थों में सभी सम्प्रदायों के साधु-संत देश-काल की परिस्थितियों के अनुसार धर्म की रक्षा और प्रचार करते रहे हैं।

हड़प्पा-मोहनजोदड़ो सभ्यता से भी 1000 वर्ष पहले और बुद्धकाल से लगभग 1000 वर्ष पहले कुम्भ उत्सव मनाए जाने के प्रमाण मिलते हैं। भारत की धार्मिक विरासत का एक अद्भुत प्रतीक, कुम्भ मेला, ना केवल देश बल्कि पूरी दुनिया में अपनी गहरी आस्था और संस्कृति के लिए जाना जाता है। लाखों श्रद्धालु दूर-दूर से इस महापर्व में शामिल होते हैं, जिससे विभिन्न संस्कृतियों का संगम होता है और विश्व बंधुत्व का एक अनूठा माहौल बनता है। कुम्भ की ऐतिहासिकता सदियों से विचारकों को आकर्षित करती रही है। इतने विशाल जनसमूह का जुटना इसकी

प्राचीनता का प्रमाण है। भारतीय परंपरा के अनुसार, कुम्भ सहित सभी प्रमुख त्योहारों की उत्पत्ति वैदिक काल से मानी जाती है। चूंकि वेदों को अनादि और अनंत माना जाता है, इसलिए इन त्योहारों की शुरुआत सृष्टि के आरंभ से ही जोड़ी जाती है।

कुम्भ जैसे विशाल महापर्व के इतिहास को समझने के लिए हमें इतिहासकारों द्वारा प्रयुक्त पारंपरिक तरीकों का ही सहारा लेना होगा। भारत में इतिहास के अध्ययन के लिए मुख्यतः तीन प्रकार के साक्ष्यों का उपयोग किया जाता है – साहित्यिक साक्ष्य, विदेशी यात्रियों के विवरण और पुरातात्विक साक्ष्य। साहित्यिक साक्ष्य स्वयं दो प्रकार के होते हैं – धार्मिक साहित्य, जिसमें धार्मिक ग्रंथ, पुराण आदि शामिल हैं, और लौकिक साहित्य, जिसमें ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन करने वाले ग्रंथ, कविताएँ आदि आते हैं। इन सभी साक्ष्यों का गहन विश्लेषण करके ही हम कुम्भ के इतिहास को समझने का प्रयास कर सकते हैं। प्रस्तुत इकाई में कुम्भ से सम्बन्धित इतिहास का वर्णन निम्नवत किया गया है

2.2 उद्देश्य

शिक्षार्थी इकाई के अध्ययन के उपरान्त इस योग्य हो जाएंगे कि –

1. कुम्भ की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
2. कुम्भ के विषय में अपनी समझ को विकसित कर सकेंगे।
3. कुम्भ के उद्भव के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. कुम्भ का ऐतिहासिक विवेचन कर सकेंगे।
5. कुम्भ के संदर्भ में वर्णित विभिन्न प्रकार के साक्ष्यों से परिचित हो सकेंगे।
6. कुम्भ के महत्व को समझ सकेंगे।

2.3 वेदों के अनुसार कुम्भ का ऐतिहासिक वर्णन

वेद, भारत के सबसे प्राचीन धर्म ग्रंथ हैं, जिनके संकलनकर्ता महर्षि वेद व्यास माने जाते हैं। विदेशी विद्वानों का मानना है कि वेदों की रचना लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व हुई थी। भारतीय परंपरा में वेदों को नित्य और अपौरुषेय माना जाता है। वेद, वैदिक युग की सांस्कृतिक स्थिति को समझने का एकमात्र प्रामाणिक स्रोत हैं, इसलिए उनका ऐतिहासिक महत्व अत्यधिक है।

वेदों की संख्या चार है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इनमें ऋग्वेद, न केवल भारतीय आर्यों बल्कि समस्त आर्य जाति की सबसे प्राचीन रचना मानी जाती है। ऋग्वेद में कुछ स्थानों पर 'कुम्भ' शब्द का प्रयोग मिलता है। उदाहरण के लिए, ऋग्वेद के एक सूक्त में कहा गया है, "हे अश्विनी कुमार! आप दोनों ने स्तुति करते हुए कक्षीवत ऋषि के मन में विशेष बुद्धि को प्रकाशित किया है। जिसके फलस्वरूप मेघरूपी वीर्यवान् घोड़े के खुररूपी कूप से अमृतरूपी जल के सौ घड़ों को भाग्यवान् जनों के निमित्त सींचा है।"

ऋग्वेद में 'कुम्भ' के पर्यायवाची शब्द 'कलश' का प्रयोग अधिकतर सोम को रखने के लिए किया गया है। कुछ विद्वानों ने सोम को अमृत के समान माना है। यदि हम इस व्याख्या को स्वीकार करें, तो ऋग्वेद में 'कलश' या 'कुम्भ' का प्रयोग सोम रूपी अमृत रखने के लिए बार-बार हुआ है।

इन ऋग्वैदिक उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि अमृत को कुम्भ में रखा जाता था, इसका उद्गम स्थल समुद्र था, और इसे देवताओं ने शत्रुओं को पराजित करने के बाद प्राप्त किया था। इससे आयु में वृद्धि होती थी, यानी अमरत्व प्राप्त होता था। इससे स्पष्ट होता है कि न केवल 'कुम्भ' शब्द का प्रयोग हुआ है, बल्कि कुम्भ की कथा का साक्ष्य भी ऋग्वेद में मिलता है।

हालांकि इतिहास की दृष्टि से यजुर्वेद उतना महत्वपूर्ण नहीं है, लेकिन अध्ययन करने पर इसमें कुछ स्थानों पर 'कुम्भ' शब्द का उल्लेख मिलता है: "जल से भरा कुम्भ ही सत्कर्मों के द्वारा सुख उत्पन्न करता है। सर्वप्रथम जिस कुम्भ के गर्भ में अमृत तुल्य जल है और सैकड़ों स्रोतों से कुम्भ व्याप्त है, वह अमृत समान जल से भरा कुम्भ पितरों के लिए अन्नादि को पूर्ण करता है।" इसके अलावा, यजुर्वेद में कुछ स्थानों पर 'कुम्भी' शब्द का भी उल्लेख

है: “कुम्भीवर्ती या अति उत्तम यज्ञ युवाओं को प्रेरित करता है।”

सामवेद में भी ‘कुम्भ’ का पर्यायवाची शब्द ‘कलश’ का उल्लेख मिलता है, जैसे कि **“आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नाभि श्रिपः इन्दुरिन्द्राय धीयते”**। ऋग्वेद में कुम्भ का जो धुंधला चित्र मिलता है, वह अथर्ववेद में अधिक स्पष्ट हो जाता है। अथर्ववेद के काल सूक्त में ‘पूर्ण कुम्भ’ का संकेत मिलता है। एक मंत्र में कुम्भ को तीनों लोकों का पालक कहा गया है जो संसार में व्याप्त है और इससे बड़ा कोई तेज नहीं है। इस प्रकार, व्याप्त कालचक्र को ‘पूर्ण कुम्भ’ कहा जा सकता है। इसलिए, पूर्ण कुम्भ का समय 12 वर्ष निर्धारित किया गया है। यह कालरूपी कुम्भ दिन—रात, पक्ष, मास, ऋतु, वर्ष आदि के अनेक रूपों में विद्यमान है और यह कालचक्र संसार का पालक है। अथर्ववेद में इसका विस्तृत वर्णन मिलता है।

इन वैदिक उल्लेखों से स्पष्ट होता है कि कुम्भ जैसे पर्व मनाने की परंपरा वैदिक काल से ही रही है, और धीरे—धीरे इसका विस्तार हुआ।

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. वेद के संकलनकर्ता कौन हैं?

.....

2. ऋग्वेद के अनुसार कुम्भ का पर्यायवाची क्या है?

.....

3. वेदों के नाम लिखिए।

.....

2.4 पुराणों के अनुसार कुम्भ का ऐतिहासिक वर्णन

कुम्भ पर्व का स्पष्ट उल्लेख स्कंद पुराण, श्रीमद्भागवत, विष्णु पुराण, महाभारत, वाल्मीकि रामायण, मत्स्य पुराण और हरिवंश पुराण सहित लगभग सात पुराणों में मिलता है। इनमें समुद्र मंथन और कुम्भ में अमृत उत्पत्ति का वर्णन किया गया है। समुद्र को रत्नाकर भी कहा जाता है, यानी रत्नों की खान। अमृत भी एक अमूल्य रत्न है। कुम्भ के सन्दर्भ में श्रीमद् भागवत महापुराण, मत्स्य महापुराण, विष्णु पुराण, श्री हरिवंश पुराण एवं स्कंद पुराण में भी वर्णन पाया जाता है जिसका संक्षेप में वर्णन निम्नवत है —

1) श्रीमद्भागवत महापुराण में कुम्भ का वर्णन

महर्षि व्यास द्वारा रचित 18 पुराणों में श्रीमद्भागवत को महापुराण की संज्ञा दी गई है। इसमें भी समुद्र मंथन की कथा विस्तार से मिलती है। दैत्य और दानवों से त्रस्त और आतंकित देवगण ब्रह्मा के पास उपाय पूछने गए। ब्रह्मा ने देवताओं से मिलकर विष्णु की स्तुति की। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान नारायण ने कहा, “यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो, तो अमृत प्राप्ति के लिए प्रयास करो। समुद्र मंथन से अमृत प्राप्त होगा। कार्य की गंभीरता को देखते हुए, शत्रुओं से भी संधि कर लेनी चाहिए। इसलिए देवता दैत्यों और दानवों से संधि करके इस कार्य में उनका भी सहयोग प्राप्त करें। वे जो भी कहें, उसे चुपचाप स्वीकार कर लें। क्रोध या लोभ प्रकट न करें। मंदराचल पर्वत को मथनी बनाएं और वासुकी नाग को रस्सी। क्षीरसागर में औषधीय वनस्पतियां डालकर मंथन करें।”

मंथन के दौरान अनेकों प्रकार की सामग्रियों के अतिरिक्त अमृत कुम्भ कलश भी निकला इसकी मान्यता सदियों से चली आ रही है।

2) मत्स्य महापुराण में कुम्भ का वर्णन

मत्स्य महापुराण के अध्याय 249-251 में समुद्रमन्थन की एक रोचक कथा मिलती है। देवता और दानव हमेशा वर्चस्व के लिए युद्ध करते रहते थे। दानव अपनी शक्ति और गुरु शुक्राचार्य की संजीवनी विद्या के कारण बहुत शक्तिशाली थे। एक भीषण युद्ध में हजारों देवता मारे गए। तब इंद्रादि देवता ब्रह्मा जी के पास गए। ब्रह्मा जी ने उन्हें क्षीरसागर का मंथन करके अमृत प्राप्त करने का सुझाव दिया। समुद्रमंथन के समय देवता और दानव मिलकर मंदराचल को जोर-शोर से घुमाने लगे। समुद्र मंथन से चमकदार चंद्रमा, लक्ष्मी, सुरा, उच्चैः श्रवा (घोड़ा), कौस्तुभ मणि और पारिजात वृक्ष निकले। फिर ध्रुव से अग्नि उत्पन्न हुई और उससे कई जहरीले सर्प, विष और अमृत निकले। अमृत पाने के लिए देवता और दानव आपस में लड़ने लगे। भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर दानवों को अमृत दे दिया और देवताओं को बचा लिया। राहु ने छल से अमृत पी लिया लेकिन सूर्य और चंद्रमा ने विष्णु को बता दिया। विष्णु ने राहु का सिर धड़ से अलग कर दिया। इस तरह देवता अमर हो गए और दानव हार गए।

3) विष्णुपुराण में कुम्भ का वर्णन

विष्णुपुराण में समुद्रमन्थन की कथा को संक्षेप में इस प्रकार बताया गया है कि महर्षि दुर्वासा के शाप के कारण इंद्र और देवता कमजोर हो गए थे। दैत्य-दानवों ने देवताओं को पराजित कर तीनों लोकों पर अपना अधिकार कर लिया। पराजित देवता ब्रह्मा जी के साथ भगवान विष्णु के पास गए। विष्णु जी ने देवताओं को बताया कि अमर होने के लिए उन्हें अमृत पीना होगा और यह अमृत क्षीरसागर के मंथन से प्राप्त होगा। उन्होंने देवताओं को सलाह दी कि वे दैत्य-दानवों से मिलकर मंथन करें।

समुद्र मंथन में क्रमशः कल्पवृक्ष, अप्सराएं, चंद्रमा, विष, अमृत से भरा हुआ कलश लिए हुए धन्वंतरि और अंत में लक्ष्मी जी प्रकट हुईं। देवगण बहुत खुश थे क्योंकि उन्हें जो चाहिए था वो मिल गया था। लेकिन तभी बलि नाम के दैत्य ने धन्वंतरि के हाथ से अमृत का कलश छीन लिया। भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धरकर दैत्यों से कलश वापस ले लिया और इंद्र को दे दिया। इंद्र ने स्वयं अमृत पिया और फिर बाकी सभी देवताओं को अमृत पिलाया।

4) श्रीहरिवंश पुराण में कुम्भ का वर्णन

श्रीहरिवंश पुराण के भविष्य पर्व में समुद्र मंथन की कथा इस प्रकार वर्णित है कि देवता गंधमादन पर्वत पर भ्रमण कर रहे थे। वहां की सुगंध से सभी बहुत प्रसन्न हुए। दैत्यों ने सोचा कि अगर फूल की गंध इतनी अच्छी है तो फल का स्वाद कैसा होगा। लेकिन फल प्राप्त करने के लिए अमर होना जरूरी है। इसलिए उन्होंने अमृत प्राप्त करने के लिए समुद्र मंथन करने का फैसला किया। दैत्यों ने मंदराचल पर्वत को उखाड़ने की कोशिश की लेकिन सफल नहीं हुए। तब वे ब्रह्मा जी के पास गए। ब्रह्मा जी ने सरस्वती जी को बुलाया और उन्होंने सभी देवताओं, यक्ष, गंधर्व आदि को दैत्यों की मदद करने के लिए कहा। सभी मिलकर मंदराचल पर्वत को उखाड़कर मथानी और वासुकि नाग को रस्सी बनाकर समुद्र मंथन करने लगे। हजार साल तक मंथन करने के बाद समुद्र का पानी मीठा हो गया और दैत्यों ने उसे पी लिया। समुद्र मंथन से धन्वंतरि, मदिरा, लक्ष्मी, कौस्तुभ मणि, चंद्रमा, उच्चैःश्रवा घोड़ा और अंत में अमृत कलश निकला। लेकिन दैत्य अमृत नहीं पा सके। देवराज इंद्र को अमृत मिला। राहु नामक दैत्य ने छल से देवता का रूप धरकर अमृत पीने की कोशिश की लेकिन विष्णु जी ने उसका सिर धड़ से अलग कर दिया।

5) स्कंदपुराण में कुम्भ का वर्णन

ऋषि ने कहा, "मैं अब तुम्हें उस अद्भुत कलश की उत्पत्ति की कथा सुनाता हूँ। उत्तर दिशा में हिमालय के पास क्षीरसागर नामक एक समुद्र है। देवताओं और दानवों ने मिलकर इस सागर को मथने का निश्चय किया। समुद्र मंथन के दौरान सबसे पहले हलाहल नामक विष निकला, जिसे भगवान शिव ने पीकर संसार को बचाया। इसके बाद कई अद्भुत वस्तुएं निकलीं, जैसे कि पुष्पक विमान, ऐरावत हाथी, पारिजात वृक्ष, अप्सराएं, कौस्तुभ मणि, चंद्रमा, कुंडल, धनुष, लक्ष्मी, यमुना नदी, कामधेनु गाय और अंत में अमृत से भरा एक कलश। भगवान धन्वंतरि इस कलश को लेकर प्रकट हुए। जयंत, जो इंद्र के पुत्र थे, अमृत कलश लेकर स्वर्ग की ओर भाग रहे थे। दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य ने दैत्यों को इस बारे में सूचित किया और वे जयंत का पीछा करने लगे। जयंत बारह दिन तक

दैत्यों से छिपते हुए भागते रहे। भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर इस युद्ध को शांत करवाया और अमृत का वितरण किया।

युद्ध के दौरान अमृत कलश से कुछ बूंदें पृथ्वी पर चार स्थानों पर गिरीं — हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक। इन स्थानों पर गिरी हुई अमृत की इन बूंदों के कारण ये स्थान पवित्र हो गए और यहीं पर कुम्भ मेला आयोजित किया जाता है।

कुम्भ मेले का महत्व इस बात से भी है कि देवताओं ने अमृत कलश की रक्षा के लिए वृहस्पति, चंद्रमा, सूर्य और शनि को नियुक्त किया था। इन ग्रहों का एक विशेष संयोग होने पर ही कुम्भ मेला आयोजित किया जाता है।

पुराणों के अलावा, रामायण और महाभारत जैसे इतिहास ग्रंथों में भी समुद्र मंथन का वर्णन मिलता है।

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

4. महर्षि व्यास द्वारा कुल कितने पुराणों की रचना की गई है ?

.....

5. महापुराण की संज्ञा किसे दी जाती है ?

.....

6. मत्स्य पुराण के किस अध्याय में समुद्र मंथन की कथा मिलती है ?

.....

7. धनवंतरी से किसने अमृत कलश छीन लिया था ?

.....

8. देवताओं ने अमृत कलश की रक्षा का दायित्व किसे दिया था?

.....

2.5 रामायण में कुम्भ का वर्णन

रामायण के बालकांड में, महर्षि विश्वामित्र श्रीराम और लक्ष्मण को विशालापुरी का इतिहास सुनाते हुए समुद्र मंथन की कथा का वर्णन करते हैं।

अमृत को पाने के लिए देवताओं और दैत्यों के बीच भीषण युद्ध छिड़ गया। सभी दैत्य और राक्षस एकजुट हो गए। तब भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर लिया और अमृत को अपने अधीन कर लिया। जो भी असुर अमृत छीनने का प्रयास करता, भगवान विष्णु उसे मार देते। इस प्रकार देवताओं ने दैत्यों का संहार कर दिया और इंद्र फिर से देवताओं के राजा बन गए।

2.6 महाभारत में कुम्भ का वर्णन

महाभारत के आदिपर्व के अध्याय 17 और 18 में समुद्र मंथन का विस्तृत वर्णन मिलता है। यह कथा तब शुरू होती है जब अदिति और दिति नाम की देवियाँ एक अत्यंत सुंदर अश्व, उच्चैःश्रवा को देखती हैं। वे इस बात से बहुत उत्सुक होती हैं कि यह अश्व कहाँ से आया है। तब उन्हें बताया जाता है कि यह अश्व समुद्र मंथन से प्राप्त हुआ है। इसके उपरान्त समुद्र से चंद्रमा निकला। इसके बाद लक्ष्मी, सुरा (मद्य), उच्चैःश्रवा घोड़ा, कौस्तुभ मणि, पारिजात वृक्ष, कामधेनु गाय और धन्वंतरि (आयुर्वेद के देवता) अमृत कलश लेकर प्रकट हुए। अमृत कलश देखकर सभी दानव उस पर अपना अधिकार जताने लगे।

पुराणों और इतिहास ग्रंथों में वर्णित समुद्र मंथन की कथाएँ एक ही घटना को आधार बनाकर भी कई रूपों में प्रस्तुत होती हैं। सभी में अमृत प्राप्ति का उद्देश्य समान है, लेकिन समुद्र मंथन का उपक्रम अलग-अलग बताया गया है। विशेषकर, रामायण को छोड़कर, पुराणों और महाभारत दोनों में समुद्र मंथन का वर्णन मिलता है। इन दोनों ग्रंथों के रचयिता एक ही माने जाते हैं – महर्षि वेद व्यास।

2.7 कुम्भ पर्व और आदि शंकराचार्य का योगदान

कुम्भ पर्व का महत्व धीरे-धीरे बढ़ता गया और लोग इस पर्व से जुड़ते गए। लेकिन कुम्भ पर्व के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ आठवीं शताब्दी में आया जब आदि शंकराचार्य ने भारतवर्ष में चार मठों की स्थापना की और कुम्भ के महत्व को और अधिक बढ़ाया।

आदि शंकराचार्य ने स्वयं प्रयागराज के झूसी में एक विशाल संत सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य सनातन धर्म की रक्षा और प्रचार करना था। इस सम्मेलन में शास्त्रों के साथ-साथ शस्त्रों का भी पूजन किया गया। इसी सम्मेलन में दशनामी अखाड़ों की स्थापना की गई जो आज भी विद्यमान हैं। दशनामी अखाड़े कुम्भ मेले में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजन करते हैं। आदि शंकराचार्य के प्रयासों से कुम्भ पर्व का महत्व और बढ़ गया और यह एक राष्ट्रीय पर्व बन गया। कुम्भ मेले में अब लाखों लोग भाग लेते हैं और यह भारत की सांस्कृतिक विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है।

आदि शंकराचार्य ने भारत में चार कुम्भ पीठों की स्थापना कर कुम्भ मेले को एक नया आयाम दिया। उन्होंने प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में सतत संत समागम की परंपरा स्थापित की। इस प्रकार, कुम्भ मेला एक ऐसा मंच बन गया जहां विभिन्न मठों के अधिपति, संत, साधु, सन्यासी और धर्माचार्य एक साथ आकर धार्मिक विचारों का आदान-प्रदान करते थे।

कुम्भ मेले ने शैव, वैष्णव और शाक्त संप्रदायों के लोगों को एक मंच पर लाकर सनातन धर्म को मजबूत किया। इस मेले के माध्यम से भारत के विभिन्न भागों के संत-महात्मा एक साथ आते थे। उदाहरण के लिए, सन् 1515 में बंगाल से चैतन्य महाप्रभु भी कुम्भ मेले में शामिल हुए थे। धीरे-धीरे जैन, बौद्ध और सिख धर्म के लोग भी इस मेले में आने लगे।

2.8 ज्योतिषशास्त्रीय दृष्टिकोण से कुम्भ मेले का इतिहास

पौराणिक मान्यताओं के साथ-साथ, ज्योतिषशास्त्र भी कुम्भ मेले के महत्व को सिद्ध करता है। ज्योतिष के अनुसार, सूर्य, चंद्रमा, गुरु और शनि ग्रहों की विशेष स्थितियों के कारण कुछ खास खगोलीय ऊर्जाएं पृथ्वी पर स्थित जल स्रोतों को प्रभावित करती हैं। यह ऊर्जित जल मनुष्य के स्वास्थ्य और कार्मिक ऊर्जा को प्रभावित करता है।

कुम्भ मेला न केवल एक धार्मिक आयोजन है, बल्कि इसका ज्योतिषीय महत्व भी अत्यंत गहरा है। ज्योतिषियों के अनुसार, कुम्भ का विशेष महत्व बृहस्पति के कुम्भ राशि में प्रवेश और सूर्य के मेष राशि में प्रवेश से जुड़ा है। इन ग्रहों की विशिष्ट स्थिति हरिद्वार में गंगा जल को औषधीय गुण प्रदान करती है, जिसके कारण लाखों श्रद्धालु पवित्र स्नान करने के लिए यहां आते हैं।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से, कुम्भ का काल ध्यान और एकाग्रता के लिए अत्यंत अनुकूल माना जाता है। ग्रहों की विशेष स्थिति साधकों को गहन आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करने में सहायता करती है। यद्यपि सभी हिंदू त्योहारों को समान श्रद्धा से मनाया जाता है, किंतु कुम्भ मेला अपनी विशिष्टता के कारण सबसे अधिक पर्यटकों को आकर्षित करता है।

- **प्रयागराज में कुम्भ** – जब माघ अमावस्या के दिन सूर्य और चंद्रमा मकर राशि में होते हैं और गुरु मेष राशि में होता है, तब प्रयागराज में कुम्भ लगता है। यह खगोलीय स्थिति हर 12 वर्ष में एक बार बनती है।
- **हरिद्वार में कुम्भ** – जब गुरु कुम्भ राशि में होता है और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है, तब हरिद्वार में कुम्भ लगता है।
- **उज्जैन में कुम्भ** – जब गुरु कुम्भ राशि में प्रवेश करता है, तब उज्जैन में कुम्भ लगता है।

- **नासिक में कुम्भ** – जब सूर्य और गुरु दोनों सिंह राशि में हों। नासिक में गोदावरी नदी के किनारे कुम्भ मेला लगता है।

ज्योतिषशास्त्र के इन नियमों को वैज्ञानिकों ने भी सिद्ध किया है। जापानी वैज्ञानिक मसारु ईमोटो ने अपने शोध में पाया कि जल में अत्यंत विशेष प्रकार की संरचनाएं निर्मित होती हैं जो वातावरण, कार्मिक ऊर्जाओं और भावनाओं से प्रभावित होती हैं। ये जल क्रिस्टल मनुष्य के शरीर को प्रभावित करते हैं क्योंकि शरीर का अधिकांश हिस्सा जल से बना होता है।

इस प्रकार, ज्योतिषशास्त्र और वैज्ञानिक शोध दोनों ही कुम्भ मेले के महत्व को सिद्ध करते हैं। कुम्भ मेले में स्नान करने से मनुष्य को सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है और वह स्वस्थ रहता है।

2.9 हर्षवर्धन काल में कुम्भ मेले का ऐतिहासिक वर्णन

कुम्भ मेले का सबसे पुराना लिखित विवरण हमें सम्राट हर्षवर्धन के काल में मिलता है। हर्षवर्धन कन्नौज के राजा थे। उनके शासनकाल में चीनी यात्री ह्वेनसांग भारत आया था। ह्वेनसांग एक धर्मनिष्ठ बौद्ध भिक्षु था और वह बौद्ध धर्म के पवित्र स्थलों को देखने भारत आया था।

ह्वेनसांग ने भारत के विभिन्न हिस्सों का भ्रमण किया और अपने अनुभवों को अपनी यात्रा वृत्तान्त में लिखा। उसने भारत के लोगों के जीवन और रीति-रिवाजों का भी विस्तृत वर्णन किया है। ह्वेनसांग ने 630 ईस्वी से 644 ईस्वी के बीच भारत की यात्रा की थी। 644 ईस्वी में वह प्रयाग में आयोजित छठे कुम्भ मेले में शामिल हुआ था।

ह्वेनसांग के अनुसार, हर्षवर्धन पिछले 30 वर्षों से लगातार कुम्भ मेले का आयोजन कर रहा था। इस मेले में 5 लाख से अधिक लोग शामिल हुए थे। इसमें 18 देशों के राजा भी मौजूद थे। ब्राह्मण, साधु, अनाथ और बौद्ध भिक्षुओं की संख्या बहुत अधिक थी। यह मेला गंगा और यमुना नदियों के संगम पर लगाया गया था। पहले दिन मेले के लिए एक अस्थायी मंदिर बनाया गया था। आज भी इसी तरह की अस्थायी संरचनाएं कुम्भ मेले में बनाई जाती हैं। दूसरे और तीसरे दिन सूर्य और शिव की मूर्तियों की पूजा की गई। हर्षवर्धन शुरू में शिव का उपासक था।

इस मेले में भिक्षुओं, साधुओं, ब्राह्मणों और गरीबों को भोजन, पेय पदार्थ, फूल, सुगंधित पदार्थ, सोने के सिक्के, मोती और कपड़े दान किए गए। यह मेला 75 दिनों तक चला। ह्वेनसांग के अनुसार, हर्षवर्धन ने इस मेले में अपनी पांच साल की बचत खर्च कर दी थी। उसने अपने घोड़ों, हाथियों और सैनिक उपकरणों को भी दान में दे दिया था। यहां तक कि उसने अपनी बहन से एक पुराना वस्त्र मांगा और उसे पहनकर पूजा की।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

9. प्रयाग में कुम्भ कब लगता है ?

.....

10. हरिद्वार में कुम्भ कब लगता है ?

.....

11. नासिक में किस नदी के किनारे कुम्भ मेला लगता है ?

.....

12. ह्वेनसांग ने भारत की यात्रा कब की थी ?

13. हर्षवर्धन प्रारम्भ में किसका उपासक था ?

2.10 गुप्त काल में कुम्भ मेला

गुप्त काल, भारतीय इतिहास का एक स्वर्णिम युग था। इस काल में धर्म, कला और संस्कृति का अत्यधिक विकास हुआ था। इसी काल में कुम्भ मेले का भी उल्लेख मिलता है।

नरसिंह पुराण, जो कि पांचवीं या छठी शताब्दी का ग्रंथ माना जाता है, में कुम्भ मेले का वर्णन मिलता है। इस पुराण में उल्लेख है कि गुप्त काल के दौरान एक महीने तक चलने वाला एक बड़ा मेला आयोजित किया जाता था। यह माना जाता है कि यह मेला माघ महीने में आयोजित किया जाता था। भारत के विभिन्न हिस्सों से लोग इस मेले में शामिल होने के लिए आते थे। विभिन्न वर्गों के लोग इस मेले में एक साथ आते थे। नरसिंह पुराण के अनुसार यह मेला प्रतिवर्ष नियमित रूप से आयोजित किया जाता था, जैसा कि आज भी कुम्भ मेला आयोजित किया जाता है।

2.11 मुगल काल में कुम्भ मेला

मुगल सम्राट अकबर के समय प्रयाग का नाम बदलकर इलाहाबाद रखा गया था। उन्होंने 1582 में इस स्थान पर एक किला बनवाया, जो आज भी कुम्भ मेले के मैदान के एक छोर पर स्थित है।

सातवीं शताब्दी के बाद मुगल शासकों के आगमन से प्रयाग का विकास और अधिक गति से हुआ। अकबरनामा और आइने अकबरी जैसे ऐतिहासिक ग्रंथों के अनुसार, मुगल सम्राट अकबर ने 1584 ईस्वी में प्रयाग में एक विशाल किला बनवाया और एक नए शहर की स्थापना की। उन्होंने इस शहर का नाम 'अल्लाह आबाद' रखा, जो बाद में 'इलाहाबाद' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। हाल ही में योगी आदित्यनाथ के प्रयासों से इसका नाम पुनः 'प्रयागराज' रखा गया है।

अकबर के इस निर्णय से प्रयाग का महत्व और बढ़ गया और यह मुगल साम्राज्य का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया। अकबर के किले ने न केवल शहर की सुरक्षा को मजबूत किया बल्कि इसकी शोभा में भी वृद्धि की। मुगल काल के दौरान प्रयाग में कई भव्य इमारतें और बाग बनाए गए, जिससे यह एक खूबसूरत शहर बन गया।

मुगल काल में प्रयाग का विकास और अधिक गति से हुआ। अकबर ने न केवल यहां एक विशाल किला बनवाया बल्कि शहर के विस्तार और विकास पर भी ध्यान दिया। उसने बेनी बाँध और बक्शी बाँध का निर्माण कराया जिससे दक्षिण-पश्चिम की निचली भूमि पर नया नगर बसा। अकबर के समय में करेलाबाग, खुल्दाबाद, खुसरोबाग आदि क्षेत्रों में आबादी बिखरी हुई थी।

अकबर ने प्रयाग को संतों और फकीरों के लिए एक आकर्षक केंद्र बनाने के लिए दरगाहें और सरायें बनवाईं। इसी कारण कुछ समय के लिए प्रयाग को फकीराबाद भी कहा जाने लगा। शहर के विभिन्न मुहल्लों के नाम जैसे सरायगढ़ी, खुल्दाबाद, शहराराबाग आदि इस बात के प्रमाण हैं कि ये मुगलों द्वारा बसाए गए थे। दारागंज का नाम शाहजादा दाराशिकोह के नाम पर रखा गया था।

हिंदू राजाओं ने भी प्रयाग के विकास में योगदान दिया। राजा नवलराय ने तालाब नवलराय की स्थापना की और महाराज जयसिंह ने कटरा बसाया। औरंगजेब ने कटरा को जागीर के रूप में जयपुर राज्य को दिया था।

मुगलों और सूफी संतों के नाम पर बने मुहल्ले, दायरे और सरायें प्रयाग नगर के पुराने अंग हैं। इनके अलावा भी कई ऐसे स्थान हैं जिनके बारे में विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है।

1398 तैमूर का आक्रमण और हरिद्वार महाकुम्भ नरसंहार – 1398 में तैमूर लंग ने भारत पर आक्रमण

किया और दिल्ली को ध्वस्त कर दिया। तैमूर ने हिंदुओं के प्रति सुल्तान की सहिष्णुता को दंड स्वरूप यह किया। इसके बाद तैमूर ने हरिद्वार कुम्भ मेले की ओर कूच किया और हजारों श्रद्धालुओं का नरसंहार किया। यह घटना कुम्भ मेले के इतिहास में एक काला अध्याय है। इसका मतलब है कि उस समय हरिद्वार में इतनी बड़ी संख्या में हिंदू केवल कुम्भ के समय ही आते होंगे। इसलिए, कुम्भ पर्व की परंपरा इससे पहले से ही शुरू हो चुकी होगी।

कुम्भ पर्व का इतिहास काफी पुराना है और इसके बारे में कई ऐतिहासिक दस्तावेजों में उल्लेख मिलता है।

दबिस्तान-ए-मुजाहिब – 17वीं शताब्दी में लिखे गए इस ग्रंथ में हरिद्वार में मुंडियों और नागाओं के बीच हुए भीषण संघर्ष का वर्णन है, जो कुम्भ के दौरान हुआ था।

2.12 ब्रिटिश काल में कुम्भ मेला

मुगलों के बाद भारत में अंग्रेजों का शासन कायम हुआ। 1801 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने प्रयाग का नाम बदलकर इलाहाबाद रख दिया। उन्होंने किले पर कब्जा कर लिया और आसपास छावनियां बनाईं। इसके बाद उन्होंने ट्रिनिटी चर्च का निर्माण कराया और अंग्रेजों के रहने के लिए पक्के मकान बनवाए। ब्रिटिश काल में कुम्भ मेले से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण अंशों का विवेचन निम्नवत है

- **1780 ब्रिटिशों द्वारा मठवासी समूहों के शाही स्नान के लिए व्यवस्था की स्थापना** – ब्रिटिश शासन के दौरान कुम्भ मेले में व्यवस्था बनाए रखने के लिए कई प्रयास किए गए। ब्रिटिशों ने मठवासी समूहों के शाही स्नान के लिए विशेष व्यवस्था की। यह दर्शाता है कि ब्रिटिश सरकार कुम्भ मेले के महत्व को समझती थी।
- **1820 हरिद्वार मेले में भगदड़** – 1820 में हरिद्वार मेले में भगदड़ मच गई जिसमें 430 लोग मारे गए। यह घटना दर्शाती है कि कुम्भ मेले में बड़ी संख्या में लोगों के एकत्र होने के कारण सुरक्षा एक बड़ी चुनौती थी।
- **1860 का दशक** – ब्रिटिश काल में भी कुम्भ मेले का आयोजन होता रहा। हालांकि, इतिहासकार काम मैकलीन के अनुसार, 1860 के दशक से पहले प्रयागराज में कुम्भ मेले का उल्लेख किसी भी प्राचीन स्रोत में नहीं मिलता है। माघ मेला उस समय से काफी प्रसिद्ध था और हर साल आयोजित होता था।
- **19वीं शताब्दी के मध्य से कुम्भ मेले का आकार और महत्व बढ़ने लगा**। ब्रिटिश सरकार ने कुम्भ मेले के आयोजन में हस्तक्षेप किया और इसे सुरक्षित बनाने के प्रयास किए, जिससे तीर्थयात्रियों की संख्या में वृद्धि हुई।
- **1906 ब्रिटिश कलवारी ने साधुओं के बीच मेले में हुई लड़ाई में बीचबचाव किया** – 1906 में ब्रिटिश कलवारी ने साधुओं के बीच मेले में हुई लड़ाई में बीचबचाव किया। यह दर्शाता है कि ब्रिटिश सरकार कुम्भ मेले में शांति बनाए रखने के लिए सक्रिय भूमिका निभा रही थी।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

14. दबिस्तान ए मुजाहिब के विषय में लिखिए।

.....

15. हरिद्वार महाकुम्भ नरसंहार कब हुआ और किसने किया ?

.....

16. ब्रिटिशों द्वारा मठवासी समूहों के लिए शाही स्नान की व्यवस्था की स्थापना कब की गई ?

2.13 कुम्भ मेले के अन्य ऐतिहासिक साक्ष्य

कुम्भ मेले का इतिहास अत्यंत समृद्ध है और इसकी जड़ें प्राचीन भारत में मिलती हैं। नारद पुराण में कुम्भ को ज्ञान और प्रकाश का उत्सव बताया गया है। भारत में सदियों से कुम्भ का पूजन उत्सव के रूप में मनाया जाता रहा है। इसके बारे में कई प्राचीन ग्रंथों में उल्लेख मिलता है।

- ❖ **300 ईसा पूर्व** — इतिहासकार एस.बी. राय के अनुसार, कुम्भ मेले का वर्तमान स्वरूप लगभग 300 ईसा पूर्व के आसपास विकसित हुआ। विभिन्न पुराणों और अन्य प्राचीन ग्रंथों में उल्लेखित अमृत कलश के चार स्थानों पर गिरने की कथा ने कुम्भ मेले को एक पौराणिक आधार प्रदान किया। अनुष्ठानिक नदी स्नान का इतिहास कम से कम 10,000 ईसा पूर्व का है। यह संकेत करता है कि नदी स्नान का महत्व प्राचीन काल से ही रहा है। कुम्भ मेला इसी परंपरा का एक विकासक्रम है।
- ❖ **400 ईसा पूर्व** — चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आए यूनानी दूत ने एक मेले का वर्णन किया है। यह दर्शाता है कि मेले उस समय भी सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा थे।
- ❖ **547 ईस्वी** — अभान नामक सबसे प्रारंभिक अखाड़े का लिखित प्रतिवेदन इसी समय का है। यह दर्शाता है कि कुम्भ मेले में अखाड़ों की भूमिका बहुत पहले से ही रही है। अखाड़े न केवल धार्मिक गतिविधियों का केंद्र थे बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।
- ❖ **600 ईसा पूर्व** — बौद्ध ग्रंथों में नदी मेलों के उल्लेख मिलते हैं। यह दर्शाता है कि नदी तट पर मेलों का आयोजन प्राचीन भारत में एक प्रचलित परम्परा थी।
- ❖ **7वीं शताब्दी** — निरंजनी अखाड़े का गठन हुआ। निरंजनी अखाड़ा आज भी कुम्भ मेले में एक प्रमुख अखाड़ा है और इसका योगदान कुम्भ मेले के विकास में अहम रहा है। अखाड़े साधु-संतों को एक मंच प्रदान करते थे जहां वे धार्मिक ज्ञान का प्रसार कर सकते थे। अखाड़ों ने कुम्भ मेले को एक सामाजिक उत्सव का रूप भी दिया और लोगों को एक साथ लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- ❖ **1146** — जूना अखाड़े का गठन हुआ। जूना अखाड़ा आज भी कुम्भ मेले में एक प्रमुख अखाड़ा है और इसका योगदान कुम्भ मेले के विकास में अहम रहा है।
- ❖ **1300** — कानफटा योगी चरमपन्थी साधु राजस्थान सेना में कार्यरत थे। यह दर्शाता है कि साधु समाज उस समय भी राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाता था।
- ❖ **1565 में मधुसूदन सरस्वती ने दशनामी अखाड़े का गठन किया और इसकी लड़ाका इकाइयाँ स्थापित कीं।** यह निर्णय उस समय के सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों के कारण लिया गया था। इन लड़ाका इकाइयों ने अखाड़ों को सुरक्षा प्रदान की और साधु-संतों को संगठित किया। कुम्भ मेला धीरे-धीरे चारों स्थानों पर विकसित होता गया। अभान अखाड़ा, आगम अखाड़ा, निरंजनी अखाड़ा और जूना अखाड़ा जैसे कई अखाड़ों की स्थापना हुई। सनातन धर्म की रक्षा के लिए इन अखाड़ों की संख्या बढ़कर 13 हो गई।
- ❖ **1664** में एक फ्रांसीसी यात्री ने भारत में 12 लाख साधुओं के होने का अनुमान लगाया था।
- ❖ **1780** में शाही परंपरा की स्थापना हुई जो कुम्भ मेले के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुई। सिखों का सशस्त्र शाही स्नान और शोभा यात्रा कुम्भ की शान बन गया।
- ❖ **1678 प्रणामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक, महामति श्री प्राणनाथजी को विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक घोषित** — प्रणामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक, महामति श्री प्राणनाथजी को विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक घोषित किया गया।

यह घटना प्रणामी सम्प्रदाय के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ थी और इसने कुम्भ मेले में प्रणामी सम्प्रदाय की उपस्थिति को बढ़ावा दिया।

- ❖ **1684 फ्रांसीसी यात्री तवेर्निए का अनुमान** — फ्रांसीसी यात्री तवेर्निए ने भारत में 12 लाख हिंदू साधुओं के होने का अनुमान लगाया। यह अनुमान भले ही अतिशयोक्तिपूर्ण हो, लेकिन यह दर्शाता है कि उस समय भारत में साधुओं की संख्या बहुत अधिक थी और कुम्भ मेले में भी बड़ी संख्या में साधु भाग लेते थे।
- ❖ **1690 नासिक में शैव और वैष्णव साम्प्रदायों के बीच संघर्ष हुआ जिसमें 60,000 लोग मारे गए।**
- ❖ **1760** — शैव और वैष्णवों के बीच हरिद्वार मेले में संघर्ष हुआ जिसमें 1,800 लोग मारे गए। ये घटनाएं दर्शाती हैं कि कुम्भ मेले में धार्मिक मतभेदों के कारण हिंसा भी होती थी। हालांकि, कुम्भ मेले का मूल उद्देश्य शांति और सद्भाव का प्रचार करना है।
- ❖ **1954 प्रयागराज कुम्भ में भारी भीड़** — 1954 में प्रयागराज में आयोजित कुम्भ में लगभग 40 लाख लोगों ने भाग लिया। यह भारत की कुल जनसंख्या का 1 प्रतिशत था। इस मेले में भगदड़ में कई सौ लोग मारे गए। 1989 में यह संख्या बढ़कर 1.5 करोड़ हो गई और 2001 में 7 करोड़ श्रद्धालुओं ने कुम्भ में डुबकी लगाई।
- ❖ **1989 गिनिज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स** — 1989 में गिनिज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स ने 6 फरवरी को प्रयाग मेले में 1.5 करोड़ लोगों की उपस्थिति को प्रमाणित किया। यह उस समय तक एक ही उद्देश्य के लिए एकत्रित लोगों की सबसे बड़ी भीड़ थी।
- ❖ **1995 प्रयागराज का अर्धकुम्भ** — 1995 में प्रयागराज में आयोजित अर्धकुम्भ में 30 जनवरी के स्नान दिवस को 2 करोड़ लोगों की उपस्थिति दर्ज की गई। यह एक अभूतपूर्व संख्या थी और इसने कुम्भ मेले के महत्व को और अधिक उजागर किया।
- ❖ **1998 हरिद्वार महाकुम्भ**—1998 में हरिद्वार में आयोजित महाकुम्भ में चार महीनों के दौरान 5 करोड़ से अधिक श्रद्धालुओं ने भाग लिया। विशेष रूप से, 14 अप्रैल को एक दिन में ही 1 करोड़ लोग उपस्थित थे। यह संख्या कुम्भ मेले की लोकप्रियता का प्रमाण है।
- ❖ **2001 प्रयागराज कुम्भ**—2001 में प्रयागराज में आयोजित मेले में छह सप्ताहों के दौरान 7 करोड़ श्रद्धालुओं ने भाग लिया। 24 जनवरी को अकेले दिन 3 करोड़ लोग उपस्थित थे। यह संख्या कुम्भ मेले के इतिहास में एक नया रिकॉर्ड थी।
- ❖ **2003 नासिक मेला** — 2003 में नासिक मेले में मुख्य स्नान दिवस पर 60 लाख लोग उपस्थित थे। यह दर्शाता है कि कुम्भ मेले का महत्व केवल प्रयागराज और हरिद्वार तक ही सीमित नहीं है, बल्कि अन्य कुम्भ स्थलों पर भी लाखों लोग एकत्र होते हैं।
- ❖ **2004 उज्जैन मेला** — 2004 में उज्जैन में आयोजित कुम्भ मेले में 5 अप्रैल, 19 अप्रैल, 22 अप्रैल, 24 अप्रैल और 4 मई को मुख्य स्नान दिवस थे। इस मेले में भी लाखों श्रद्धालुओं ने भाग लिया।
- ❖ **2007 प्रयागराज में अर्धकुम्भ** — 2007 में प्रयागराज में अर्धकुम्भ का आयोजन 3 जनवरी 2007 से 26 फरवरी 2007 तक किया गया। इस अर्धकुम्भ में भी लाखों श्रद्धालुओं ने भाग लिया और यह एक भव्य आयोजन रहा।
- ❖ **2010 हरिद्वार महाकुम्भ** — 2010 में हरिद्वार में महाकुम्भ का आयोजन 14 जनवरी 2010 से 28 अप्रैल 2010 तक किया गया। इस महाकुम्भ में करोड़ों श्रद्धालुओं ने भाग लिया। यह भारत का सबसे बड़ा धार्मिक समागम था। इस महाकुम्भ में कई सांस्कृतिक कार्यक्रम, धार्मिक अनुष्ठान और सामाजिक सेवा कार्यक्रम आयोजित किए गए।
- ❖ **2013 प्रयागराज कुम्भ** — 2013 में प्रयागराज में कुम्भ का आयोजन 14 जनवरी से 10 मार्च 2013 के बीच किया गया। यह कुल 55 दिनों के लिए था। इस दौरान इलाहाबाद (प्रयागराज) सर्वाधिक लोकसंख्या वाला शहर बन गया। 5 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में 8 करोड़ लोगों का उपस्थित होना विश्व की सबसे अद्भुत

घटना थी। इस कुम्भ में सुरक्षा और यातायात व्यवस्था को बेहतर बनाने के लिए कई नए उपाय किए गए थे।

- ❖ **2014 कुम्भ मेला यात्रा वृत्तांत** — वर्ष 2014 में डॉ. वरुण चौधरी अन्तरिक्ष द्वारा लिखित पुस्तक “कुम्भ मेला एक डॉक्टर की यात्रा” प्रकाशित हुई। यह पुस्तक 2013 में प्रयागराज में आयोजित कुम्भ मेले का एक विस्तृत यात्रा वृत्तांत है। इस पुस्तक के माध्यम से लेखक ने कुम्भ मेले के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है।
- ❖ **2015 नासिक और त्र्यम्बकेश्वर कुम्भ** — वर्ष 2015 में नासिक और त्र्यम्बकेश्वर में एक साथ कुम्भ मेला आयोजित किया गया। यह कुम्भ मेला 14 जुलाई, 2015 को प्रारंभ हुआ और 25 सितंबर, 2015 को समाप्त हुआ।
- ❖ **2016 उज्जैन कुम्भ** — वर्ष 2016 में उज्जैन में कुम्भ मेला 22 अप्रैल से प्रारंभ हुआ। इस कुम्भ मेले में लाखों श्रद्धालुओं ने भाग लिया।
- ❖ **2019 प्रयागराज अर्धकुम्भ** — वर्ष 2019 में प्रयागराज में अर्धकुम्भ का आयोजन किया गया। अर्धकुम्भ, महाकुम्भ के छह वर्ष बाद होता है।
- ❖ **2021 हरिद्वार कुम्भ** — वर्ष 2021 में हरिद्वार में महाकुम्भ का आयोजन किया गया। कोरोना महामारी के कारण इस कुम्भ मेले में कुछ बदलाव किए गए थे।
- ❖ **2025 प्रयागराज कुम्भ** — वर्ष 2025 में प्रयागराज में कुम्भ मेले का आयोजन होना है।

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

17. जूना अखाड़े का गठन कब हुआ?

.....

18. निरंजनी अखाड़े के सम्बन्ध में लिखें।

.....

19. 1760 ईस्वी में हरिद्वार में किन-किन के बीच संघर्ष हुआ था?

.....

20. प्रयागराज में आगामी महाकुम्भ कब लगेगा?

.....

2.14 सारांश

कुम्भ मेले का इतिहास काफी पुराना है। कुछ मान्यताओं के अनुसार इसकी शुरुआत समुद्र मंथन के समय से ही हो गई थी, जबकि अन्य मान्यताओं के अनुसार आदि शंकराचार्य ने इसकी शुरुआत की थी।

शास्त्रों के अनुसार पृथ्वी का एक वर्ष देवताओं के लिए एक दिन के बराबर होता है। इसलिए हर बारह वर्ष पर एक स्थान पर कुम्भ मेले का आयोजन किया जाता है। यह भी माना जाता है कि 144 वर्षों बाद स्वर्ग में भी कुम्भ मेला लगता है और उसी वर्ष पृथ्वी पर महाकुम्भ का आयोजन किया जाता है। महाकुम्भ का सबसे पवित्र

स्थान प्रयाग माना जाता है।

वैदिक काल से ही कुम्भ पर्व मनाया जाता रहा है। यह प्रयाग नगर की स्थापना से भी पुराना है। हजारों वर्षों से लाखों लोग गंगा और यमुना के संगम पर लगने वाले इस मेले में आते हैं। स्कंद पुराण में कुम्भ के महत्त्व का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जो व्यक्ति कुम्भ का लाभ प्राप्त करता है, देवता उसका नमन करते हैं, जैसे भिखारी किसी धनवान को नमन करते हैं।

तान्येव यः पुमान् योगेऽस्मृतत्वाय कल्पते।

देवा नमन्ति तत्रस्थान् यथा रंकाः धनाधिपान्।

अर्थ: जो व्यक्ति कुम्भ में आकर पवित्र स्नान करता है, वह अमरत्व को प्राप्त करने के योग्य हो जाता है। देवता उसका नमन करते हैं, जैसे भिखारी किसी धनवान को नमन करते हैं।

इस श्लोक से स्पष्ट है कि कुम्भ पर्व का धार्मिक दृष्टिकोण से बहुत अधिक महत्व है। कुम्भ में आने वाले व्यक्ति को देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त होता है। इसीलिए कुम्भ पर्व को हिंदुओं का सबसे बड़ा मेला माना जाता है।

ऋग्वेद, अथर्ववेद, शतपथ ब्राह्मण जैसे वैदिक ग्रंथों के साथ-साथ पौराणिक ग्रंथों और ज्योतिष शास्त्र के साक्ष्यों से कुम्भ मेले की प्राचीनता स्पष्ट होती है। अग्नि, कूर्म, गरुड़, वराह, वामन, मत्स्य, पद्म, शिव, विष्णु, स्कंद, लिंग, हरिवंश, श्रीमद् भागवत पुराण, महाभारत और वाल्मीकि रामायण जैसे प्राचीन ग्रंथों में भी कुम्भ महापर्व के बारे में उल्लेख मिलता है, जो इसकी प्राचीनता को दर्शाता है।

भारतीय धर्म दर्शनों के अनुसार ऋषि-महर्षि और संत परमात्मा की प्राप्ति के लिए निर्जन वनों, हिमालय की गुफाओं और बर्फीली चोटियों में तपस्या करते थे। ये ऋषि-महर्षि अपनी साधना का कुछ अंश जन कल्याण के लिए राजाओं के माध्यम से प्रसाद के रूप में वितरित करते थे। कुम्भ के अवसर पर ये ऋषि-महर्षि लोगों को धर्म, अध्यात्म और ज्ञान का उपदेश देते थे। इस प्रकार, यह परंपरा हजारों वर्षों से चली आ रही है और आज कुम्भ मेले के रूप में विकसित हुई है। कुम्भ मेले के विकास में आगम अखाड़ों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। माना जाता है कि सर्वप्रथम आगम अखाड़ा की स्थापना हुई और बाद में इसका विखंडन होकर अन्य अखाड़े बने। इन अखाड़ों ने कुम्भ मेले को संगठित रूप दिया और इसे एक धार्मिक और सामाजिक आयोजन के रूप में विकसित किया।

यह संभव है कि कुम्भ मेले की उत्पत्ति एक छोटे समूह के द्वारा की गई हो और धीरे-धीरे यह एक बड़े पैमाने का त्योहार बन गया हो। समय के साथ, इस त्योहार को पौराणिक कथाओं से जोड़कर और अधिक महत्व दिया गया। कुम्भ मेले की उत्पत्ति के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है। यह संभव है कि कुम्भ मेला मूल रूप से एक स्थानीय स्नान उत्सव रहा हो, जिसे बाद में समुद्र मंथन की कथा से जोड़कर एक बड़े पैमाने का त्योहार बना दिया गया हो। कुम्भ का इतिहास सनातन काल से अनेक कालों से गुजरता हुआ वर्तमान समय तक चलता चला आ रहा है।

2.15 अभ्यास के प्रश्न

1. पद्मपुराण के अनुसार कुम्भ की ऐतिहासिक विवेचना कीजिए।
2. स्कंद पुराण के अनुसार कुम्भ के ऐतिहासिक विवेचना कीजिए।
3. वेदों में निहित कुम्भ के तत्वों की विवेचना कीजिए।
4. सम्राट हर्षवर्धन के समय में कुम्भ मेले के इतिहास की विवेचना कीजिए।
5. कुम्भ मेले से जुड़ी हुई दो पौराणिक कथाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
6. कुम्भ का विस्तार पूर्वक ऐतिहासिक विवेचन कीजिए।

2.16 चर्चा के बिन्दु

1. पुराणों में वर्णित कुम्भ के विभिन्न पौराणिक आख्यानों की चर्चा कीजिए।
2. कुम्भ के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर चर्चा कीजिए।

2.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

- 1) महर्षि वेद व्यास
- 2) कलश
- 3) ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद
- 4) अठारह
- 5) श्रीमद्भागवत पुराण को
- 6) मत्स्य महापुराण के अध्याय 249–251 में समुद्रमन्थन की कथा मिलती है।
- 7) बलि नाम के दैत्य ने
- 8) देवताओं ने अमृत कलश की रक्षा के लिए वृहस्पति, चंद्रमा, सूर्य और शनि को नियुक्त किया था।
- 9) जब माघ अमावस्या के दिन सूर्य और चंद्रमा मकर राशि में होते हैं और गुरु मेष राशि में होता है, तब प्रयागराज में कुम्भ लगता है।
- 10) जब गुरु कुम्भ राशि में होता है और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है, तब हरिद्वार में कुम्भ लगता है।
- 11) नासिक में गोदावरी नदी के किनारे कुम्भ मेला लगता है।
- 12) ह्वेनसांग ने 630 ईस्वी से 644 ईस्वी के बीच भारत की यात्रा की थी।
- 13) हर्षवर्धन शुरू में शिव का उपासक था।
- 14) 17वीं शताब्दी में लिखे गए इस ग्रंथ में हरिद्वार में मुंडियों और नागाओं के बीच हुए भीषण संघर्ष का वर्णन है, जो कुम्भ के दौरान हुआ था।
- 15) हरिद्वार महाकुम्भ नरसंहार 1398 में तैमूर लंग ने किया।
- 16) 1780 ईस्वी
- 17) 1146
- 18) 7वीं शताब्दी में निरंजनी अखाड़े का गठन हुआ। निरंजनी अखाड़ा आज भी कुम्भ मेले में एक प्रमुख अखाड़ा है और इसका योगदान कुम्भ मेले के विकास में अहम रहा है। अखाड़े साधु-संतों को एक मंच प्रदान करते थे जहां वे धार्मिक ज्ञान का प्रसार कर सकते थे। अखाड़ों ने कुम्भ मेले को एक सामाजिक उत्सव का रूप भी दिया और लोगों को एक साथ लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- 19) शैव और वैष्णवों के बीच हरिद्वार मेले में संघर्ष हुआ
- 20) 2025

2.18 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भारतीय संस्कृति, नरेन्द्र मोहन, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
2. वैदिक साहित्य और संस्कृति, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली-7
3. प्रयागराज माहात्म्य और कुम्भ, डॉ० स्मिता अग्रवाल, अर्पित प्रकाशन, प्रयागराज
4. कुम्भ महापर्व (ऐतिहासिक एवं ग्रन्थीय विवेचन), डॉ० अरुण कुमार त्रिपाठी, कृष्णा कम्प्यूटर संस्थान, मोरी दारागंज, प्रयागराज
5. प्रयाग कुम्भ विश्व की सांस्कृतिक विरासत, प्रदीप कुमार केसरवानी, संरचना प्रकाशन, प्रयागराज

इकाई — 03 : कुम्भ और शंकराचार्य

इकाई की रूपरेखा

- 3.0 प्रस्तावना
- 3.1 उद्देश्य
- 3.2 कुम्भ का आयोजन
- 3.3 आद्यशंकराचार्य का आविर्भाव
 - 3.3.1 जन्म-स्थान
 - 3.3.2 आचार्य शंकर की गुरु परम्परा
- 3.4 शंकराचार्य का योगदान
- 3.5 शंकराचार्य प्रणीत-ग्रन्थ
 - 3.5.1 भाष्य-ग्रन्थ
 - 3.5.2 स्तोत्र-ग्रन्थ
 - 3.5.3 प्रकरण-ग्रन्थ
 - 3.5.4 तन्त्र-ग्रन्थ
- 3.6 शंकराचार्य के शिष्यों की परम्परा
- 3.7 शंकराचार्य द्वारा स्थापित पंथ या सम्प्रदाय
- 3.8 सारांश
- 3.9 अभ्यास के प्रश्न
- 3.10 चर्चा के बिन्दु
- 3.11 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 3.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.0 प्रस्तावना

वेदान्त दर्शन भारतीय दर्शनों में एक प्रमुख दर्शन है। शांकर वेदान्त उसकी पहचान है। वेदान्त दर्शन के विचारकों की परम्परा बहुत लम्बी है। ब्रह्मसूत्र वेदान्त का प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ है। वेदान्त दर्शन के अद्वैतवाद का प्रचार-प्रसार भारत में प्राचीनकाल से था, परन्तु शंकराचार्य जी ने इसे चरम पर पहुँचाया। बौद्ध धर्म की प्रबलता के कारण जब सनातन धर्म का अवमूल्यन होने लगा तब भगवान शंकर ने भारत को एक नई दिशा दी। कुम्भ के प्रवर्तक आचार्य भी आद्य शंकराचार्य ही हैं। कुम्भ के आयोजन को उन्होंने अखाड़ों और संगठित संघों से जोड़ा तथा उसे प्रसिद्धि दिलाई। कुम्भ के आयोजन के अवसर पर सम्पूर्ण भारत के संत-माहात्मा तथा गृहस्थ धर्म और आध्यात्म के वशीभूत होकर बिना किसी निमंत्रण के यहाँ एकत्र होने लगे।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- आद्य शंकराचार्य के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- शंकराचार्य की परम्परा से अवगत हो सकेंगे।

- कुम्भ के आयोजन के उद्देश्य को जान सकेंगे।

3.2 कुम्भ का आयोजन

आद्य शंकराचार्य जी ने भारत की विशाल सनातनी परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखने तथा उसके संरक्षण के लिए देश के तीर्थ स्थलों पर 'संत-समागम' का लक्ष्य रखा। उनकी इस भावना की संकल्पना तथा उसका उद्देश्य देश के विभिन्न स्थलों से एकत्र होने वाले दूरस्थ या समीपस्थ श्रद्धालुओं के इहलोक तथा परलोक का मार्ग प्रशस्त करना। प्रयाग की पुण्यमयी धरती की विशेषता है कि वो प्रारंभ से ही शैवों के साथ-साथ वैष्णव धर्म की आस्था का भी केन्द्र रही है। स्वामी रानन्दाचार्य की जन्मभूमि, वल्लभाचार्य की तपःस्थली, रूप गोस्वामी, चैतन्य महाप्रभु आदि वैष्णव आचार्यों द्वारा वंदित होने का गौरव हमेशा से ही इस प्रयागराज की पवित्र धरा को प्राप्त है जिसके कारण आध्यात्मिक संदेशों तथा आनन्द प्राप्ति के उपाय जनमानस को देने में इस स्थान ने महती भूमिका निभाई है। भगवान शंकराचार्य जी को ज्ञात था कि इस धार्मिक मतों के विचार-विमर्श द्वारा ही तत्त्व का ज्ञान हो सकता है। इसलिए उन्होंने प्रयाग आदि धार्मिक स्थानों को चुना जहाँ की आध्यात्मिक जगत में प्रतिष्ठा थी। उन्होंने शैव-वैष्णव आदि विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यों की एक ही मंच पर लाकर शास्त्रार्थ की परम्परा को प्रारंभ किया।

कुम्भ पर्व के प्रवर्तक आदि शंकराचार्य जी माने जाते हैं। पुराणों, शास्त्रों में अनेक स्थलों पर कुम्भ का उल्लेख प्राप्त होता है परन्तु कुम्भ को इतने व्यापक रूप में मनाने तथा उसे एक पर्व का स्वरूप प्रदान करने का श्रेय शंकराचार्य जी को है। जब भारतवर्ष में सनातन धर्म का पतन हो रहा था, बौद्ध धर्म की ध्वजा निरन्तर उठती जा रही थी। उस समय भगवान शंकराचार्य जी ने अवतार ग्रहण कर पुनः सनातन धर्म की ध्वजा को स्थिर किया। बौद्ध दर्शन के स्थान पर उन्होंने भारतीय आस्तिक दर्शन को पुनः प्रतिष्ठित किया। देश की एकता, अखण्डता और सनातन धर्म की रक्षा के लिए उन्होंने शांकर पीठों, दशनामी सम्प्रदाय की स्थापना की। बौद्ध मतों एवं उनके अखाड़ों को शास्त्रार्थ में पराजित कर भगवान शंकर ने उन्हें सनातन धर्म की दीक्षा दी। सनातन धर्म की रक्षा के लिए उनके अखाड़ों के संतों को सैन्य शिविर के रूप में परिवर्तित किया। वही अस्त्र-शस्त्रधारी रक्षक योद्धा भविष्य में नागा साधु कहलाए।

3.3 आद्यशंकराचार्य का आविर्भाव



शंकराचार्य ने अपने आलोक से आलोकित कर दर्शन-जगत पर बौद्ध दर्शन के रूप में छाए भ्रमजाल को तिरोहित कर एक नवीन दिशा प्रदान की। बौद्ध धर्म के प्रभाव को समाप्त कर सनातन धर्म की स्थापना के लिए देवगण की प्रार्थना पर भगवान शंकर ने कुमार कार्तिकेय को कुमारिल भट्ट, ब्रह्मदेव को मण्डन मिश्र, इन्द्र को राजा सुधन्वा, विष्णु भगवान को सनन्दन, शेषनाग को पतंजलि, वायुदेव को हस्तामलक, वरुणदेव को चित्रसुख, बृहस्पति को आनन्दगिरि, सरस्वती को उभय भारती के रूप में धरती पर जन्म लेने को कहा। अन्य देवों को भी मनुष्य के रूप में धरती पर जन्म लेने को कहा। अन्य देवों ने भी मनुष्य के रूप में जन्म लिया। मण्डन मिश्र तथा कुमारिल

भट्ट ने कर्मकाण्ड की रक्षा की, पतंजलि ने उपासना काण्ड की तथा शंकराचार्य के रूप में अवतरित स्वयं भगवान शंकर ने ज्ञानकाण्ड की रक्षा की तथा नास्तिकवाद का इस धरती पर से नाश किया। 16वीं शताब्दी के विद्वान मधुसूदन सरस्वती ने आदि शंकराचार्य को भगवान शंकर का अवतार स्वीकार कर अपने ग्रन्थ में उनकी स्तुति इस प्रकार की है –

**श्री शंकराचार्य नवावतारं।
विश्वेश्वरं विश्वगुरुं प्रणम्य॥**

भगवान शंकराचार्य के आविर्भाव तथा इहलोक त्याग के काल पर विभिन्न मत हैं। किन्तु ईसा से पूर्व छठी शताब्दी से लेकर ईसा के बाद शताब्दी तक मध्य में इनका आविर्भाव सर्वमान्य है।

शंकराचार्य के अवतार के सम्बन्ध में पहले मत के अनुसार शंकराचार्य ने 508 ई०पू० में जन्म लिया तथा 32 वर्ष की आयु में 676 ई०पू० में अपना शरीर त्याग किया। कांची तथा द्वारिका मठ के अनुसार शंकराचार्य का जन्म ई०पू० पंचम शताब्दी में माना गया। अन्द मत के अनुसार शंकराचार्य का जन्म 476 ई०पू० में तथा अन्य मत के अनुसार उनका निर्वाण 475 ई०पू० में हुआ था।

किसी अन्य मत के अनुसार शंकराचार्य का जन्म ई०पू० 44 में माना जाता है। केरल उत्पत्ति के मत के अनुसार आचार्य शंकर का प्रादुर्भाव चतुर्थ शताब्दी ई०पू० माना गया है तथा इनकी सम्पूर्ण आयु 32 वर्ष के स्थान पर 38 वर्ष मानी गई है। एक अन्य मत इनका आविर्भाव काल छठी शताब्दी का अन्त मानता है। ल्यूस राइस ने शंकराचार्य का समय 740 से 767 के मध्य का माना है। एक अन्य मत आचार्य शंकर को 788 रघीष्टाब्द से 820 रघीष्टाब्द के मध्य का मानता है। बेलगाँव में डॉ० के० बी० पाठक को प्राप्त एक पुस्तक में लिखा है –

दुष्टाचार विनाशाय प्रादुर्भूतो महीतले।

स एव शंकराचार्यः साक्षात् कैवल्य नायकः॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि आचार्य शंकर के प्रादुर्भाव तथा निर्वाणकाल के समय को निर्धारित करना कठिन प्रतीत होता है। ऐतिहासिक साक्ष्य इन्हें हर्षवर्द्धन के बाद का मानते हैं।

3.3.1 जन्म-स्थान

प्राप्त साक्ष्यों के अनुसार शंकर का जन्म केरल प्रान्त में पूर्णा नदी के तट पर कलादी नामक गाँव में वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि को हुआ था। निःसंतान माता सुभद्रा तथा पिता शिवगुरु की आराधना से प्रसन्न होकर ब्राह्मण वेषधारी भगवान शंकर ने इन्हें दर्शन देकर पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया।

बाल्यकाल में ही शंकर में महान होने के लक्षण दिखाई पड़ने लगे। मात्र एक वर्ष की आयु में वे अपनी मातृभाषा में भावाभिव्यक्ति करने लगे, तीन वर्ष का होने पर इनके पिता की मृत्यु हो गई। पांच वर्ष में इनका उपनयन संस्कार हो गया तथा ये गुरुकुल में ही चले गये। जहाँ दो वर्ष में ही उन्हें सारे पुराण कंठस्थ हो गए तथा सम्पूर्ण वेद, वेदान्त, वेदांगों का इन्होंने अध्ययन कर घर वापस आ गए।

शंकर की माता इन्हें गृहस्थ बनाना चाहती थीं। इनका विवाह करना चाहती थीं किन्तु शंकर संन्यास ग्रहण करना चाहते थे। इसके संबंध में एक कथा प्रसिद्ध है कि एक बार शंकर अपनी माँ के साथ नदी स्नान को गए थे, जहाँ एक मगर ने उनका पैर पकड़ लिया। शंकर ने माँ से कहा कि यदि तुम मुझे संन्यास ग्रहण करने की आज्ञा दे दो तो यह मगर मेरा पैर छोड़ देगा। माँ ने उन्हें आज्ञा दे दी परन्तु उनसे एक वचन ले लिया कि उनकी मृत्यु के बाद उनकी अत्येष्टि शंकर ही करेंगे। मात्र आठ वर्ष की आयु में शंकर ने संन्यास ग्रहण कर गृह-त्याग कर दिया।

3.3.2 आचार्य शंकर की गुरु परम्परा

गुरु की खोज में शंकर नर्मदा के तट पर पहुँचे। वहाँ पर्वत की कन्दरा में महान ऋषि गोविन्दाचार्य तपस्या कर रहे थे। शंकराचार्य ने छिद्र से उनका दर्शन किया। नर्मदा का जल उस समय शीघ्रता से बढ़ते हुए उस कन्दरा में प्रविष्ट ही होने वाला था कि शंकराचार्य ने कमण्डल कन्दरा के बाहर रख दिया और नर्मदा का पूरा जल उस कमण्डल में समा गया। इससे महात्मा गोविन्द ने प्रसन्न होकर अपना पैर बाहर निकाला। शंकराचार्य ने उनके पैरों की पूजा-अर्चना की तथा वहीं रहकर चार महीनों तक गुरु की प्रतीक्षा की। चातुर्व्यमास की समाप्ति पर उन्होंने गुरु से दीक्षा ग्रहण की और उनका नाम गुरु ने 'भगवत्पूज्यपादाचार्य' रखा। कम समय में ही कठोर तप एवं साधना से

उन्होंने ज्ञान और सिद्धि प्राप्त की। गुरु की आज्ञा प्राप्त कर, काशी जाकर अवैदिक मतों का खण्डन एवं वेदान्त सूत्र पर भाष्य लिखने का कार्य किया।

शंकराचार्य जी के सम्प्रदाय से संबंधित वर्णन किसी भी स्थान पर एक साथ नहीं प्राप्त होता है अपितु अनेक ग्रन्थों तथा उनके द्वारा स्थापित पीठों-मठों की पूजा-अर्जना आदि के निरीक्षण द्वारा प्राप्त होता है।

प्रसिद्ध ग्रन्थों के अध्ययन के बाद शंकर सम्प्रदाय की गुरु परम्परा भगवान विष्णु से प्रारंभ मानी जाती है। शंकराचार्य की गुरु परम्परा का संकेत निम्न पद्य से मिलता है—

नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्र पराशरं च।

व्यासं शुकं गौड़पदं महान्तं गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम्॥

श्री शंकराचार्यमथास्य पद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम्।

तत् तोटकं वार्तिकार मन्यान् अस्मद्गुरुं सनततमानतोऽस्मि॥

इस प्रकार शंकर गुरु परम्परा में गौड़पाद, पावक, पराचार्य, सत्यनिधि रामचन्द्र, गोविन्द के बाद शंकराचार्य का नाम आता है। इस प्रकार स्पष्ट पता चलता है कि शंकराचार्य के गुरु गोविन्द ही थे।

शंकराचार्य ने काशी जाकर अपनी विद्वत्ता एवं प्रखर वक्तृत्व से वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार किया। उनकी विद्वत्ता एवं ख्याति के कारण लोग उनका शिष्यत्व ग्रहण करने लगे। उनके सर्वप्रथम शिष्य सनन्दन थे जिन्हें बाद में पद्मपादाचार्य के नाम से ख्याति मिली। काशी में वास करते हुए शंकराचार्य की एक कथा प्रसिद्ध है कि एक बार गंगा स्नान के मार्ग में उन्हें एक चाण्डाल चार कुत्तों को लेकर जाता हुआ मिला। शंकराचार्य ने उससे दूर हटने को कहा तो चाण्डाल ने उत्तर दिया, “किससे दूर हटूँ, आप तो ब्रह्म सत्य और जगत् को मिथ्या मानते हैं। तो शरीर तो मिथ्या है, इससे घृणा कैसी ? क्योंकि सबमें तो वही आत्मा विराज रही है और सर्वव्यापक है। अतः आत्मा में भेद की कल्पना करने वाला व्यक्ति कदापि वैदिक मत की रक्षा एवं अद्वैत मत का प्रतिपादन नहीं कर सकता।” उसने शंकर से कहा कि “तुम्हारा संन्यास एवं ज्ञान पूर्णरूपेण निष्फल है।” शंकराचार्य चाण्डाल की बातों से अचंभित हो गए तथा उन्होंने प्रार्थना की कि “यदि आप भगवान विश्वनाथ जी हैं तो दर्शन दें। तब भगवान शंकर ने उन्हें दर्शन देकर ब्रह्मसूत्र पर भाष्य लिखने का आदेश दिया। भाष्य लिखने के बाद उनका एक ब्राह्मण से एक सूत्र के अर्थ पर आठ दिन तक शास्त्रार्थ हुआ। बाद में मैं एक शिष्य ने ध्यानस्थ होकर जाना कि वह ब्राह्मण कोई और नहीं वरन् स्वयं वेदव्यास हैं तो उसने निम्न श्लोक की रचना की —

व्यासो नारायणः साक्षात् शंकरः शंकरः स्वयम्।

तयोर्विवादे सम्प्राप्ते न जाने किं करोम्यहम्॥

भगवान वेदव्यास से क्षमा याचना कर प्रणाम करने पर वेदव्यास ने उन्हें अद्वैतवाद को सम्पूर्ण भारत फैलाने की आज्ञा दी तथा उनकी आयु को 16 वर्ष से बढ़ाकर 32 वर्ष कर दिया।

काशी में अद्वैतवाद की स्थापना कर तथा विरोधियों को परास्त कर शंकराचार्य कुरुक्षेत्र के मार्ग से बद्रीकाश्रम पहुँचे। कुछ दिनों तक वहाँ निवास करते हुए उन्होंने कई ग्रन्थ लिखे। प्रायः सारे ग्रन्थ उन्होंने 12 वर्ष से 16 वर्ष तक की ही अवस्था में काशी या बद्रीकाश्रम में ही लिखे। बद्रीकाश्रम के बाद आचार्य शंकर प्रयाग आए।

प्रयाग में आचार्य शंकर की मुलाकात प्रसिद्ध मीमांसक तथा जैमिनि मतावलम्बी दक्षिण भारतीय विद्वान कुमारिल भट्ट से हुई। शंकर ने बौद्ध तथा जैन मतावलम्बियों को परास्त किया तथा कुमारिल भट्ट से शास्त्रार्थ की इच्छा व्यक्त की किन्तु विद्वान कुमारिल अपनी निरीश्वरवादिता पर पश्चातापवश अपने शरीर को चिता में जलाने के लिए प्रविष्ट हो चुके थे। अपनी विवशतावश उन्होंने माहिष्मतीपुरी में रहने वाले अपने बहनोई मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ करने को कहा।

शंकराचार्य माहिष्मती पहुँच कर एक स्त्री से मण्डन मिश्र का घर पूछने लगे तो उस स्त्री ने कहा कि जहाँ घोसले में बैठी मैनाएँ भी ‘वेदस्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं कीरांगनो यत्र गिरा वदन्ति तं जानीह मण्डन मिश्र धाम॥’

आचार्य शंकर स्त्री के इस उत्तर को सुनकर आश्चर्यचकित हो गए। मण्डन मिश्र के घर पहुँच कर उनके

साथ शास्त्रार्थ की इच्छा व्यक्त की। निर्णायक बनीं मण्डन मिश्र की विदुषी पत्नी भारती। शास्त्रार्थ करते-करते कई दिवस बीत गए और मण्डन मिश्र के गले में पड़ी ताजे फूलों की माला कुम्हलाने लगी। मण्डन मिश्र अपनी पराजय स्वीकार कर संन्यास ग्रहण करने को तत्पर हो गए तब उनकी पत्नी ने कहा कि अभी तो यह आधी पराजय है, आपको मुझे भी पराजित करना होगा। भारती ने शास्त्रार्थ के मध्य कामशास्त्र से संबंधित प्रश्न पूछे तो ब्रह्मचारी शंकराचार्य ने एक माह का समय माँग कर राजा अमरुक के शरीर में प्रवेश किया तथा सभी प्रकार का ज्ञान प्राप्त किया। इसके बाद पुनः अपने शरीर में लौटकर भारती के सभी प्रश्नों का उत्तर दिया। अंत में, मण्डन मिश्र ने अपनी पराजय स्वीकार कर संन्यास ग्रहण किया तथा उनका नाम पड़ा 'सुरेश्वराचार्य'। मण्डन मिश्र के संन्यास ग्रहण करने पर ब्रह्मलोक जाने को उद्यत भारती को शंकराचार्य किसी प्रकार समझा-बूझाकर अध्यापन कार्य हेतु शृंगगिरि ले गए। भारती के शिक्षार्जन के कारण शृंगेरी और द्वारका मठ का शिष्य सम्प्रदाय भारती नाम से जाना जाता है।

मगध में अद्वैतवाद के प्रचार के बाद शंकराचार्य जी ने दक्षिण की ओर जाते हुए महाराष्ट्र में शैव और कापालिकों को भी पराजित किया। एक बार एक कापालिक ने अपनी सिद्धि के लिए उनकी बलि देने के उद्देश्य से उनका शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। ध्यानस्थ आचार्य शंकर पर तलवार ताने उस कापालिक को पद्मपादाचार्य ने योगबल से सारे रहस्य को जानकर मार डाला।

दक्षिण में तुंगभद्रा नदी के तट पर उन्होंने एक मन्दिर का निर्माण कराया तथा उसमें शारदा देवी की स्थापना की। इसी मन्दिर के साथ शृंगेरी मठ की स्थापना हुई। सुरेश्वराचार्य इस मठ के आचार्य बने।

इन सभी के मध्य इन्हें अपनी माता की मृत्यु का भान होने पर अपना दिया हुआ वचन पूर्ण करने शंकराचार्य अपनी माता के पास आए तथा उनके विष्णुलोक गमन के पश्चात उनकी अत्येष्टि की। इसके बाद पुनः शृंगेरी मठ गए तथा वहाँ से पुरी जाकर गोवर्धन मठ की स्थापना कर पद्मपादाचार्य को वहाँ का आचार्य बनाया। उज्जैन में सनातन धर्म को स्थापित कर वे गुजरात गए तथा द्वारका में पीठ स्थापित कर अपने प्रिय शिष्य हस्तमलकाचार्य को आचार्य के पद पर आसीन किया। वहाँ से काश्मीर पहुँच कर शंकराचार्य ने वहाँ के विद्वानों से शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया। काश्मीर में उन्हें देवी माँ ने दर्शन दिए। काश्मीर से वे कामाख्या पहुँचे। वहाँ उनका शास्त्रार्थ शैवों से हुआ। कामाख्या से वे बद्रीकाश्रम गए तथा वहाँ उन्होंने ज्योतिर्मठ की स्थापना की तथा तोटकाचार्य को वहाँ का आचार्य बनाया। कामाख्या में ज्योतिर्मठ को स्थापित कर शंकर केदारनाथ पहुँचे। केदारनाथ में ही उन्होंने अपना शरीर का त्याग किया तथा केदारनाथ की परम ज्योति में विलीन हो गए। केदारनाथ मंदिर के पीछे उनकी समाधि आज भी स्थित है।

3.4 शंकराचार्य का योगदान

शंकराचार्य ने भारतीय सांस्कृतिक एकता तथा राष्ट्रीय अखण्डता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सम्पूर्ण भारत के क्षेत्रों में भ्रमण करते हुए वहाँ के विद्वानों के मतों को समझा तथा स्वयं के विचारों से अवगत कराया।

शंकराचार्य ने कैलाश से लाए पाँचों स्फटिक लिंगों में से चार लिंगों की स्थापना क्रमशः बदरीनारायण, नीलकण्ठ (नेपाल), शृंगेरी और चिदम्बरम् में की थी। पंचम लिंग योग लिंग के नाम से प्रसिद्ध था, जिसकी पूजा स्वयं आचार्य शंकर अपने अंतिम समय तक करते रहे। अंतिम समय में, शंकराचार्य ने उस लिंग को तथा कांची पीठ तथा शारदामठ का भार सुरेश्वर को सौंप दिया। शिवरहस्य के अनुसार योग लिंग की स्थापना कांची पीठ में हुई थी। मार्कण्डेय संहिता में वर्णन प्राप्त होता है कि शंकराचार्य ने योग लिंग की स्थापना कामकोटि पीठ में की थी तथा पूजा-पाठ की जिम्मेदारी सुरेश्वराचार्य को सौंपी थी।

3.5 शंकराचार्य प्रणीत-ग्रन्थ

शंकराचार्य जी द्वारा प्रणीत ग्रन्थों की स्पष्ट संख्या ज्ञात नहीं है किन्तु दो सौ से ऊपर ग्रन्थों की रचना शंकराचार्य जी ने की, ऐसा माना जाता है। इनके ग्रन्थों में भाष्य, स्तोत्र, प्रकरण ग्रन्थ आदि अनेक प्रकार के ग्रन्थ समाहित हैं।

शंकराचार्य के ब्रह्मलीन होने के बाद भी शंकराचार्य पद पर प्रतिष्ठित आचार्यों ने भी निरन्तर रचनाएँ की, जिसके कारण यह निर्णय करना कठिन हो गया कि कौन-सी उनकी रचना है। शैली के आधार पर तथा अन्य साक्ष्यों के आधार पर शंकराचार्य के ग्रन्थों को चार श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं – 1) भाष्य ग्रन्थ, 2) स्तोत्र

ग्रन्थ, 3) प्रकरण ग्रन्थ तथा 4) तन्त्र ग्रन्थ।

3.5.1 भाष्य-ग्रन्थ

शंकराचार्य ने प्रस्थानत्रयी ब्रह्मसूत्र, गीता, उपनिषदों पर भाष्य लिखे तथा सहस्रनाम ग्रन्थों जैसे विष्णुसहस्र नाम आदि पर भाष्य लिखे। प्रस्थानत्रयी के अन्तर्गत ब्रह्मसूत्र पर शंकराचार्य द्वारा लिखा गया भाष्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इनकी भाषा स्पष्ट एवं सरल है। गीता भाष्य में शंकराचार्य ने गीता की ज्ञानपरक व्याख्या करते हुए बताया है कि मोक्ष की प्राप्ति केवल तत्त्वज्ञान से ही हो सकती है। शंकराचार्य ने ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डुक्य, तैत्तिरीय, एतरेय, छान्दोग्य, वृहदारण्यक, श्वेताश्वतर तथा नृसिंहतापिनी नामक बारह उपनिषदों ने भाष्य लिखा। प्रस्थानत्रयी के भाष्य उच्च कोटि के गद्य माने जाते हैं। स्तोत्र ग्रन्थों पर भी शंकराचार्य जी द्वारा लिखे गए भाष्य अत्यन्त प्रामाणिक हैं। इनमें विष्णुसहस्रनाम भाष्य, सनत्सुजातीय भाष्य, ललिता त्रिशती भाष्य, माण्डुक्य काटिका भाष्य प्रमुख हैं।

3.5.2 स्तोत्र-ग्रन्थ

शंकराचार्य जी अद्वैत सिद्धान्त को सम्पूर्ण भारत वर्ष में स्थापित करने वाले संत होने पर भी हृदय से सगुण ब्रह्म को मानने वाले थे। देवी-देवताओं की भक्ति उनके हृदय में कूट-कूट कर भरी थी, इसलिए उन्होंने अनेक देवी-देवताओं की स्तुतियाँ एवं स्तोत्रों की रचना की। इनमें गणेश स्तोत्र, शिव स्तोत्र, देवी स्तोत्र, युगल देवता स्तोत्र प्रमुख हैं। शंकराचार्य जी ने नदियों के ऊपर भी अनेक स्तोत्र जैसे – नर्मदाष्टक, गंगाष्टक, यमुनाष्टक, मणिकर्णिकाष्टक तथा काशी पंचक नामक स्तोत्रों की रचना की। हनुमान पंचरत्न, सुब्रह्मण्य भुजंग, प्रातःस्मरण स्तोत्र, गुर्वष्टक स्तोत्र की रचना भी शंकराचार्य जी ने की।

3.5.3 प्रकरण-ग्रन्थ

शंकराचार्य जी ने वेदान्त विषय को जनमानस तक पहुँचाने के उद्देश्य से प्रकरण ग्रन्थों की रचना गद्य में न कर श्लोकों में की। वेदान्त तत्त्व का प्रतिपादन करने के कारण ये ग्रन्थ प्रकरण ग्रन्थ कहलाते हैं।

3.5.4 तन्त्र-ग्रन्थ

प्रपंच सार तन्त्र नामक प्रसिद्ध तन्त्र ग्रन्थ की रचना शंकराचार्य जी ने की है। विद्वानों में भ्रम होने पर भी तान्त्रिक परम्परा के अनुसार यह शंकराचार्य जी की ही रचना मानी जाती है।

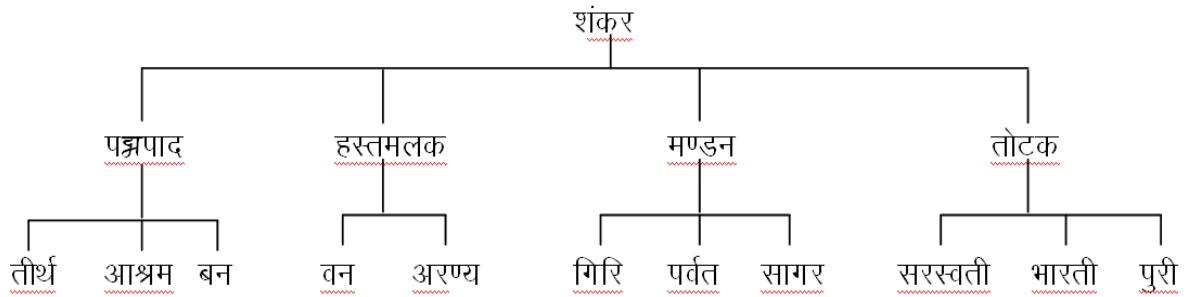
3.6 शंकराचार्य के शिष्यों की परम्परा

वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए शंकराचार्य जी स्थान-स्थान पर मठों एवं पीठों की स्थापना की तथा अनेक शिष्य बनाए। इनके प्रधान चार शिष्यों का वर्णन प्राप्त होता है जिन्हें इन्होंने संन्यास की दीक्षा दी। इससे भिन्न श्री विद्यार्णव में इनके चौदह शिष्यों का उल्लेख मिलता है जिनमें पांच ने संन्यास ग्रहण किया था तथा शेष नौ शिष्य गृहस्थ आश्रम का पालन करते थे। प्रमुख शिष्य परम्परा में आने वाले आचार्यों के नाम इस प्रकार हैं – श्री सुरेश्वराचार्य (मण्डन मिश्र), आचार्य पद्मपाद, हस्तामलक, तोटकाचार्य, संज्ञात्मक मुनि, आचार्य वाचस्पति मिश्र, श्रीकृष्ण यति मिश्र, प्रकाशात्म यति, आचार्य श्री अद्वैतानन्द बोधेन्द्र, श्री हर्ष मिश्र, श्री आनन्द बोध भट्टारकाचार्य, आचार्य अमलानन्द, श्री चित्सुरवाचार्य, आचार्य भारती तीर्थ, आचार्य शंकरानन्द, श्री माधवाचार्य या विद्यारण्य मुनि, आनन्द गिरि, प्रकाशानन्द, अखण्डानन्द, मल्लनाराध्य, नृसिंहाश्रम, नारायणाश्रम, रंगराजाध्वरी, अप्पयदीक्षित, आचार्य भट्टोजिदीक्षित, सदाशिव ब्रह्मेन्द्र, नीलकण्ठ सूरि, सदानन्द योगीन्द्र, नृसिंह, मधुसूदन सरस्वती, धर्मराज अध्वरीन्द्र, रामतीर्थ, आपदेव, गोविन्दानन्द, रामानन्द सरस्वती, काश्मीक सदानन्द यति, रंगनाथ, ब्रह्मानन्द सरस्वती, अच्युत कृष्णानन्द तीर्थ, महादेव सरस्वती, श्री सदाशिवेन्द्र सरस्वती, आयन्न दीक्षित, स्वामी श्री भारती कृष्ण तीर्थ, स्वामी करपात्री जी महाराज, स्वामी श्री कृष्ण बोधाश्रम जी, स्वामी अखण्डनन्द सरस्वती, स्वामी महेश्वरानन्द सरस्वती, स्वामी शंकरानन्द सरस्वती, स्वामी रिंजजन देव तीर्थ जी, स्वामी नन्दनन्दनानन्द सरस्वती, वेदान्ती स्वामी, स्वामी रामदेवानन्द सरस्वती, स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती, स्वामी सदानन्द सरस्वती तथा स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द स्वामी।

3.7 शंकराचार्य द्वारा स्थापित पंथ या सम्प्रदाय

शंकराचार्य जी द्वारा स्थापित पंथ या सम्प्रदाय को 'दशनामी' सम्प्रदाय कहा गया है। निम्न सारणी द्वारा

शंकराचार्य की शिष्य परम्परा को आसानी से समझा जा सकता है –



बौद्ध और जैन मतों का खण्डन कर शंकराचार्य ने वैदिक धर्म की स्थापना कर सम्पूर्ण भारत में अद्वैतवादी दर्शन का प्रचार-प्रसार किया तथा भारत के चारों कोनों में तथा काशी में मठों की स्थापना की तथा सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बांधा।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. शंकराचार्य का जन्म कहाँ हुआ था ?

.....

2. शंकराचार्य के दर्शन का क्या नाम है ?

.....

3. शंकराचार्य जी ने किन ग्रन्थों पर भाष्य लिखे हैं ?

.....

3.8 सारांश

वेदान्त दर्शन भारतीय दर्शनों में एक प्रमुख दर्शन है। शांकर वेदान्त उसकी पहचान है। वेदान्त दर्शन के अद्वैतवाद का प्रचार-प्रसार भारत में प्राचीनकाल से था, परन्तु शंकराचार्य जी ने इसे चरम पर पहुँचाया। बौद्ध धर्म की प्रबलता के कारण जब सनातन धर्म का अवमूल्यन होने लगा तब भगवान शंकर ने भारत को एक नई दिशा दी। कुम्भ के प्रवर्तक आचार्य भी आद्य शंकराचार्य ही हैं। कुम्भ के आयोजन को उन्होंने अखाड़ों और संगठित संघों से जोड़ा तथा उसे प्रसिद्धि दिलाई।

आद्य शंकराचार्य जी ने भारत की विशाल सनातनी परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखने तथा उसके संरक्षण के लिए देश के तीर्थ स्थलों पर 'संत-समागम' का लक्ष्य रखा। कुम्भ को इतने व्यापक रूप में मनाने तथा उसे एक पर्व का स्वरूप प्रदान करने का श्रेय शंकराचार्य जी को है।

3.9 अभ्यास के प्रश्न

1. शंकराचार्य जी के आविर्भावकाल पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।
2. आचार्य शंकराचार्य की गुरु परम्परा पर निबन्ध लिखिए।

3. भारतीय संस्कृति को आद्य शंकराचार्य के योगदान पर प्रकाश डालिए।
4. शंकराचार्य जी द्वारा प्रणीत ग्रन्थों पर प्रकाश डालिए।

3.10 चर्चा के बिन्दु

1. भारतीय दर्शन एवं शंकराचार्य जी पर चर्चा कीजिए।
2. कुम्भ पर्व को व्यवस्थित रूप प्रदान करने के लिए शंकराचार्य जी द्वारा किये गये प्रयासों की चर्चा कीजिए।

3.11 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. शंकराचार्य का जन्म केरल प्रान्त में पूर्णा नदी के तट पर कलादी नामक गाँव में हुआ था।
2. शंकराचार्य के दर्शन का नाम अद्वैत दर्शन है।
3. शंकराचार्य जी ने प्रस्थानत्रयी – ब्रह्मसूत्र, गीता तथा उपनिषदों पर भाष्य लिखे।
- 4.

3.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भारतीय संस्कृति और साधना, महोमहोपाध्याय डॉ. गोपीनाथ कविराज, पृष्ठ-94।
2. शंकराचार्य, उनके मायावाद तथा अन्य सिद्धान्तों का आलोचनात्मक अध्ययन, लेखक डॉ. राममूर्ति शर्मा, प्रकाशक साहित्य भंडार, सुभाष बाजार, मेरठ।
3. स्वामी करपात्री जी और उनका राजनीतिक दर्शन, लेखक डॉ. रामजी मिश्र।
4. शंकराचार्य और उनकी परम्परा, लेखक डॉ. रामजी मिश्र, प्रकाशक – शिवम् प्रकाशन, प्रयागराज।
5. प्रयाग कुम्भ, विश्व की सांस्कृतिक विरासत, सं० – प्रदीप कुमार विश्वास, प्रकाशक – सम्राट हर्षवर्द्धन शोध संस्थान, प्रयागराज।

इकाई — 04 : कुम्भ एवं नागा सम्प्रदाय

इकाई की रूपरेखा

- 4.0 प्रस्तावना
- 4.1 उद्देश्य
- 4.2 कुम्भ पर्व
- 4.3 नागा सम्प्रदाय
 - 4.3.1 नागा संन्यासी बनने की प्रक्रिया
 - 4.3.2 नागा संन्यासियों का रूप
 - 4.3.3 कुम्भ में नागाओं का प्रथम स्नान
 - 4.3.4 नागा साधुओं के विभिन्न अखाड़े
- 4.4 सारांश
- 4.5 अभ्यास के प्रश्न
- 4.6 चर्चा के बिन्दु
- 4.7 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.0 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई कुम्भ और नागाओं के सम्बन्ध में है। भारतीय संस्कृति में कुम्भ एक महत्वपूर्ण घटक है। कुम्भ के आयोजन में नागाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी गई है। कुम्भ का उल्लेख ना सिर्फ पुराणों में अपितु वेदों में भी प्राप्त होता है। जब सम्पूर्ण भारत वर्ष में सनातन धर्म का पतन और बौद्ध धर्म की प्रतिष्ठा हो रही थी, ऐसी मान्यता है कि उस समय भगवान शंकराचार्य ने सनातन धर्म की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए अवतार लिया। उन्होंने भारत के चारों दिशाओं में सनातन धर्म की ध्वजा लहराई। बौद्धों को शास्त्रार्थ में पराजित कर भगवान शंकर के अवतार शंकराचार्य ने उनके मठों और अखाड़ों को सनातन धर्म में दीक्षित किया। उन्हीं मठों के योद्धा संन्यासी अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर नागा संन्यासी के रूप में विख्यात हुए।

4.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप नागा सम्प्रदाय के विषय में जान पाएँगे।
- सम्प्रदाय और मठों में अन्तर समझ पाएँगे।
- कुम्भ और नागाओं के आपसी सम्बन्धों को जान पाएँगे।
- नागाओं के ग्रहण करने की प्रक्रिया को जान सकेंगे।

4.2 कुम्भ पर्व

कुम्भ पर्व एक महत्वपूर्ण एवं सार्वभौम महापर्व है। भारत के चार स्थानों पर कुम्भ का मेला लगता है। यह मेला न केवल भारत का अपितु सम्पूर्ण विश्व का सबसे बड़ा मेला या आयोजन है। भारतीय विचार एवं संस्कृति की मान्यता वाले पुरुषार्थचतुष्टय में से प्रथम तीन पुरुषार्थों — धर्म, अर्थ तथा काम का सम्बन्ध इह लोक से तथा अंतिम पुरुषार्थ रूप मोक्ष का सम्बन्ध परलोक से है। इस अंतिम पुरुषार्थरूपी 'मोक्ष' को प्राप्त करने का साधन — व्रत, तप, दान, यज्ञ, तीर्थाटन आदि को माना गया है। भारत के चार स्थानों — नासिक, उज्जैन, प्रयाग और हरिद्वार में कुम्भ

लगता है, उन सभी स्थानों की अनन्त महिमा व्रत, तप, यज्ञ, दानादि के लिए मानी गई है — ‘कुं कुत्सितं उम्भति दूरयति जगद्धितायेति वा कुम्भः’ अर्थात् जनकल्याण की भावना से कुत्सित दोषों को दूर करने वाले को कुम्भ कहते हैं। अतः इसमें भी कुम्भ का विशेष महत्त्व है।

भारत की ऋषि-मुनियों की संस्कृति व धरती पर कुम्भ का दुर्लभ संयोग अलग-अलग पवित्र नदियों के पट पर प्रत्येक बारह वर्षों के अंतराल पर चारों स्थानों पर आता है। अन्य ईकाइयों में हम इन दुर्लभ संयोग का अध्ययन करेंगे। मनुष्य को मोक्ष की दिशा में अग्रसर करने तथा परमपुरुषार्थ की प्राप्ति में तथा व्रत, तप, साधना, दान आदि में ऋषि-मुनियों, साधुओं-संन्यासियों की महती भूमिका को कौन नकारा सकता है। ऐसी मान्यता है कि सनक-सनन्दन आदि ऋषिगण कुम्भ के अवसर पर पृथ्वी पर आते हैं। प्राचीनकाल से ही परमज्ञानीजन, वैरागी, तपस्वी, वीतरागी, ऋषि-मुनियों, संत-महात्मा आदि एक स्थान पर एकत्र होकर अपने-अपने विचारों-मतों का आदान-प्रदान करने के साथ-साथ उनका प्रचार-प्रसार भी करते थे। गृहस्थ व राजे-महाराजे, संत-समागम की लालसा लिए गंगा आदि नदियों के स्नान-दर्शन हेतु कुम्भ स्थलों पर आकर ज्ञानार्जन करते थे। शंकराचार्य जी ने इस संत-समागम को कुम्भ-पर्व का आध्यात्मिक स्वरूप प्रदान किया तथा इसे व्यवस्थित रूप प्रदान किया। बौद्ध धर्म से वैदिक धर्म में दीक्षित हुए योद्धा संन्यासी ही नागा कहलाए। कुम्भ को पर्व का रूप देने तथा इसे संगठित एवं विशाल समागम स्थल बनाने में आचार्य शंकर के योगदान को सभी एक मत से स्वीकारते हैं। वैष्णव आचार्य रामानुजाचार्य, चारों पीठ के शंकराचार्यों तथा संत-महात्माओं, महामण्डलेश्वरों ने इस कुम्भ-मेले की ख्याति सम्पूर्ण विश्व तक पहुँचाने में योगदान किया है। ऐसा नहीं है कि इससे पूर्व कुम्भ पर्व का आयोजन नहीं होता था। परन्तु शंकराचार्य जी ने अखाड़ों, साधु-संन्यासियों आदि को यहाँ आने को तथा मास पर्यन्त निवास करने को प्रेरित किया।

4.3 नागा सम्प्रदाय

नागा सम्प्रदाय का विशेष विवरण मध्यकालीन इतिहास में अप्राप्त है। प्रसिद्ध इतिहासकार यदुनाथ सरकार ने नागा सम्प्रदाय की परम्परा को प्राग् ऐतिहासिक माना है। मोहनजोदड़ो की खुदाई में प्राप्त मुद्रा पर दिगम्बर वेषधारी भगवान शिव का अंकन नागा सम्प्रदाय का प्रतीक स्वरूप है। नागा संन्यासियों के आराध्य भगवान शिव ही हैं। सिकन्दर के द्वारा रावी नदी के तट पर मल्लोई नगर पर आक्रमण के दौरान दिगम्बर नागा संन्यासियों के साथ मिलकर वहाँ के स्थानीय लोगों ने युद्ध किया था। नागा साधुओं से सिकन्दर के मुलाकात का विवरण इतिहास में प्राप्त होता है। बड़ौदा के महाराज श्री सियाजीराव गायकवाड़ ने पंच अग्नि अखाड़े के महन्त गोविंदानंद जी की लिखित पुस्तक को छपवाया था, जिसमें नागाओं का उल्लेख प्राप्त है—

‘धूली धूसर गात्राणि धूतचित्तो रिमयाः।

वृक्षे मूले स्थिता सम्यक् अंगे लिंग धारिणः॥

सस्त्रिका निस्त्रिकाश्चैव कंदमूलफलाशिनः।

सदोपवीतिनो भव्य सदा वद्ध शिशेन च।

प्रदोश शिवरात्री च व्रतं लिंगार्चनं चरेत्॥’

नागा साधुओं के विशिष्ट संगठन को अखाड़ा कहा जाता है। इनमें से कुछ संन्यासी पूर्णतया दिगम्बर रहते हैं और कुछ न्यून वस्त्र या श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। मठों के एक विशेष प्रकार को अखाड़ा कहते हैं। अखाड़ा शब्द अखण्ड शब्द का तत्सम रूप है जिसका अर्थ होता है — ‘अखण्ड धर्म रक्षक समूह’। इसमें रहने वाले साधुओं का सम्पूर्ण जीवन परोपकार और धर्म की रक्षा के लिए समर्पित होता है। धर्म की रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र धारण करने वाले योद्धा संन्यासी नागा कहे जाते हैं। शंकराचार्य जी को अनुभव हो चुका था कि धर्म की रक्षा एवं मठों की रक्षा हेतु साधुओं को भी अस्त्र-शस्त्र उठाना ही होगा। इसी मन्तव्य से संन्यासियों के लिए दशनामी सम्प्रदाय की व्यवस्था की। दशनामी का अर्थ दस नामों धारण करने (इतिहासकारों ने नागाओं का मूल निवास नंगा पर्वत की श्रेणियों अर्थात् नागालैण्ड को स्वीकार किया है।) वाला है। जो इस प्रकार हैं — तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती और पुरी। वर्तमान इन नामों से सम्प्रदाय भी हैं।

4.3.1 नागा संन्यासी बनने की प्रक्रिया

नागाओं के संन्यास ग्रहण करने से पूर्व उन्हें कठिन प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। सर्वप्रथम संन्यास ग्रहण

करने के लिए दृढ़ संकल्प आवश्यक है। आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अपने सम्पूर्ण व्यक्तिगत हितों का त्याग तथा परिवार का त्याग ही संन्यासियों को गृहस्थों से अलग करता है। संकल्प के बाद उसके द्वारा मठाध्यक्ष के समक्ष अपनी इच्छा व्यक्त करने पर उसकी परीक्षा ली जाती है। उत्तीर्ण होने पर उसे संस्कारों की शिक्षा दी जाती है तथा उसे संस्कारित किया जाता है। नागा साधुओं को दीक्षित करने के सम्बन्ध में दो महत्त्वपूर्ण शास्त्रीय ग्रन्थ उपलब्ध हैं — 1. परमहंस गोपालानन्द द्वारा लिखित 'संन्यास ग्रहण पद्धति' तथा 2. विश्वेश्वर सरस्वती का 'यति धर्म संग्रह'।

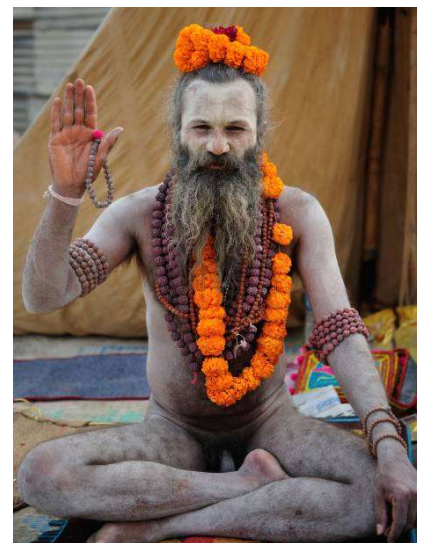
संन्यास ग्रहण करने वाले व्यक्ति के शरीर में किसी प्रकार का दोष स्वीकार्य नहीं होता है। वह व्यक्ति पुंसत्व से युक्त सर्वांग सुन्दर तथा हर प्रकार से स्वस्थ होना चाहिए। सर्वप्रथम उस व्यक्ति को चार संस्कारों जिसे कृच्छ्र कहते हैं, से अपने शरीर की शुद्धि करनी पड़ती है, उसके बाद संन्यास का संकल्प किया जाता है। पूर्वजों का श्राद्ध-तर्पण आदि करने के बाद वह व्यक्ति अपनी समस्त सम्पत्तियों का दानकर कौपीन, दण्ड और कमण्डल आदि धारण करता है। अखाड़े में प्रवेश के बाद कभी-कभी ब्रह्मचर्य की परीक्षा में कई वर्ष भी लग जाते हैं। कौपीन, दण्ड आदि धारण करके संन्यासी नदी आदि के तट पर जाकर स्नान, सन्ध्या आदि के बाद मंत्रोच्चार करते हुए अपने यज्ञोपवीत तथा शिखा का त्याग कर देता है। जल से निकल कर जन्म के समय की अवस्था अर्थात् नगनावस्था में पांच-सात कदम चलकर सामान्य जन के मध्य रहने के कारण कौपीन तथा जंगली पशुओं आदि से सुरक्षा के कारण दण्ड और कमण्डल धारण करता है।

दिगम्बर नागा साधु बनने की प्रक्रिया कुछ भिन्न और कठिन है। नागा दिगम्बर बनने की विधि को **तंगेटोरा** कहा जाता है। अवधूत बनने के लिए उन्हें स्वयं का पिण्डदान एवं तर्पण करना पड़ता है। अपने परिवार और संसार के लिए मृत होने पर इनका एकमात्र उद्देश्य सनातन और वैदिक धर्म की रक्षा करना ही होता है। पूर्णरूपेण नागा अवधूत बनने के लिए तीन दिनों तक उपवास में इनके पास केवल दण्ड और एक मिट्टी का पात्र ही होता है। अखाड़े के अन्य साधु के द्वारा नग्न कर उसके इन्द्रिय विशेष की नस खींच कर उसे नपुंसक बनाया जाता है। इसके बाद वह तंगेटोरा हो जाता है। इस संस्कार के तीन वर्षों बाद वह पूर्ण रूप से दिगम्बर नागा साधु बन जाता है। नागा साधु महन्त, श्रीमहन्त, जमाहितमहन्त, पीरमहन्त आदि बनते हुए महामण्डलेश्वर तक बन जाते हैं।

शास्त्रों के अनुसार पहले केवल ब्राह्मण वर्ण के लोग ही संन्यास धर्म में दीक्षित हो सकते थे। परन्तु वर्तमान में इस व्यवस्था में परिवर्तन आया है। कई अखाड़ों में महिला नागा साधुओं ने भी दीक्षा ली है। महिला नागा साधुओं के सभी नियम पुरुष नागाओं के समान ही हैं। मात्र एक ही नियम अपवाद है कि महिला नागाएँ नग्न नहीं रह सकती हैं और न ही नग्न होकर स्नान कर सकती हैं। उन्हें पीले रंग का एक वस्त्र धारण करना अनिवार्य होता है।

4.3.2 नागा संन्यासियों का रूप

नागा संन्यासियों को भस्म सबसे अधिक प्रिय होता है। भगवान शिव के आराधक होने के कारण नागाओं को भी भस्म एवं रुद्राक्ष अत्यधिक प्रिय है। भस्म उनके शरीर पर वस्त्र का काम करती है। गेंदे की माला भी नागाओं को अत्यधिक प्रिय है।



नागा साधु मस्तक पर एक विशेष प्रकार का तिलक लगाते हैं। अधिकांश: नागा निर्वस्त्र रहते हैं परन्तु कुछ लंगोट भी धारण करते हैं। इनके पास एक चिमटा अनिवार्य रूप से होता है जो धुनि रमाते समय काम आता है तथा आवश्यकता पड़ने पर अस्त्र भी बन जाता है। जटाएँ भी इन नागा साधुओं के रूप-सौन्दर्य का हिस्सा होती हैं। इनकी देख-रेख भी ये संन्यासी बड़े जतन से करते हैं। कुछ नागा रूद्राक्ष के साथ मँहगें रत्नों तथा मोतियों की मालाएँ भी धारण करते हैं।

दिगम्बर नागा पूर्णरूप से नग्न रहते हैं किन्तु कुछ नागा शैव होने के कारण भगवान शिव के समान बाघम्बर धारण करते हैं या हिरण की खाल धारण करते हैं। कुछ लंगोट भी धारण करते हैं। नागा संन्यासी भिक्षा के द्वारा माँगे गए अन्न से एक बार ही भोजन ग्रहण करते हैं। इन्हें मात्र सात घरों में ही भिक्षा माँगने की अनुमति होती है।

4.3.3 कुम्भ में नागाओं का प्रथम स्नान

कुम्भ का आयोजन भारतीय संस्कृति में विद्यमान सामाजिक समरसता, सौहार्द तथा आध्यात्मिकता को दर्शाता है। जहाँ लाखों-करोड़ों लोग बिना किसी आमंत्रण-निमंत्रण के आते हैं। कभी-कभी मतों तथा विवादों में उलझ कर अप्रिय घटनाएँ भी घटित हो जाती हैं। ऐसे ही कुछ संघर्ष पूर्व के आयोजन में हुए। वैष्णव साधुओं के द्वारा नागाओं नग्न स्नान पर आपत्ति उठाने पर दोनों के मध्य खूनी संघर्ष हो गया था।



नागा संन्यासियों ने सदा से ही प्रथम स्नान किया है। इसलिए अंग्रेजों के शासन काल में प्राचीन परम्परानुसार नियम बनाया गया जिसके अनुसार सबसे पहले नागा, गोसाई अर्थात् अखाड़े उसके बाद वैष्णव साधु, उसके बाद नानक पंथी सिक्ख और अंत में निर्मला साधु सिक्ख स्नान करते हैं। नागा संन्यासी अपने स्नान के जुलूस में अस्त्र-शस्त्र का प्रदर्शन कर सकते हैं तथा शेष लाठी आदि का। इन गाजे-बाजे के साथ घोड़े-हाथी पर बैठकर विशेष पर्वों के स्नान को ही शाही स्नान या राजसी स्नान कहते हैं। इस अवसर पर इनका वैभव देखते ही बनता है। शून्य से अनन्त तक की इनकी यात्रा भारतीय संस्कृति के अनुसार अत्यन्त वैभवशालिनी होती है।

4.3.4 नागा साधुओं के विभिन्न अखाड़े

दशनामी सम्प्रदाय के अखाड़ों में बावन मढ़ी मानी जाती है परन्तु इनमें से छह अखाड़े प्रमुख एवं प्रसिद्ध हैं—

1. श्री महानिर्वाणी अखाड़ा 2. श्री निरंजनी अखाड़े 3. श्री अटल अखाड़ा 4. श्री आनन्द अखाड़ा 5. श्री जूना अखाड़ा तथा 6. श्री आवाहन अखाड़ा।

इन अखाड़ों तथा सम्प्रदायों का विशेष विवरण आगे की इकाईयों में पढ़ेंगे। उपरोक्त अखाड़ों के अतिरिक्त और भी अखाड़ों का गठन हुआ है। किन्नर अखाड़ा तथा महिला अखाड़ा का भी गठन हुआ है।

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

बोध-प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. नागा संन्यासी बनने से पूर्व क्या-क्या वस्तुएँ दान करनी पड़ती हैं ?

.....

2. नागा साधु की दीक्षा का प्रथम सोपान क्या है ?

.....

3. नवनिर्मित अखाड़े कौन-से हैं ?

.....

4.4 सारांश

भारतीय संस्कृति में कुम्भ एक महत्वपूर्ण घटक है। कुम्भ के आयोजन में नागाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी गई है। भगवान शंकराचार्य ने सनातन धर्म की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए अवतार लिया। उन्होंने भारत के चारों दिशाओं में सनातन धर्म की ध्वजा लहराई। बौद्धों को शास्त्रार्थ में पराजित कर भगवान शंकर के अवतार शंकराचार्य ने उनके मठों और अखाड़ों को सनातन धर्म में दीक्षित किया। उन्हीं मठों के योद्धा संन्यासी अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर नागा संन्यासी के रूप में विख्यात हुए।

बौद्ध धर्म से वैदिक धर्म में दीक्षित हुए योद्धा संन्यासी ही नागा कहलाए। कुम्भ को पर्व का रूप देने तथा इसे संगठित एवं विशाल समागम स्थल बनाने में आचार्य शंकर के योगदान को सभी एक मत से स्वीकारते हैं। नागा साधुओं के विशिष्ट संगठन को अखाड़ा कहा जाता है। इनमें से कुछ संन्यासी पूर्णतया दिगम्बर रहते हैं और कुछ न्यून वस्त्र या श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। मठों के एक विशेष प्रकार को अखाड़ा कहते हैं।

4.5 अभ्यास के प्रश्न

1. नागा सम्प्रदाय का परिचय दीजिए।
2. नागा साधु बनने के लिए क्या-क्या आवश्यक शर्तें हैं ?
3. नागा साधुओं के स्वरूप का वर्णन कीजिए।

4.6 चर्चा के बिन्दु

1. नागा संन्यासियों के स्वरूप पर चर्चा कीजिए।

2. कुम्भ और नागा सम्प्रदाय पर चर्चा कीजिए।

4.7 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. नागा साधु बनने से पूर्व अपना सर्वस्व दान करना पड़ता है।
2. दीक्षा से पूर्व सबसे पहले गृहस्थाश्रम का त्याग और ब्रह्मचर्य का पालन करना होता है।
3. किन्नर अखाड़ा और महिला अखाड़ा नवनिर्मित अखाड़े हैं।

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. अग्रवाल, मीनू (2013): कुम्भपर्व प्रयाग, इलाहाबाद, राजपाल एंड कम्पनी।
2. मिश्र, रामजी (2019): कुम्भपर्व और नागा सम्प्रदाय, प्रयागराज, नव जागरण प्रकाशन।
3. पाण्डेय, राजबली, हिन्दू धर्मकोश।
4. श्रीप्रकाश (2017), तीर्थों में तीर्थराज प्रयाग, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन।

खण्ड— 2 कुम्भ के विभिन्न परिप्रेक्ष्य

इकाई — 05 : नदियों, मासों एवं पर्वों का महत्व एवं वैज्ञानिकता

इकाई की रूपरेखा

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 उद्देश्य
- 5.3 नदियों का महत्व
 - 5.3.1 गंगा का महत्व
 - 5.3.2 यमुना का महत्व
 - 5.3.3 क्षिप्रा का महत्व
 - 5.3.4 गोदावरी का महत्व
- 5.4 पवित्र मासों का महत्व
- 5.5 पर्वों का महत्व
- 5.6 सारांश
- 5.7 अभ्यास के प्रश्न
- 5.8 चर्चा के बिन्दु
- 5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.1 प्रस्तावना

नदियाँ भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की पालना हैं। वे जीवन प्रवाह हैं। नदियों के तट पर संस्कृतियों और सभ्यताओं का सृजन हुआ है, समाज का विकास हुआ है। ये हमारी जीविका और अर्थव्यवस्था का आधार हैं। नदियाँ प्राण रेखा हैं, पाप, ताप, शाप नाशिनी हैं। जीवनदायिनी हैं, और मोक्ष दायिनी भी हैं। नदियाँ हमारी माँ हैं। हमारे सभी तीर्थस्थल नदियों के किनारे ही स्थित हैं। हमारी अस्मिता और स्वाभिमान की रक्षक नदियाँ ही हैं इन्हीं के तटों पर हरिद्वार, मथुरा, काशी, अयोध्या, उज्जैन, नासिक आदि प्रसिद्ध धार्मिक तथा दिल्ली, लखनऊ, कुरुक्षेत्र, पटना जैसे ऐतिहासिक स्थल स्थापित हैं। नदी का जल तत्व का संवाहक है। जो मनुष्य को प्राणदान देता है। यदि जल न हो तो जीवन संभव न होगा। नदी जल लहलहाते खेतों, पशुओं, पक्षियों को जीवन देता है। कल-कल निनाद करती हुई नदियों की गोद में माता की गोद जैसी शान्ति और आनन्द मिलता है। हमारे ऋषियों-मुनियों ने इन्हीं की तट पर बैठकर साधना की है। ज्ञान प्राप्त किया है। नदियाँ स्नान, ध्यान और ज्ञान की संवाहिका हैं। नदी स्नान मनुष्य को सांसारिक पापों से मुक्ति कराकर पारमार्थिक सत्ता से एकाकार करता हैं। नदियाँ आशान्त मन को शान्ति देती हैं। जीवित को अन्न-जल देती हैं। मृतकों को किनारा देती हैं। अस्थि विसर्जन के लिए जल देती हैं। गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी, ब्रह्मपुत्र, सरयू, गोमती, कृष्णा, ब्रह्मपुत्र आदि नदियाँ भारत की धार्मिक आस्था तथा अस्मिता को स्थापित करती हैं। भारत की पवित्र नदियों से भारतवासी अपने कलश में आकर बैठने की प्रार्थना करता है।

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती।

नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- कुम्भ में नदियों के योगदान को समझ सकेंगे।
- नदियों के उद्गम तथा उनकी अवस्थिति और महत्व को समझ सकेंगे।
- कुम्भ पर्व में योगदान करने वाली गंगा, यमुना, क्षिप्रा तथा गोदावरी के बारे में जान सकेंगे।
- पर्व क्या है तथा उनका क्या महत्व है यह समझ सकेंगे।
- पर्व के प्रकारों और भारतीय संस्कृति में उनके योगदान को जान सकेंगे।

5.3 नदियों का महत्व

भारतीय जनमानस में नदियों का महत्व सदैव अक्षुण्ण रहा है। भारतीय संस्कृति को नदी संस्कृति इसी लिए कहा गया है। भारत की नदियाँ प्रारम्भ से ही भारत के हृदय पर हाररूप में विराजमान रही हैं। हिमालय के उतुंग शिखर से उतरकर ये नदियाँ कल-कल ध्वनि के साथ भारत माता की महिमा का गान करती हुई आगे बढ़ती हैं। नदियों से जुड़ी अनेकों पौराणिक गाथाएँ हमारे गौरवमयी अतीत की विरासत को याद दिलाती हैं। वैदिक ऋषियों से लेकर आद्य शंकराचार्य, व्यास, वाल्मीकि, शुकदेव, कालिदास, भवभूति, क्षेमेन्द्र, पं. जगन्नाथ तथा तुलसी, सूर जगन्नाथदास रत्नाकर, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, सुमित्रानन्दन पन्त जैसे कवियों ने इनकी महिमा का गान किया है।

हिन्दू संस्कृति का कोई भी शुभ और मांगलिक कार्य बिना गंगाजल के सम्पन्न नहीं होता है। नदियों के प्रति अगाध विश्वास, श्रद्धा और भक्ति भाव वेदों उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रन्थों तथा पुराणों में वर्णित मिलता है। नदियों के तट आध्यात्मिकता और स्वजागरण के केन्द्र रहे हैं। इसलिए इनको तीर्थ कहा गया है। इनका सान्निध्य धर्म-संस्कृति को नवचेतना एवं नव स्फूर्ति प्रदान करता है। तीर्थ परम्परा की संवाहक नदियाँ ही हैं। गंगा, यमुना, सरयू, नर्मदा गोदावरी, आदि नदियों के किनारे हमारे तीर्थ स्थापित हैं। ये तीर्थ न केवल पुण्य और धार्मिक क्रिया-कलापों के केन्द्र हैं अपितु पर्यटक के रूप में हजारों लाखों लोगों में जीविकोपार्जन के साधन भी बने हुए हैं। नदियाँ हमारे लिए प्राकृतिक उपहार हैं। प्रकृति ने इन्हें हमारा जीवन समुन्नत बनाने के लिए दिया है। ये निःस्वार्थ भाव से हमारा पोषण करती हैं। संरक्षण और संवर्धन करती हैं। परमार्थ के लिए ही सतत सलिला बनी रहती हैं।

वृक्ष कबहु नहीं फल भाखै, नदी न सचै नीर।

परमारथ के कराने, साधुन धरा शरीर ।।

कुम्भ पर्व में नदियों का विशेष महत्व है। बिना नदी के कुम्भ पर्व सम्भव ही नहीं है। कुम्भ का अमृत विभिन्न स्थानों पर नदी जल में ही गिरा था। इसलिए नदियों का जल अमृत विभिन्न स्थानों पर नदी जल में ही गिरा था। इसलिए नदियों का जल अमृत माना गया है। इसे पाने के लिए व्यक्ति हजारों मील चलकर आता है। और पवित्र नदी जल में स्नान-पानकर अमृत फल प्राप्त करता है। कुम्भ अवसर पर जब राशियों का संक्रमण होता है, उस बेला को 'अमृत बेला' कहा जाता है। इस बेला में गंगा, गोदावरी, यमुना तथा क्षिप्रा के पवित्र जल में स्नान करने के लिए लाखों की भीड़ उमड़ पड़ती है स्नानियों में सबसे पहले स्नान करने की होड़ लग जाती है। पृथ्वी पर जब अमृत घड़े से छलका था तब सूर्य, चन्द्र, शनि बृहस्पति जिन राशियों में थे पुनः उन राशियों में जब ये केन्द्रित होते हैं तभी कुम्भ पर्व मनाया जाता है। इन अवसरों पर नदियों का जल अमृत तुल्य हो जाता है। वह शारीरिक विकारों के साथ ही मानसिक विकारों को दूर करता है। जिससे धार्मिक और आध्यात्मिक पुण्य लाभ तो होता ही है, सांसारिक जीवन भी उदात्त हो जाता है। ऐसी मान्यता है। भारतीय मनीषा में जल को अमृत भेषज, रस, मधु, पवित्र आदि अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है वेदों में जल की महिमा का वर्णन किया गया है।

अप्स्वन्तरमृतमप्सु, भेषजमामृत प्रशस्तिप्वा भवतः वाजिनः।

देवीरापोयो व ऊर्मि प्रतूर्तिः ककुम्भान्वाजसास्तेनायं वाजंसेत।।

वेदों में जल को अमृतोपस्तरण अमृतापिधान, महौषध, कहा गया है। और अश्वो को उसमें प्रविष्ट होने का आदेश दिया गया है। क्योंकि जल में अमृत है, उसी में आरोग्यता प्रदान करने वाली तथा सब प्रकार से पुष्ट करने वाली औषधियाँ हैं। औषधियों से युक्त जल अमृत तुल्य हो गया है। जल का सतत प्रवाह नदियों में ही होता है। इसलिए नदियों को सतत सलिला कहा गया है। धार्मिक अवसरों और पर्वों पर नदियों में स्नान का महत्व बढ़ जाता

है। वेदों में ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद की अनेक ऋचाओं में कुम्भ के अवसर नदी जल में स्नान की अलौकिकता और उसके महत्व का वर्णन किया गया है—

अश्वमेध सहस्राणि वाजपेयशतानि च ।

लक्षं प्रदक्षिणा भूमेः कुम्भस्नानेन तत्फलम् ।।

जितना फल (पुण्य) हजार बार अश्वमेध यज्ञ करने से सौ बार वाजपेय—यज्ञ करने से और एक लाख बार पृथ्वी की परिक्रमा करने प्राप्त होती है उतना ही पुण्य केवल एक बार कुम्भ पर्व पर स्नान करने पर मिलती है। मान्यता है कि कुम्भ पर्व पर नदियों में स्नान करने जलपान करने से अमृत जल जिस भी व्यक्ति में पहुँचता है उसके समस्त आवरण समाप्त हो जाते हैं। तथा वह कान्ति से युक्त हो जाता है। वह कभी पतित और क्षीण नहीं होता है। कुम्भ पर्व के शुभ और मंगलकारी अवसर पर नदियाँ भी अमृतमयी हो जाती हैं। पृथ्वी पर अमृत जल औषधियों में रूपान्तरित होकर बहता है। कुंभ पर्व पर व्यक्ति स्नान करता है, तब उसका पूरा शरीर अमृत जल से आप्लवित हो जाता है। इसीलिए कुम्भ जैसे महत्वपूर्ण अवसर पर नदियों में स्नान का बहुत महत्व हो जाता है। भारतीय साहित्य में इन अवसरों पर किये जाने वाले स्नानों में गंगा स्नान को सबसे महत्वपूर्ण माना गया है। काव्यात्यन स्नान सूत्र, स्नान दीपिका, स्नानसूत्र भाग्य, स्नानव्यास, दक्ष स्नान पद्धति, वायु पुराण, पदुम पुराण आदि पुराणों में स्नान के महत्व को अमृतमूलक तात्विक धारणाओं से जोड़ा गया है। इन सभी स्नान विधान निर्देशक ग्रन्थों में गंगाजल द्वारा किए गये प्रातः कालिक स्नान को सबसे प्रमुख कहा गया है। कर्म एवं गरुड पुराण में भी वारुण स्नान आदि के अमृत फलदायी महत्व की विराट व्याख्या प्रस्तुत की गई। वारुण स्नान, कपिल स्नान, ब्रह्म स्नान, भौम स्नान, आग्नेय स्नान, दिवा स्नान, पौर्णिक स्नान तथा वृत्त स्नान में से प्रत्येक का महत्व अपार है।

कुम्भ पर्व पर नदियों का महत्व अक्षुण्ण है। उनके संयोग से ही कुम्भ जैसा महापर्व सम्भव हुआ है। यदि नदियाँ न हो तो कुम्भ से छलका अमृत जल का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाता। क्योंकि भूमि में गिरने के बाद अमृत जल कहां विलीन हो गया पता नहीं चलता। स्नान—दान तर्पण कैसे सम्भव होता। अमृत, अपार जल राशि समुद्र से उत्पन्न भी हुआ था और वह गिरा भी जलराशि का संवाहन करने वाली नदियों में ही, इसीलिए सभी कुम्भों पर्वों का आयोजन नदी तट पर ही होता है। कुम्भ किसी ऐसे धार्मिक महत्व वाले स्थान पर नहीं प्रारम्भ हुए जहाँ नदियाँ न हो। कुम्भ के पवित्र अवसर पर स्नान का सर्वाधिक महत्व है। स्नान के लिए अखाड़ों, सन्तों, महन्तों तथा सामान्यजन में होड़ सी लगी रहती है। स्नान नदियों में ही किए जा सकते हैं नदी जल में स्नान का महत्व ही कुम्भ का आधार है। सूर्य स्नान, पुष्प स्नान या सुगन्धित स्नान की कल्पना भी कुम्भ अवसर नहीं की जा सकती है। इससे यह सिद्ध होता है। कि नदियाँ कुम्भ पर्व की महत्वपूर्ण कारक हैं। कुम्भ पर्व में गंगा, यमुना, क्षिप्रा और गोदावरी जैसी पवित्र नदियों का महत्वपूर्ण योगदान है। इनके तट पर ही स्नान, ध्यान, दान अर्पण और तर्पणा कर विशाल हिन्दू जनसमूह अपने को धन्य समझता है।

5.3.1 गंगा का महत्व

गंगा हिन्दू संस्कृति का आधार है। हिन्दुत्व का मानदण्ड है। वह केवल नदी ही नहीं है अपितु हिन्दु समाज की माँ है। सम्पूर्ण भारतीय समाज उन्हें जन्मदायिनी मानता है। हिन्दू के लिए गंगा श्रद्धा है, भक्ति है और विश्वास है। जन्म से लेकर मरण तक हिन्दू समाज गंगाजल का उपयोग और उपभोग करता है। गंगाजल तन—मन को पवित्र करता है। ताप—पाप नाशिनी है गंगा जी। गंगा जी केवल पाप का हरण ही नहीं करती है अनेकों रोगों का निवारण भी करती है। गंगा जी हिन्दुओं के रोम—रोम में बसी है। राम कथा के समान ही, गंगा धर्म, अर्थ और मोक्ष दायिनी है। हिन्दुओं के अनेकों तीर्थ—हरिद्वार, गढमुक्तेश्वर ऋषिकेश, प्रयाग, बनारस काशी, गंगासागर, गंगा तट पर ही स्थित है। 'गंगे तव दर्शनात् मुक्ति' कहकर गंगा के माहात्म्य को स्वीकार किया गया है। ऋग्वेद, उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, पुराणों में और आद्यशंकराचार्य जैसे हिन्दूधर्म ध्वजा वाहकों ने गंगा जी की प्रशस्ति गान किया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जगन्नाथ दास, रत्नाकार, सुमित्रानन्दन पंत जैसे हिन्दी के कवियों ने गंगा के महत्व को अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है।

लोल लहर लहि पवन एक पै इक भइ आवत ।

जिमि नरगमन नम विविधमनोरथ करत मिटावत ।।

सुभय स्वर्ग—सोपान सरिस सबके मन भावत ।

दरसन मज्जन पान त्रिविध भयदूर मिटावत ।।

वेदों में गंगा का वर्णन सर्व प्रथम आया है। “इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमै सचता परूष्ण्या ।” इसी से गंगा की सर्वश्रेष्ठता सिद्ध होती है। गंगा जी का महत्व इसी प्रसंग से भी सिद्ध होता है कि उनको पृथ्वी पर लाने के लिए अयोध्या के राजा अंशुमान और फिर दिलीप ने घोर तपस्या किया लेकिन वे सफल नहीं हुए । दिलीप के पुत्र भागीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर गंगा जी भूतल पर आने को तैयार हो गयी । शिवजी की जटाओं से निकल कर गंगा हरिद्वार से होते हुए गंगासागर में जाकर मिलती है। गंगा लोक तारिणी है। मृतकों का उद्धार करने वाली है। गंगा केवल नदी ही नहीं अपितु साक्षात् देवी स्वरूपा है। सर्व सिद्धी प्रद है। इनका सम्पूर्ण स्वरूप ही आध्यात्मिक तप, साधना और व्रत-अनुष्ठानों की सिद्ध स्थली के रूप में शाश्वत सिद्ध पीठ की तरह भारत भूमि पर प्रवाहशील है। वेद, पुराण, उपनिषदों रामायण, महाभारत रामचरित्र मानस जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थों में गंगा की महिमा वर्णन किया गया है।

वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड और अयोध्या काण्ड में गंगा की महिमा को व्याख्यान और गुणगान किया गया है। वन जाते समय राम लक्ष्मण के साथ जब सीता जी गंगा पार कर रही होती है। तब वे गंगा जी से वनवास से सकुशल वापस लौटने की प्रार्थना करते हुए निवेदन करती है। श्लोक 84 और 85

चतुर्दश हि वर्षाणि समग्राण्युश्य कान ने ।

भ्राता सह मया चैव पुत्रः प्रत्यागमिव्यति ।। 84

ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता ।

पक्ष्ये प्रमुदिता गङ्गे सर्वकामसमृद्धिनी ।। 85

गंगा के स्नान, दर्शन और पूजन से जन्म जन्मान्तर के पाप-दोष मिट जाते हैं व्यक्ति नव-चेतना और नव-स्फूर्ति से युक्त हो जाता है। जो गंगा जल पवित्र है वह शिव की जटाओं में विद्यमान है। देश का कोई भी व्यक्ति जब शिव लिंग पर जल चढ़ाता है तो बोलता है हर हर गंगे। गंगा का नाम लेने से मुक्ति मिल जाती है। स्नान और जलपान से उसकी सात पीढ़ियां पवित्र हो जाती है। उसके पुरखे तर जाते हैं जैसे राजा भागीरथ के 60 हजार पुरखे स्पर्श मात्र से तर गये ।

नानाविधं हत्स्वल्पं पापं स्याद्भरते नृभिः ।

गंगायाः स्पर्शवातेन नश्यतीति श्रुतौ श्रुतम् । (1/26/27)

हिन्दू समाज ही नहीं अपितु अनेकों विदेशी और अन्य पंथों के अनुयायी भी गंगा के महत्व को स्वीकार करते हैं चीनी यात्री ह्वेनसांग गंगा के महत्व का वर्णन करता है, गंगा जल पवित्र और निर्मल है वह समस्त पापों को धोने वाला है, हजारों की संख्या में यहाँ हिन्दू धार्मिक अनुष्ठान एवं पूजा कार्य करते हैं, मुक्ति तथा परलोक में सुख पाने की इच्छा से लोग गंगा में नहाते हैं तैमूर ने अपनी आत्मकथा ‘मूलफजातए तैमूर’ में गंगा धारी को कुटिला घाटी बताया है। उसने लिखा की अमीर सुलेमान के साथ ‘दरीए कुटिला’ में इकट्ठे हजारों पुरुषों स्त्रियों बच्चों को कत्ल कर उसमें रक्त रंजित भूमि को गंगा के पानी से धोया और नमाज पढ़ी। आइने अकबरी’ से ज्ञात होता है। कि अकबर भी अपने दैनिक उपयोग के लिए गंगाजल का प्रयोग की करता था। वह जलपान में भोजन में सदा गंगाजल का उपयोग करता था। कुम्भ अवसर पर गंगा स्नान सर्वफल सर्व सुख, सर्व पुण्य देने वाला है।

गंगा हि सर्वभूतानामिहापुत्र फलप्रदा ।

भावनुरूपतो विष्णोसदा सर्वजगद्धिता ।।

5.3.2 यमुना का महत्व

हिन्दू जनमानस में नदियों का धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व है इनहें जीवन का आधार माना गया है। हिन्दुओं ने इन्हें प्रत्यक्ष देवता के रूप में माना है। इनके तट पर महात्माओं सन्तों ने सिद्धियां प्राप्त की है। देश की महान नदियों में यमुना का नाम आदर के साथ लिया जाता है। गंगा जी के समान ही इनकी भी पूजा अर्चना और वन्दना की जाती है। ऋग्वेद में गंगा के इन्हीं का नाम आता है। यमुना का पौराणिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक महत्व है। यमुना जी का उद्भव हिमालय में स्थित हिम आच्छादित ‘बन्दरपुच्छ’ नामक स्थान से 8

किलामीटर की दूरी पर स्थित 'कालिंद पर्वत' से हुआ है। कलिंद पर्वत से निकलकर जलराशि यमुनोत्री नामक स्थान पर प्रकट होती है। इसलिए इनका एक नाम यमुना है। जो सर्वाधिक प्रसिद्ध है। कालिंद पर्वत से निकलने के कारण इन्हें 'कालिन्दी' कहा कर पुकारा जाता है। ऋग्वेद के साथ ही साथ ब्राह्मण ग्रन्थों— ऐतरेय ब्राह्मण, शतपथ ब्राह्मण आश्वलापन श्रौतसूत मार्कंडेय पुराण, भविष्य पुराण हरिवंश पुराण, विष्णु पुराण, पद्मपुराण, देवी पुराण वामन पुराण तथा श्रीमद्भागवत पुराण, देवी पुराण वामन पुराण, विष्णु पुराण, पद्मपुराण में यमुना जी के महत्व उनकी विलक्षणता, तथा उनकी उत्तपत्ति के बारे में विस्तार से वर्जन किया गया है। यमुना को यमी, सूर्य पुत्री, कालिन्दी, रवितनया, श्यामा, तपनतनुजा आदि नामों से भी सम्बोधित किया जाता है। यमुना के तट पर हमारे देश के अनेक धार्मिक और ऐतिहासिक नगर स्थापित हैं। यमुना के कारण जिनका महत्व बढ़ जाता है। देहरादून, कुरुक्षेत्र, पानीपत, दिल्ली, (प्राचीन इन्द्र प्रस्थ) मथुरा, आगरा, कालपी, सहारनपुर तथा प्रयागराज में आकार गंगा में मिलकर संगम क्षेत्र का निर्माण करती है। जहाँ लाखों लोग पवित्र संगम में डुबकी लगाकर पुण्यार्जन करने आते हैं पुराणों में यमुना को लोकपावनी तथा यशस्विनी कहा गया है। यमुना में स्नान करने से यम से भय नहीं रहता है। तथा शनि जैसे प्रबल गृह के प्रभाव से मनुष्य को छुटकारा मिल जाता है। क्योंकि यमुना यम और शनिश्चर की बहन है। यमुना जी के महत्व बताते हुए कहा गया है—

तत्रास्ति यमुना पुण्या धन्या त्रैलोक्य पावनी।

ददाति स्मरणे स्वर्ग मरणे ब्रह्मणः पदम्।।

पुराणों में यमुना को जगत कल्याणी कहा गया उनको 'सुषुम्ना' नाडी के समान बताया गया है। जिस प्रकार योग साधना के लिए सुषुम्ना के जागरण की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार से भगवत भक्ति और उनकी कृपा की प्राप्ति के लिए यमुना रूपी सुषुम्ना का जागरण आवश्यक होता है। उन्हें परात्पर कृष्ण की पत्नी होने का गौरव प्राप्त है। भगवान कृष्ण की आठ पटरानियों में कालिन्दी का चौथा स्नान है। यमराज अपनी बहन यमुना पर प्रसन्न होकर वरदान दिया था कि जो भी व्यक्ति यम द्वितीया के अवसर पर यमुना में स्नान करेगा, उसे यमलोक आना नहीं पड़ेगा, उसे स्वर्ग भी प्राप्त होगा। संस्कृत भाषा के विद्वानों की तरह ही हिन्दी साहित्यकारों ने भी यमुना के महत्व का यादव अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है— भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'यमुना छवि' में लिखा है—

तरनि—तनूजा तट तमाल तरुवर बहुछाये।

झुके फूल सो जल परसनहित मनहु सुहाए।।

किधौ मुकुर में लखत उझकि सब निज—निज शोभा।

कै प्रनवत जल जानि परम पावन फल लोभा ।।

मनु आतप वारन तीर कौं सिमिटि सबै छाये रहत।

कै हरि सेवा हित नै रहे निरखि नैन मन सुख लहत।।

यमुना की छवि और उनकी महिमा इतनी व्यापक है कि तमाल के वृक्ष भी उनके पवित्र जल का स्पर्श करना चाहते हैं जिससे उन्हें उत्तम फलनी प्राप्ति हो सके। कृष्ण की प्रिया होने के वे यमुना जी को झुककर प्रणाम कर रहे हैं। जिससे उन्हें कृष्ण के दर्शन का फल प्राप्त हो सके।

5.3.3 क्षिप्रा का महत्व

मध्य प्रदेश के उज्जैन में कुम्भ पर्व लगने से धार्मिक और सांस्कृतिक केन्द्र के रूप में महत्वपूर्ण स्थान हैं। यहीं भगवान महाकालेश्वर विद्यमान हैं। क्षिप्रा नदी के तटपर लगने वाले कुम्भ के अवसर पर पवित्र नहीं में स्नान— ध्यान कर मनुष्य लोकोत्तर पुण्यार्जन का लाभ प्राप्त करता है। भगवान महाकाल के दर्शन के पूर्व पवित्र नदी में स्नान करके जब मनुष्य महाकाल का दर्शन—पूजन कर आशीर्वाद प्राप्त करता है तो उसकी धार्मिक और आध्यात्मिक यात्रा पूरी हो जाती है। क्षिप्रा नदी को मोक्ष दायिनी और सकल फल प्रदायिनी कहा गया है। उनके स्मरण मात्र से मनुष्य के सारे कल्मष समाप्त हो जाते हैं भक्तिभाव से नाम स्मरण करते हुए क्षिप्रा के पवित्र जल में स्नान करने से मन शरीर और आत्मा तीनों शुद्ध हो जाते हैं इसकी महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है।

क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी ख्याता जया गण्डकी।

पूर्णापूर्ण जलैः समुद्र सहिता, कुर्वन्तु नो मंगलम् ।।

पुराणों की आख्या में बताया गया है कि क्षिप्रा नदी का उद्गम भगवान वाराह के हृदय से हुआ था। यह घटना उस समय की जब भगवान विष्णु ने वाराह का रूप धारण कर जल में निमग्न पृथ्वी का उद्धार किया था। हरिवंश पुराण, मत्स्यपुराण में बताया गया है। क्षिप्रा नदी का उद्गम परियत्र या पारियत्र पर्वत सं माना जाता है। इसे उत्तर वाहिनी नदी बताया जाता है। वर्तमान में क्षिप्रा नदी का उद्गम मालवा की कोकरी बड़ी पहाड़ी से हुआ है। जो इन्दौर से बारहमील की दूरी पर दक्षिण-पूर्व की दिशा में स्थित है। लगभग चौवन किलोमीटर की दूरी तय कर यही मोक्षदायिनी, संसार तारिणी नहीं पवित्र पुराणों में प्रसिद्ध उज्जैनी नगरी में पहुँचती है। जहाँ कुम्भ का महापर्व लगता है। स्कन्द पुराण में इस पर्वत नदी के उद्गम को लेकर भगवान शिव और विष्णु भगवान से सम्बन्धित एक कथा का वर्णन मिलता है। कहा गया है कि एक बार भगवान शिव ब्रह्मकपाल लेकर शिक्षा मागने के लिए निकले लेकिन तीनों लोकों में कहीं भी उन्हें भिक्षा नहीं मिली। अन्त में वे भगवान विष्णु के पास गये तो विष्णु ने उन्हें तर्जनी अँगुली दिखाकर कहा कि मैं तुम्हें भिक्षा देता हूँ स्वीकार करो। इससे भगवान शिव नाराज होकर अपने त्रिशूल से उनकी तर्जनी अँगुली पर प्रहार कर दिया, जिससे निकलने वाली रक्त धारा से शिव का भिक्षा-पात्र भर गया। कपाल के किनारे रक्त की ज्यो धारा बही वही क्षिप्रा के नाम से प्रसिद्ध हुई। स्कन्द पुराण में क्षिप्रा नदी में स्नान के महत्व को बताते हुए कहा गया है—

कार्तिक चैव बैशाखे उच्चे नीचे दिवाकरे ।

क्षिप्रा स्नानः प्रदुर्वीत क्लेश दुःख निवारणम् ।।

जिस उज्जैनी में महाकाल भगवान शिव विराजमान हो, वेगवती विमल जलवाली क्षिप्रानदी हो तथा भगवती विशालक्षी हो, वहाँ कौन रहना नहीं चाहेगा। अर्थात् सभी वहाँ निवास करने के लिए लालायित रहते हैं—

महाकालः सरिच्छिप्रा गतिश्चैव सुनिर्मला ।

उज्जयिन्यां विशालाक्षि, वासः कस्य न रोचते ।।

5.3.4 गोदावरी का महत्व

सनातन संस्कृति में नदियों को सर्वफल दायिनी और मोक्षादायिनी कहा गया है। नदीतट पर तपस्या कर शरीर त्यागने वाले के सभी पाप मिट जाते हैं। उसे स्वर्ग की प्राप्ति होती है। गोदावरी तट पर लगने वाले कुम्भ का महत्व सर्वविदित है। वह लाखों यज्ञों से बढ़कर पुण्य देने वाला है। पौराणिक आख्यानों में गोदावरी को पवित्रतम और मोक्षदायिनी कहा गया है। गोदावरी को 'दक्षिण' की गंगा कहा जाता है। दक्षिणात्य में गोदावरी का वही महत्व है जो उत्तर भारत में गंगा का है। गोदावरी नदी का उद्गम त्रयम्बक नामक गाँव में स्थित ब्रह्म गिरी पहाड़ी से होता है। ब्रह्मपुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, नारदपुराण, शिव पुराण तथा महाभारत में गोदावरी के उद्भव और महत्व के बारे में विस्तार से वर्णन मिलता है। जिस प्रकार अपने पूर्वजों का उद्धार करने के लिए घोर तपस्या करके महाराज भगीरथ गंगा को पृथ्वी पर लाये थे उसी प्रकार गोदावरी के कारण अपने ऊपर लगे हुए पाप का प्रक्षालन करने के लिए ऋषि गौतम भगवान शिव को अपनी तपस्या से प्रसन्न करके गोदावरी को पृथ्वी पर लाये थे। अपनी घोर तपस्या से उन्हें शिव जी को ब्रह्मगिरि पर्वत पर रहने के लिए भी मना लिया था। शिव की कृपा से ही गंगा जी ब्रह्मगिरि पर गोदावरी के रूप में प्रकट हुई और शिव जी त्रयम्बक में ज्योतिर्लिंग के रूप में ब्रह्मगिरि पर विराजमान हुए। इसीलिए इनका एकनाम गौतमी भी है। ब्रह्मपुराण में गोदावरी की महिमा का वर्णन किया गया है।

आनीता सजटा गंगा अस्या नन्यच्छभावहम् ।

स्वर्गे भुवि तले वाऽपि तीर्थ सर्वार्थदं मुने ।।

इत्येतत्कथितं पुत्र गौतमाय महात्मने ।

साक्षद्वहरेण तुष्टेन मया ताव निवेदितम् ।।

एवं सा गौतमी गंगा सर्वभ्योऽप्यधिकामता ।

तत्स्वरूपं च कथितं कुतोऽन्या श्रवणस्पृहा ।।

गौतमी गंगा शिव की जटाओं सहित लायी गई थी। जो सभी अन्यतीर्थों से अधिक श्रेष्ठ है। गोदावरी पुण्य

सलिलता है। इन्हीं के पवित्र तट पर कुम्भ पर्व का आयोजन होता है। यहाँ बारह वर्ष में जब बृहस्पति सिंह राशि में होते हैं तो पूर्ण कुम्भ लगता है। नासिक में स्थित इसी स्थान पर कुम्भ पर्व आयोजित होता है। सिंह राशि गते सूर्ये सिंह राशौ बृहस्पतौ गोदावर्या भवते कुम्भः पुनरावृत्ति वर्णन ।।

इस प्रकार कुम्भ पर्व में नदियों का महत्व सर्वविदित है। कुम्भ पर्व नदी स्थान और राशि केयरस्पर एक साथ होने का ही परिणाम है। नदियोंके अमृत जल में स्नान कर हिन्दू पुर्णाजन कर धार्मिक और आध्यात्मिक उन्नति तो करता ही है। इकलौकिक जीवन में यश सुष और शांति प्राप्त करता है। यही कारण है कि इन अवसरों पर लाखों लोग स्नान के मोह से सुदूर क्षेत्रों से चलकर यहाँ आते हैं पूर्वाभिमुख होकर बहने वाली गोदावरी के तट पर ज्योतिर्लिंग के अतिरिक्त नासिक (पंचवटी) प्रष्ठानपुर, राज महेन्द्री, भद्रा चलम्, नान्देड, कोटा पल्ली आदि पावन स्थान स्थित है। चौदह सौ पचास किलोमीटर की यात्रा करके गोदावरी गंगासागर में मिल जाती है। वर्धा, प्राणस्ता, इन्द्रावती, सावरी, बैनगंगा आदि नदियाँ इसमें आकर मिलती है। गोदावरी के पवित्रतट पर पंचवटी में राम सीता और लक्ष्मण ने वन वास के समय को बिताया था और यही सूर्यनखा के नाक-कान काटे थे। यहाँ रामकुण्ड, लक्ष्मण कुण्ड धनुष कुण्ड , सीता कुण्ड आदि अनकों पवित्र तीर्थ स्थल है। जहाँ के दर्शन से जीवन धन्य हो जाता है। कुम्भ पर्व पर मुख्य स्नान यहाँ रामघाट पर होता है। गोदावरी के पवित्र तट पर हजारों हजार ऋषि मुनियों तपस्या कर दिव्य ज्ञान प्राप्त करते हैं यहाँ जो स्नान करता है। वह राजसूय यज्ञ करने के समान फल प्राप्त करता है। और शरीर त्यागकर वायुलोक को प्राप्त करता है। ब्रह्म पुराण में इनकी महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि गंगाजल गोधृत, स्वर्ण तथा सोमरस से युक्त होकर अमृत समान है किन्तु गोदावरी का जल उससे भी बढ़कर दिव्य अमृत के समान फलदेने वाला है।

गंगाया वारिणाज्येन हिरण्येन तथैव च ।

सर्वभ्योप्यधिकं दिव्यमृतं गौतमी जलम् ।।

गोदावरी गंगा के समान ही पवित्र और उत्तम मोक्षदायक फल देने वाली मानी जाती है। कुम्भ के अवसर पर इनके तट महापर्व का आयोजन होता है। जहाँ केवल दक्षिण भारत के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत से लाखों लोभ स्थान ध्यान कर पुण्यार्जन के लिए आते हैं विश्व के अनेक देशों के लोग भी यहाँ स्नान करने के लिए आते हैं कुम्भ के अवसर सभी देवता नासिक में आकर गोदावरी नदी में स्नान करते हैं गोदावरी का जल गंगा जी के समान ही औषधीय गुणों से युक्त है। ब्रह्मगिरि से निकल कर आगे चलकर गोदावरी नदी सात धाराओं वशिष्ठ , कौशिकी, वृद्ध गौतमी, गौतमी , भारद्वाज जी आत्रे की और तुल्या में विभाजित हो जाती है इन्हीं को सप्तगोदावरी के नाम से जाना जाता है। इन सप्त गोदावरी में स्नान ध्यान पूजन और दान का महत्व है। जिन्द्रिय होकर जो मनुष्य सप्त गोदावरी में स्नान करता है। कोमहा पुण्य को प्राप्त करता ही है और मृत्यु के बाद इस संसार से मुक्ति पाकर देवलोक को जाता है।

सप्तगोदावरीं स्नात्वा नियतो नियताशनः ।

महापुण्यमवाप्नोति देवलोकं च गच्छति ।

5.4 पवित्र मासों का महत्व

कुम्भ पर्व पर मासों अर्थात् महीनों का महत्वपूर्ण स्थान है। कुम्भ पर्व हर मास में नहीं लगते हैं ये एक निश्चित महीने में, निश्चित अवसर पर ही लगते हैं इसलिए इन महीनों का हिन्दू समाज में महत्व बहुत बढ़ जाता है। कुम्भ पर्व के स्थान, दिवस और समय के समान ही मासों का योग विशेष होता है। ऐसी मान्यता है कि जब बृहस्पति मार्केश की राशि में प्रवेश करता है, तो उस समय में यह जीवन संहार करने वाले तत्वों को समाप्त कर देता है, उनके प्रभावों को कमजोर कर देता है। मानव जीवन जीवनवर्धक तत्वों से युक्त हो जाता है। यह खास समय होता है, जब कुम्भ पर्व का अवसर आता है। यह विशेष समय वर्ष के किसी न किसी मास विशेष में ही आता है। इस लिए उसी महीने में कुम्भ पर्व आयोजित होता है। भारत में कुम्भ पर्व हरिद्वार प्रयागराज, नासिक और उज्जैन चार स्थानों पर लगता है। इन राशि का संक्रमण जिस महीने में होता है उसी मास में कुम्भ पर्व मनाया जाता है। बारह वर्ष में महाकुम्भ और छः वर्ष में अर्ध कुम्भ पर्व लगने की परम्परा है। शास्त्रों एवं हिन्दू धर्म ग्रन्थों में कुल बारह कुम्भ का वर्णन मिलता है, लेकिन वर्तमान समय में चार विशेष स्थान पर चार कुम्भों का आयोजन होता है। हिन्दू समाज में तिथियों दिवसों एवं मासों का धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत महत्व है। कोई भी

मांगलिक और धार्मिक कार्य शुभ मुहूर्त और शुभ मास में ही मनाने की परम्परा है। हमारे सभी महोत्सव उत्सव, पर्व और त्योहार निश्चित समय और निश्चित मास में ही मनाये जाते हैं कुम्भ पर्व मनाने का अवसर निश्चित मास में ही आता है। क्योंकि इन्हीं मास में ग्रह राशियों में संक्रमण करते हैं

समुद्र मंथन के आख्यान से ज्ञात होता है, कि अमृत कलश की सुरक्षा में सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति का सबसे महत्वपूर्ण योगदान था। अतः इन ग्रहों के उसी विशिष्ट योग के अवसर पर कुम्भ पर्व मनाने की परम्परा है—

सूर्येन्दु गुरु संयोगस्तदाशौ यत्र वत्सरे।

सुधाकुम्भप्लवे तत्र भूमौ भवति नान्यथा।।

हरिद्वार में कुम्भ पर्व चैत्र महीने में प्रयागराज में कुम्भ पर्व माघ मास में, उज्जैन में वैशाख मास में तथा नासिक में यह पर्व श्रावण-भाद्रपद में मनाया जाता है। अमृत जल की बूँदे जिस समय हरिद्वार में गिरी उस समय गुरु कुम्भ राशि और सूर्य, चन्द्रमा मेष राशि में थे।

पृथ्वी पर अलग-अलग मासों में अलग-अलग समय कुम्भ पर्व लगता है। इस प्रकार मुख्य रूप से कुल चार स्थानों पर कुम्भ पर्व लगने का वर्णन मिलता है।

पृथिव्यां कुम्भ योगस्य चतुर्धा भेद उच्चयते।

चतुस्थले नियतनात् सुधा कुम्भस्य भारते।।

चैत्र महीने का हिन्दू धर्म में विशेष महत्व है। इसी महीने में जगत नियन्ता, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम का जन्म हुआ था। इसी महीने में विश्व की उत्पत्ति और भारतीय काल गणना की शुरुआत मानी जाती है। चैत्र महीने के अन्त वैशाख के प्रथम दिन जब बृहस्पति कुम्भ राशि पर और सूर्य मेष राशि पर होते हैं तब मुख्य स्नान पर्व पड़ता है। इस अवसर पर स्नान, दान और ध्यान करने पर मनुष्य पुनर्गमन से मुक्त हो जाता है उसे पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता है। कुम्भ पर्व के अवसर पर सम्पूर्ण पृथ्वी के साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हरिद्वार में उपस्थित होते हैं इस पावन अवसर पर स्नान करने से समस्त पृथ्वी के तीर्थों का स्नान हो जाता है। हरिद्वार में प्रथम स्नान महाशिव रात्रि पर चैत्र महीने में द्वितीय स्नान चैत्र मास के कृष्ण अमावस्या तथा मुख्य स्नान पर्व वैशाख के प्रथम दिन पर मनाया जाता है —

पद्मिनी नायके मेषे कुम्भ राशिगते गुरौ।

गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामा तदोत्तमः।।

प्रयागराज में गंगा यमुना तथा सरस्वती त्रिवेणी की पवित्र भूमि पर माघ मास में लगने वाले कुम्भ का विशेष महत्व है। यहाँ कुम्भ पर्व त्रिवेणी के संगमपर लगता है। यह विशेषता ही इसे अन्य कुम्भ पर्वों से अलग करती है। क्योंकि अन्य किसी भी स्थान हरिद्वार उज्जैन तथा नासिक में संगम नहीं है जहाँ यह पर्व मनाया जाता है। इस महीने का इतना महत्व है कि इसे 'माघ मेला' अमौसा का मेला आदि नामों से भी जाना जाता है। हिन्दू जनमानस सनातन धर्मावलम्बी इसे माघमेला के नाम से सम्बोधित करते हैं हिन्दू समाज में यह धारणा प्रचलित है कि माघ के महीने में गंगा, यमुनाओं लुप्त सरस्वती के पवित्र जल में स्नान करने से जन्म-जन्मान्तर के पाप मिट जाते हैं समस्त आधिदैविक-आधिमानसिक दुःख संताप दूर हो जाते हैं मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। गंगा और सरस्वती के पवित्र जल में स्नान करने से मानव के कलुष समाप्त हो जाते हैं जो व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण कामनाओं को अपने अधीन करके माघ महीने में पवित्र कुम्भ के अवसर पर त्रिवेणी में स्नान करता है, वह समस्त पापों को समाप्त कर स्वर्ग लोक को प्राप्त करता है। माघ मास के इस पवित्र कुम्भ पर्व पर भारत के सभी भागों से लोग स्नान ध्यान तथा दान करने के लिए आते हैं यहाँ न केवल भारत अपितु विश्व के भिन्न देशों से अनेक मत-पंथ को मानने वाले भी प्राचीन काल से आते रहे हैं। ब्रह्मपुराण स्कन्द पुराण, रामायण तथा महाभारत में माघ में कुम्भ पर्व के स्नान के महत्व को वर्णित किया गया है। प्रयाग में माघ के महीने में कुम्भ पर्व कब और कैसे पड़ता है। इसका वर्णन करते हुए कहा गया है—

मकरे च दिवानाथे वृषराशि गत गुरौ।

प्रयागे कुम्भ योगो वै माघमासे विधुक्षये।।

अर्थात् सूर्य जब मकर राशि में संक्रमण कर रहे हो बृहस्पति वृष राशि पर स्थिति हो ऐसे दुर्लभ अवसर माघ महीने की अमावस्या तिथि हो, चन्द्रमा भी मकर राशि में हो ऐसे पवित्र अवसर पर कुम्भ पर्व लगता है—

मेघे राशिं गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करो ।

अमावस्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थ नायके ।।

माघ मास में प्रयाग में मनाया जाने वाला यह पर्व धार्मिक एवं सांस्कृतिक चिन्तन का अनूठा पर्व है। यहाँ हिन्दुओं का विशाल जनमानस केवल स्नान ध्यान, दान के लिए ही एकत्रित नहीं होता है। अपितु अपनी सांस्कृतिक, पहचान और गौरवमयी परम्परा के रक्षणार्थ विचार-विनिमय के लिए भी आता है। इस पर्व की संस्कृति स्वयं विष्णुपदी गंगा है। यह गंगा संस्कृति का संवाहक है। यहाँ आकर पाप और कल्मष अपने-आप ही समाप्त हो जाते हैं यह आत्म चिन्तन, मनन का पर्व है। यह स्व दर्शन और विचारणा का पर्व है। यहाँ गोदान, स्वर्णदान, गुप्तदान, पिंडदान करके हिन्दू समाज के लोग अनेक प्रकार के पुष्प के भागीदार होते हैं पटकुटी और बड़े-बड़े शिविरों में चारों ओर होने वाले यज्ञों के धुएं, वेद मंत्रों की ध्वनि, सन्तों, महात्माओं कथाकारों के प्रवचन लोगों को आनन्दित और प्रफुल्लित करते हैं एक महीने तक यहाँ रहकर गृही भी विरागी हो जाते हैं हाथी-घोड़े, गाजे-बाजे के साथ निकलने वाले अखाड़ों के जुलूस राजसी स्नान नागा सन्यासियों की वेशभूषा— धर्म ध्वजा हिन्दु धर्म की रक्षा के प्रति उनका समर्पण और त्याग उनके दर्शनों के लिए उत्सुक ही नहीं अपितु आकर्षित भी करता है। हिन्दू धर्म के सभी मतावलम्बी, चारों शंकराचार्य सभी महामण्डलेश्वर अपने अखाड़ों के साथ यहाँ एक महीने तक रहकर साधना उपासना करते हैं सभी सम्प्रदायों, जातियों तथा विचार धाराओं के लोग भारी संख्या में यहाँ आते हैं एक महीने यानि माघ मास में यहाँ 'लघु भारत' के दर्शन होते हैं सन्त सुलसीदास ने भी माघ महीने में कुम्भ पर्व के महत्व को वर्णित किया है—

माघ मकर गति रवि जब होई । तीरथ पतिहिं आव सबकोई ।।

देव दनुज किन्नर नर श्रेणी । सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी ।।

पूजहिं माधव पद जल जाता । परसि अखय वटु हरषहिं गाता ।।

तहाँ होइ मुनिरिसय समाजा । जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा ।।

मज्जहिं प्रात समेत उछाहा । कहहि परस्पर हरि गुन गाहा ।।

एहि प्रकार भरि माघ नहाहीं । पुनि सब निज निज आश्रम जाहीं ।।

कुम्भ में इस पवित्र अवसर पर प्रयागराज में पाँच स्नान पर्व महत्वपूर्ण रूप से मनाये जाते हैं पौष महीने के अन्त में पूर्णिमा तिथि को पौषपूर्णिमा का स्नान होता है। मकर संक्रान्ति, अमावस्या (मौनी), बसंत पंचमी तथा माघी पूर्णिमा का प्रसिद्ध स्नान पर्व माघ मास में मनाया जाता है। मान्यता है कि पश्चिम वाहिनी होकर गंगा जब यमुना से मिलकर सरस्वती के साथ संगम बनाती है। तब वह समस्त पापों को दूर करने वाली मुक्ति दायिनी और मनोवांछित फलदायिनी हो जाती है। यह अवसर केवल माघ मास में ही आता है। यही कारण है कि माघ मास प्रयाग के श्वेत श्याम जल में स्नान करने व्यक्ति को हजार राजसूर्य यज्ञ और सौ अश्वमेध यज्ञ का पुण्य प्राप्त होता है। वर्तमान समय में माघ महीने में प्रयाग में लगने वाला यह पर्व विश्व के लिए आश्चर्य से कम नहीं है। अनेकों भेष-भूषा अनेकों बोलियों — भाषाओं के बोलने वाले लोगों यहाँ एक साथ श्रद्धा भाव से वैर भाव त्याग कर रहते हुए स्नान करते हुए दिखाई पड़ जाते हैं। इसका भौगोलिक आकर भी निरन्तर बढ़ता चला जा रहा है। अब इस पर्व ने एक स्वतन्त्र जिले का रूप ग्रहण कर लिया है। जहाँ एक महीने के लिए मेलाधिकारी से लेकर सभी विभाग स्वतन्त्र रूप से काम करते हुए कल्पवासियों की, आने-जाने वालों की सन्तों महात्माओं की सेवा में तत्परता से लगे रहते हैं हमारे मनीषियों, शंकराचार्यों, सन्तों ने अपनी दूरदर्शिता तत्वबोध, और हिन्दू संस्कृति और हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए ही इस पर्व को अक्षुण्ण बनाये रखा। देश की एकता— अखण्डता, गौरव— गरिमा की बनाये रखने के लिए इनका विधान किया। माघी पूर्णिमा के अवसर पर स्नान— ध्यान से विशेष फल प्राप्त होता है। मेष राशि में जब शनि होता है, चन्द्रमा और बृहस्पति के साथ सिंह राशि का योग बनता है तथा सूर्य के श्रवण नक्षत्र में होने पर 'माघी पूर्णिमा' का योग बनता है। इस अवसर त्रिवेणी में स्नान करने से मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। कहा जाता है कि गंगा जी से मनौती करने पर पुत्र—कलत्र तथा सुयोग्य वर और वधु की प्राप्ति होती है।

गंगा यमुनयोस्तीरे पूर्णायाम् रजनीमुखे ।

ईप्सितं फलमाप्नोति दीपदानं कृतं नरः॥

उज्जैन का कुंभ पर्व वैशाख महीने की शुक्ल पूर्णिमा को होता है। वैशाख के मास में जब सूर्य मेष राशि पर गमन करते हैं और बृहस्पति सिंह राशि पर होते हैं उसी पवित्र अवसर उज्जैन का कुम्भ पर्व मनाया जाता है—

मेष राशिं गते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतौ

उज्जयिन्यां भवेत कुम्भः सदा मुक्तिदायकः॥

उज्जयिनी के कुम्भ पर्व को सिंहस्थ नाम से ही जाना जाता है। क्योंकि इस अवसर पर सिंह राशि बृहस्पति में होती है। अतः सिंह राशि का गुरु मेष का सूर्य हो तथा वैशाख मास यहाँ के लिए आवश्यक है। यह कुम्भ महर्षि अगस्त के द्वारा चलाया गया। ऐतिहासिक ग्रन्थों एवं पुराणों में उज्जयिनी का नाम सप्त मोक्षदायिनी पुरियों में गिना जाता है। अयोध्या मथुरा काशी कांची अवन्तिका पुरी द्वारावती चैव सप्तैताः मोक्ष दायिकाः॥ उज्जयिनी के अन्य अनेका नाम — कुशस्थली, पदमावती, अवन्तिका अमरावती और विशाला प्रसिद्ध है। प्रचलित परम्परा में माना जाता है जिस मास में दस योग—सिंहस्थ बृहस्पति, मेषस्थ सूर्य, वैशाख मास, शुक्ल पक्ष पूर्णिमासी तिथि तुला राशिस्थ चन्द्रमा, स्वातिनक्षत्र, व्यतिपात योग सोमवार, और अवन्तिका क्षेत्र जिस दिन एक साथ हो उस दिन कुम्भ पर्व का मुख्य स्नान होता है। यह योग प्रायः वैशाख पूर्णिमा को ही होता है। यहाँ तीनों स्नान वैशाख में ही होते हैं। पहला स्नान मेष संक्रान्ति में दूसरा स्नान वैशाख कृष्ण अमावस्या को तथा तीसरा और मुख्य स्नान वैशाख पूर्णिमा को ही होता है।

हरिद्वार प्रयाग, उज्जैन के साथ ही गोदावरी तट पर स्थित नासिक में कुम्भ पर्व मनाये जाने का वर्णन हमारे वेदों पुराणों महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थों में आया है।

जब सिंह राशि में बृहस्पति सूर्य एवं चन्द्र स्थित हो अमावस्या का योग को उस समय गोदावरी में पृथ्वी पर कुम्भ पर्व होता है। गोदावरी में यह पर्व श्रावण और भाद्रपद अमावस्या तक मनाया जाता है।

मेष राशि गते सूर्ये सिंह राशौ बृहस्पतौ।

गोदवर्या भवेत कुम्भो जापते खलु मुक्तिदः॥

यह पवित्र अवसर भाद्रपद की अमावस्या को आता है जब मुख्य स्नान किया जाता है। गोदावरी में कुम्भ पर्व का पहला स्नान श्रावण कृष्ण अमावस्या दूसरा स्नान सिंह संक्रान्ति और तीसरा स्नान श्रावणी पूर्णिमा है तथा चौथा और मुख्य स्नान पर्व भाद्रपद की अमावस्या को मनाया जाता है।

5.5 पवित्र पर्वों का महत्व

हिन्दू संस्कृति पर्वों की संस्कृति है। हिन्दू समाज में जन्म से ही पर्वों की शुरुआत होती है और जीवन भर इन पर्वों का आयोजन बड़े ही उत्साह और उमंग के साथ करता है। हर महीने कोई न कोई पर्व, उत्सव आता ही है। हिन्दू संस्कृति का मूल ही पर्व की प्रधानता है। पर्व हमारी सामाजिक संस्कृति का परिचायक है। जिन्हें समाज एक साथ मिलकर बनाता है। होली, रक्षाबन्धन, हिन्दू साम्राज्य दिनोत्सव, चैत्ररामनवमी, कृष्ण जनमाष्टमी, विजयदशमी, दीपावली, माघी पूर्णिमा, शरदपूर्णिमा आदि ऐसे ही पर्व और उत्सव हैं जिन्हें हिन्दू समाज हजारों वर्षों से मनाता चला आ रहा है। ये पर्व जहाँ हमें आनन्दित करते हैं वहीं अपनी जातीय परम्परा और गौरव की याद दिलाते हैं, सामूहिकता की भावना को मजबूत करते हैं। इन पर्वों ने ही हिन्दू संस्कृति को अब तक अक्षुण्ण बनाये रखा है। ये समय—समय पर सम्पूर्ण समाज को नयी चेतना प्रदान करते हैं, तथा दैनिक जीवन की उदासीनता, नीरसता तथा अकेलेपन को दूर करके जीवन में नवउमंग और उत्साह भरते हैं हमें नये दायित्वों तथा समाज और संस्कृति की रक्षा के लिए प्रेरित करते हैं नित्य नैमित्तिक तथा काम्य पर्वों के ये तीन भेद हमारे शास्त्रों में माने गये हैं। एकादशी, दीपावली तथा होली ऐसे पर्व हैं जो नित्य आते हैं इनका क्रम पहले से ही निश्चित है हम उनको मनाने के लिए बहुत पहले तैयार रहते हैं इन्हें नित्य पर्व कहा जाता है। हमारे समाज द्वारा कुछ पर्व कारण या निमित्त से मनाये जाते हैं इनका समय निश्चित नहीं होता है जैसे— ग्रहण, कुम्भ, जन्मोत्सव, मुण्डन आदि कुछ पर्व किसी इच्छा विशेष को पूरा करने के लिए या पूरा होने पर मनाये जाते हैं जैसे ग्रह—शान्ति पुत्रादि की कामना से किये जाने पूजन आदि से सम्बन्धित उत्सव काम्य पर्व के रूप में जाने जाते हैं, दिव्य पर्व, देव पर्व, पितृपर्व, काल पर्व, तीर्थ पर्व आदि अनेक पर्व हैं जो हिन्दू संस्कृति में आनन्द, और आशा का संचार करने के लिए मनाये जाते हैं।

भारतीय जीवन में ये पर्व—उत्सव घुल मिल से गये हैं इन अवसरों पर हिन्दू अपने सभी मतभेद और मनभेद भुलाकर एकता के रंग में रंग जाते हैं इन पर्वों के अवसर पर मन्दिरों, तीर्थ स्थलों, धार्मिक प्रष्ठानों में अपनी-अपनी भाषा, भेष—भूषा, खान—पान, रहन—सहन, पहनावा—ओढ़ावा, रंग—रूप, ऊँच—नीच, पढ़े—अनपढ़ आदि विभेदों को भुलाकर एकत्र होते हैं सबसे मिलते हैं। गले लगाते हैं यही कारण है कि कुम्भ पर्व पर सम्पूर्ण हिन्दू समाज एक साथ एक स्थान पर बिना आमंत्रण—निमंत्रण के बिना बुलावा के स्वयं चला आता है। सुदूर तमिल, तेलगू और कर्नाटक तथा करेल का व्यक्ति हरिद्वार और प्रयागराज चला आता है। और उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, का निवासी नासिक तथा कुम्भकोणम में स्नान के लिए चला जाता है। हमारे मनीषियों और विद्वानों ने भारत की विविधता में एकता के लिए इन पर्वों को सबसे महत्वपूर्ण माना है। इन्हें निरन्तर आगे बढ़ाने का काम किया है। हमारी धार्मिक और सांस्कृतिक परम्परा इन पर्वों से अनुस्यूत हैं। कश्मीर से लेकर कन्या कुमारी तक बंगाल से लेकर गुजरात तक सम्पूर्ण भारत में इन पर्वों की महत्ता तथा स्वीकार्यता सर्वमान्य है, सर्वसमादृत है। जब हम अपनी परम्पराओं और देवी देवताओं के प्रति अपनी आस्था का भावव्यक्त करते हैं तब हमारी मान्यतायें जीवित हो जाती हैं। इन मान्यताओं के पीछे इन पर्वों का महत्वपूर्ण योगदान है। ये पर्व कपोल—कल्पित नहीं हैं। इनकी पूर्णता और जनसमाज की स्वीकारिता इनकी वैज्ञानिकता को सिद्ध करती है।

पर्वों ने हमारी राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता को बनाये रखने का काम किया है। यही कारण है कि कुम्भ पर्व हमारी सांस्कृतिक अस्मिता और राष्ट्रीय गौरव तथा हिन्दू एकता का अखण्ड ध्वजवाहक बना हुआ है। भारत के चार स्थानों पर लगने वाला कुम्भ महापर्व हिन्दुत्व का परिचायक है। हिन्दू जागरण का प्रतीक है। पराधीनता के कल में भी इसे आक्रान्ताओं के द्वारा समाप्त या बन्द नहीं किया जा सका है। कुम्भ पर्व के अवसर पर लाखों—लाख हिन्दू हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन तथा नासिक में एकत्र होकर स्नान—ध्यान दान—पूजा पाठ आदि का सम्पादन करते हुए पुण्यार्जन करते हैं गंगा—यमुना, गोदावरी, क्षिप्रा आदि पवित्र नदियों में स्नान करके सोल्लास अपने घर को जाते हैं ये पर्व पावन होते हैं अपनी पावनता से समाज को पवित्र बनाते हैं व्यक्ति का समाजीकरण करते हैं सामाजिक समरसता को बढ़ाते हैं इन अवसरों पर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से मिलता है। दानों परस्पर मिलकर आनन्द और सुख का अनुभव करते हैं अपने पूर्वजों के और परम्पराओं को याद कर प्रसन्न होते हैं इस प्रकार यह पर्व हैं हमारी सांस्कृतिक एकता और अखण्डता का संवाहक है। इससे जुड़े आख्यान, कथाएं हिन्दू संस्कृति की निरन्तरता का प्रमाण है यह पर्व हमारे उस प्राचीन वैज्ञानिक ज्ञान का परिचायक है, जो सिद्ध करती है कि राशियों की गणना और ग्रहों तथा राशियों का मिलन कितना सटीक और उत्तम है। क्योंकि कुम्भ का सम्बन्ध ग्रहों और राशि के एक साथ आने से है। अमृत कलश को स्वर्ग लोक तक सुरक्षित ले जाने में जयन्त को बारह दिन लगे थे। देवों का एक दिन मनुष्य के बारह महीने के बराबर होता है। इसलिए 12 वर्षों बाद कुम्भ पर्व प्रयागराज में तथा हरिद्वार में कुम्भ पर्व मनाया जाता है। अमृत कलश की रक्षा में चन्द्रमा, बृहस्पति तथा सूर्य ने की थी इसलिए जब इन ग्रहों का समीकरण राशियों के साथ बनता है तब कुम्भ पर्व हरिद्वार, प्रयागराज, नासिक और उज्जैन में लगता है। जहाँ अमृत की बूंदें कलश से छलककर गिरी थी। कुम्भ पर्व हिन्दुओं की सांस्कृतिक धरोहर है जो भारत की एकता और अखण्डता को अक्षुण्ण बनाये है। हमारे पूर्वज 12 वर्षों पर इन्हीं महत्वपूर्ण स्थलों पर एकत्र होकर चिन्तन मनन करते हुए धार्मिक तथा लौकिक जीवन पर विचार करते थे। उनकी आध्यात्मिक प्रेरणा के यह पावन स्रोत पर्व के रूप में आज भी अपनी भव्यता और दिव्यता का परिचय कराते हैं कुम्भ हमारे देश का प्राचीनतम पर्व है वेदों में कुम्भ का उल्लेख बार—बार आया है।

जघानं वृत्रं स्वधितिर्वनेव रुरोज पुरो अरन्न सिन्धून् ।

विभेद गिरिं नवमित्र कुम्भभागा इन्द्रो अकृणुत स्वयुग्भिः ।।

तात्पर्य है कि कुम्भ पर्व में यात्रा करने वाला मनुष्य स्वयं अपने पापों का विनाश करता है। जैसे सिन्धु नदी अपने को विनष्ट करते हुए बहती है उसी प्रकार कुम्भ पर्व मनुष्य के पूर्व जन्म में अर्जित किए हुए सत्यकर्माँ से उनके शारीरिक पापों को समाप्त करता है।

कुम्भ हमारी सामाजिक एकता और सांस्कृतिक श्रेष्ठता का परिचायक है। यह न केवल धार्मिक जीवन को उन्नत बनता है अपितु आस्था को सुदृढ़ करता है। सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता का संवाहक भी है। कुम्भ ऐसा विशाल सम्मेलन है जहाँ ज्ञान—विज्ञान भव्यता और दिव्यता के साथ ही रूढ़ि विचारों, और विकृति परम्पराओं पर विचार होता है। समाजापयोगी विचारों और मान्यताओं के ग्रहण का आग्रह होता है। सन्त, महात्मा, ऋषि, मुनि विचारक और विद्वान एक साथ मिल—बैठकर सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकारों से जुड़े ज्वलन्त मुद्दों

पर विचार करते हैं। गलत और विकृत विचारों के त्याग करने की प्रेरणा देते हैं समाजोपयोगी हिन्दू संस्कृति तथा एकता को बढ़ाने वाली नीतियों— विधानों को प्रचारित करते हैं सन्तों, महात्माओं, सदगृहस्थों तथा विचारकों ने आज बालिका शिक्षा, सर्व शिक्षा, भ्रूण हत्या पर रोक, पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रयास योग शिक्षा तथा जल संरक्षण और ज्ञान संरक्षण जैसे रचनात्मक कार्यों की शुरुआत इन्हीं अवसरों पर करते रहे हैं, जो देश की उन्नति के लिए आवश्यक है। नदियों के तट पर पटकुटी में बसने वाला शहर अपनी अनूठी जीवन पद्धति के लिए विश्वविख्यात है। रेत पर अस्थायी रूप से बस कर हिन्दू समाज भी अपने धर्म और आस्था के साथ सामाजिक समरसता की अलख जगाकर अनूठी मिसाल पेश करता है। सुदूर क्षेत्रों से अपना गोंव-घर छोड़कर सिर पर गठरी लेकर आने वाले लोग एक निष्ठ होकर एक महीने तक स्नान-ध्यान और चिन्तक में निमग्न रहते हैं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का मूर्त रूप इन्हीं कुम्भ के पावन पर्व पर दिखाई देता है।

5.6 सारांश

इस प्रकार कुम्भ पर्व में नदियों का महत्व सर्वविदित है। कुम्भ पर्व नदी स्थान और राशि के परस्पर एक साथ होने का ही परिणाम है। नदियों के अमृत जल में स्नान कर हिन्दू पुण्यार्जन कर धार्मिक और आध्यात्मिक उन्नति तो करता ही है। इहलौकिक जीवन में यश सुख और शांति प्राप्त करता है। यही कारण है कि इन अवसरों पर लाखों लोग स्नान के मोह से सुदूर क्षेत्रों से चलकर यहाँ आते हैं नदियाँ जीवन दायिनी हैं। सनातन हिन्दू संस्कृति में नदियों को माता के समान पालन-पोषण करने वाली कहा गया है। नदियाँ अपने साथ गुणवान औषधियों को लेकर चलती हैं। जिससे उनका जल अमृतमय हो जाता है। भारतीय परम्परा में मासों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। प्रत्येक मास में कोई न कोई पर्व अवश्य पड़ता है। मास और तिथियों का योग ही पर्वों का कारक बनता है। यदि मास और तिथियों के साथ राशियों का संयोग नहीं होता तो पर्वों का अवसर नहीं आयेगा। माघ महीने का प्रयागराज में लगने वाले कुम्भ पर्व ने महत्वपूर्ण सर्वविदित है। इसके महत्व को देखते हुए ही तुलसीदास जी ने 'माघ मकरगति रवि जब होई' का वर्णन किया है।

बोध-प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. हरिद्वार में किस नदी के तट पर कुम्भ पर्व लगता है?

2. हिन्दी के कौन-कौन से कवियों ने नदियों का स्तुतिगान किया है ?

3. किन-किन वेदों में नदियों का वर्णन आया है ?

4. क्षिप्रा नदी कहाँ प्रवाहित होती है ?

5. गोदावरी नदी को पृथ्वी पर कौन लाया था ?

5.7 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भ पर्व में गंगा नदियों के योगदान का क्या महत्व है ?
2. गंगा नदी से सम्बन्धित पौराणिक कथा का वर्णन कीजिए ?

3. गोदावरी नदी के उद्गम और महत्व का वर्णन कीजिए ?
4. क्षिप्रा नदी के उद्गम से सम्बन्धित पौराणिक आख्या का वर्णन कीजिए।
5. कुम्भ पर्व में माघ मास का क्या योगदान है स्पष्ट कीजिए।
6. भारतीय समाज में पर्व का क्या महत्व है ?

5.8 चर्चा के बिन्दु

- नदियों के बिना कुम्भ पर्व का आयोजन असम्भव है। चर्चा कीजिए।
- गंगा नदी भारतीय संस्कृति और धर्म का संवाहक है चर्चा कीजिए।
- भारतीय संस्कृति पर्वों की संस्कृति है चर्चा कीजिए।

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. हरिद्वार में गंगा नदी तट कुम्भ पर्व लगता है।
2. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जगन्नाथदास, रत्नाकर, तुलसीदास तथा सुमित्रानन्दन पन्त ने नदियों का स्तुतिगान किया है।
3. ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में नदियों का स्तुतिगान किया गया है।
4. क्षिप्रा नदी मध्य प्रदेश के उज्जैन नाम स्थान पर प्रवाहित होती है।
5. गोदावरी को ऋषि गौतम पृथ्वी पर लाये थे।

5.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. अग्रवाल, मीनू, कुम्भपर्व प्रयाग (2013), प्रकाशक— राजपाल एवं कम्पनी, इलाहाबाद।
2. चतुर्वेदी, हेरम्ब, कुम्भ ऐतिहासिक वाङ्.मय (2019) प्रकाशक— वाणी प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. टण्डन, हरिमोहनदास, प्रयागराज।
4. Dubey, D.P., Prayag, The Site of Kumbh Mela (2001) Publisher- Aryan Books International, New Delhi
5. पोखरियाल, रमेश (निशंक), विश्वधरोहर महाकुम्भ।

इकाई — 06 : कुम्भ का सांस्कृतिक वैभव

इकाई की रूपरेखा

- 6.0 प्रस्तावना
- 6.1 उद्देश्य
- 6.2 संस्कृति की परिभाषा, भारत की संस्कृति –वैभव का दर्पण
- 6.3 कुम्भ संस्कृति
- 6.4 कुम्भ पर्व मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत
- 6.5 शंकराचार्य, धार्मिक संवाद और विचारों का संगम
- 6.6 कुम्भ पर्व पवित्र तीर्थयात्रा परम्परा का वाहक
- 6.7 कुम्भ पर्व ज्ञान परम्परा का वाहक एवं सन्देशक
- 6.8 भारत की भौतिक, ऐतिहासिक और परम्परागत विरासतों से परिचय
- 6.9 सारांश
- 6.10 अभ्यास के प्रश्न
- 6.11 चर्चा के बिन्दु
- 6.12 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 6.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.0 प्रस्तावना

किसी भी देश की संस्कृति उस देश के मूल्यों, परम्पराओं, रीतिरिवाजों, कर्तव्यों, कर्मकाण्डों, विरासतों का दर्पण होती है। यह भी कह सकते हैं कि किसी भी देश का वैभव उसकी संस्कृति में दिखाई पड़ता है। भारत धर्मप्राण देश रहा है। आध्यात्म उसकी आत्मा है। संस्कृति उसका गौरव है। गौरवशाली भारतीय संस्कृति का प्राण-कुम्भपर्व का आयोजन है जो चार विभिन्न स्थलों पर नदियों के किनारे सम्पन्न होता है जिसमें न केवल देश अपितु विदेश से भी तीर्थयात्री, आध्यात्मप्रेमी, साधुसन्त महात्मा और पर्यटक आते हैं प्रयाग में तो कुम्भ दो बार –अर्द्धकुम्भ और महाकुम्भ– लगता है। इस इकाई में कुम्भ के सांस्कृतिक वैभव के विभिन्न पहलुओं पर इसमें प्रकाश डाला गया है।

6.1 उद्देश्य

1. शिक्षार्थी को संस्कृति, तीर्थ, विरासत आदि शब्दों के निहितार्थ से परिचित कराना।
2. भारत की संस्कृति, आध्यात्म, धर्म के आलोक में कुम्भ पर्व के सांस्कृतिक वैभव के प्रति चेतना जाग्रत करना।
3. वसुधैव कुटुम्बकम्, ज्ञान परम्परा, संस्कृति की भारतीय अवधारणा और कुम्भ पर्व को लोक मानस तक प्रसारित करना।
4. भारत के सांस्कृतिक गौरव –आध्यात्मिकता और भौतिकता का सन्तुलन– के परिप्रेक्ष्य में कुम्भ पर्व स्पष्ट करना।

6.2 संस्कृति की परिभाषा, भारत की संस्कृति – वैभव का दर्पण

मानवविज्ञानी एडवर्ड बर्नेट टायलर के अनुसार संस्कृति वह जटिल समग्रता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, कानून, रीति-रिवाज तथा समाज के सदस्य के रूप में मनुष्य द्वारा अर्जित अन्य क्षमताएं और आदतें

सम्मिलित होती हैं।

संस्कृति आन्तरिक अनुभूति से सम्बद्ध है जिसमें मन और हृदय की पवित्रता निहित है। इसमें कला, विज्ञान, संगीत और नृत्य और मानव जीवन की उच्चतर उपलब्धियाँ सम्मिलित हैं जिन्हें 'सांस्कृतिक गतिविधियाँ' कहा जाता है।

कला, संगीत, साहित्य, वास्तुविज्ञान, शिल्पकला, दर्शन, धर्म और विज्ञान सभी संस्कृति के प्रकट पक्ष हैं। तथापि संस्कृति में रीतिरिवाज, परम्पराएँ, पर्व, जीने के तरीके, और जीवन के विभिन्न पक्षों पर व्यक्ति विशेष का अपना दृष्टिकोण भी सम्मिलित हैं। संस्कृति आन्तरिक अनुभूति से सम्बद्ध है जिसमें मन और हृदय की पवित्रता निहित है। अनेक विभिन्नताओं के बावजूद भी भारत की पृथक् सांस्कृतिक सत्ता रही है। हिमालय सम्पूर्ण देश के गौरव का प्रतीक रहा है, तो गंगा – यमुना, नर्मदा, गोदावरी जैसी नदियों की स्तुति यहाँ के लोग प्राचीनकाल से करते आ रहे हैं। संस्कृति गतिशील होती है, संस्कृति परिवर्तनशील होती है, संस्कृति संचयी होती है, संस्कृति में निहित ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होता रहता है। संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित होती जाती है। जो संस्कृति हम अपने पूर्वजों से प्राप्त करते हैं उसे सांस्कृतिक विरासत कहते हैं। यह विरासत कई स्तरों पर विद्यमान होती है। मानवता ने सम्पूर्ण रूप में जिस संस्कृति को विरासत के रूप में अपनाया उसे 'मानवता की विरासत' कहते हैं। संस्कृति प्रकृतिप्रदत्त नहीं होती। यह समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा अर्जित होती है। संपर्क में आनेवाली भिन्न संस्कृतियाँ भी एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। भिन्न संस्कृतियों का संपर्क उनमें सहयोग अथवा असहयोग की प्रक्रिया की उद्भावना करता है।

भारत की संस्कृति में ग्रहणशीलता, निरन्तरता, प्रकृति के तत्वों में देवत्व की मान्यता है—“नदीतमे देवितमे” या “अश्वत्थो देवसदनः”। धर्म—आध्यात्म—आस्था—तर्क से समन्वित शिक्षा, दर्शन, ज्ञान—विज्ञान का प्रस्फुटन है, विरासतों के प्रति राग है और जन्मभूमि के प्रति मातृभाव है—“जननी जन्मभूमिश्चस्वर्गादपि गहीयसि”। भारत की संस्कृति में आध्यात्म, मानवता, और नैतिकता है। आध्यात्मिकता और भौतिकता का सामंजस्य है। यही कारण है कि “यूनान रोमा मिश्र सब मिट गए, कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।”

6.3 कुम्भ संस्कृति

चार स्थानों— प्रयाग, उज्जैन, हरिद्वार और नासिक में विशिष्ट ग्रहीय स्थितियों में नदियों के तट पर लगने वाले कुम्भ पर्व को भारत की संस्कृति का गौरवशाली अध्याय कह सकते हैं। यूनेस्को ने कुम्भ पर्व को मानवता की अमूर्त विरासत की सूची में स्थान दिया है। पौराणिक आख्यानों के अनुसार अमृत कलश की बूंदें इन चार स्थानों पर गिरीं इसलिए इन चार स्थानों पर कुम्भ पर्व आयोजित किए जाते हैं। अमृत पाने की लालसा कुम्भ यात्रा का उद्देश्य है। असंख्य यात्रियों का धार्मिक पर्यटन, उनके क्रियाकलाप, भारत की बहुआयामी संस्कृति का बोध कराते हैं। नदी तट या संगम पर लगने वाले कुम्भ मेलों में प्रयाग राज का कुम्भ मेला अतिविशिष्ट है। मकरसंकान्ति से ही यह प्रारम्भ हो जाता है। प्रत्येक वर्ष माघमास में संगम तट पर घासफूस की बनी झोपड़ी में एक मास तक अनुशासित और संयमित जीवनचर्या भारतीय संस्कृति की अनूठी सीख देती है जो भोग से मुक्ति, पाप से पुण्य, मरण से अमृतत्व प्राप्ति की चर्या है।

कुम्भपर्व में भारतीय संस्कृति के जिन तत्वों का समाहार पातें हैं उनमें से कुछ इस प्रकार है—

- भारतीयता की मूल पहचान— जल का धार्मिक महत्व, नदियों को देवतत्व के रूप में मान्यता, पवित्र नदियों में स्नान, आदि
- अमरत्व की तलाश—“मृत्योर्मा अमृतं गमय”
- आस्था, दान, श्राद्ध, तीर्थ संस्कृति,
- अनुशासित जीवन शैली
- सामूहिकता, समन्वय, सहकार, —“सहनाववतु सहनौभुनक्तु सहवीर्यं करवावहै।”
- वसुधैव कुटुम्बकम्— “माताभूमिःपुत्रो अहं पृथिव्याः”
- ‘अतिथिदेवो भव’ की भावना

- कुम्भ पर्व भारत की संस्कृति में उत्सवप्रियता का प्रतीक है।
- कुम्भ पर्व सांस्कृतिक बोध का पर्व है।
- कुम्भ पर्व धर्म-संस्कृति-आध्यात्म का दर्पण है।
- कुम्भ पर्व सांस्कृतिक चेतना और एकीकरण का महापर्व है।

भारतीय संस्कृति में असद् से सद् की ओर अन्धकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमृतत्व की ओर जाने का उद्घोष है—“असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय।” भारतीय जीवनपद्धति में अमृतत्व मानव जीवन का चरम लक्ष्य है। शरीररूपी घट में आत्मारूपी अमृत तत्व विद्यमान माना गया है जिसको सद् असद् भाव अपनी-अपनी आसक्ति मूलक लोभ मोह आदि वृत्तियों से आच्छादित किए रहते हैं। किन्तु विचारवान मनुष्य शरीर रूपी घट में निहित जल रूपी ब्रह्म तत्व का साक्षात्कार करते हुए नारायण रूपी महासागर में व्याप्त अमृततत्व का आचमन करता है। कुम्भ मरणशील मानव को आस्थावान बनने की प्रेरणा देता है। इसी प्रेरणा से मनुष्य कुम्भपर्व के अवसर पर पवित्र नदियों में स्नान आदि क्रियाएँ करते हैं। अमृत की तलाश में आस्था भाव ही मनुष्य को कुम्भ स्थल तक आने को आकर्षित करता है।

6.4 कुम्भ पर्व मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत

यूनेस्को के अधीन अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा करने वाली अन्तर सरकारी समिति ने 4 – 9 दिसम्बर 2017 के दौरान दक्षिण कोरिया के जेजु में आयोजित अपने बारहवें सत्र में मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिधि सूची में कुम्भ मेला को शामिल किया है। समिति ने कहा है ‘‘कुम्भ मेला पृथ्वी पर तीर्थयात्रियों का सबसे बड़ा शान्तिपूर्ण समागम है। प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में आयोजित यह उत्सव भारत में पूजा से सम्बन्धित अनुष्ठानों के एक समन्वित समूह का प्रतिनिधित्व करता है। यह एक सामाजिक और उल्लासमय समारोह है जो समुदाय के अपने इतिहास और स्मृति की धारणा से जुड़ा है। यह तत्व मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों के साथ संगत है। क्योंकि इसमें समाज के सभी वर्गों के लोग बिना किसी भेदभाव के समान उत्साह से भाग लेते हैं।

6.5 शंकराचार्य, धार्मिक संवाद और विचारों का संगम

कुम्भपर्व ज्ञान, आध्यात्म, तप और भक्ति का उत्सव है। कुम्भ को महान स्नान पर्व और विराट धार्मिक मेले के रूप में प्रसिद्धि दिलाने का श्रेय शंकराचार्य को दिया जाना चाहिए। आदि शंकराचार्य ने आठवीं शताब्दी में धार्मिक संवाद के लिए साधुओं-सन्यासियों को नियत स्थान व समय पर एकत्र कर हिन्दू धर्म को सुदृढ़ करने का प्रयास किया। धार्मिक परिचर्चा के लिए कुम्भ पर्व और स्थान उपयोगी साबित हुए। मेले में आने वाले श्रद्धालुओं को स्नान दान, धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन का अवसर तो मिलता ही था, साथ ही शास्त्रज्ञ विद्वानों, आध्यात्मिक साधकों, सन्त महात्माओं के विचार रूपी अमृत के पान का भी अवसर मिलता था। कुम्भ मेला भारत की भावात्मक एकता का प्रतीक बन गया। प्रत्येक छः वर्ष बाद अर्द्धकुम्भ और 12 वर्ष बाद पूर्णकुम्भ के अवसर पर देश के चार प्रमुख तीर्थों पर एक लघु भारत का एकत्रीकरण सम्भव हुआ। साधु सन्तों का आध्यात्मिक चिन्तन, हिन्दू जीवन दर्शन, सनातन भारतीय संस्कृति कुम्भ के महोत्सव में एकाकार हो गई। कुम्भ आयोजन स्थल सेतुबन्ध के रूप में सांस्कृतिक चेतना के जागरण का पर्याय बन गया है।

6.6 कुम्भ पर्व पवित्र तीर्थयात्रा परम्परा का वाहक

कुम्भपर्व में आना तीर्थयात्रा का अंग था। ‘तारयतीति तीर्थम्’ अर्थात् जिसका आश्रय लेने पर प्राणी पापों से तर जाए, वह स्थान भारतीय संस्कृति में ‘तीर्थ’ माना गया। ‘तीर्थ’ शब्द का अर्थ है— किसी नदी के तट में नहाने के लिए उतरने का स्थान, रास्ता या सीढ़ियाँ घाट। इसप्रकार तीर्थयात्रा शब्द का अर्थ हुआ—नदी के घाटों की यात्रा। स्कन्दपुराण 1,2,13,10 में कहा गया है कि जहां प्राचीन काल में सत्पुरुष पुण्यार्जन के लिए आते रहते थे, उन स्थलों को तीर्थ कहा जाता है। ब्रह्म पुराण में तीर्थों को चार श्रेणियों में बांटा गया है— 1. दैव तीर्थ 2. असुर तीर्थ 3. आर्ष तीर्थ 4. मानुष तीर्थ।

तीर्थप्रकाश नामक ग्रन्थ में काशी, पुष्कर, और प्रभास को देवतीर्थ बताया गया है। ब्रह्मपुराण के अनुसार

विन्ध्य के दक्षिण की छ नदियाँ और हिमालय से निकली छ नदियाँ देवतीर्थों में सबसे पवित्र हैं। पहले लोग विहार यात्राओं पर जाया करते थे, अशोक ने लुम्बिनी आदि स्थलों की तीर्थयात्रा की थी जिसे वह अपने अभिलेखों में धम्मयात्रा कहता है। कुम्भ के दौरान कभी कभी तीर्थ यात्रियों की संख्या इतनी ज्यादा हो जाती है कि उनकी संख्या दुनिया के कई देशों की जनसंख्या से भी अधिक होती है। तीर्थयात्राएं सामाजिक सांस्कृतिक एकीकरण की भावना को सुदृढ़ करती है।

6.7 ज्ञान परम्परा का वाहक एवं सन्देशक

कुम्भ मेले में सुदूर भागों से आए श्रद्धालुओं से परिचय और मिलन होता है। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक, द्वारिका से लेकर कामाख्या तक के क्षेत्रों से जनसमूह उत्साहपूर्वक आते हैं। विविधप्रकार के वस्त्राभूषण, धारण किए, अलग अलग प्रान्त की बोलियों के लोग एक भाव और आस्था से पावन तीर्थ में आते हैं। बाहरी अनेकता में एकता का वास्तविक दर्शन इन मेलों में होता है। संन्यासियों, नागाओं के अखाड़ों में हाथी घोड़ों, साजबाज के साथ जुलूस और महामंडलेश्वरों की सवारियां निकलती हैं। जगह-जगह सन्त समागम के लिए पंडाल लगाए जाते हैं जहाँ महात्माओं, सन्तों के धार्मिक और दार्शनिक विषयों पर विचार विनिमय होते हैं तथा भारतीय संस्कृति के तत्वों पर व्याख्यान होते हैं, कथा-कीर्तनों के आयोजनों की धूम रहती है। कुम्भ मेला खगोल विज्ञान, ज्योतिष, आध्यात्मिकता, अनुष्ठानों, परम्पराओं, सामाजिक-सांस्कृतिक रीतिरिवाजों, प्रथाओं के विज्ञान को समाहित करता एक आयोजन है, जो भारतीय संस्कृति की ज्ञान परम्परा का वाहक है। कुम्भ आयोजनों में भारतीय संस्कृति, योग, आयुर्वेद, आध्यात्म, पर्यावरण, नैतिक मूल्य आदि के रहस्यों को उद्घाटित करने, समझने, जानने, विचारमंथन करने के लिए सभा, सम्मेलन और धार्मिक परिषदें आयोजित की जाती है इस रूप में कुम्भ आयोजन भारतीय संस्कृति और ज्ञान के सन्देशक भी है।

6.8 भारत की भौतिक, ऐतिहासिक और परम्परागत विरासतों से परिचय

कुम्भमेले के पर्वविशेष पर आने वाले तीर्थयात्रियों, पर्यटकों, व्यापारियों, इतिहासप्रेमियों बाल-युवा-वृद्ध जनों को उस स्थल की धरोहरों से परिचित कराते हैं प्रयाग के महाकुम्भ के अवसर पर पर्यटक द्वादशमाधवपीठ, अक्षयवट, किला, पातालपुरी मंदिर, नाग क्षेत्रों -भोगवती, नागवासुकि, कम्बलाश्वतर नाग तथा तक्षक तीर्थ, शक्तिपीठों-कल्यानी, ललिता-अलोपशंकरी, ऐतिहासिक इमारतों- इला. विश्व., पब्लिक पुस्तकालय, खुसरोबाग, वल्भमठ, वेणी माधव, सुयावनदेव, बलुआघाट बारादरी, चर्च, संग्रहालय, हाईकोर्ट, आजाद पार्क, आदि स्थलों तथा संगम में श्राद्ध, दान, वेणीदान, शय्या दान, जैसी परम्पराओं को जानने का अवसर मिलता है।

हरिद्वार का तीर्थ पर्यटक पंतजलि योगपीठ, हर की पौड़ी पर गंगा आरती, कुशावर्तघाट, नील पर्वत पर बसा चंडीदेवी मंदिर,को देखकर आध्यात्मिक सुखद अनुभूति करता है।

उज्जैन के सिंहस्थ कुम्भ में आने वाले यात्री महाकाल मंदिर, हरसिद्धि मंदिर, कालीदेह मंदिर, गोमती कुंड, रतलाम, भर्तृहरि गुफाएँ, देखते हैं। इन सभी में से, हरसिद्धि मंदिर अत्यधिक शुभ है और 51 शक्तिपीठों में से एक के रूप में प्रसिद्ध है। यह देवी अन्नपूर्णा का निवास माना जाता है। रतलाम कैक्टस गार्डन के लिए प्रसिद्ध है भर्तृहरि गुफाएँ पहली शताब्दी की हैं।

नासिक का कुम्भ अनूठा है क्योंकि वैष्णव अखाड़े और शैव अखाड़े जो प्रयाग, हरिद्वार और उज्जैन में एक साथ स्नान करते हैं, यहां अलग-अलग स्नान करते हैं। दोनों संप्रदायों के तपस्वियों के बीच टकराव के कारण पेशवाओं द्वारा की गई व्यवस्था के परिणामस्वरूप, वैष्णव अखाड़े नासिक में और शैव या संन्यासी, उदासीन अखाड़े त्र्यंबकेश्वर में स्नान करते हैं। नासिक को दंडकारण्य का हिस्सा माना जाता है, जहां भगवान राम अपने वनवास के दौरान रहे थे। त्र्यंबकेश्वर बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। पवित्र नदी गोदावरी यहां ब्रम्हगिरी पहाड़ियों से निकलती है। त्र्यंबकेश्वर में श्री संत निवृत्तिनाथ की समाधि है, जिन्हें नाथ संप्रदाय का संस्थापक माना जाता है। नील पर्वत पर बसा मंदिर चंडी देवी को समर्पित है नासिक में त्रयम्बकेश्वर मंदिर, नासिक की ऐतिहासिक पांडवलेनी गुफाएं, अंजनेरी पर्वत, सीता गुफा, मुद्रा संग्रहालय, रामकुंड तोपखाना केन्द्र आदि स्थलों को देखने एवं विरासतों से जुड़ी परम्पराओं और इतिहास को समझने का अवसर मिलता है।

एक जिला एक उत्पाद के अन्तर्गत हर जिले के विशिष्ट चयनित उद्योग के स्टालों पर शिल्प को खरीदते हैं। एक भारत श्रेष्ठ भारत की अनुभूति अलग अलग प्रान्त के लोग मेले क्षेत्र में आकर करते हैं

बोध-प्रश्न

टिप्पणी

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. कुम्भ को अमूर्त सांस्कृतिक विरासत का दर्जा किसके द्वारा दिया गया है ?

.....

2. प्रयाग में कुम्भ कब कब लगता है ?

.....

3. प्रयाग के किन्हीं दो ऐतिहासिक विरासतों के नाम बताइये जहां आप कुम्भयात्रा के दौरान जाना चाहेंगे।

.....

4. उज्जैन के किन्हीं दो विरासतों के नाम बताइये जहां आप कुम्भयात्रा के दौरान जाना चाहेंगे।

.....

5. नासिक का कुम्भ किस नदी के तट से सम्बन्धित है ?

.....

6. उज्जैन का कुम्भ किस नदी के तट से सम्बन्धित है ?

.....

6.9 सारांश

कुम्भपर्व भारत की सांस्कृतिक गौरव की अक्षय निधि है। नदियों को देवी मानने, धर्म और आध्यात्म के साथ संयमित भौतिक जीवन यापन करते हुए मोक्ष की प्राप्ति हेतु तीर्थयात्री कुम्भ पर्व स्थलों पर स्नान, दान, श्राद्ध, यज्ञ, तप, प्रायश्चित, कर्मकाण्ड, ज्ञान मंथन, विचार, भजन, द्वारा उस स्थल विशेष की विरासतों, परम्पराओं, प्रथाओं, वैभव से भी परिचित होते हैं। यही कुम्भपर्व की आधुनिक काल में सार्थकता है। वसुधैव कुटुम्बकम् का भारतीय भाव इन मेलों में साकार हो उठता है।

6.10 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भपर्व और विरासत पर लगभग 100 शब्दों में उत्तर लिखिए।
2. कुम्भपर्व किस प्रकार तीर्थयात्रा परम्परा का वाहक है अपना उत्तर पर लगभग 100 शब्दों में लिखिए।
3. भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के रूप में कुम्भपर्व के बारे में पर लगभग 100 शब्दों में लिखिए।
4. तीर्थ शब्द से क्या तात्पर्य है?

6.11 चर्चा के बिन्दु

1. कुम्भपर्व के सांस्कृतिक वैभव पर निबन्ध लिखिए।
2. भारत की संस्कृति और कुम्भपर्व पर निबन्ध लिखिए।

6.12 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. यूनेस्को ने कुम्भ पर्व को मानवता की अमूर्त विरासत की सूची में स्थान दिया है।

2. प्रयाग में कुम्भ 12 वर्षों के अन्तराल पर तथा अर्द्धकुम्भ दो कुम्भ के मध्य छह वर्षों पर लगता है।
3. इलाहाबाद संग्रहालय तथा अकबर का किला।
4. महाकाल मंदिर और भर्तृहरि की गुफाएँ।
5. नासिक का कुम्भ गोदावरी नदी के तट पर लगता है।
6. उज्जैन का कुम्भ क्षिप्रा नदी के तट पर लगता है।

6.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. डा मीनू अग्रवाल, कुम्भपर्व प्रयाग, 2013, प्रकाशक : राजपाल एंड कम्पनी इलाहाबाद, ISBN 81-89538-13-6.
- 2- डा मीनू अग्रवाल, कुम्भपर्व, राजपाल एंड कम्पनी, इलाहाबाद, 2013, ISBN- 81-89538-13-6.
3. राम नरेश त्रिपाठी, कुम्भ दर्शन 2001, इलाहाबाद, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश।
4. राम नरेश त्रिपाठी, अर्द्धकुम्भ 2007, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश।
5. चतुर्वेदी, हेरम्ब, कुम्भ ऐतिहासिक वाङ्मय, वाणी प्रकाशन, 2019।
6. पं. सीताराम शास्त्री एवं पं. रामावतार शर्मा कृत प्रयाग माहात्म्य, प्रकाशन वर्ष अज्ञात, ई गंगोत्री पर उपलब्ध,
7. हरिमोहन दास टण्डन, प्रयागराज, प्रयागराज।
- 8- Dr.D.P. Dubey, Prayag, The Site of Kumbh Mela, Aryan Books International, New Delhi 2001

इकाई – 07 : कुम्भ का सामाजिक परिप्रेक्ष्य

इकाई संरचना

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 कुम्भ के सामाजिक परिप्रेक्ष्य

7.3.1 सामूहिक समागम एवं सामाजिक सद्भाव

7.3.2 आर्थिक प्रभाव एवं आजीविका

7.3.3 सामाजिक सेवाएँ एवं सामाजिक कल्याण

7.3.4 सामाजिक संस्कृति का आदान-प्रदान एवं संरक्षण

7.3.5 कुम्भ में जातीय गतिशीलता

7.3.6 कुम्भ में जेण्डर एवं सामाजिक भूमिकाएँ

7.4 सारांश

7.5 अभ्यास के प्रश्न

7.6 चर्चा के बिन्दु

7.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

कुम्भ मेला, दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समारोहों में से एक है, जो सामाजिक दृष्टिकोणों का एक समृद्ध ताना-बाना प्रस्तुत करता है, जिसने सदियों से आम-जनमानस, विद्वानों, ऋषि-मुनियों और पर्यटकों को आकर्षित किया है। कुम्भ मेला आध्यात्मिकता, संस्कृति और सामाजिक जीवन के संगम का प्रतीक है। कुम्भ आध्यात्मिक शुद्धि प्राप्त करने के लिए एक तीर्थयात्रा है, लेकिन इसका व्यापक महत्व विविध समुदायों को एक साथ लाने, सामाजिक एकता को बढ़ावा देने और भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक लोकाचार के प्रतिबिंब के रूप में कार्य करने की इसकी क्षमता में निहित है। मुख्य रूप से धार्मिक होते हुए भी, कुम्भ मेला एक सामाजिक घटना है जो सामूहिक आस्था, सांस्कृतिक एकता और भारतीय समाज के जटिल ताने-बाने का सार समेटे हुए है। भारत में चार पवित्र स्थलों – प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में चक्रीय रूप से आयोजित होने वाला यह मेला धर्म के दायरे से परे है, जो समाज की सामूहिक चेतना में गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई की विषयवस्तु का अध्ययन करने के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- सामूहिक समागम एवं सामाजिक सद्भाव को समझकर समाज में सामाजिक सद्भाव स्थापित करने में सहयोग दे सकेंगे।
- सामूहिक पहचान को बढ़ावा देने में कुम्भ मेले की भूमिका को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
- कुम्भ के आर्थिक प्रभाव व आजीविका के साधनों को बता सकेंगे।
- सामाजिक सेवा एवं सामाजिक कल्याण को समझकर कुम्भ में सामाजिक सेवाएँ दे सकेंगे।
- कुम्भ में जातीय गतिशीलता एवं जेण्डर निरपेक्षता जैसे मुद्दों को समझकर जीवन में पक्षपात रहित व्यवहार

कर सकेंगे।

7.3 कुम्भ का सामाजिक परिप्रेक्ष्य

कुम्भ मेला, दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागमों में से एक है, यह न केवल एक आध्यात्मिक समागम है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व का एक जीवंत ताना-बाना भी है। यह विशाल आयोजन विविध समुदायों को एक साथ आने, बातचीत करने और विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए एक अनूठा मंच प्रदान करता है, जिससे एकता और समझ की भावना को बढ़ावा मिलता है। कुम्भ के सामाजिक परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत सामूहिक समागम और सामाजिक सद्भाव, आर्थिक प्रभाव और आजीविका, सामाजिक सेवाएँ और कल्याण, एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान और संरक्षण जैसे बिन्दुओं की चर्चा की जा रही है।

7.3.1 सामूहिक समागम और सामाजिक सद्भाव

कुम्भ मेला सामूहिक समागम, भागीदारी एवं सद्भाव के लिए मानवीय क्षमता का एक उल्लेखनीय माध्यम है। यह विभिन्न क्षेत्रों, जातीयताओं और सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के लाखों लोगों को आकर्षित करता है। यह आयोजन भारत की सांस्कृतिक और धार्मिक बहुलता का एक जीवंत उदाहरण है। तीर्थयात्री, साधु (तपस्वी) और पर्यटक एक साझा उद्देश्य आध्यात्मिक शुद्धि आदि के लिए एक साथ आते हैं। यह एकता की भावना को बढ़ावा देता है जो जाति, पंथ और भाषाई मतभेदों से परे है। साझा उद्देश्य और सामान्य अनुष्ठानों का यह पहलू सामाजिक सामंजस्य को बढ़ावा देता है।

कुम्भ मेले का मुख्य आकर्षण साझा अनुष्ठान हैं, विशेष रूप से पवित्र नदियों में पवित्र स्नान। यह क्रिया शुद्धि और एकता का प्रतीक है, जहाँ लाखों लोग एक साथ भाग लेते हैं, जिससे एक सामूहिक अनुभव बनता है जो पारस्परिक संबंधों को बढ़ाता है। मेले में अस्थायी बस्तियाँ अक्सर परिवारों और समुदायों को करीब लाती हैं, जिससे एक दूसरे के प्रति गहरी भावना और आपसी सहयोग को बढ़ावा मिलता है।

कुम्भ मेला विभिन्न हिंदू संप्रदायों और आध्यात्मिक नेताओं के बीच बातचीत के लिए एक स्थान प्रदान करता है, जिससे संवाद और सामंजस्य संभव होता है। ऐतिहासिक रूप से, यह धार्मिक विवादों को सुलझाने, विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच सद्भाव को बढ़ावा देने और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को बढ़ावा देने का स्थल रहा है।

7.3.2 आर्थिक प्रभाव एवं आजीविका

कुम्भ मेला सिर्फ एक आध्यात्मिक आयोजन नहीं है; यह एक आर्थिक शक्ति है जो स्थानीय और क्षेत्रीय अर्थव्यवस्थाओं को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है। यह आयोजन स्थानीय अर्थव्यवस्था को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ावा देता है, जिससे व्यवसायों, कारीगरों और पर्यटन उद्योग को लाभ मिलता है।

पर्यटन राजस्व— लाखों घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय आगंतुकों के साथ, यह आयोजन आतिथ्य, परिवहन और खुदरा क्षेत्रों के लिए पर्याप्त राजस्व उत्पन्न करता है। होटल, गेस्ट हाउस और अस्थायी शिविरों में पर्यटकों की भारी आमद होती है, जिससे मुनाफ़ा बढ़ता है।

रोज़गार के अवसर— कुम्भ मेला हज़ारों श्रमिकों के लिए अस्थायी रोज़गार पैदा करता है। विक्रेता, कारीगर और मजदूर बुनियादी ढाँचा स्थापित करने, खाद्य स्टॉल चलाने और धार्मिक कलाकृतियाँ बेचने में रोज़गार पाते हैं। अस्थायी श्रमिकों को सफ़ाई, सुरक्षा और रसद सेवाओं के लिए नियोजित किया जाता है, जिससे स्थानीय आजीविका को बढ़ावा मिलता है। अतः कुम्भ मेला अस्थायी श्रमिकों, विक्रेताओं और सेवा प्रदाताओं सहित लाखों लोगों के लिए रोज़गार के अवसर पैदा करता है।

स्थानीय कारीगरों और व्यवसायों को बढ़ावा— मेले के दौरान हस्तशिल्प, धार्मिक स्मृति चिन्ह और क्षेत्रीय व्यंजन काफी लोकप्रिय हो जाते हैं। स्थानीय कारीगर अपने कौशल का प्रदर्शन करते हैं, जिससे बिक्री और निरंतर माँग बढ़ती है। इस प्रकार यह आयोजन पारंपरिक शिल्प को पुनर्जीवित करने और स्वदेशी उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए एक मंच के रूप में कार्य करता है।

दीर्घकालिक आर्थिक लाभ— मेले के दौरान सड़क, सार्वजनिक परिवहन और उपयोगिताओं जैसे बुनियादी ढांचे में निवेश से मेज़बान शहरों को कार्यक्रम समाप्त होने के बाद भी लंबे समय तक लाभ मिलता है। ये सुधार

क्षेत्र में व्यापार, पर्यटन और समग्र आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाते हैं।

7.3.3 सामाजिक सेवाएँ एवं सामाजिक कल्याण

कुम्भ मेले में व्यापक सामाजिक सेवाओं की आवश्यकता होती है, जिससे न केवल तीर्थयात्रियों को बल्कि स्थानीय समुदाय को भी लाभ मिलता है। कई सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन और स्वयंसेवक तीर्थयात्रियों को भोजन, आश्रय और चिकित्सा सहायता जैसी आवश्यक सेवाएँ प्रदान करते हैं।

स्वास्थ्य सुविधाएँ— मेले के दौरान तीर्थयात्रियों की भारी आमद को पूरा करने के लिए व्यापक स्वास्थ्य सुविधाएँ स्थापित की जाती हैं। बड़ी संख्या में उपस्थित लोगों की सेवा करने के लिए अस्थायी क्लीनिक, मोबाइल स्वास्थ्य इकाइयाँ और आपातकालीन चिकित्सा सेवाएँ स्थापित की जाती हैं। ये सुविधाएँ अक्सर मेजबान शहरों में बेहतर स्वास्थ्य सेवा के बुनियादी ढाँचे की ओर ले जाती हैं, जो स्थानीय आबादी को दीर्घकालिक सेवा प्रदान करती हैं। मेले के दौरान आयोजित टीकाकरण अभियान और सार्वजनिक स्वास्थ्य अभियान भी समग्र सामुदायिक स्वास्थ्य में योगदान करते हैं।

स्वच्छता एवं सामाजिक जागरूकता— मेले का उपयोग अक्सर स्वच्छता, स्वास्थ्य और महिला सशक्तिकरण जैसे सामाजिक मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए एक मंच के रूप में किया जाता है। आयोजन के पैमाने को देखते हुए, मजबूत स्वच्छता प्रणाली आवश्यक है। मेले के दौरान शुरु की गई नवीन अपशिष्ट प्रबंधन तकनीकें और स्वच्छ जल आपूर्ति पहल स्थानीय स्वच्छता मानकों में सुधार करती हैं।

आपदा तैयारी और भीड़ प्रबंधन— लाखों लोगों के प्रबंधन के लिए उन्नत भीड़ नियंत्रण और आपदा प्रबंधन रणनीतियों की आवश्यकता होती है। मेले के दौरान प्राप्त अनुभव भविष्य में बड़े पैमाने पर होने वाले आयोजनों और आपात स्थितियों से बेहतर तरीके से निपटने में योगदान देता है। ड्रोन निगरानी और कृत्रिम बुद्धि-आधारित भीड़ निगरानी जैसी तकनीकों का परीक्षण और सुधार मेले के दौरान किया जाता है।

दान और परोपकार— धार्मिक और गैर-सरकारी संगठन तीर्थयात्रियों, विशेष रूप से वंचितों को मुफ्त भोजन, चिकित्सा सहायता और कपड़े वितरित करते हैं। दयालुता के ये कार्य मेले की भावना के अनुरूप हैं, कल्याण को बढ़ावा देते हैं और आर्थिक असमानताओं को कम करते हैं।

7.3.4 सामाजिक संस्कृति का आदान-प्रदान एवं संरक्षण

कुम्भ मेला भारत की समृद्ध सामाजिक संस्कृति की विविधता को प्रदर्शित करता है, जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के लोग अपनी अनूठी परंपराओं, रीति-रिवाजों और पोशाक का प्रदर्शन करते हैं। यह आयोजन प्राचीन परंपराओं, अनुष्ठानों और लोक कलाओं को संरक्षित करने में मदद करता है, अंतर्राष्ट्रीय आगंतुकों को आकर्षित करता है, जो भारत की सांस्कृतिक विरासत को बढ़ावा देता है। कुम्भ मेला सामाजिक संस्कृति और परम्परा के जीवंत भंडार के रूप में कार्य करता है, जो इसे विभिन्न समाज की संस्कृतियों के आदान-प्रदान हेतु एक जीवंत मंच बनाता है।

क्षेत्रीय विविधता का प्रदर्शन— यह आयोजन भारत की क्षेत्रीय विविधता का प्रदर्शन है, जहाँ आगंतुकों को लोक संगीत, नृत्य और व्यंजनों सहित विभिन्न सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों से अवगत कराया जाता है। स्थानीय समुदाय मेले का उपयोग अपनी सांस्कृतिक पहचान को उजागर करने के लिए करते हैं, जिससे उत्सव और सीखने का माहौल बनता है।

विरासत का संरक्षण— कुम्भ मेला तीर्थयात्रा की परंपरा को मजबूत करता है, जो हिंदू आध्यात्मिकता का केंद्र है। मेले के दौरान किए जाने वाले अनुष्ठान, मंत्र और अभ्यास यह सुनिश्चित करते हैं कि सदियों पुरानी परंपराएँ आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचें।

वैश्विक सांस्कृतिक आदान-प्रदान— मेला अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों और शोधकर्ताओं को आकर्षित करता है, जिससे क्रॉस-कल्चरल संवाद के अवसर पैदा होते हैं। यह नृविज्ञान, समाजशास्त्र और शहरी नियोजन जैसे विषयों में अध्ययन का विषय बन गया है, जिससे इसकी वैश्विक प्रासंगिकता और बढ़ गई है।

ज्ञान साझा करना— आध्यात्मिक नेताओं, विद्वानों और दार्शनिकों की उपस्थिति बौद्धिक और आध्यात्मिक

विकास के माहौल को बढ़ावा देती है। धर्म, दर्शन और नैतिकता पर प्रवचन हिंदू विचार के संरक्षण और विकास में योगदान करते हैं।

7.3.5 कुम्भ में जातीय गतिशीलता

कुम्भ मेला, दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागमों में से एक है, जिसके माध्यम से सामाजिक पदानुक्रम और जातिगत गतिशीलता के परस्पर क्रिया का पता लगाया जा सकता है। यह आयोजन, भारतीय समाज के सामाजिक ताने-बाने को भी दर्शाता है और प्रभावित करता है। पुजारी, धार्मिक शिक्षक और अखाड़े (मठवासी आदेश) – अक्सर कुम्भ मेले में जड़ जमाए हुए जाति व्यवस्था को दर्शाते हैं। विशिष्ट अखाड़ों पर कुछ जाति समूहों (जैसे, ब्राह्मण, क्षत्रिय) का वर्चस्व है, जो पारंपरिक पदानुक्रम को मजबूत करता है। आध्यात्मिक अधिकार तक पहुँच अक्सर जातिगत विशेषाधिकारों के साथ जुड़ी है, जो एक ऐतिहासिक संरचना को कायम रखती है जहाँ उच्च जाति समूह धार्मिक प्रवचन पर हावी होते हैं। हालाँकि कुम्भ मेला एकता का प्रतीक है, लेकिन स्थानिक गतिशीलता कभी-कभी जातिगत विभाजन को प्रकट करती है। कुम्भ में भागीदारी, विशेष रूप से उच्च-जाति समूहों के लिए, उनकी सामाजिक-धार्मिक पहचान की पुष्टि के रूप में कार्य कर सकती है। अनुष्ठान और स्नान प्रथाएँ ऐतिहासिक रूप से जाति पदानुक्रम से जुड़े शुद्धता आदर्शों पर जोर दे सकती हैं।

कुम्भ का विशाल पैमाना और इसकी खुली भागीदारी कुछ कठोर जाति सीमाओं को कम करती है। लाखों लोग-जाति से परे-आध्यात्मिक शुद्धि के साझा उद्देश्य के लिए इकट्ठा होते हैं। यह सामूहिक अनुभव क्षण में समानता की भावना को बढ़ावा देता है, पारंपरिक पदानुक्रमों को चुनौती देता है, यद्यपि अस्थायी रूप से। तीर्थयात्रियों के बीच बढ़ते शहरीकरण, शिक्षा और डिजिटल जागरूकता ने जाति गतिशीलता को सूक्ष्म रूप से बदल दिया है। युवा पीढ़ी अक्सर जाति परंपराओं से कम बंधी होती है, जिससे त्यौहार के दौरान अधिक समतावादी बातचीत के अवसर बनते हैं। कुम्भ में दलित समूहों की भागीदारी बढ़ रही है, जो न केवल भक्तों के रूप में बल्कि समान धार्मिक अधिकार के बयान के रूप में अनुष्ठानों में शामिल होते हैं। ये कार्य ऐतिहासिक रूप से जाति से जुड़ी बहिष्कार प्रथाओं को चुनौती देते हैं।

गैर-सरकारी संगठनों, सरकारी निकायों और स्वयंसेवकों द्वारा कुम्भ के दौरान मुफ्त भोजन, चिकित्सा शिविर और आवास जैसी जाति-तटस्थ सेवाएँ प्रदान करने के प्रयास समावेशिता को और बढ़ावा देते हैं। ये पहल जाति-आधारित विशेषाधिकार के दृश्यमान चिह्नों को कमजोर करती हैं।

7.3.6 कुम्भ में जेण्डर एवं सामाजिक भूमिकाएँ

कुम्भ जेण्डर और उससे जुड़ी भूमिकाओं सहित व्यापक सामाजिक संरचनाओं को भी दर्शाता है। मुख्य रूप से धार्मिक भक्ति का स्थल होने के बावजूद, कुम्भ मेला पारंपरिक जेण्डर मानदंडों, आधुनिक प्रभावों और परिवर्तन के अवसरों का एक जटिल अंतर्संबंध प्रदान करता है। कुम्भ मेले में जेण्डर और सामाजिक भूमिकाओं के विश्लेषण से पता चलता है कि कैसे परंपरा और आधुनिकता, पहचान और अनुभवों को आकार देने में परस्पर क्रिया करती हैं।

कुम्भ मेले में पारंपरिक जेण्डर भूमिकाएँ— कुम्भ मेला, हिंदू धार्मिक परंपराओं में निहित है, जो पितृसत्तात्मक संरचनाओं को दर्शाता है जिसने ऐतिहासिक रूप से भारतीय समाज में जेण्डर भूमिकाओं को आकार दिया है।

धार्मिक अधिकार और पुरुष प्रभुत्व— कुम्भ में नेतृत्व मुख्य रूप से पुरुषों का होता है। अखाड़ों (मठवासी आदेश), पुजारी और आध्यात्मिक नेताओं के प्रमुख मुख्य रूप से पुरुष होते हैं। यह धार्मिक अधिकार और पुरुषत्व के पारंपरिक जुड़ाव को पुष्ट करता है। महिलाएँ, हालाँकि धार्मिक प्रवचन में मौजूद हैं, लेकिन अक्सर उन्हें गौण भूमिकाओं में रखा जाता है।

अनुष्ठानों की संरक्षक के रूप में महिलाएँ— महिलाएँ, विशेष रूप से घरेलू क्षेत्रों में, पारिवारिक तीर्थयात्राओं के आयोजन और धार्मिक अनुष्ठानों को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्नान समारोहों और प्रार्थना कार्यों में उनकी भागीदारी परिवार की पवित्रता और भक्ति के वाहक के रूप में उनकी ज़िम्मेदारी को रेखांकित करती है।

महिलाओं के लिए आध्यात्मिक मार्ग— महिलाओं को मठवासी आदेशों में शामिल होने में ऐतिहासिक रूप

से प्रतिबंधों का सामना करना पड़ा है। हालाँकि, जूना अखाड़े जैसे कुछ अखाड़ों ने हाल ही में महिला साधवियों (तपस्वियों) को स्वीकार किया है, जो एक क्रमिक बदलाव का संकेत है। फिर भी, उनके पुरुष समकक्षों की तुलना में उनकी दृश्यता और प्रभाव सीमित है।

आधुनिक प्रभाव और बदलती लिंग भूमिकाएं— कुम्भ मेला परिवर्तन का एक स्थल भी है जहाँ आधुनिकता परंपरा के साथ जुड़ती है, जिससे लिंग गतिशीलता में बदलाव होता है। बड़ी संख्या में महिलाएं प्रमुख आध्यात्मिक नेताओं के रूप में उभर रही हैं। साध्वी ऋतंभरा और अन्य जैसी हस्तियों ने पुरुष-प्रधान पदानुक्रमों को चुनौती देते हुए अपने लिए जगह बनाई है। उनकी उपस्थिति धार्मिक नेतृत्व में महिलाओं की उभरती भूमिका को दर्शाती है।

कुम्भ में काम करने वाले कई संगठन सुरक्षा, स्वास्थ्य और जागरूकता जैसे मुद्दों को संबोधित करके महिलाओं को सशक्त बनाने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। सैनिटरी उत्पादों के वितरण और आत्मरक्षा प्रशिक्षण कार्यशालाओं जैसी पहल लैंगिक समानता पर बदलते फोकस को उजागर करती हैं। मीडिया में कुम्भ का चित्रण अक्सर महिलाओं की भागीदारी को उजागर करता है, उनकी भक्ति और बलिदान पर ध्यान केंद्रित करता है। जबकि यह पारंपरिक भूमिकाओं को मजबूत करता है, यह उनकी दृश्यता और आवाज़ को भी बढ़ाता है।

ट्रांसजेंडर तपस्वियों का प्रतिनिधित्व करने वाले किन्नर अखाड़े ने हाल के वर्षों में प्रमुखता हासिल की है। उनकी भागीदारी कठोर लिंग मानदंडों को चुनौती देती है और बड़े कुम्भ ढांचे के भीतर कुछ आध्यात्मिक परंपराओं की समावेशिता को उजागर करती है।

कुम्भ में महिलाओं के लिए चुनौतियाँ और अवसर— प्रगति के बावजूद, कुम्भ मेले में महिलाओं को अभी भी सुरक्षा चिंताओं से लेकर नेतृत्व की भूमिकाओं तक सीमित पहुँच तक कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कुम्भ में भारी भीड़ महिलाओं के लिए कमजोरियाँ पैदा करती है, जिसमें उत्पीड़न का जोखिम भी शामिल है। सुरक्षा बढ़ाने के लिए अधिकारियों द्वारा किए गए प्रयास, जैसे कि केवल महिलाओं वाली पुलिस इकाइयाँ, इन मुद्दों को संबोधित करने में महत्वपूर्ण रही हैं। कार्यक्रम के आयोजन और प्रबंधन में महिलाओं की भूमिका न्यूनतम बनी हुई है, जो धार्मिक संस्थानों में नेतृत्व और निर्णय लेने में व्यापक लैंगिक असमानताओं को दर्शाती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गये प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अन्त में दिए गये बोध प्रश्नों के सम्भावित उत्तर से मिलान कीजिए।

1. कुम्भ मेला किन सामाजिक चुनौतियों का समाधान करता है?

.....

.....

2. कुम्भ मेला सांप्रदायिक सद्भाव को कैसे बढ़ावा देता है?

.....

.....

3. कुम्भ मेला किस तरह से सामाजिक जागरूकता और जिम्मेदारी को बढ़ावा देता है?

.....

.....

4. कुम्भ मेला स्थानीय अर्थव्यवस्था और सामाजिक विकास को कैसे प्रभावित करता है?

.....

.....

7.4 सारांश

कुम्भ मेला एक धार्मिक आयोजन से कहीं बढ़कर है; यह भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने का एक शक्तिशाली प्रतिबिंब है। अपने सामूहिक समारोहों के माध्यम से, यह सामाजिक सद्भाव और एकता को बढ़ावा देता है। इसका आर्थिक महत्व आजीविका को बढ़ाता है और स्थानीय व्यवसायों का समर्थन करता है, जबकि इसकी सामाजिक सेवाएं सार्वजनिक कल्याण सुनिश्चित करती हैं। इसके अलावा, यह आयोजन सांस्कृतिक आदान-प्रदान और संरक्षण के लिए एक जीवंत मंच के रूप में खड़ा है, यह सुनिश्चित करता है कि भारत की समृद्ध विरासत का जश्न मनाया जाए और इसे वैश्विक स्तर पर साझा किया जाए। यह जाति गतिशीलता में सूक्ष्म, परिवर्तनकारी बदलावों के लिए एक मंच के रूप में भी कार्य करता है। यह भारतीय समाज की दोहरी वास्तविकताओं को समाहित करता है – जहाँ परंपरा और परिवर्तन एक साथ मौजूद हैं। यह त्रयोहार समकालीन भारत में धर्म, समाज और जाति के परस्पर क्रिया और विकास को देखने के लिए एक सूक्ष्म जगत प्रदान करता है। कुम्भ मेला, भारतीय समाज में लैंगिक भूमिकाओं की जटिलताओं को दर्शाता है। पितृसत्तात्मक परंपराओं में निहित होने के बावजूद, यह इन मानदंडों पर सवाल उठाने और उन्हें बदलने के अवसर भी प्रदान करता है। आध्यात्मिक नेतृत्व में महिलाओं की बढ़ती दृश्यता, वैकल्पिक पहचान की उपस्थिति और लैंगिक समावेशिता के लिए आधुनिक हस्तक्षेप कुम्भ में लैंगिक भूमिकाओं की गतिशील और विकसित प्रकृति को उजागर करते हैं।

7.5 अभ्यास के प्रश्न

- कुम्भ मेले में किसी व्यक्तिगत अनुभव या अवलोकन से प्रेरित होकर सामाजिक सेवाओं एवं कल्याण से सम्बन्धित कहानी या कविता लिखें।
- कुम्भ मेले के दौरान मेज़बान शहरों और आस-पास के क्षेत्रों के लोगों के लिए आर्थिक अवसर के संभावित क्षेत्रों की पहचान कीजिए।

7.6 चर्चा के बिन्दु

- कुम्भ मेले के दौरान देखे जाने वाले विशिष्ट सामाजिक मुद्दों, जैसे सामाजिक सद्भाव एवं महिला सशक्तिकरण पर चर्चा कीजिए।

7.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. कुम्भ मेला धार्मिक असहिष्णुता, सामाजिक बहिष्कार और सांप्रदायिक विभाजन सहित कई सामाजिक चुनौतियों का समाधान करता है। आध्यात्मिकता और सहयोग की भावना से विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को एक साथ लाकर, यह उन सामाजिक मानदंडों को चुनौती देता है जो अक्सर लोगों को धर्म, जाति या समुदाय के आधार पर अलग-थलग कर देते हैं। यह सामाजिक सद्भाव और विविधता के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है, साथ ही संवाद और आदान-प्रदान के लिए एक मंच भी प्रदान करता है।
2. कुम्भ मेला सांप्रदायिक सद्भाव का एक शक्तिशाली उदाहरण है। विभिन्न धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के लोग एक सामान्य आध्यात्मिक लक्ष्य का जश्न मनाने के लिए एक साथ आते हैं। मेला विभिन्न समूहों के बीच एकजुटता और शांति की भावना को प्रोत्साहित करता है, सांप्रदायिक तनाव को कम करने और सम्मान और समझ की सामूहिक भावना को बढ़ावा देने में मदद करता है। धार्मिक मतभेदों के बावजूद, आस्था का साझा अनुभव प्रतिभागियों को एकजुट करता है।
3. कुम्भ मेला स्वच्छता, सम्मान और सहयोग जैसे मूल्यों पर ध्यान केंद्रित करके सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा देता है। यह आयोजन तीर्थयात्रियों को पर्यावरण में स्वच्छता बनाए रखने, आत्म-अनुशासन का अभ्यास करने और अपने आस-पास के लोगों की विविधता का सम्मान करने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसके अतिरिक्त, मेला अक्सर विभिन्न सामुदायिक पहलों और आउटरीच कार्यक्रमों के माध्यम से पर्यावरण

संरक्षण और महिलाओं के अधिकारों जैसे सामाजिक मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाता है।

4. कुम्भ मेला लाखों आगंतुकों को आकर्षित करके स्थानीय अर्थव्यवस्था को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ावा देता है, स्थानीय व्यवसायों, जैसे विक्रेताओं, परिवहन सेवाओं, आतिथ्य और पर्यटन के लिए अवसर पैदा करता है। मेले द्वारा उत्पन्न आर्थिक गतिविधि का सामाजिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि आगंतुकों की आमद को समायोजित करने के लिए बुनियादी ढांचे और सार्वजनिक सेवाओं में सुधार किया जाता है। यह क्षेत्र में कौशल विकास और रोजगार को भी बढ़ावा देता है।

7.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुमार, सुरेश (2018). कुम्भ मेला: एक सांस्कृतिक अध्ययन, सरस्वती पब्लिकेशन्स, वाराणसी।
2. गिलमार्टिन, डेविड (2017). द कुम्भ मेला : ए हिस्ट्री आफ द वर्ल्ड लार्जस्ट रिलीजिअस गेदरिंग, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, न्यू यार्क।
3. तिवारी, रामनाथ (2020). कुम्भ मेला: इतिहास और वर्तमान, शंकर पब्लिकेशन, मुम्बई।
4. थरूर, शशि (2016). कुम्भ मेला : द कन्वर्जेन्स आफ फेथ, कल्चर ऐण्ड नेचर, पेन्गुइन इंडिया, नई दिल्ली।
5. पाठक, रामेश्वर (2017). कुम्भ मेला: भारतीय संस्कृति का अद्भुत प्रतीक, पुस्तक मंडल, दिल्ली।
6. यादव, हरि सिंह (2015). कुम्भ मेला और भारतीय धार्मिक परम्परा, हिंदी साहित्य प्रतिष्ठान, इलाहाबाद।
7. शर्मा, श्याम सुन्दर (2016). कुम्भ मेला: दर्शन और विज्ञान, वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

इकाई – 08 : कुम्भ का आर्थिक परिप्रेक्ष्य

इकाई की रूपरेखा

- 8.0 उद्देश्य
- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 कुम्भ मेला एवं कुम्भ मेले के प्रकार
- 8.3 महाकुम्भ आयोजन के संदर्भ में खगोलीय (Astrological) विज्ञान की मान्यता
- 8.4 महाकुम्भ की प्रमुख विशेषताएँ
- 8.5 कुम्भ मेले का आर्थिक परिप्रेक्ष्य
- 8.6 महाकुम्भ : 2013 का आर्थिक दृष्टिकोण से विश्लेषण
- 8.7 व्यवसायिक दृष्टि से कुम्भ मेला
- 8.8 कुम्भ मेला: दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागम के पीछे का अर्थशास्त्र
- 8.9 कुम्भ मेले में विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं का आर्थिक प्रभाव
- 8.10 महाकुम्भ का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव
- 8.11 महाकुम्भ 2025 : प्रयागराज (इलाहाबाद), उत्तर प्रदेश, भारत
- 8.12 सारांश
- 8.13 अभ्यास के प्रश्न
- 8.14 चर्चा के बिन्दु
- 8.15 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 8.16 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.0 प्रस्तावना

कुम्भ मेला एक महत्वपूर्ण धार्मिक समागम है जिसका समाज, अर्थव्यवस्था और पर्यावरण पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों तरह का प्रभाव पड़ता है। महाकुम्भ मेला भारतीय संस्कृति, आध्यात्म और परम्परा के दिव्य मार्गदर्शक के रूप में मानाया जाने वाला यह पावन उत्सव न केवल भारतीयों को ही अपितु सम्पूर्ण विश्व को कर्मयोग की राह दिखाता है। यह पर्यटन, रोजगार, बुनियादी ढाँचे के विकास के माध्यम से महत्वपूर्ण राजस्व उत्पन्न करता है, जिससे मेजबान शहरों में स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं को लाभ होने के साथ-साथ देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव दिखायी देता है। हालाँकि ये लाभ अक्सर अस्थायी प्रकृति के होते हैं जो उतार-चढ़ाव और एक ही आयोजन पर अत्यधिक निर्भरता का कारण बन सकते हैं जिसको की कृषि क्षेत्र के **मौसमी बेरोजगारी** की तरह समझ सकते हैं। । कुम्भ मेले के पर्यावरणीय प्रभाव के कारण होने वाले आर्थिक प्रभाव का अध्ययन महत्वपूर्ण है, जिसमें जल प्रदूषण, अपशिष्ट उत्पादन, भूमि क्षरण और वायु प्रदूषण आदि अन्य प्रमुख चिंता के विषय हैं। यह आयोजन प्लास्टिक के उपयोग को कम करके, अपशिष्ट पृथक्करण को बढ़ावा देकर और आयोजन से पहले व बाद में पवित्र नदियों की सफाई करके स्थिर प्रयासों को भी बढ़ावा देता है। अधिकारियों व गैर सरकारी संगठनों द्वारा चलाए जाने वाले आदि अन्य विभिन्न जागरूकता अभियान, तीर्थयात्रियों को प्लास्टिक से बचने और स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र का सम्मान व सुरक्षित करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। कुम्भ मेले का सामाजिक प्रभाव सकारात्मक है, क्योंकि यह विविध पृष्ठभूमि के लाखों लोगों के बीच सांस्कृतिक एकता, धार्मिक एकता एवं आर्थिक मजबूती को बढ़ावा देता है। तीर्थयात्री एक सामान्य धार्मिक उद्देश्य के लिए एक साथ एक स्थान पर एकत्र होते हैं, जिससे सामाजिक सामंजस्य मजबूत होता है। यह आयोजन सामुदायिक संरचना को मजबूत करता है, क्योंकि स्थानीय आबादी भारत के विभिन्न हिस्सों के साथ-साथ संपूर्ण विश्व के तीर्थयात्रियों के संपर्क में आती है। लाखों

हिंदुओं के लिए, कुम्भ मेला एक परिवर्तनकारी आध्यात्मिक अनुभव है, जो शुद्धिकरण, मोचन और धार्मिक दायित्वों की पूर्ति का अवसर प्रदान करता है। हालांकि, लोगों की भारी आमद स्थानीय संसाधनों जैसे पानी, स्वच्छता, भोजन और स्वास्थ्य सेवा को प्रभावित करता है। अपर्याप्त सुविधाओं के कारण भीड़भाड़, स्वास्थ्य जोखिम और सामाजिक तनाव हो सकता है। यह आयोजन महिलाओं, बच्चों व बुजुर्गों सहित हाशिए पर रहने वाले समुदायों को असमान रूप से प्रभावित कर सकता है, जिन्हें भीड़ भरे माहौल में रहने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त, आयोजन के बड़े पैमाने पर होने के कारण आस-पास रहने वाले लोगों को विस्थापन या अपने दैनिक जीवन में व्यवधान का सामना करना पड़ सकता है। हालांकि, सीमित स्थान पर लोगों की भारी भीड़ से अस्वच्छता और भीड़भाड़ के कारण जलजनित रोग, श्वसन संक्रमण और वेक्टर जनित रोग सहित अन्य हानिकारक रोगों के संचरण का जोखिम बढ़ जाता है। जिसके लिए समुचित स्वास्थ्य उपचारात्मक सुविधाओं की व्यवस्था करने में सरकार को आर्थिक नुकसान होता है जिसका प्रभाव सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। कुम्भ मेले में धर्म के व्यवसायीकरण से वाणिज्यिक विक्रेताओं, स्मारिका बिक्री और धार्मिक सामग्री के अत्यधिक विपणन के बारे में चिंताएँ पैदा होती हैं। वाणिज्यिक विक्रेताओं, स्मारिका बिक्री और धार्मिक सामग्री के अत्यधिक विपणन के प्रसार से कुछ प्रतिभागियों के लिए आध्यात्मिक महत्व कम हो सकता है। कुम्भ मेले का समाज के विभिन्न पहलुओं पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह का प्रभाव पड़ता है। आर्थिक रूप से, यह महत्वपूर्ण राजस्व अर्जन, रोजगार सृजन और बुनियादी ढाँचे को लाभ प्रदान करता है, लेकिन ये अक्सर अल्पकालिक होते हैं और आयोजन अवधि के आस-पास केंद्रित होते हैं। पर्यावरण की दृष्टि से यह एक बड़ी चिंता का विषय बनी हुई है, खासकर जल प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के संबंध में। सामाजिक रूप से, यह एकता, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और आध्यात्मिक विकास को बढ़ावा देता है, लेकिन स्थानीय संसाधनों एवं सेवाओं पर भी भारी दबाव डालता है। इसके प्रभावों को सुनियोजित एवं सुव्यवस्थित ढंग से प्रबंधित करने के लिए सावधानीपूर्वक योजना, संतुलित दृष्टिकोण और संधारणीय प्रथाओं की आवश्यकता होती है। पर्यावरण संरक्षण, सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रबंधन और आर्थिक समावेशिता की दिशा में निरंतर प्रयासों के साथ-साथ कुम्भ मेला सांस्कृतिक एकता और आर्थिक विकास को गतिशीलता प्रदान करता है, जबकि इसके नकारात्मक परिणामों को कम से कम किया जा सकता है। कुम्भ मेले में खाद्य पैकेजिंग, प्लास्टिक की बोतलें और फूलों के प्रसाद सहित ठोस अपशिष्ट की एक महत्वपूर्ण मात्रा उत्पन्न होती है, जो अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों को ओवरफ्लो करती है और लैंडफिल को ओवरफ्लो करने एवं आसपास के क्षेत्रों में गंदगी फैलाने में योगदान देती है। यह प्रदूषण न केवल एक अस्थिर वातावरण बनाता है बल्कि नदियों और महासागरों को भी प्रदूषित करता है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र का नाजुक संतुलन खतरे में पड़ जाता है। पवित्र घाटों पर ऐसे भव्य उत्सव अनजाने में स्थान की पर्यावरणीय पारिस्थितिकी की पवित्रता को अपवित्र कर सकते हैं।

8.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- प्रस्तुत इकाई में कुम्भ मेले के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में महाकुम्भ आयोजन की **खगोलीय विज्ञान** द्वारा व्याख्यायित मूहूर्त को समझ पायेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में महाकुम्भ की प्रमुख विशेषताओं से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में कुम्भ मेले के आर्थिक परिप्रेक्ष्य से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में कुम्भ मेले में विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं के कारण आर्थिक प्रभाव से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में महाकुम्भ के अर्थव्यवस्था पर प्रभाव से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में सबसे बड़े **धार्मिक समागम** के आर्थिक लाभों के बारे में जानेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में **महाकुम्भ 2025 प्रयागराज** (इलाहाबाद) के बारे में अवगत होंगे।

8.2 कुम्भ मेले के प्रकार

कुम्भ मेला धार्मिक रूप से एक अत्यंत महत्वपूर्ण एवं विशाल जन समूह का एक ही सीमित स्थान में संग्रह

होने वाला आयोजन है जो भारत के प्रमुख पवित्र स्थानों पर होता है। यह मेला मुख्य रूप से चार प्रमुख स्थानों पर आयोजित होता है, और इन स्थानों पर कुम्भ मेला के विभिन्न प्रकार होते हैं। प्रत्येक प्रकार का आयोजन विशेष समय और उद्देश्य के साथ होता है। कुम्भ मेले के विभिन्न प्रकार निम्नलिखित हैं :

महाकुम्भ मेला

स्थान	नदी	संभावित पैमाना	अपशिष्ट उत्पादन की चिंताएँ	जल गुणवत्ता संबंधी चिंताएँ
प्रयागराज (इलाहाबाद)	गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम	सबसे बड़ी सभा	भारी भीड़ के कारण सबसे अधिक संभावित अपशिष्ट उत्पादन के आर्थिक नुकसान	नदियों के संगम और तीर्थयात्रियों की भारी संख्या के कारण प्रदूषण की सबसे अधिक संभावना है।
हरिद्वार	गंगा	बड़ी सभा	महत्वपूर्ण अपशिष्ट उत्पादन, स्वच्छता एवं बुनियादी ढांचे पर दबाव	फेकल कोलीफॉर्म बैक्टीरिया और संभावित माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण में वृद्धि
नासिक	गोदावरी	मध्यम आकार की सभा	प्रयागराज और हरिद्वार की तुलना में कम अपशिष्ट उत्पादन, लेकिन अभी भी उचित प्रबंधन की आवश्यकता है।	गोदावरी नदी में प्रदूषण की संभावना, अपशिष्ट प्रबंधन की व्यवस्था अपर्याप्त है एवं आर्थिक रूप से खर्चीला है।
उज्जैन	शिप्रा	छोटी सभा	अपेक्षाकृत कम अपशिष्ट उत्पादन, लेकिन छोटी नदी की रक्षा के लिए प्रभावी ढंग से प्रबंधन करना महत्वपूर्ण है।	शिप्रा नदी को पहले से ही प्रदूषित नदी माना जाता है। कुम्भ मेला इस समस्या को और बढ़ा सकता है।

Source: Self- सारणी-1 —महाकुंभ मेले का विविध विवरण



चित्र-1— महाकुंभ के “शाही स्नान” का विहंगम दृश्य

महाकुम्भ भारत में हिंदू धर्म के सबसे बड़े और पवित्रतम धार्मिक आयोजनों में से एक है। यह एक विशाल मेला है, जिसे हर 12 साल में एक बार भारत के प्रमुख चार पवित्र पौराणिक शहरों में आयोजित किया जाता है। प्रयागराज के महाकुम्भ जोकि मानव के अंतर्मन की चेतना का नाम है, के दौरान लाखों लोग संगम (प्रमुख नदियों का मिलन स्थल)¹ में स्नान करने के लिए एकत्र होते हैं, जो उनके धार्मिक विश्वास और आस्था के प्रतीक के रूप में माना जाता है। महाकुम्भ का आयोजन मुख्यतः प्रयागराज (इलाहाबाद), जिसके विश्व पटल पर यहाँ त्रेतायुग में रामायण से जुड़े पौराणिक स्थल हैं तो महाभारत काल के भी पौराणिक स्थल स्थित हैं, उज्जैन, नासिक और हरिद्वार में होता है, और प्रयागराज में यह मुख्य रूप से गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों के संगम पर होता है। इन नदियों के पवित्र पानी में स्नान करने से पापों का नाश, पूर्वजों की आत्माओं की शान्ति, आत्मीय शुद्धि तथा मोक्ष की प्राप्ति की मान्यता है। महाकुम्भ का धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व बहुत अधिक है। यह आयोजन हिंदू धर्म की मान्यता के अनुसार समर्पण, तपस्या, त्याग और धर्म का प्रतीक माना जाता है। यहां स्नान करने से न केवल शरीर को पवित्र माना जाता है, बल्कि आत्मा की शुद्धि और पापों से मुक्ति प्राप्त करने की मान्यता भी विद्यमान है। महाकुम्भ के आयोजन का मुख्य आकर्षण होता है, पवित्र नदियों में विभिन्न अखाड़ा परिषदों के साधुओं, महात्माओं एवं संतों के द्वारा किया जाने वाला स्नान जो “शाही स्नान” कहलाता है। यह स्नान विशेष रूप से उन दिनों में होता है, जो हिंदू पंचांग के अनुसार विशेष रूप से शुभ माने जाते हैं। महाकुम्भ के दौरान विभिन्न साधु-संत, महात्मा, एवं आस्थावान लोग गंगा तट पर एकत्र होते हैं, और पवित्र स्नान के बाद विभिन्न धार्मिक महात्माओं द्वारा धार्मिक अनुष्ठान और ज्ञानार्जक प्रवचन को पूरे मनोयोग से एकाग्र होकर तन्मयता से सुनकर आत्मसात करने हेतु प्रयत्नशील रहते हैं और तीर्थयात्री उनमें भाग लेकर धन्य होते हैं।

Sources-<https://www.thekumbhmelaindia.com/kumbh-mela-2021>

8.3 महाकुम्भ आयोजन के संदर्भ में खगोलीय (Astrological) विज्ञान की मान्यता

महाकुम्भ मेला जिसे कहीं-कहीं स्थानीय स्तर पर पूर्णकुम्भ और सिंहस्थ कुम्भ भी कहा जाता है। भारतीय संस्कृति का एक अत्यंत महत्वपूर्ण धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन है। यह मेला हर 12 साल में चार प्रमुख नदियों जैसे— प्रयागराज में गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम, हरिद्वार में गंगा, नासिक में गोदावरी और उज्जैन में शिप्रा के संगत तट पर आयोजित होता है। ऐसी खगोलीय मान्यता है कि 12 कुम्भ मेले में से 4 कुम्भ पृथ्वी लोक पर लगते हैं। समुद्र मंथन के दौरान अमृत कलश के उत्पन्न होने पर अमृत अधिकार को लेकर देवता और दानवों के बीच लगातार बारह दिन तक युद्ध हुआ था जो मनुष्यों के 12 वर्ष के समान है। अतः कुम्भ भी बारह होते हैं। उनमें से 4 कुंभ पृथ्वी पर आयोजित होते हैं और 8 कुम्भ देवलोक में आयोजित होते हैं। इसका आयोजन विशेष खगोलीय स्थितियों के आधार पर किया जाता है, जिसमें सूर्य, चंद्रमा और बृहस्पति की विशेष युति कुम्भ मेले के आयोजन के लिए उपयुक्त होती है। कुम्भ मेले का सटीक समय बृहस्पति और पृथ्वी के चारों ओर सूर्य की स्थिति से निर्धारित होता है। चारों स्थानों में से प्रत्येक विशिष्ट खगोलीय संरेखण के साथ मेल खाता है, जो त्यौहार के लिए शुभ तिथियों को चिह्नित करता है। जो ज्योतिषीय गणनाओं के आधार पर तय होती है। इसमें सूर्य और बृहस्पति (गुरु) ग्रहों की स्थिति का विशेष महत्व है। जैसे प्रयागराज में महाकुम्भ की तिथि तब होती है जब बृहस्पति वृषभ राशि में होता है और सूर्य मकर राशि में गोचर करता है। हरिद्वार में महाकुम्भ की तिथि तब होती है जब बृहस्पति कुम्भ राशि में और सूर्य मेष राशि में होता है। नासिक में महाकुम्भ मेला की तिथि तब होता है जब सूर्य और बृहस्पति सिंह राशि में होते हैं जिससे इसे सिंहस्थ महाकुम्भ भी कहते हैं। जबकि उज्जैन में महाकुम्भ की तिथि तब होती है जबकि वृहस्पति सिंह राशि में और सूर्य मेष राशि में होते हैं। इसे भी सिंहस्थ महाकुम्भ कहते हैं। महाकुम्भ को केवल खगोलीय मान्यता के आधार पर ही नहीं अपितु धार्मिक और आध्यात्मिक ऊर्जा को भी ध्यान में रखकर आयोजित किया जाता है। कुम्भ मेला एक खगोलीय आयोजन है जो ब्रह्मांडीय सद्भाव और आध्यात्मिक कायाकल्प को बढ़ावा देता है। मेले का आयोजन ग्रहों और सितारों के संरेखण द्वारा निर्देशित होता है, और इसका गहरा आध्यात्मिक महत्व है। भक्तों का मानना है कि कुम्भ मेले के दौरान पवित्र नदियों में स्नान करने से आत्मा शुद्ध होती है और व्यक्ति अपने जीवन को ब्रह्माण्ड की लय के साथ संरेखित कर पाता है। यह त्यौहार दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक मेला माना जाता है, जिसमें हरबार लाखों श्रद्धालु जुटते हैं। कुम्भ मेला न केवल एक धार्मिक त्यौहार है, बल्कि भारतीय एकता और विविधता का प्रतीक भी है, जहाँ सभी धर्मों, जातियों और समुदायों के लोग

¹ विस्तृत जानकारी हेतु सारणी-1 देखें

एक साथ आते हैं।

8.4 महाकुम्भ की प्रमुख विशेषताएँ

- **समय और अवधि:** महाकुम्भ हर 12 वर्ष में एक बार आयोजित होता है, और यह लगभग 2 महीने तक चलता है।
- **शाही स्नान:** महाकुम्भ के दौरान कई शाही स्नान होते हैं, जिनमें सबसे प्रमुख स्नान मौनी अमावस्या, मकर संक्रांति, बसंत पंचमी और महाशिवरात्रि के दिन होते हैं।
- **साधु, महात्माओं एवं संतों की उपस्थिति:** महाकुम्भ में देशभर से कई संत, महात्मा, बाबा, नागा साधु, किन्नर संत और विभिन्न अखाड़ा परिषद् जिसमें श्री पंचायती निरंजनी आखाड़ा, आह्वान अखाड़ा, आनन्द अखाड़ा, अटल अखाड़ा, महानिर्वाणी अखाड़ा, जूना अखाड़ा, किन्नर अखाड़ा परिषद्, नागा साधु अखाड़ा, अग्नि अखाड़ा, बड़ा उदासीन अखाड़ा, नया उदासीन अखाड़ा और निर्मल अखाड़ा आदि अखाड़ा परिषद् के लोग आते हैं। यह आयोजन उनके लिए भी एक साधना का अवसर होता है।
- **धार्मिक प्रवचन और भजन:** महाकुम्भ के दौरान अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक गतिविधियाँ होती हैं, जिसमें प्रवचन, भजन, कीर्तन, और सत्संग के आयोजन के साथ-साथ विभिन्न पौराणिक महाकाव्यों जैसे महाभारत, रामायण आदि के प्रमुख अंशों का विभिन्न कलाकारों द्वारा मंचन किया जाता है, जिसको “महाकुम्भ का हृदय” कहा जाता है।
- **सांस्कृतिक और सामाजिक महत्व:** महाकुम्भ केवल एक धार्मिक कार्यक्रम नहीं है, बल्कि यह भारत की सांस्कृतिक एकता, धार्मिक मान्यता और विविधता को भी प्रदर्शित करता है। यहां विभिन्न क्षेत्रों से लोग एकत्र होते हैं, जिससे सांस्कृतिक आदान-प्रदान भी होता है और साथ ही साथ विभिन्न आर्थिक गतिविधियाँ भी प्रोत्साहित होती हैं तथा लोगों को विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं जिससे वे आर्थिक रूप से सबल होते हैं।
- **खान-पान एवं दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं का महत्व:** महाकुम्भ मेले में सम्पूर्ण देश एवं विदेशों के लोग अपने-अपने यहाँ के प्रसिद्ध एवं पारम्पिक व्यंजनों का प्रदर्शन करते हैं जैसे—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के प्रदाता तीर्थों के राजा प्रयागराज की गुड़ से बनी जलेबी बहुत स्वादिष्ट होती है जिसे मेले में आये श्रद्धालु बड़े ही स्वाद से खाते हैं तथा मेले में ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को अपनी दैनिक आवश्यकताओं जैसे घर-गृहस्थी से सम्बन्धित वस्तुएँ सस्ते एवं एक ही स्थान पर उचित मूल्यों पर उपलब्ध हो जाती हैं।
- **महाकुम्भ 2025 : प्रयागराज (इलाहाबाद) में 13 जनवरी (पौष पूर्णिमा) से शुरू होकर 26 फरवरी (महाशिवरात्रि) तक आयोजित होगा।**

अर्ध कुम्भ मेला प्रत्येक छः वर्ष के अंतराल पर चार शहरों जहाँ महाकुम्भ आयोजित होता है जिनमें प्रयागराज (इलाहाबाद), हरिद्वार, नासिक एवं उज्जैन में आयोजित होने वाला एक धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन है। यह महाकुम्भ मेले का एक छोटा रूप है, लेकिन हिंदू धर्म में इसका बहुत महत्व है। इस आयोजन में लाखों श्रद्धालु पवित्र नदियों में स्नान करते हैं। ऐसा माना जाता है कि इससे पापों का नाश होता है और मोक्ष की प्राप्ति होती है। अर्ध कुम्भ मेले में शाही स्नान विभिन्न अखाड़ा परिषद् के साधु सन्तों द्वारा की जाने की भी परंपरा है और अन्य तीर्थयात्री एवं श्रद्धालु इन दिनों एवं कुछ अन्य विशेष तिथियों पर स्नान, ध्यान करते हैं। प्रयागराज के अर्ध कुम्भ मेले का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा संगम स्नान है, जो भक्तों को शुद्धि और पुण्य प्रदान करता है। इस आयोजन में विभिन्न सनातनी संप्रदायों और अखाड़ों के लोग भाग लेते हैं, संगम के तट पर ध्यान, पूजा-अर्चना और अन्य धार्मिक अनुष्ठान करते हुए भक्त अपने आराध्य देवों, महात्माओं, संतों एवं ऋषियों से आशीर्वाद प्राप्त करते हैं और विभिन्न धार्मिक गुरु इस अवसर पर प्रवचन भी देते हैं। अर्ध कुम्भ मेले में धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम भी शामिल होते हैं, जैसे भजन-कीर्तन, धार्मिक प्रवचन, सांस्कृतिक प्रदर्शन और अन्य धार्मिक गतिविधियाँ। अर्धकुम्भ मेले के लिए यातायात और सुरक्षा बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि लाखों श्रद्धालु मेला स्थल पर आते हैं। अर्धकुम्भ मेला प्रयागराज में

आयोजित किया जाता है, जो उन चार स्थानों में से एक है जहाँ बृहस्पति और सूर्य एक विशिष्ट स्थिति में होते हैं, जो इसे एक पवित्र और महत्वपूर्ण धार्मिक आयोजन बनाता है। जिसका अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

Source: <https://www.amarujala.com/lifestyle/travel/kumbh-mela-2019-know-it-is-full-or-ardh-kumbh>

कुम्भ मेला

कुम्भ का अर्थ है घड़ा या कलश। कुम्भ प्रत्येक 12 वर्ष के अन्तराल पर प्रमुख तीर्थस्थल प्रयागराज (इलाहाबाद), उज्जैन, नासिक और हरिद्वार में आयोजित होता है। कुम्भ का भी श्रद्धालुओं एवं साधु-संतों के लिए उतना ही महत्व एवं आस्था है जितना महाकुम्भ का होता है। श्रद्धालु विभिन्न विशेष तिथियों पर आकर स्नान एवं ध्यान कर पुण्य प्राप्त करते हैं। कुम्भ मेले का भी आर्थिक गतिविधियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है और विभिन्न आर्थिक क्रियाकलाप प्रोत्साहित होते हैं।



8.5 कुम्भ मेले का आर्थिक परिप्रेक्ष्य

कुम्भ मेला, भारत में हर तीन साल में आयोजित होने वाला एक धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन है, यह एक प्रमुख आर्थिक आयोजन है जो लाखों तीर्थयात्रियों, पर्यटकों और विक्रेताओं को आकर्षित करता है। इस आयोजन के महत्वपूर्ण आर्थिक निहितार्थ हैं, जिसमें पर्यटन और आतिथ्य उद्योग जैसी गतिविधि को बढ़ावा देना, स्थानीय व्यापार व वाणिज्य, रोजगार व नौकरी का सृजन, बुनियादी ढांचे का विकास, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव, सांस्कृतिक एवं धार्मिक महत्व, पर्यावरण संबंधी चिंताएँ और मीडिया प्रभाव शामिल हैं। कुम्भ मेला लाखों लोगों को आकर्षित करता है जिसमें घरेलू व अंतर्राष्ट्रीय दोनों, जो विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधि को बढ़ावा देते हैं। आगंतुकों को समायोजित करने के लिए टेंट सिटी, अस्थायी होटल और गेस्ट हाउस जैसी अस्थायी बुनियादी ढांचे की स्थापना की जाती है, जिससे स्थानीय होटल, रेस्तरां और गेस्टहाउस में उछाल आता है। स्थानीय परिवहन सेवाओं की बढ़ती मांग के कारण ट्रेन, बस और फ्लाइट जैसी परिवहन सेवाएँ अक्सर महीनों पहले बुक हो जाती हैं। यात्रा-संबंधी सेवाएँ, जैसे टूर गाइड, सुरक्षा और चिकित्सा सेवाओं की भी गतिविधि में तेज वृद्धि दिखती है। स्थानीय व्यवसाय और स्थानीय विक्रेता कुम्भ मेले में बड़ी संख्या में आगंतुकों से बहुत लाभान्वित होते हैं तथा भोजन, पेय और धार्मिक प्रसाद बेचते हैं, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्था को महत्वपूर्ण बढ़ावा मिलता है। मेले के दौरान धार्मिक कलाकृतियाँ, कपड़े विशेष रूप से तीर्थयात्रियों के लिए, जिसमें भगवा पगड़ी, साफा एवं कुर्ता प्रमुख हैं

तथा गहने और स्मृति चिन्ह सहित कई तरह के सामान बेचे जाते हैं। आयोजन के दौरान परिवहन, माल के वितरण और बुनियादी ढाँचे को बनाए रखने में शामिल रसद रोजगार पैदा करती है और कई तरह के उद्योगों के लिए आय उत्पन्न करती है। कुम्भ मेला निर्माण श्रमिकों, सुरक्षा और पुलिस, स्वास्थ्य सेवाओं और स्वयंसेवकों सहित हजारों लोगों के लिए अस्थायी रोजगार के अवसर प्रदान करता है। बुनियादी ढाँचे के विकास के लिए सड़कों, हवाई अड्डों, सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों और स्वच्छता में महत्वपूर्ण निवेश की आवश्यकता होती है, जो अक्सर आयोजन समाप्त होने के बाद भी क्षेत्र को लाभान्वित करते रहते हैं। कुम्भ मेले के आर्थिक लाभ मेजबान शहरों और राज्यों से आगे तक फैले हुए हैं, जो राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद व सरकारी राजस्व में योगदान करते हैं। एक वैश्विक आयोजन के रूप में इस आयोजन की प्रतिष्ठा अंतरराष्ट्रीय आगंतुकों को आकर्षित करती है, जो इसे भारत में सांस्कृतिक पर्यटन के लिए एक महत्वपूर्ण आयोजन बनाती है। यह एक वैश्विक धार्मिक व सांस्कृतिक गंतव्य के रूप में भारत की छवि को बढ़ाता है, जिससे पर्यटन और बुनियादी ढाँचे के विकास दोनों में और अधिक निवेश को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार के आयोजनों पर उनसे सम्बन्धित क्षेत्रों में भारी भीड़ के कारण अपशिष्ट प्रबंधन, जल उपयोग एवं स्वच्छता महत्वपूर्ण चुनौतियाँ हैं, और अस्थायी बुनियादी ढाँचा और बड़े पैमाने पर होने वाले आयोजन स्थानीय संसाधनों पर दबाव डाल सकते हैं। कुम्भ मेला एक प्रमुख आर्थिक आयोजन का प्रतिनिधित्व करता है जो स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं के लिए महत्वपूर्ण राजस्व उत्पन्न करता है और कई क्षेत्रों में रोजगार व व्यापार के अवसर प्रदान करता है जबकि यह अर्थव्यवस्था को पर्याप्त लाभ पहुँचाता है, इसके साथ ही यह पर्यावरणीय स्थिरता और संसाधन प्रबंधन से जुड़ी चुनौतियाँ भी उत्पन्न करता है।

पीपा पुल कुम्भ मेले के दौरान एक महत्वपूर्ण संरचना है, जो गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों के संगम एवं अन्य नदियों पर मेले के समय आवश्यकतानुसार निर्मित किया जाता है। यह नदियों में स्नान करने के लिए भक्तों के लिए एक सुरक्षित मार्ग के रूप में कार्य करता है, जिससे उनकी सुरक्षा और विश्वसनीयता सुनिश्चित होती है। यह पुल अस्थायी है, जो पाइप और लोहे के बैरल जैसी हल्की सामग्री से बना है, और इसे प्राकृतिक आपदाओं से बचाने के लिए बनाया गया है। इसका निर्माण नदी के जल स्तर के अनुसार किया जाता है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बाढ़ या नदी के बढ़ते स्तर के दौरान भी भक्तों को कोई खतरा न हो। पुल की अस्थायी और मजबूत संरचना इसे कुम्भ मेला संचालन का एक अभिन्न अंग बनाती है, जो लाखों तीर्थयात्रियों को संगम स्थल तक पहुँचने के लिए एक सुरक्षित मार्ग प्रदान करती है। पीपा पुल मार्ग की व्यवस्था करने में भी लोगो को रोजगार प्राप्त होता है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। जिसका प्रभाव सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

8.6 महाकुम्भ : 2013 का आर्थिक दृष्टिकोण से विश्लेषण

बुनियादी सुविधाएँ महाकुम्भ 2013 विहंगम आयोजन	
क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	1936.56
सेक्टर	14
पार्किंग सील	99
सड़के (किमी.)	156.20
पट्टन पुल	18
पानी पाइप लाइन (किमी)	571
बिजली लाइन	770
एलोपैथिक अस्पताल	14

होम्योपैथी अस्पताल	12
आयुर्वेदिक अस्पताल	12
अस्पताल बेड	370
सुरक्षा	30
पुलिस स्टेशन	12461
पीएसी	46
अर्ध सैनिक बल	40
सी सी टी वी कैमरा	120
फायर स्टेशन	30
खाद्य एवं आपूर्ति जारी राशन कार्ड	200000
आबंटन (मिट्रिक टन)	
गेहूँ	16200
चावल	9600

सारणी-2 बुनियादी सुविधाओं की स्थिति महाकुम्भ 2013 , प्रयागराज

स्रोत श्यामबाला राय, भारतीय कुम्भ पर्व, प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2019

प्रयागराज (जिसे पहले इलाहाबाद के नाम से जाना जाता था) में आयोजित महाकुम्भ मेला 2013 एक बहुत बड़ा धार्मिक समागम था, जिसमें पूरे भारत और उसके बाहर से लाखों तीर्थयात्री आए थे। इसे दुनिया के सबसे बड़े मानव समागमों में से एक माना जाता है, अनुमान है कि इस उत्सव के दौरान 100 मिलियन से ज्यादा लोग इसमें शामिल हुए थे। जिससे ऐसा प्रतीत होता था जैसे कि विश्व का एक नया शहर दो माह के लिए संगम तीर्थ स्थल प्रयागराज तत्कालीन इलाहाबाद में विकसीत हो गया था। हर 12 साल में आयोजित होने वाले इस आयोजन में गंगा, यमुना और पौराणिक अदृश्य सरस्वती नदी के संगम पर अनुष्ठानिक स्नान शामिल है। 2013 का कुम्भ मेला एक सुनियोजित और संगठित आयोजन था, जिसमें बड़ी संख्या में आगंतुकों को समायोजित करने के लिए व्यापक बुनियादी ढाँचा और सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई थीं। यह भव्य आयोजन न केवल धार्मिक महत्व रखता है, बल्कि एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और आध्यात्मिक समागम के रूप में भी कार्य करता है, जिसमें विभिन्न प्रकार की गतिविधियाँ, आध्यात्मिक प्रवचन, धार्मिक समारोह और अन्य आयोजन शामिल होते हैं। यह मेला भारत के समृद्ध सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत का प्रदर्शन है। 2013 में कुम्भ मेला एक बहुत बड़ा आयोजन था जिसमें विभिन्न बुनियादी ढाँचे और व्यवस्थाएँ शामिल थीं।² इस आयोजन में लगभग 1937 हेक्टेयर क्षेत्र शामिल था और इसे सुचारु रूप से संचालन के लिए 14 क्षेत्रों में विभाजित किया गया था। इस आयोजन में श्रद्धालुओं और आगंतुकों के लिए 99 पार्किंग स्थल, आसान आवागमन के लिए 156.20 किलोमीटर सड़कें, नदी यातायात के लिए 18 प्लाण्टून पुल, जलापूर्ति के लिए 571 किलोमीटर पानी की पाइपलाइन और बिजली के लिए 770 किलोमीटर

² विस्तृत जानकारी हेतु सारणी-दो देखें

बिजली की लाइनें शामिल थीं। एलोपैथिक, होम्योपैथी और आयुर्वेदिक अस्पतालों सहित विभिन्न अस्पताल और चिकित्सा सुविधाएं स्थापित की गई थी। श्रद्धालुओं के लिए तत्काल उपचार के लिए 370 अस्पताल के बिस्तर भी उपलब्ध थे। 30 एजेंसियों द्वारा सुरक्षा और पुलिस तैनात की गई थी, जिसमें 12,461 पुलिस कर्मी और 120 सीसीटीवी कैमरे लगाए गए थे। आपात स्थिति के लिए फायर स्टेशन स्थापित किए गए थे। गरीबों और जरूरतमंदों को जारी किए गए 2 लाख राशन कार्डों के माध्यम से भोजन और अन्य आवश्यक सामग्री की आपूर्ति प्रदान की गई। लाखों लोगों के लिए भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए गेहूं और चावल आवंटित किए गए। कुम्भ मेले में नागरिकों और श्रद्धालुओं को व्यवस्थित तरीके से विभिन्न बुनियादी सुविधाएं और सेवाएं प्रदान की गईं, जिससे एक सुचारु और आनंददायक आयोजन सुनिश्चित हुआ। जिसके लिए संबंधित सरकार को भारी आर्थिक भार वहन करना पड़ा था।

वर्ष	आर्थिक प्रभाव (करोड़ में)	आस्था और श्रद्धालुओं की संख्या	पर्यटकों की संख्या	आर्थिक क्षेत्रों पर प्रभाव
2013 प्रयागराज तत्कालीन इलाहाबाद	1,20,000 करोड़ (1.2 लाख करोड़)	12 करोड़	4 लाख (विदेशी)	पर्यटन, होटल, परिवहन, स्थानीय व्यापार, रोजगार
2015 (महाकुम्भ, हरिद्वार)	50,000 करोड़	1 करोड़	5 लाख (विदेशी)	होटल, परिवहन, वस्त्र व्यापार, स्टॉल विक्रेताओं
2020 (प्रयागराज, COVID-19 प्रभाव)	60,000 करोड़ (अनुमानित)	2 करोड़ (संकीर्ण)	1 लाख (विदेशी)	सीमित पर्यटन, स्थानीय व्यापार, परिवहन सेवाएं
2021 (हरिद्वार)	1,00,000 करोड़ (1 लाख करोड़)	10 करोड़	4 लाख (विदेशी)	होटल, परिवहन, रोजगार, दुकानदार, स्वास्थ्य सेवाएं
2025 प्रयागराज में आयोजित होना सुनिश्चित	1,20,000 करोड़ (अनुमानित)	12 करोड़	5 लाख (विदेशी)	पर्यटन, होटल, परिवहन, चिकित्सा सेवाएं, रोजगार

Source: Self सारणी-3 विभिन्न कुम्भ आयोजनों में आधारभूत व्यवस्थाओं की उपलब्धता का विवरण

दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक आयोजन कुम्भ मेले का विभिन्न क्षेत्रों पर महत्वपूर्ण आर्थिक प्रभाव पड़ता है। 2013 में, इसने लगभग 12 करोड़ भक्तों को आकर्षित किया, जिससे कुल 1.2 लाख करोड़ रु. का आर्थिक प्रभाव पड़ा। हरिद्वार में महाकुम्भ ने 1 करोड़ भक्तों को आकर्षित किया और बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटकों को आकर्षित किया, जिसके परिणामस्वरूप कुल 50,000 करोड़ रु. का आर्थिक प्रभाव पड़ा। 2017 में, इसने 10 करोड़ से अधिक भक्तों को आकर्षित किया, जिसके परिणामस्वरूप कुल 1 लाख करोड़ रु. का आर्थिक प्रभाव पड़ा। COVID-19 महामारी के कारण 2020 के कुम्भ में सीमित भीड़ थी और इसका अनुमानित आर्थिक प्रभाव लगभग 60,000 करोड़ रु. था। हालाँकि, इस आयोजन का स्थानीय व्यापार, परिवहन और पर्यटन पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। 2021 में, हरिद्वार में कुम्भ मेले ने लगभग 10 करोड़ भक्तों को आकर्षित किया, जिससे कुल 1 लाख करोड़ रु. का आर्थिक प्रभाव पड़ा। 2021 और 2024 के कुम्भ मेले के आकार में वृद्धि हुई, जिसमें श्रद्धालुओं की संख्या संभावित रूप से 12 करोड़ से अधिक हुई थी।

8.7 व्यवसायिक दृष्टि से कुम्भ मेला

कुम्भ मेला, दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक आयोजनों में से एक है, जो कई छोटे उद्योगों, सेवाओं और

व्यवसायों को भारी बढ़ावा देता है। इस आयोजन के विशाल पैमाने को देखते हुए, जो लाखों भक्तों और पर्यटकों को आकर्षित करता है, विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि का अनुभव होता है। कुम्भ मेला एक महत्वपूर्ण आर्थिक आयोजन है, जिससे खाद्य और पेय पदार्थों से सम्बन्धित व्यवस्थाओं, पर्यटन, आतिथ्य, शिल्प और धार्मिक वस्तुओं सहित विभिन्न छोटे उद्योगों को लाभ मिलता है। स्थानीय विक्रेता प्रसाद, चाय, मिठाई और स्नैक्स जैसे पारंपरिक प्रसाद परोसते हैं, जबकि खानपान सेवाएँ प्रदान करने वाले तीर्थयात्रियों के लिए बड़े पैमाने पर खाना पकाने में कौशलयुक्त होते हैं। अत्यधिक भीड़ के कारण बोतलबंद पानी और पेय पदार्थों की भी बहुत माँग है। स्थानीय आवास, जैसे गेस्टहाउस, होम-स्टे, टेंट पर्यटकों और तीर्थयात्रियों की आमद को पूरा करते हैं, साथ ही कई स्थानीय लोग अपने घरों को अस्थायी आवास में बदल देते हैं। मेला मैदान के भीतर और आसपास परिवहन की आवश्यकता के कारण रिक्शा, ऑटो-रिक्शा, टैक्सी और छोटी बस सेवाओं जैसी परिवहन सेवाएँ महत्वपूर्ण व्यवसाय करती हैं।

धार्मिक सामान, कपड़े और सहायक उपकरण जैसे शिल्प और हस्तशिल्प भी कुम्भ मेले के दौरान खूब फलते-फूलते हैं। छोटे पैमाने के कारीगर और विक्रेता पूजा की थाली, रुद्राक्ष की माला, धूप, पवित्र पुस्तकें और अन्य भक्ति सामग्री जैसे धार्मिक सामान बेचते हैं। पारंपरिक वस्त्र और सहायक उपकरण, जैसे साड़ी, धोती, चादर, शॉल और धार्मिक प्रतीक, तीर्थयात्रियों के बीच लोकप्रिय हैं। मौसमी परिधान और पारंपरिक वस्त्र जैसे व्यवसाय में भी वृद्धि देखी जाती है। स्वास्थ्य और कल्याण व्यवसाय, जैसे कि छोटे हर्बल दवा व्यवसाय और तेल, साबुन और पाउडर बेचने वाले विक्रेता, स्वास्थ्य के प्रति जागरूक तीर्थयात्रियों की सेवा के साथ-साथ आर्थिक रूप से लाभान्वित होते हैं। इवेंट मैनेजमेंट और धार्मिक सेवाओं को अस्थायी संरचनाओं, टेंट और अस्थायी मंचों के साथ-साथ हवन (अग्नि अनुष्ठान), पूजा (प्रार्थना) समारोह और ज्योतिष परामर्श जैसी सेवाओं को लाभ होता है। परिवहन और रसद कंपनियाँ मेला मैदान की स्थापना के लिए आवश्यक खाद्य आपूर्ति और अन्य सामग्रियों जैसे सामानों के परिवहन में मदद करती हैं। कुम्भ मेले से प्रौद्योगिकी और संचार को भी लाभ होता है। मोबाइल विक्रेताओं और इंटरनेट सेवाओं में वृद्धि का अनुभव होता है। फोटोग्राफी और वीडियो सेवाएँ यादगार क्षणों को कैप्चर करने और धार्मिक अनुष्ठानों का दस्तावेजीकरण करने की सेवाएँ प्रदान करती हैं। स्थानीय उद्यमियों द्वारा पोर्टेबल शौचालय, सफाई सेवाएँ और अपशिष्ट संग्रह प्रणाली प्रदान करने के साथ स्वच्छता काफी बढ़ जाता है और वातावरण स्वस्थ रहता है।

कुम्भ मेले के दौरान धार्मिक साहित्य और मुद्रित यादगार धार्मिक वस्तुओं जैसे विभिन्न देवी-देवताओं की मूर्तियाँ, देशभक्त महापुरुषों की मूर्तियाँ आदि मुद्रण और प्रकाशन व्यवसायों की भी मांग बढ़ जाती है। मेले और प्रदर्शनियों जैसे मनोरंजन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों को मेले में आने वाले लोगों की संख्या से लाभ मिलता है, जिसमें स्ट्रीट परफॉर्मर, संगीतकार, नर्तक और स्थानीय कलाकारों को अक्सर अधिक अवसर मिलते हैं। निगरानी सेवा और निगरानी उपकरण भी स्थानीय व्यवसायों द्वारा प्रदान किए जाते हैं। कुम्भ मेले का व्यापक आर्थिक प्रभाव पड़ता है, यह विभिन्न उद्योगों को प्रभावित करता है और छोटे पैमाने के व्यवसायों के लिए एक जीवंत बाजार बनाता है। कुम्भ मेला में कई छोटे उद्योगों को महत्वपूर्ण लाभ मिलता है। यहाँ उन उद्योगों की एक सारणी दी जा रही है, जो कुम्भ मेले में विशेष रूप से महत्व रखते हैं :

उद्योग	महत्व	लाभ
खाद्य और पेय उद्योग	श्रद्धालुओं और पर्यटकों के लिए खाने-पीने की सामग्री की भारी मांग।	सड़क किनारे खाद्य विक्रेता, पैकेज्ड जल, फल-रस, पूजा प्रसाद, हलवाई, चाय वेंडर आदि।
धार्मिक वस्तुएं और हस्तशिल्प	श्रद्धालुओं द्वारा पूजा और धार्मिक सामग्री की खरीदारी।	रुद्राक्ष की माला, तिलक, पूजा सामग्री, गंगाजल की बोतलें, कुम्भ मेला संबंधित वस्त्र आदि।

आवास और पर्यटन सेवाएँ	श्रद्धालुओं और पर्यटकों के लिए अस्थायी आवास की आवश्यकता।	छोटे होटलों, गेस्ट हाउसों, अस्थायी तंबू शिविरों की बुकिंग और सुविधाएँ।
स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाएँ	श्रद्धालुओं की बड़ी संख्या के कारण स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यकता।	मेडिकल दुकानें, पहले सहायता किट, आयुर्वेदिक उत्पाद, स्वास्थ्य शिविर आदि।
सुरक्षा सेवाएँ	कुम्भ मेला में सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सेवाओं की मांग।	छोटे सुरक्षा दल, सीसीटीवी कैमरे, सुरक्षा उपकरणों की आपूर्ति।
सैनिटेशन और सफाई सेवाएँ	जनसंग्रह की वजह से सफाई और स्वच्छता की आवश्यकता।	पोर्टेबल टॉयलेट्स, सफाई सेवाएँ, कचरा प्रबंधन, बायोडिग्रेडेबल उत्पाद।
परिवहन और लॉजिस्टिक्स	लाखों श्रद्धालुओं के परिवहन की आवश्यकता।	रिक्शा, ऑटो, टेम्पो, स्थानीय बस सेवाएँ, माल परिवहन।
फोटोग्राफी और वीडियोग्राफी	श्रद्धालु कुम्भ मेला के अनुभवों को कैप्चर करने के लिए सेवाएँ लेते हैं।	पोर्ट्रेट फोटोग्राफी, धार्मिक उत्सवों की वीडियोग्राफी, कुम्भ मेले की यादें।
हस्तनिर्मित वस्त्र और वस्त्र उद्योग	कुम्भ मेला में श्रद्धालु पारंपरिक वस्त्र पहनते हैं।	वस्त्र विक्रेताओं, पारंपरिक कपड़े, चादरें, शॉल आदि।
प्रसाद और पूजा सेवाएँ	पूजा और धार्मिक अनुष्ठानों की आवश्यकताएँ।	पंडितों द्वारा पूजा, हवन, अर्चना, धार्मिक आयोजन, पूजन सामग्री की बिक्री।
मनोरंजन और सांस्कृतिक गतिविधियाँ	श्रद्धालुओं को सांस्कृतिक अनुभवों की आवश्यकता होती है।	भजन संध्या, कीर्तन, लोक कला, नृत्य, स्थानीय कला प्रदर्शन, सांस्कृतिक मेला।
प्रिंटिंग और प्रकाशन	धार्मिक साहित्य, पुस्तिकाएँ, कुम्भ मेले के प्रचार सामग्री की छपाई।	धार्मिक किताबें, कुम्भ मेला के पोस्टर, तसवीरें, ट्रैकर्स आदि।

Source: Self सारणी-4 कुम्भ आयोजनों का विविध विवरण

कुम्भ मेला एक बड़े धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन के रूप में विभिन्न छोटे उद्योगों को फायदे का अवसर प्रदान करता है। खाद्य और पेय उद्योग, धार्मिक वस्तुएं, स्वास्थ्य और आवास सेवाएँ कुम्भ मेला के दौरान विशेष रूप से महत्वपूर्ण होते हैं। इन उद्योगों की मदद से मेले में श्रद्धालुओं की सेवा की जाती है, और साथ ही ये छोटे व्यवसायिक अवसरों का सृजन भी करते हैं।

8.8 कुम्भ मेला: दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागम के पीछे का अर्थशास्त्र

महाकुम्भ एवं अर्ध कुम्भ मेलों का आयोजन जो प्रत्येक 12 एवं छः साल में आयोजित होने वाला एक बड़ा धार्मिक उत्सव है और पवित्र नदियों के किनारे चार स्थानों पर आयोजित किया जाता है। हिंदुओं का मानना है कि 49 दिनों के इस उत्सव के दौरान, पवित्र नदियों का पानी पवित्र 'अमृत' (मान्यता) में बदल जाता है और 'अमृत रुपी घड़े' में डुबकी लगाने से अनुयायियों को अपने पापों को धोने और मोक्ष प्राप्त करने में मदद मिलने की मान्यता है। प्रयागराज के संगम तट का अर्धकुम्भ मेला 15 जनवरी 2019 को शुरू हुआ और 4 मार्च तक चला, जिसमें दुनिया भर से श्रद्धालुओं ने भाग लिया। 2019 का प्रयागराज का अर्धकुम्भ मेला अब तक का सबसे महंगा कुम्भ मेला है, जिसमें उत्तर प्रदेश की प्रांतीय सरकार ने इस विशाल तीर्थयात्रा के लिए 4200 करोड़ भारतीय रुपये (लगभग

589 मिलियन अमेरिकी डॉलर) आवंटित किए थे। भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) की नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार, अर्ध कुम्भ 2019 मेले से 1.2 लाख करोड़ भारतीय रुपये (लगभग 16.8 बिलियन अमेरिकी डॉलर) से अधिक राजस्व उत्पन्न हुयी थी। उत्सव से जुड़ी आर्थिक गतिविधियों से विभिन्न क्षेत्रों में 600,000 से अधिक श्रमिकों को रोजगार मिला। यह उत्सव ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका, मॉरीशस, सिंगापुर, यूके और श्रीलंका जैसे देशों से पर्यटकों को आकर्षित करता है, जिसके कारण 25,000 लोगों को रोजगार मिला। एयरलाइंस और हवाई अड्डों को लगभग 150,000 टूर ऑपरेटर्स को लगभग 45,000 चिकित्सा और इको-टूरिज्म को 85,000 रोजगार और अनौपचारिक क्षेत्र में लगभग 55,000 नए रोजगार के अवसर प्राप्त हुए। प्रयागराज में 2,500 हेक्टेयर में एक पूरा शहर बसाया गया था, जिसमें अधिकारियों ने 40,000 एलईडी लाइटों से जगमगाते 4000 से अधिक टेंटों का एक छोटा शहर बनाया था। कार्निवल क्षेत्र में 250 किलोमीटर लंबी सड़क और 22 पीपा पुलों का निर्माण किया गया था, जो इसे दुनिया का सबसे बड़ा अस्थायी शहर बनाता है। भारतीय रेलवे ने कुम्भ मेले के लिए 700 करोड़ रुपये 98 मिलियन अमेरिकी डॉलर) की लागत से 41 परियोजनाओं की शुरुआत की थी। जिसमें इलाहाबाद जिले के विभिन्न स्टेशनों से चलने वाली 800 विशेष ट्रेनें और तीर्थयात्रियों के आवागमन के लिए चार फ्लोटिंग टर्मिनल बनाये गये थे। सरकार ने एयरबोट सेवा शुरू करने की भी योजना का प्रारम्भ किया था। इस त्योहार की लोकप्रियता के बावजूद, दुनिया की छठी सबसे प्रदूषित नदी मानी जाने वाली गंगा नदी को 2013 के कुम्भ महोत्सव के बाद प्रदूषण की समस्या का सामना करना पड़ा था। उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि मुख्य स्नान स्थल में बायोकेमिकल ऑक्सीजन डिमांड का स्तर 7.4 मिलीग्राम प्रति लीटर तक बढ़ गया था, जिससे पानी नहाने या पीने के लिए अनुपयुक्त हो गया था। ज्ञातव्य है कि पहली बार 2019 के अर्द्धकुम्भ में ही श्रद्धालुओं को **सरस्वती कूप** जिसमें अदृश्य रूप से माँ सरस्वती विद्यमान हैं, इस पौराणिक एवं पवित्र सरस्वती कूप के दर्शन सुलभ हुये थे।

8.9 कुम्भ मेले में विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं का आर्थिक प्रभाव

कुम्भ मेला, एक महत्वपूर्ण धार्मिक आयोजन है, जिसमें लाखों श्रद्धालु पवित्र अनुष्ठानों में भाग लेने के लिए आते हैं, जिसमें प्रयागराज के संगम (गंगा, यमुना एवं अदृश्य सरस्वती) पवित्र नदियों में स्नान का एक अलग महत्व है हालांकि, इस आयोजन का पैमाना और तीव्रता कई तरह की पर्यावरणीय चिंताओं को जन्म देती है। कुम्भ मेले के दौरान जल प्रदूषण एक बड़ी चिंता का विषय है, क्योंकि बड़ी संख्या में लोग इन नदियों में स्नान करते हैं, और मानवीय गतिविधियाँ जैसे कपड़े धोना, साबुन का उपयोग करना और अपशिष्ट इत्यादि की वजह से पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं और प्रदूषण बढ़ता है तथा इन पर्यावरणीय समस्याओं से निपटने हेतु सरकार का बहुत अधिक धन व्यय होता है। धार्मिक प्रसाद और अनुष्ठान अपशिष्ट भी जल प्रदूषण में योगदान करते हैं। अपशिष्ट प्रबंधन के मुद्दों में प्लास्टिक की बोतलें, रैपर, खाद्य पैकेजिंग और अन्य गैर-बायोडिग्रेडेबल सामग्री सहित ठोस अपशिष्ट उत्पादन शामिल है, जिसके कारण संबंधित सरकार को अत्यधिक आर्थिक व्यय करना पड़ता है। पर्याप्त अपशिष्ट निपटान की बुनियादी ढांचे की कमी से नदी के किनारों और आसपास के क्षेत्रों में अपशिष्ट जमा हो जाता है। वायु प्रदूषण का एक और दुष्प्रभाव का कारण है, अनुष्ठानों और प्रसाद के लिए आग जलाना जो वायु प्रदूषण में योगदान देता है, जिसके प्रभाव को कम करने हेतु सरकार को अत्यधिक व्यय करना पड़ता है। आयोजन का बड़ा पैमाना स्थानीय संसाधनों जैसे पानी, बिजली और भूमि पर दबाव डालता है, जो पर्यावरण पर दबाव डाल सकता है। इसके अतिरिक्त, आयोजन के लिए बनाया गया बुनियादी ढांचा अगर ठीक से प्रबंधित या बंद नहीं किया गया तो दीर्घकालिक पारिस्थितिक क्षति का कारण बन सकता है। जिसका प्रभाव संबंधित सरकारों की अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा। जैव विविधता पर प्रभाव एक और चिंता का विषय है, जिसमें लोगों की भारी भीड़ स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र को बाधित करती है। भारी पैदल यातायात, ध्वनि प्रदूषण और बड़ी संख्या में लोगों की उपस्थिति वन्यजीवों, विशेष रूप से प्रवासी पक्षियों को नुकसान कर सकती है जो कुम्भ मेले के दौरान इस क्षेत्र में अक्सर आते हैं। सजावट या अनुष्ठानिक उद्देश्यों के लिए स्थानीय पौधों का उपयोग स्थानीय जैव विविधता पर दबाव डाल सकता है, और पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुँचा सकता है। पानी का अत्यधिक उपयोग एक और पर्यावरणीय चिंता का विषय है, जिसमें तीर्थयात्रियों और स्वच्छता आवश्यकताओं दोनों के लिए जल संसाधनों की बढ़ती मांग है। जलवायु और

मौसम के प्रभावों में मौसमी मौसम परिवर्तनशीलता शामिल है, जो अपशिष्ट प्रबंधन और स्वच्छता प्रयासों को जटिल बना सकती है, एवं कहीं न कहीं पर्यावरण व आसपास का वातावरण प्रभावित होता है। श्रम प्रयासों और समाधानों में नदी सफाई पहल, प्लास्टिक मुक्त अभियान, अस्थायी अपशिष्ट निपटान, बुनियादी ढाँचा, पर्यावरण जागरूकता कार्यक्रम और हरित ऊर्जा समाधान को शामिल करने से कुम्भ मेला सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण आयोजन है, लेकिन उचित प्रबंधन के बिना इसका पर्यावरणीय प्रभाव महत्वपूर्ण हो सकता है। इन चुनौतियों को कम करने और धार्मिक समागम की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए सरकार, स्थानीय अधिकारियों और तीर्थयात्रियों द्वारा निरंतर प्रयास आवश्यक हैं। जिसके लिए संबंधित सरकारों को आवश्यकतानुसार आर्थिक व्यय करना पड़ता है, जिसका आर्थिक प्रभाव नुकसानदायक है और सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को प्रभावित करता है।

कुम्भ मेले में टेंट और शौचालय जैसी स्थायी संरचनाओं के निर्माण से प्राकृतिक हरित क्षेत्रों में पेड़ों की संख्या कम हो जाती है, जिससे पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। वाहनों और अस्थायी शौचालयों के उपयोग से वायु प्रदूषण बढ़ता है। एक स्थान पर बड़ी संख्या में लोगों के जमा होने से पानी, बिजली और भोजन जैसे संसाधनों पर दबाव पड़ता है, जिससे पर्यावरण संतुलन प्रभावित होता है। यह आयोजन जैव विविधता के लिए भी खतरा पैदा करता है, क्योंकि लोग नहाते समय मछलियों और जलीय जीवन को नुकसान पहुँचा सकते हैं। इन पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों को मजबूत करने, रीसाइक्लींग को बढ़ावा देने, स्वच्छता और जल संरक्षण उपायों को लागू करने और पर्यावरण जागरूकता अभियानों के माध्यम से लोगों को प्रदूषण के प्रभावों के बारे में शिक्षित करने जैसे उपायों की आवश्यकता है, जिसके लिए सरकार को अपने आर्थिक संसाधनों द्वारा व्यवस्था करनी पड़ती है। नदी के किनारों पर पूजा सामग्री और अन्य अपशिष्ट एकत्र करने के लिए विशेष दल नियुक्त किए जाने चाहिए। इन सभी सुविधाओं को संतुलित एवं पर्याप्त मात्रा में व्यवस्था करने के लिए सरकार को भारी मात्रा में आर्थिक व्यय करना होता है।

8.10 महाकुम्भ का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

हर 12 साल में आयोजित होने वाला महाकुम्भ मेला भारत में एक महत्वपूर्ण आर्थिक आयोजन है, जो लाखों तीर्थयात्रियों और पर्यटकों को अपने मेजबान शहर में आकर्षित करता है। 2025 में प्रयागराज में 400 से 450 मिलियन आगंतुकों के आने की उम्मीद है, जिससे पर्याप्त आर्थिक गतिविधि उत्पन्न होगी। यह त्यौहार न केवल धार्मिक महत्व रखता है, बल्कि आर्थिक विकास, रोजगार सृजन और पर्यटन को भी बढ़ावा देता है, जिससे स्थानीय व्यवसायों को लाभ होता है और भारत में समग्र आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है। कुम्भ मेले में ठहरने की जगह की मांग बढ़ जाती है, क्योंकि लाखों लोग तीर्थ स्थलों पर जाते हैं, जिससे होटल, रेस्तरां, परिवहन सेवाएँ और टूर प्रदाता लाभान्वित होते हैं। कुम्भ मेला में टेंट बुकिंग जैसी सेवाओं की भी उच्च मांग देखी जाती है, जो आगंतुकों को त्यौहार स्थल के पास सुविधाजनक और मनोरंजक ठहरने की सुविधा प्रदान करती है। पर्यटन उद्योग में हवाई यात्रा, रेल और सड़क परिवहन बुकिंग में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है, जिससे इन क्षेत्रों में राजस्व में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। महाकुम्भ सुरक्षा, निर्माण, स्वास्थ्य सेवाओं और इवेंट मैनेजमेंट की भूमिकाओं सहित कई अस्थायी और स्थायी नौकरियों का सृजन करता है, जिससे क्षेत्र में बेरोजगारी कम होती है। स्थानीय समुदायों को भी लाभ होता है क्योंकि छोटे व्यवसायों और कारीगरों को अपने उत्पाद बेचने का एक शानदार अवसर मिलता है। महाकुम्भ 2025 जैसे बड़े आयोजनों से मेजबान शहरों में और उसके आस-पास के बुनियादी ढाँचे में सुधार होता है, जिससे स्थानीय निवासियों और भावी पर्यटकों के लिए जीवन की गुणवत्ता में सुधार होता है। पर्यटन और शुल्क में वृद्धि से सरकारी राजस्व में भी वृद्धि होती है, जिससे राज्य एवं केंद्र सरकार की विभिन्न योजनाओं को वित्तपोषित किया जाता है। महाकुम्भ भारत के सांस्कृतिक और धार्मिक पर्यटन को अंतरराष्ट्रीय मंच पर उभारता है, भारत की विरासत को उजागर करता है और विदेशी निवेशकों को आकर्षित करता है।

8.11 महाकुम्भ 2025 प्रयागराज (इलाहाबाद)



चित्र 4—2025 में प्रयागराज (इलाहाबाद) में आयोजित होने वाले महाकुम्भ का लोगो एवं अन्य छायाचित्र

प्रयागराज में 13 दिसम्बर, 2024 को माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र दामोदरदास मोदी जी ने 45 दिनों तक चलने वाले महाकुम्भ को एकता का महायज्ञ बताते हुए त्रिवेणी तट पर कलश स्थापित कर कुम्भाभिषेक करके 5500 करोड़ रुपये की बुनियादी ढांचे में सुधार से सम्बन्धित 167 प्रमुख विकास परियोजनाओं का उद्घाटन किया। इसमें करीब 1700 करोड़ रुपये भारतीय रेलवे (13000 यात्री ट्रेनें जिसमें 3000 ट्रेनें स्पेशल होंगी के अलावा यात्रियों की सुविधा हेतु कई और इंतजाम होंगे) के लिए, 2000 सी0सी0टी0वी0 कैमरे, 11 भारतीय भाषाओं के AI (Artificial Intelligence - कृत्रिम बुद्धिमत्ता) चैट बॉट या क्वॉस एवं 11 कोरिडोर निर्माण आदि के लिए आवंटित किया। संगम नगरी प्रयागराज में गंगा, यमुना एवं अदृश्य सरस्वती के त्रिवेणी के संगम तट पर 13 जनवरी 2025 में विश्व का सबसे बड़ा सांस्कृतिक, धार्मिक व आध्यात्मिक, मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत, **सनातन का महापर्व—महाकुम्भ—2025** मेले का आयोजन होने जा रहा है जिसमें तीर्थयात्रियों का सही-सही अनुमान लगाना अभी सम्भव नहीं है। एक अनुमान के अनुसार मेले में लगभग 450 मिलियन श्रद्धालुओं के आने की उम्मीद है। महाकुम्भ 2025 के दौरान होने वाले पवित्र स्नानों के साथ-साथ **धर्म संसद** का आयोजन भी किया जायेगा। इस **धर्म संसद** में देश विदेश के साधु-संतों, महात्माओं, विभिन्न मठों के पीठाधीश्वर, शंकराचार्य एवं विभिन्न अखाड़ा परिषदों के अध्यक्ष भाग लेंगे। धर्म संसद में पारित प्रस्तावों को केन्द्र एवं राज्य सरकारों को भेजा जायेगा। धर्म संसद में सम्पूर्ण मेले से सम्बन्धित गतिविधियों के साथ-साथ **सनातन बोर्ड** के गठन की मांग प्रमुख रूप से उठायी जायेगी। इस महा समागम के लिए सरकार ने 6500/- करोड़ रुपये का बजट अनुमानित किया है जो कि अभी तक का भारत के इतिहास में इस तरह के आयोजनों में सबसे अधिक है। जिसके प्रमुख व्यय आधारभूत संरचना विकास, भारी भीड़ का प्रबंधन, सेनिटेशन, पर्यटन सुविधाओं, स्वास्थ्य सुविधाओं, सुरक्षा की सेवाओं एवं निर्माण व्यवस्था पर प्रस्तावित है। आवंटित बजट का कुछ हिस्सा विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन हेतु भी आवंटित किया गया है जिसे '**कुम्भ आयोजन का हृदय**' कहा गया है। धर्म संसद में पारित प्रस्ताव, सनातन बोर्ड की मांग एवं मेला सम्बन्धित अन्य नवीन सुविधाओं से **महाकुम्भ 2025, प्रयागराज** का आयोजन और भी अलौकिक एवं विशेष हो जायेगा तथा सम्पूर्ण विश्व एवं देश की अर्थव्यवस्था को सकारात्मक दिशा के साथ मजबूती प्रदान करेगा। सारणी—3 से ज्ञातव्य है कि 2013 महाकुम्भ के आधार पर 12 करोड़ श्रद्धालुओं के आने से 1.2 लाख करोड़ रुपये की आर्थिक गतिविधि का संचालन हुआ था तो महाकुम्भ 2025 प्रयागराज में लगभग 450 मिलियन श्रद्धालुओं के आने से अनुमानित 10 लाख करोड़ रुपये (लेखक का स्वयं का अनुमान) का आर्थिक संचालन हो सकता है। साथ ही साथ पूरे विश्व में भारत की छवि इतने बड़े भीड़ वाले आयोजन को प्रबंधन करने एवं सफलतापूर्वक सम्पन्न कराने के प्रतीक के रूप में विकसित होगी। इन सबका परिणाम होगा कि भारत ने पूरे

विश्व के निवेशक आकर्षित होकर निवेश को प्रोत्साहित करेंगे जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होगी।

बोध प्रश्न—

अर्ध कुम्भ मेला

1. महाकुम्भ की प्रमुख विशेषताएं बताइए।

.....
.....
.....

2. कुम्भ मेले का आर्थिक दृष्टि से महत्व बताइए।

.....
.....
.....

3. कुंभ मेले का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव बताइए।

.....
.....
.....

8.12 सारांश

हम कह सकते हैं कि कुम्भ मेला एक महत्वपूर्ण आर्थिक आयोजन है जो पर्यटन, रोजगार, व्यापार और धार्मिक प्रसाद के माध्यम से भारी राजस्व उत्पन्न करता है, तथा आतिथ्य, परिवहन, खुदरा और स्थानीय बाजारों में आर्थिक गतिविधि को बढ़ावा देता है। यह बुनियादी ढांचे के विकास को भी प्रोत्साहित करता है, जिसका क्षेत्र के विकास और शहरीकरण के लिए दीर्घकालिक लाभ हो सकता है। हालांकि, यह आयोजन लोगों की बड़ी आमद को प्रबंधित करने, स्थायी पर्यावरणीय प्रथाओं को सुनिश्चित करने और स्थानीय संसाधनों पर दबाव को कम करने जैसी चुनौतियों को प्रस्तुत करता है। आर्थिक लाभ अक्सर अस्थायी होते हैं और मेला अवधि के आसपास केंद्रित होते हैं, जिससे आयोजन समाप्त होने के बाद स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं में उतार-चढ़ाव होता है। दीर्घकालिक आर्थिक लाभों को अधिकतम करने के लिए, स्थायी बुनियादी ढांचे, अपशिष्ट प्रबंधन और समावेशी विकास पर ध्यान केंद्रित करना महत्वपूर्ण है। उचित योजना और रणनीतिक निवेश यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि कुम्भ मेला अपने सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व को संरक्षित करते हुए सकारात्मक आर्थिक परिवर्तन के लिए एक मंच प्रदान करता है। केन्द्रीय सरकार, संबंधित राज्य सरकारों एवं भारत के नागरिक होने के दृष्टिकोण से हम सभी का भी यह दायित्व बनता है कि हम ऐसा वातावरण एवं उचित प्रबन्धन करें जिससे ऐसे भव्य आयोजनों का लाभ देश की आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने के साथ-साथ कम से कम क्षति पहुंचायें एवं हमारे पूर्वजों की धरोहर को भी संरक्षित बनाये रखें। महाकुम्भ एवं अर्धकुम्भ भारतीय संस्कृति, आध्यात्म और परम्परा के दिव्य मार्गदर्शक के रूप में मनाया जाने वाला यह उत्सव भारत के साथ-साथ सम्पूर्ण विश्व को कर्मयोग एवं अपने जीवन में सफलता की राह दिखाता है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र दामोदरदास मोदी जी द्वारा प्रयागराज महाकुम्भ 2025 की बहुउद्देशीय विकास परियोजनाओं के लिये 6770 करोड़ रुपये आवंटित किये हैं, जिससे विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार बढ़ेंगे और सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था बूम-बूम करेगी। प्रयागराज जिसकी प्रशंसा वेदों में है महाकुम्भ 2025 के साथ सम्पूर्ण विश्व में “एक भारत-श्रेष्ठ भारत”, की मान्यता को स्थापित करते हुये सम्पूर्ण विश्व में विश्व बन्धुत्व की भावना के साथ सम्पूर्ण विश्व में भारत का परचम लहरायेगा। यहाँ प्रतिदिन एवं मुख्य स्नानों विशेषकर शाही स्नान पर लाखों की संख्या में लोग आयेंगे। पूरी व्यवस्था को व्यवस्थित एवं प्रबंधित बनाये रखने के लिए प्रयागराज में बड़ी संख्या में रोजगार के अवसर तैयार होंगे जिसका असर आस-पास के जनों परा भी पड़ेगा, जिससे भारत के साथ-साथ सम्पूर्ण विश्व अर्थव्यवस्था में सकारात्मक ऊर्जा का संचार होगा।

8.13 अभ्यास के प्रश्न

- कुम्भ मेले से आप क्या समझते हैं ?
- कुम्भ मेले के प्रकार की विवेचना कीजिए।
- महाकुम्भ की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना कीजिए।
- कुम्भ मेले के आर्थिक परिप्रेक्ष्य की व्याख्या कीजिए।
- कुम्भ मेले में विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं के आर्थिक प्रभाव की विवेचना कीजिए।
- महाकुम्भ का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव की विवेचना कीजिए।

8.14 चर्चा के विन्दु

- कुम्भ के आर्थिक परिप्रेक्ष्य पर चर्चा कीजिए

8.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 महाकुम्भ की प्रमुख विशेषतायें निम्न हैं—

- महाकुम्भ हर 12 वर्ष में एक बार आयोजित होता है।
- महाकुम्भ के दौरान विभिन्न अखाड़ा परिषद के साधु, संतों एवं महात्माओं के द्वारा कई **शाही स्नान** आयोजित किये जाते हैं। जिसमें प्रमुख अमावस्या, वसंत पंचमी, मकर संक्रांति, महाशिवरात्र हैं।
- महाकुम्भ में अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक गतिविधियां जिसमें प्रवचन, भजन, कीर्तन और सत्संग आयोजन का लाभ मिलता है।
- महाकुम्भ केवल एक धार्मिक कार्यक्रम नहीं है, बल्कि यह भारत की सांस्कृतिक एकता और विविधता को भी प्रदर्शित करता है।
- महाकुम्भ के माध्यम से हम देश के अंदर विभिन्न राज्यों की संस्कृतियों एवं अन्य देशों की संस्कृतियों के विषय में जानते हैं।

2 महाकुम्भ मेले का आर्थिक महत्व —

- महाकुम्भ मेला लाखों तीर्थयात्रियों, पर्यटकों के आने के साथ-साथ स्थानीय एवं बाहरी विक्रेताओं को आकर्षित करता जिससे आर्थिक रूप से लाभ होता है।
- महाकुम्भ में स्थानीय व्यापार व वाणिज्य एवं बुनियादी ढाँचे के विकास से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को आर्थिक लाभ होता है।
- महाकुम्भ में आतिथ्य उद्योग रोजगार ने नौकरी के माध्यम से व्यक्तिगत रूप से लोगों को लाभ पहुँचाता है एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में आर्थिक मजबूती प्रदान करता है।
- परिवहन सेवाओं के बढ़ती मांग के कारण ट्रेन, बस और फ्लाइट जैसी सेवाओं से जुड़े व्यक्तियों को आर्थिक लाभ होता है।
- महाकुम्भ में सड़कों, हवाई अड्डों, सार्वजनिक परिवहन और स्वच्छता से जुड़ी सेवाओं में आर्थिक लाभ होता है।

3 कुम्भ मेला एक महत्वपूर्ण आर्थिक आयोजन है जो पर्यटन, रोजगार, व्यापार, धार्मिक प्रसाद, आतिथ्य, परिवहन, खुदरा, और स्थानीय बाजारों में आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देते हुए राजस्व उत्पन्न करता

है जिसका क्षेत्र के विकास और बढ़ते शहरीकरण के कारण दीर्घकालिक लाभ होने के साथ-साथ सम्पूर्ण भारतीय अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। परन्तु आर्थिक लाभ अक्सर अस्थायी होते हैं और मेला अवधि के आस-पास केन्द्रित होते हैं जिससे आयोजन समाप्त होने के बाद स्थानीय अर्थव्यवस्था में उतार-चढ़ाव होता है। उचित योजना और राजनीतिक निवेश यह सुनिश्चित करा सकते हैं कि कुंभ मेला अपने सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व को संरक्षित करते हुए सकारात्मक आर्थिक परिवर्तन के लिए एक शक्ति के रूप में सार्थक हो।

8.16 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. नन्दन, कन्हैयालाल 2004, आनन्द भवन— स्वराज भवन।
2. श्यामबाला राय, भारतीय कुम्भ पर्व, प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2019
3. भारतीय लोक (2019) प्रयागराज और कुम्भ।
4. चतुर्वेदी, हेरम्ब 1915 से 1955 इलाहाबाद स्कूल ऑफ हिस्ट्री।
5. क्रान्त मदनलाल वर्मा (2006) स्वाधीनता संग्राम के क्रान्तिकारी साहित्य का इतिहास।
6. Subodh Yadav, Prof. R. K. Bhatia (2020), Assessment of Mass Bathing on River Ganga Water Quality During kumbh Mela 2019 in Prayagraj, Uttar Pradesh, India, International Research Journal of Engineering and Technology (IRJET), Volume: 07 Issue: 07 | July 2020
7. Sanchita Paul (2019), Event Management: A Study on the Ardh Kumbh Mela 2019, International Journal of Business and Management Invention (IJBMI) ISSN (Online): 2319 – 8028, ISSN (Print): 2319 – 801X

इकाई-9 : विविधता में एकता का प्रतीक – कुम्भ

इकाई संरचना

- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 विविधता में एकता का प्रतीक : कुम्भ
 - 9.3.1 धार्मिक विविधता के साथ आध्यात्मिक एकता
 - 9.3.2 सांस्कृतिक विविधता के साथ साझा परम्परा
 - 9.3.3 सामाजिक और आर्थिक विविधता के साथ समान भागीदारी
 - 9.3.4 भाषाई विविधता के साथ सार्वभौमिक आध्यात्मिक भाषा
 - 9.3.5 जातीय और जनजातीय विविधता के साथ साझा आध्यात्मिक अनुभव
 - 9.3.6 पीढ़ीगत विविधता के साथ एक समान आध्यात्मिक लक्ष्य
 - 9.3.7 भौगोलिक विविधता के साथ साझा तीर्थयात्रा
 - 9.3.8 लैंगिक विविधता के साथ समान धार्मिक पहुँच
 - 9.3.9 धार्मिक और सांप्रदायिक विविधता के साथ एकीकृत आस्था
 - 9.3.10 अंतर्राष्ट्रीय भागीदारी व एकता
- 9.4 सारांश
- 9.5 अभ्यास के प्रश्न
- 9.6 चर्चा के बिन्दु
- 9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 9.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

कुम्भ मेला, दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समागमों में से एक है, जो भारत की “विविधता में एकता” के सांस्कृतिक लोकाचार का एक शानदार प्रमाण है। प्राचीन परम्परा और पौराणिक कथाओं में निहित, कुम्भ मेला न केवल एक धार्मिक समागम का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि भारतीय उपमहाद्वीप में पनपने वाली विविध संस्कृतियों, परंपराओं और आध्यात्मिक परम्पराओं का एक जीवंत संगम भी है। अद्वितीय उत्साह के साथ मनाया जाने वाला यह भव्य उत्सव दर्शाता है कि कैसे विविधता सद्भाव एवं सह-अस्तित्व में रह सकती है, जिससे एकता और सामूहिक पहचान की भावना को बढ़ावा मिलता है। अतः कुम्भ विभिन्न धर्मों, प्रथाओं और समुदायों के सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व का भी प्रतीक है, जिसमें सभी क्षेत्रों से लाखों श्रद्धालु, तीर्थयात्री और पर्यटक आते हैं, जो विविधता का प्रतिनिधित्व करते हुए सामूहिक एकता की भावना को बढ़ावा देते हैं।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई की विषयवस्तु का अध्ययन करने के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- विविधता में एकता की स्थापना हेतु कुम्भ के योगदान का मूल्यांकन कर सकेंगे।

- कुम्भ मेले में जातीय और जनजातीय विविधता के साथ साझा आध्यात्मिक अनुभवों को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
- भारत में धार्मिक, सांस्कृतिक एवं भाषाई विविधता के बावजूद एकता की स्थापना के कारकों की पहचान कर सकेंगे।
- कुम्भ के माध्यम से विभिन्न समाजिक, आर्थिक एवं लैंगिक विविधता में एकता को समझकर सामाजिक जीवन में पक्षपात रहित व्यवहार कर सकेंगे।

9.3 विविधता में एकता का प्रतीक : कुम्भ

कुम्भ मेला संस्कृतियों, भाषाओं और परंपराओं का संगम है। भारत के हर कोने से तीर्थयात्री, चाहे वे किसी भी जाति, पंथ या सामाजिक स्थिति के हों, पवित्र नदियों में स्नान करने के लिए पवित्र स्थलों पर एकत्रित होते हैं। माना जाता है कि स्नान का यह अनुष्ठान पापों को धोता है और आध्यात्मिक पुण्य प्रदान करता है, जो लाखों लोगों को उनकी साझा आस्था में एकजुट करता है। रुद्राक्ष की माला पहने साधुओं से लेकर आधुनिक पोशाक पहने शहरी भक्तों तक, दिखावट, विश्वास और प्रथाओं में विविधता गहन लेकिन सामंजस्यपूर्ण होती है। यह त्यौहार हिंदू धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों के लोगों को भी आकर्षित करता है, जिसमें शैव, वैष्णव और शाक्त शामिल हैं, साथ ही, गैर-हिंदू समुदाय भी हैं जो इस भव्यता को देखने आते हैं। विभिन्न अखाड़ों या मठवासियों के श्रद्धालु, भक्तगण एवं कल्पवासी भारतीय आध्यात्मिक परंपरा के भीतर बहुलता को प्रदर्शित करते हैं। ये समूह, अपनी शिक्षाओं और अनुष्ठानों में अलग-अलग होते हुए भी, आपसी सम्मान और साझा उद्देश्य के प्रदर्शन के लिए कुम्भ में एकत्रित होते हैं।

भारत, जो अपनी समृद्ध सांस्कृतिक और धार्मिक विविधता के लिए जाना जाता है, ने विविधता में एकता के सिद्धांत पर लंबे समय से गर्व किया है। कुम्भ मेला इस सिद्धांत की अभिव्यक्ति है। इसके मूल में, यह आयोजन सभी क्षेत्रों के लोगों के एक साथ आने को दर्शाता है— चाहे उनकी जाति, पंथ, क्षेत्र या यहां तक कि मूल देश कुछ भी हो। हाल के वर्षों में, कुम्भ मेला अपने धार्मिक महत्व से आगे बढ़कर सद्भाव और सह-अस्तित्व का वैश्विक प्रतीक बन गया है। यूनेस्को द्वारा एक अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के रूप में मान्यता प्राप्त, यह उत्सव अंतर्राष्ट्रीय आगंतुकों को आकर्षित करता है जो इसकी जीवंतता और आध्यात्मिकता का अनुभव करने आते हैं। यह विविधता के बीच एकता की संभावना के बारे में दुनिया को एक शक्तिशाली संदेश के रूप में कार्य करता है।

कुम्भ मेले का सार व्यक्तिगत मतभेदों को पार करने और सामूहिक भावना को बढ़ावा देने की इसकी क्षमता में निहित है। यह सभा इस विचार को रेखांकित करती है कि सभी मार्ग, अपनी विविधताओं के बावजूद, एक ही परम सत्य की ओर ले जाते हैं। आध्यात्मिक भक्ति का साझा अनुभव, ईश्वरीय आशीर्वाद प्राप्त करने का सामान्य उद्देश्य और अनुष्ठानों में सामूहिक भागीदारी तीर्थयात्रियों के बीच एकता की भावना पैदा करती है। कुम्भ मेला संवाद और विचारों के आदान-प्रदान का अवसर भी प्रदान करता है। दार्शनिक बहस, सांस्कृतिक प्रदर्शन और विद्वानों, संतों और भक्तों के बीच बातचीत सामूहिक अनुभव को समृद्ध करती है, और आपसी सीखने और समझ के लिए एक मंच के रूप में त्यौहार की भूमिका पर जोर देती है।

अतः कुम्भ मेला विविधता में एकता का एक उल्लेखनीय उदाहरण है, जहाँ विभिन्न पृष्ठभूमि, विश्वास, धर्म और क्षेत्रों के लोग एक साथ आते हैं, अपने मतभेदों और साझा अनुभवों को प्रदर्शित करते हैं। यह इस बात का जीवंत प्रमाण है कि कैसे विविधता एक सामंजस्यपूर्ण और एकीकृत वातावरण व सह-अस्तित्व में रह सकती है। कुम्भ मेले में देखी गई विविधता में एकता के प्रमुख रूप इस प्रकार हैं —

9.3.1 धार्मिक विविधता के साथ आध्यात्मिक एकता

विविधता — कुम्भ मेला मुख्य रूप से हिंदू मान्यताओं पर आधारित आयोजन है, लेकिन यह सिख, जैन, बौद्ध और यहाँ तक कि अन्य देशों के गैर-हिंदुओं सहित विभिन्न धार्मिक पृष्ठभूमि के लोगों को आकर्षित करता है। हिंदू धर्म के विभिन्न संप्रदाय, जैसे शैव, वैष्णव और स्थानीय देवताओं के अनुयायी, अपनी-अपनी अलग-अलग परम्पराओं के साथ भाग लेते हैं।

एकता — अपनी अलग-अलग धार्मिक पहचानों के बावजूद, सभी प्रतिभागी आध्यात्मिक शुद्धि के साझा लक्ष्य और नदी की पवित्रता में विश्वास से एकजुट होते हैं। पवित्र नदी में स्नान करने की आम प्रथा सांप्रदायिक मतभेदों

से परे शांति और मोक्ष की सार्वभौमिक आकांक्षा का प्रतीक है। इस आयोजन में विभिन्न मान्यताओं के प्रति सहिष्णुता और सम्मान, शांति, करुणा और आध्यात्मिक एकता का सामूहिक अनुभव बनता है।

9.3.2 सांस्कृतिक विविधता के साथ साझा परम्परा

विविधता — कुम्भ मेला भारत के सभी क्षेत्रों के लोगों को एक साथ लाता है, जिनमें से प्रत्येक की अपनी अनूठी सांस्कृतिक प्रथाएँ, कपड़े, भोजन, संगीत और अनुष्ठान होते हैं। उदाहरण के लिए, भारत के उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम के लोग अपने क्षेत्रीय नृत्य, भाषाएँ और त्यौहार लेकर आते हैं। लोक संगीत, पारंपरिक वाद्ययंत्र और क्षेत्रीय कला रूपों का प्रदर्शन किया जाता है। अतः भारत का विशाल सांस्कृतिक ताना-बाना कुम्भ मेले में परिलक्षित होता है, जहाँ देश के विभिन्न क्षेत्रों के लोग, विभिन्न भाषाई, पाक और कलात्मक परंपराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, एक साथ आते हैं। मेले में खाने-पीने के स्टॉल पर पूरे भारत के क्षेत्रीय व्यंजन परोसे जाते हैं, भक्ति गीतों की अलग-अलग शैलियों के साथ संगीत गूंजता है और लोग सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेते हैं, जो भारत की अविश्वसनीय सांस्कृतिक विविधता को प्रदर्शित करता है।

एकता — सांस्कृतिक मतभेदों के बावजूद, पूरा समूह पवित्र स्नान, प्रार्थना और सामूहिक मंत्रोच्चार जैसे साझा अनुष्ठानों में भाग लेता है। ये साझा धार्मिक परम्पराएँ एक बंधन बनाती हैं जो प्रतिभागियों को एकजुट करती हैं, एक सामूहिक सांस्कृतिक अनुभव को बढ़ावा देती हैं जहाँ क्षेत्रीय विविधता एकता की भावना को बाधित किए बिना माहौल को समृद्ध करती है।

9.3.3 सामाजिक और आर्थिक विविधता के साथ समान भागीदारी

विविधता — कुम्भ मेला सभी सामाजिक और आर्थिक तबके के लोगों को आकर्षित करता है, जिसमें अमीर तीर्थयात्री से लेकर गरीब लोग शामिल होते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के लोग शहरी निवासियों के साथ मिलते-जुलते हैं और यहाँ तक कि अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक भी उत्सव में शामिल होते हैं। विभिन्न जातियों और समुदायों के लोगों का भी विविध प्रतिनिधित्व होता है। अतः कुम्भ मेला एक समतावादी आयोजन है। इसमें शामिल होने वाली भीड़ में बहुत से लोग शामिल होते हैं — सबसे गरीब से लेकर सबसे अमीर व्यक्ति, आम लोगों से लेकर राजघराने तक, साधारण तीर्थयात्रियों से लेकर साधुओं तक।

एकता — इस सामाजिक असमानता के बावजूद, कुम्भ मेला एक समान खेल के मैदान की छवि प्रस्तुत करता है, जहाँ सभी ईश्वर के सामने समान हैं। यह सामाजिक समानता एक साझा आध्यात्मिक लक्ष्य के बैनर तले विभिन्न सामाजिक वर्गों और पृष्ठभूमि के लोगों को एकजुट करने की भारत की क्षमता का एक शानदार उदाहरण है। धन, स्थिति या जाति में अंतर के बावजूद, कुम्भ मेला समानता को बढ़ावा देता है। नदी में पवित्र स्नान भेदभाव नहीं करता है, सभी प्रतिभागियों को आध्यात्मिक शुद्धि के लिए समान अवसर प्रदान करता है। पवित्र जल के समक्ष यह समानता भाईचारे और आपसी सम्मान की भावना को बढ़ावा देती है, जो सभी को एक साझा आध्यात्मिक खोज में एकजुट करती है।

9.3.4 भाषाई विविधता के साथ सार्वभौमिक आध्यात्मिक भाषा

विविधता— कुम्भ मेले में हिंदी और बंगाली से लेकर तमिल, मराठी और कई अन्य क्षेत्रीय भाषाओं तक कई तरह की भाषाएँ और बोलियाँ देखने को मिलती हैं। पूरे भारत से तीर्थयात्री, साथ ही अंतरराष्ट्रीय आगंतुक, अलग-अलग भाषाएँ बोलते हैं।

एकता— हालाँकि बोली जाने वाली भाषाएँ विविध हैं, लेकिन भक्ति, प्रार्थना और धार्मिक प्रथाओं की आम आध्यात्मिक भाषा भाषाई बाधाओं को पार करती है। भक्ति गीत (भजन) और मंत्र कई भाषाओं में साझा किए जाते हैं, जिसमें आध्यात्मिक संबंध पर मुख्य ध्यान केंद्रित किया जाता है, इस प्रकार प्रतिभागियों को भाषाई सीमाओं से परे एकजुट किया जाता है।

9.3.5 जातीय और जनजातीय विविधता के साथ साझा आध्यात्मिक अनुभव

विविधता— कुम्भ मेले में भारत के विभिन्न भागों से जातीय और जनजातीय समुदाय आते हैं, जिनमें स्वदेशी समूह भी शामिल हैं जो अपनी विशिष्ट संस्कृति, वेशभूषा और परंपराएँ लेकर आते हैं। इन जनजातीय समूहों में अक्सर अनूठी आध्यात्मिक प्रथाएँ और अनुष्ठान होते हैं।

एकता— जहाँ ये विविध समूह मेले में अपनी विशिष्टताएँ लेकर आते हैं, वहीं वे बड़ी आध्यात्मिक यात्रा में अपनी साझा भागीदारी में एकजुट होते हैं। पवित्र स्नान और शुद्धिकरण प्रक्रिया पर ध्यान केंद्रित करने से वे अपनी जातीय या जनजातीय पहचान की परवाह किए बिना आस्था और भक्ति के साझा स्थान पर समान रूप से एक साथ आते हैं।

9.3.6 पीढ़ीगत विविधता के साथ एक समान आध्यात्मिक लक्ष्य

विविधता— सभी उम्र के लोग – बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक – कुम्भ मेले में आते हैं, प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने दृष्टिकोण, ऊर्जा और जुड़ाव के साथ इस आयोजन में आता है। छोटे बच्चे अपने परिवार के साथ आ सकते हैं, जबकि बुजुर्ग लोग लंबे समय से रखे गए आध्यात्मिक लक्ष्यों को पूरा करने के लिए तीर्थयात्रा करते हैं।

एकता— नदी में स्नान करने और प्रार्थना और आध्यात्मिक अभ्यास में शामिल होने की साझा रस्म सभी उम्र के लोगों के लिए जुड़ने का एक साझा आधार बनाती है। पीढ़ियों की विविधता आध्यात्मिक चिंतन के सामूहिक अनुभव में बुनी गई है, जहां ध्यान एक सामान्य आध्यात्मिक उद्देश्य पर केंद्रित है जो उम्र से परे है।

9.3.7 भौगोलिक विविधता के साथ साझा तीर्थयात्रा

विविधता— तीर्थयात्री भारत के सभी कोनों से आते हैं, जो देश की विशाल भौगोलिक विविधता का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक क्षेत्र अपने स्थानीय रीति-रिवाजों, पहनावे और भक्ति के अभ्यास के तरीकों का योगदान देता है। अंतर्राष्ट्रीय आगंतुक भी विभिन्न देशों और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करते हुए विविधता में योगदान देते हैं।

एकता— विशाल भौगोलिक विविधता के बावजूद, कुम्भ मेला एक एकीकृत तीर्थयात्रा के रूप में कार्य करता है, जहाँ सभी नदियों के पवित्र संगम की ओर आकर्षित होते हैं। एक ही पवित्र जल में पवित्र डुबकी में भाग लेने का कार्य विभिन्न क्षेत्रों और पृष्ठभूमि के लोगों को एक सामूहिक धार्मिक अनुभव में बांधता है, जो मेले की साझा भूगोल के माध्यम से एकता का प्रतीक है।

9.3.8 लैंगिक विविधता के साथ समान धार्मिक पहुँच

विविधता— कुम्भ मेले में, विभिन्न पृष्ठभूमि, व्यवसायों और उम्र के पुरुष और महिलाएँ भाग लेते हैं। जबकि पुरुष अक्सर कुछ धार्मिक गतिविधियों में अग्रणी भूमिका निभाते हैं, महिलाएँ अनुष्ठानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं, प्रार्थनाओं का नेतृत्व कर रही हैं और यहाँ तक कि धार्मिक समूहों के भीतर महत्वपूर्ण स्थान भी रखती हैं।

एकता— कुम्भ मेले में पवित्र स्नान प्रक्रिया और प्रार्थनाएँ लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं करती हैं। पवित्र नदियों द्वारा प्रदान की जाने वाली आध्यात्मिक शुद्धि सभी के लिए उपलब्ध है, लिंग की परवाह किए बिना, प्रतिभागियों के बीच समानता और एकता की भावना को बढ़ावा देती है। महिलाएँ और पुरुष समान रूप से आध्यात्मिक नवीनीकरण और भक्ति का अनुभव साझा करते हैं।

9.3.9 धार्मिक और सांप्रदायिक विविधता के साथ एकीकृत आस्था

विविधता— कुम्भ मेले में विभिन्न अखाड़ों (तपस्वी समूहों) के तपस्वी साधुओं से लेकर नए आध्यात्मिक आंदोलनों के धार्मिक नेताओं तक कई धार्मिक संप्रदाय और आध्यात्मिक नेता शामिल होते हैं। प्रत्येक समूह मेले में अपनी मान्यताओं, रीति-रिवाजों, प्रथाओं एवं संस्कृति आदि को भी लाता है।

एकता— जबकि संप्रदाय और आध्यात्मिक नेता हिंदू धर्म का अभ्यास और व्याख्या अलग-अलग तरीके से कर सकते हैं, नदी की शक्ति में आम विश्वास, आध्यात्मिक सफाई का महत्व और ईश्वर की साझा पूजा उन्हें एकजुट करती है। पवित्र अनुष्ठानों में सामूहिक भागीदारी एकता की भावना को बढ़ावा देती है, जहाँ सांप्रदायिक प्रथाओं में मतभेद साझा आध्यात्मिक अनुभव में विलीन हो जाते हैं।

9.3.10 अंतर्राष्ट्रीय भागीदारी व एकता

विविधता— यद्यपि कुम्भ मेला एक भारतीय आयोजन है, लेकिन यह दुनिया भर के लोगों को आकर्षित करता है। नेपाल, श्रीलंका, बांग्लादेश और यहां तक कि संयुक्त राज्य अमेरिका, यूके और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों से तीर्थयात्री मेले के दिव्य वातावरण का अनुभव करने, आध्यात्मिक साधना करने, पर्यटक और भक्त के रूप में आते हैं।

प्रत्येक अंतर्राष्ट्रीय प्रतिभागी अपनी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पृष्ठभूमि लेकर आता है। अतः भारत की सीमाओं से परे, कुम्भ मेला अंतर्राष्ट्रीय आगंतुकों को भी आकर्षित करता है जो इस आयोजन की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक समृद्धि से जुड़ना चाहते हैं।

एकता— विभिन्न देशों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आने के बावजूद, सभी उपस्थित लोग अपनी आध्यात्मिक खोज और कुम्भ मेले की पवित्रता में सार्वभौमिक विश्वास में एकजुट होते हैं। राष्ट्रीयता या सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना मानवता की एकता, पवित्र अनुष्ठानों और पवित्र स्नान में साझा भागीदारी वैश्विक एकता का प्रतीक है। यह वैश्विक भागीदारी इस संदेश को पुष्ट करती है कि आध्यात्मिकता और सत्य की खोज राष्ट्रीय और सांस्कृतिक सीमाओं से परे है, तथा विविधता में एकता के सार्वभौमिक संदेश को बढ़ावा देती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गये प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अन्त में दिए गये बोध प्रश्नों के सम्भावित उत्तर से मिलान कीजिए।

5. विविधता में एकता को बढ़ावा देने में कुम्भ मेले का क्या महत्व है?

.....

6. सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने में कुम्भ मेला क्या भूमिका निभाता है?

.....

7. कुम्भ मेले में विभिन्न संस्कृतियों की उपस्थिति भारत की विविध विरासत को कैसे उजागर करती है?

.....

8. क्या कुम्भ मेले को भारत की धर्मनिरपेक्षता के प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है?

.....

9.4 सारांश

कुम्भ मेला विविधता में एकता की अवधारणा को खूबसूरती से दर्शाता है, जहाँ विभिन्न क्षेत्रों, धर्मों, संस्कृतियों और क्षेत्रों के लोग एक सामान्य आध्यात्मिक उद्देश्य के लिए एक साथ आते हैं। यह आयोजन साझा धार्मिक प्रथाओं, सामान्य अनुष्ठानों और आध्यात्मिक शुद्धि की सामूहिक खोज के माध्यम से एकता को बढ़ावा देता है, जबकि भारत की विविधता की समृद्धि का जश्न मनाता है। इस प्रकार कुम्भ मेला इस बात का एक शक्तिशाली प्रतीक बन जाता है कि कैसे एक समान, उच्च लक्ष्य की खोज में विविधता सामंजस्यपूर्ण रूप से एकता व सह-अस्तित्व के रूप में हो सकती है।

अतः कुम्भ मेला विविधता में एकता का एक शाश्वत प्रतीक है, जहाँ हर तरह की पृष्ठभूमि— सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पृष्ठभूमि के लोग एक सामान्य आध्यात्मिक उद्देश्य के लिए एकत्रित होते हैं। यह भारतीय सभ्यता के सार को दर्शाता है, जहाँ विविध परंपराएँ, भाषाएँ और रीति-रिवाज सामंजस्यपूर्ण रूप से सह-अस्तित्व में हैं। अपने धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व से परे, कुम्भ मेला सामूहिक मानवीय अनुभव की शक्ति को रेखांकित करता है, यह दर्शाता है कि हमारे मतभेदों के बावजूद, सत्य, शांति और ज्ञान की साझा खोज हमें एक गहरे और सार्थक तरीके से एक साथ बांधती है। यह भारत के “वसुधैव कुटुम्बकम्” (दुनिया एक परिवार है) के गहरे दर्शन को चरितार्थ करता है।

9.5 अभ्यास के प्रश्न

- कुम्भ मेले में अपने व्यक्तिगत अनुभव या अवलोकन के आधार पर भारत में विविधता में एकता को चरम पर

चहुंचाने हेतु उपायों को सुझाइये।

- कुम्भ मेले के दौरान देखी जाने वाली विभिन्न प्रकार की विविधताओं की सूची बनाइये।

9.6 चर्चा के बिन्दु

कुम्भ मेले के माध्यम से भारत में धार्मिक एकता की स्थापना पर चर्चा कीजिए।

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक समारोहों में से एक कुम्भ मेला विविध संस्कृतियों, धर्मों और परंपराओं की एकता को दर्शाता है। भारत और दुनिया के विभिन्न हिस्सों से, विभिन्न धार्मिक पृष्ठभूमि, जातियों और समुदायों के लोग अपनी साझा आस्था का जश्न मनाने के लिए एक साथ आते हैं। कुम्भ विभिन्न समूहों की एक सामान्य उद्देश्य— आध्यात्मिकता और आत्म-शुद्धि के लिए एकजुट होने की क्षमता का प्रतीक है, चाहे उनके मतभेद कुछ भी हों।
2. कुम्भ मेला विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को शांतिपूर्ण माहौल में एक साथ आने के लिए प्रोत्साहित करके सामाजिक सद्भाव के लिए एक मंच के रूप में कार्य करता है। यह सामाजिक विभाजन को पार करता है, क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों, भाषाओं और संस्कृतियों के लोग अपनी भक्ति और आध्यात्मिकता में एकजुट होकर सौहार्दपूर्वक सह-अस्तित्व में रहते हैं। यह आयोजन विभिन्न समुदायों के बीच आपसी सम्मान और समझ को बढ़ावा देता है।
3. कुम्भ मेला पूरे भारत से लाखों लोगों के साथ-साथ दुनिया भर से पर्यटकों और तीर्थयात्रियों को आकर्षित करता है। प्रत्येक समूह अपनी अनूठी परंपराओं, भाषाओं और रीति-रिवाजों को लेकर आता है, जो एक समृद्ध सांस्कृतिक आदान-प्रदान में योगदान देता है। यह विविधता मेले में बोली जाने वाली रस्मों, भोजन, कपड़ों और भाषाओं की विविधता में स्पष्ट है, जो भारत के विशाल और विविध सांस्कृतिक परिदृश्य पर जोर देती है।
4. हाँ, कुम्भ मेले को अक्सर भारत की धर्मनिरपेक्षता के प्रतीक के रूप में देखा जाता है क्योंकि यह विभिन्न धर्मों और समुदायों के लोगों को एक साथ लाता है, जो भारतीय समाज की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति को उजागर करता है। यह आयोजन किसी विशेष धर्म के खिलाफ भेदभाव नहीं करता है बल्कि धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों के अनुरूप धार्मिक स्वतंत्रता, आध्यात्मिक एकता और सामूहिक सांस्कृतिक विरासत का जश्न मनाता है।

9.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- कुमार, सुरेश (2018). कुम्भ मेला: एक सांस्कृतिक अध्ययन, सरस्वती पब्लिकेशन्स, वाराणसी।
- गिलमार्टिन, डेविड (2017). द कुम्भ मेला : ए हिस्ट्री आफ द वर्ल्ड लार्जस्ट रिलीजिअस गेदरिंग, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, न्यू यार्क।
- तिवारी, रामनाथ (2020). कुम्भ मेला: इतिहास और वर्तमान, शंकर पब्लिकेशन, मुम्बई।
- थरूर, शशि (2016). कुम्भ मेला : द कन्वर्जेन्स आफ फेथ, कल्चर ऐण्ड नेचर, पेन्गुइन इंडिया, नई दिल्ली।
- पाठक, रामेश्वर (2017). कुम्भ मेला: भारतीय संस्कृति का अद्भुत प्रतीक, पुस्तक मंडल, दिल्ली।
- यादव, हरि सिंह (2015). कुम्भ मेला और भारतीय धार्मिक परम्परा, हिंदी साहित्य प्रतिष्ठान, इलाहाबाद।
- शर्मा, श्याम सुन्दर (2016). कुम्भ मेला: दर्शन और विज्ञान, वाणी प्रकाशन, दिल्ली।

इकाई – 10 : वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ

इकाई की रूपरेखा

- 10.0 उद्देश्य
 - 10.1 प्रस्तावना
 - 10.2 कुम्भ पर्व का उद्भव विकास
 - 10.3 कुम्भ एवं भारतीय संस्कृति
 - 10.4 विविधता में एकता
 - 10.5 औद्योगिक दृष्टिकोण से कुम्भ का महत्व
 - 10.6 वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ का महत्व
 - 10.7 सारांश
 - 10.8 अभ्यास के प्रश्न
 - 10.9 चर्चा के बिन्दु
 - 10.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
 - 10.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें
-

10 : उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- कुम्भ पर्व के उद्भव एवं विकास के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
 - कुम्भ एवं भारतीय संस्कृति के महत्व को समझ सकेंगे।
 - वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ की महत्वता को समझ सकेंगे।
-

10.1 : प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय संस्कृति में कुम्भ पर्व केवल भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी बड़े पर्व के रूप में जाना जाता है। कुम्भ पर्व भारत की विविधता में एकता के सूत्र का उदाहरण प्रस्तुत करता है। जो देश को उत्तर से दक्षिण तक पूरब से पश्चिम तक एकता के सूत्र में बांधता है। कुम्भ प्रत्येक 12 वर्ष एवं अर्द्ध कुम्भ 6 वर्ष में होता है। कुम्भ का प्रारम्भ कैसे हुआ इसका वर्णन 'श्रीमद्भगवत्पुराण' और 'स्कन्द पुराण' में देखने को मिलता है। कुम्भ के महत्व का वर्णन एवं ऐतिहासिक प्रमाण हर्षवर्द्धन के शासन काल में भी देखने को मिलता है।

कुम्भ पर्व का संयुक्त राष्ट्र के शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन यूनेस्को ने अपनी प्रतिष्ठित मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहरों में सम्मिलित किया है। जो भारत के लिए गर्व की बात है।

प्राचीनकाल से भारत की सभ्यता एवं संस्कृति की समूचे विश्व में एक अलग पहचान रही है। सम्पूर्ण विश्व

में भारत में ऐसे कितने ही तीर्थ स्थल हैं जहाँ श्रद्धालु मोक्ष की प्राप्ति के लिए आते हैं। जिसमें मुख्यतः हरिद्वार, प्रयाग, नासिक, उज्जैन का विशेष महत्व है। कुंभ में प्रयाग का अत्यन्त महत्व है क्योंकि प्रयाग को तीर्थराज भी कहते हैं क्योंकि यहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती तीनों का संगम है। प्रयाग का महत्व भारत में ही नहीं बल्कि विश्व के अनेक देशों में है।

10.2 : कुम्भ पर्व का अर्थ, उद्भव-विकास

कुम्भ का पर्व भारतीय समाज में एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्नान पर्व है। कुम्भ में नदी का जल अमरत्व की प्राप्ति कराता है। पुराणों में कहा गया है कि तीर्थस्थान में नदियों में स्नान, दान, धार्मिक कार्यों को पुण्य माना जाता है। कुम्भ राशि के नाम पर ही इसका नामकरण हुआ है।

कुम्भ पर्व में कुम्भ का अर्थ 'घट' या 'कलश' है। कलश स्थापना का अर्थजगत् के कल्याण की कामना कर बुराईयों को दूर करना एवं उनसे दूर रहना है। कुम्भ एकता, समरसता एवं लोक कल्याण का प्रतीक है। कुम्भ का आयोजन चार पवित्र स्थानों जैसे-हरिद्वार, प्रयाग, नासिक और उज्जैन पर होता है। कुम्भ का आयोजन तब होता है जब 'कुम्भ योग' होता है। जिसका वर्णन रामचरितमानस में देखने को मिलता है।

ग्रंथों के अनुसार कुम्भ का आयोजन पहला बृहस्पति के कुम्भ राशि में तथा सूर्य के मेष राशि में प्रवेश करने पर हरिद्वार में गंगा के किनारे कुंभ का आयोजन होता है। दूसरा जब बृहस्पति मेष राशि में प्रवेश करते हैं तथा सूर्य और चन्द्र के मकर राशि में होने पर अमावस्या के दिन प्रयागराज में संगम तट पर कुम्भ का आयोजन होता है। तीसरा कुम्भ बृहस्पति एवं सूर्य के सिंह राशि में आने पर नासिक में गोदावरी के किनारे पर कुम्भ का आयोजन होता है। चौथा बृहस्पति के सिंह राशि में तथा सूर्य के मेष राशि में प्रवेश करने पर उज्जैन में शिप्रा तट पर कुम्भ का आयोजन होता है।

कुम्भ के दौरान त्रिवेणी संगम में स्नान करने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है। आत्मा की शुद्धि होती है। माना जाता है कि पहले कुम्भ का आयोजन राजा हर्षवर्द्धन के काल (664 ई0पू0) में आरंभ हुआ था। जिसमें प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भारत यात्रा का उल्लेख करते हुए कुम्भ मेले के आयोजन का उल्लेख किया है। राजा हर्षवर्द्धन हर पाँच वर्ष में नदियों के संगम पर एक बड़ा आयोजन करते थे जिसमें वह अपना कोष, धन, धार्मिक लोगों और गरीबों में दान कर देते थे।

कुम्भ पर्व में अनेक आकर्षण ऐसे होते हैं जिनको देखने दूर-दूर से लोगों का आगमन होता है। कुम्भ के दौरान तरह-तरह के अखाड़े, महामंडलेश्वर, नागासाधू, तिलकधारी साधु सन्यासी, रंग-बिरंगी धर्म ध्वजाएं, कल्पवास, स्नान, दान, पिण्डदान, स्वर्णदान, प्रवचन, धार्मिक अनुष्ठान, कथापुराण, पौराणिक कथाओं पर लीला, मुनि, मनीषियों का कथावाचन, बड़े-बड़े व्यापारिक संस्थानों द्वारा लगाये गये मेले आदि इसके आकर्षण का मुख्य केन्द्र रहते हैं।

10.3 कुम्भ एवं भारतीय संस्कृति

कुम्भ हमारी भारतीय संस्कृति और परम्परा में बहुत महत्वपूर्ण पर्व है। यह धार्मिक आयोजन के साथ ही खगोलीय घटनाओं से भी जुड़ा है। कुम्भ में पौराणिक मान्यतानुसार नदी का जल अमृत समान हो जाता है। कुम्भ में आध्यात्मिकता के साथ-साथ सामाजिक सांस्कृतिक रीति-रिवाजों का समावेश होता है। कुम्भ में चित्र प्रदर्शनी, नृत्य, गायन, पूजा-पाठ, हवन आदि ऐसे कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं जो कि भारतीय संस्कृति को दर्शाते हैं। कुम्भ का वर्णन वेदों में मिलता है। यह भारतीय संस्कृति का महापर्व है। कुंभ का न केवल धार्मिक महत्व है बल्कि इसका वैज्ञानिक आधार भी है। कुम्भ सबके कल्याण का प्रतीक है।

भारतीय संस्कृति में कुम्भ, हिन्दू एवं साधु-संतों का महत्वपूर्ण पर्व है। जिसमें करोड़ों श्रद्धालुजन कुम्भ के दौरान चारो तीर्थ स्थानों में जाकर स्नान करते हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से भी कुम्भ का अत्यन्त महत्व है।

कुम्भ के आयोजन में अनेक पौराणिक कथाएं प्रचलित हैं। जिससे हमें कुम्भ के उद्भव की जानकारी मिलती है। जिसमें सर्वाधिक मान्यता है कि समुद्र मंथन में देवताओं और दानवों के बीच समुद्र में अमृत कलश को लेकर संघर्ष हुआ जिसमें कलश से अमृत बूंदें जिन चार स्थानों में गिरी वहाँ कुम्भ का आयोजन किया जाता है। मूल रूप से इसका उद्देश्य सभी प्रान्तों के बीच पारस्परिक सौहार्द को कायम रखना है।

इस प्रकार कुम्भ को वैश्विक संस्कृति का महापर्व भी कहा जाये तो गलत नहीं होगा। कुम्भ पर्व में हमें एक ही स्थान पर समूची भारतीय संस्कृति का दर्शन हो जाता है।

10.4 कुम्भ विविधता में एकता

कुम्भ का आयोजन यद्यपि धार्मिक दृष्टि से किया जाता है परन्तु इसमें हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय एकता विकसित होती है। वर्तमान में यह समाज में एकता की भावना विकसित करता है। देश में विभिन्न भाषायी, सांस्कृतिक, धार्मिक, जातीय संदर्भ में विविधता में एकता के दर्शन होते हैं।

कुम्भ में विविध आध्यात्मिक, सांस्कृतिक विषयों का आयोजन होने के पश्चात् भी इस भौतिकतावादी युग में समाज में एकता की भावना विद्यमान रहती है। कुम्भ में अलग-अलग क्षेत्रों से अलग-अलग जाति सम्प्रदाय से लोगों का आना विविधता में एकता के दर्शन कराता है। कुम्भ पर्व के दौरान केवल देश से ही नहीं बल्कि विदेशों से भी पर्यटक भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की झलक पाने के लिए आते हैं। यहाँ सामाजिक मुद्दों पर मानवीय मूल्यों, समस्याओं, भारतीय संस्कृति पर चर्चा-परिचर्चा होती है। इसलिए कुम्भ का आयोजन केवल आस्था का ही नहीं बल्कि समाज से जुड़े सामाजिक सरोकारों का महासम्मेलन है।

कुम्भ की परम्परा में देश-विदेश से आये अतिथियों का स्वागत सत्कार हमारी संस्कृति को प्रदर्शित करता है। कुम्भ में आये मनीषी लोक उपकार हेतु समाज में आने वाली समस्याओं के दुष्परिणामों से लोगों को आगाह कर चेतना जगाते हैं। समाज में वन संरक्षण, जल प्रदूषण, जल संरक्षण जैसी समस्याओं से अवगत करा लोगों को युद्ध की संभावनाओं को कम करने का प्रयास करते हैं।

10.5 औद्योगिक दृष्टिकोण से कुम्भ का महत्व

समूचे विश्व में पर्यटन एक महत्वपूर्ण उद्योग बन गया है जोकि आर्थिक दृष्टिकोण से अत्यन्त लाभकारी है। जिसके लिए सरकारें भी काफी प्रयासरत रहती हैं। भारत में विभिन्न धर्मों, मतों के अनुयायी अपने प्रचार के लिए यहाँ आते हैं। देश-विदेश की कलाओं का प्रदर्शन कर पर्यटन को बढ़ावा दिया जाता है। जिसके लिए राज्य सरकारें, जिलाप्रशासन प्रशासनिक व्यवस्था करने का कार्य करते हैं। यात्रियों के लिए ठहरने की व्यवस्था, संचार साधनों की उपलब्धता, पैकेज टूर द्वारा यात्रियों को आकर्षित करने की सुविधा का प्रयास किया जाता है।

10.6 वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ का महत्व

वैश्विक दृष्टिकोण में कुम्भ का महत्व इसलिए और बढ़ जाता है क्योंकि इसमें हमें भारतीय संस्कृति की झलक एक ही स्थान पर देखने का मिलती है।

- कुम्भ का अंतराष्ट्रीय स्तर पर बहुत महत्व है, इसमें साधू महात्माओं का महामिलन हमारे हृदय में आध्यात्मिक चेतना, उल्लास जगाता है जो कि भारत की अमूल्य निधि है।
- कुम्भ आयोजन के दौरान विदेशों से आये पर्यटकों को भारत के ऐतिहासिक स्थलों को देखने का मौका मिलता है।
- कुम्भ में अनेक सामाजिक सांस्कृतिक गतिविधियाँ शामिल होती हैं, जिसमें हमें सामंजस्य देखने को मिलता है।
- कुम्भ के दौरान विविधता में एकता के दर्शन होते हैं जोकि लोगों के लिए आश्चर्य की बात है कि संस्कृतियों एवं धर्मों में विभिन्नता होते हुए भी हम भारतवासी एक हैं।
- राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने में कुम्भ का योगदान दिखाई देता है क्योंकि विशाल जनसमुदाय राष्ट्र का लघु रूप होता है। जिस शहर में कुम्भ का आयोजन होता है उसका स्वरूप वैश्विक गाँव में बदल जाता है।

- कुम्भ के दौरान विदेशी पर्यटकों के आगमन से पर्यटनको बढ़ावा मिलता है साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय संस्कृति की पहचान होती है।
- कुम्भ मेले के दौरान देश विदेश से लाखों श्रद्धालुओं का आगमन होता है सभी बिना किसी भेदभाव के हिस्सा लेते हैं और एक दूसरे के प्रति अपने कर्तव्यों और मूल्यों का भी बोध कराते हैं।
- कुम्भ का आयोजन केवल धार्मिक दृष्टिकोण से ही नहीं व्यापारिक, आर्थिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। इस दौरान विदेशी पर्यटकों को भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की झलक एक ही स्थान पर देखने को मिलती है।
- कुम्भ के आयोजन में राज्य सरकारें एवं प्रशासन द्वारा बाहर से आने वाले आगन्तुकों के स्वागत हेतु हमारे तीर्थ स्थलों की साफ-सफाई, सौन्दर्यीकरण एवं नवनिर्माण सड़कों की मरम्मत आदि कार्यों को बढ़ावा मिलता है।
- कुम्भ में स्थलीय भ्रमण करने से हमें प्राचीन साक्ष्यों, स्थलों, अभिलेखों की भी जानकारी प्राप्त होती है।
- आज हमारे समक्ष बहुत सी समस्याएं चुनौति बनकर खड़ी है जिनमें भ्रष्टाचार, आतंकवाद, हिंसा, बेरोजगारी, देशद्रोह, पर्यावरण संकट है जो हमारे विकास में बाधक है। पर्यावरण संकट भारत की ही नहीं बल्कि पूरे विश्व की समस्या है जिसमें हमारा पर्यावरण संतुलन बिगड़ रहा है, प्रदूषण बढ़ रहा है। कुम्भ का एक बड़ा लक्ष्य पर्यावरण को संरक्षण प्रदान करना है। कुम्भ में पर्यावरण संरक्षण पर महासम्मेलन का भी आयोजन होता है।
- कुम्भ का उद्देश्य भारतीय संस्कृति का अनुष्ठान करने के साथ-साथ जनमानस में ज्ञान पर्व की महत्ता और भी बढ़ जाती है क्योंकि विद्वानों संतों के मुख से ज्ञानवर्धक जानकारी और हमारे धर्म से जुड़ी वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त होती है एवं स्नान दान का आध्यात्मिक महत्व दिखाई देता है।
- कुम्भ पर्व में देश के कोने-कोने से आये महान व्यक्तियों ने एक व्यवस्था के माध्यम से समरसता, एकजुटता और सर्वसमावेशी संस्कृति का परिचय देखने को मिलता है।
- वर्तमान आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी यह सिद्ध किया है कि हमारी आकाशगंगा व ब्रह्माण्ड में विद्यमान विभिन्न ग्रह, नक्षत्र एक दूसरे को प्रभावित करते हैं और पृथ्वी में उत्पन्न होने वाली विभिन्न परिस्थितियों भी इनके प्रभाव से अछूती नहीं रहती है। प्राचीन भारतीय परम्पराओं में निहित ज्ञान-विज्ञान को मानने के लिए वैज्ञानिक को भी विवश होना पड़ा है।
- भारतीय परम्पराओं में वृक्ष, वनस्पतियों का पूजन पर्यावरणीय संरक्षण की महत्ता को स्वीकार करती है।
- सोने, चाँदी, ताँबे के सिक्कों का समर्पण नदी, तालाब के पानी को शुद्ध करने की परम्परा की महत्ता को स्वीकारा है।
- कुम्भ में आश्रमों, अखाड़ों में साधुओं का गुरु शिष्य संबंध परम्परा कुम्भ मेले में संबंधित ज्ञान और कौशल प्रदान करने का सबसे महत्वपूर्ण माध्यम बना हुआ है।

तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में प्रयाग के महात्म्य का उल्लेख किया है कि—

‘माघ मकर गति रवि जब होई । तीरथ पतिहि आव सब कोई ।।

देव दनुज किन्नर नर श्रेणी । सादर मज्जहिं सकल त्रिवेनी ।।

अर्थात्

जब माघ महीने में मकर राशि पर सूर्य का आगमन होता है तब सभी लोग तीर्थराज प्रयाग में आते हैं और देव, दानव, किन्नर, मनुष्य सभी त्रिवेणी में स्नान करते हैं।

- कुम्भ के विशाल आयोजन और जनमानस के नियंत्रण एवं सुख-सुविधाओं को प्रदान करना भारतीय सरकार की दक्षता, कुशलता एवं प्रशासनिक क्षमता का परिचायक है।

वर्तमान में हमारी नयी पीढ़ी विशेष कर युवा वर्ग में हमारी संस्कृति, धार्मिक मान्यताओं और परम्पराओं को इन पर्वों के माध्यम से उत्साहित व जागृत करने का प्रयास किया जाये और धार्मिक आस्था एवं सेवा द्वारा निर्मल गंगा के अभियान को भी सार्थक बनाया जाये।

10.8 बोध प्रश्न

1. कुम्भ को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किस संगठन ने मान्यता प्रदान की है?

.....

2. कुम्भ का आयोजन किन स्थानों पर होता है?

.....

10.7 सारांश

कुम्भ पूरे विश्व में अत्यन्त वृहद् एवं विशिष्ट पर्व है। कुम्भ सदैव ही भारत में श्रद्धा व आस्था का केन्द्र रहा है। यह भारतीय संस्कृति की कड़ी को जोड़ने का नया आयाम प्रस्तुत करता है। इस पर्व पर धार्मिक श्रद्धालुओं का विशाल जन समूह उमड़ता है वह अपने आप में देखने लायक दृश्य है। कुम्भ विभिन्न-विभिन्न संस्कृतियों एवं समाजों का मेला है जिसमें एक दूसरे से मिलकर बहुत कुछ सीखने को मिलता है।

इस प्रकार से कुम्भ न केवल देश बल्कि वैश्विक स्तर पर भी विशिष्ट महत्व का पर्व बनता है। जो कि देश ही नहीं बल्कि विदेशों से आये आगन्तुकों को सुखद एवं नवीन अनुभव का बोध कराता है।

10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. कुम्भ के उद्भव एवं विकास का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. वैश्विक परिदृश्य में कुम्भ के महत्व का वर्णन कीजिए।
3. कुम्भ भारतीय संस्कृति में एकता का परिचायक है। स्पष्ट कीजिए।

10.9 चर्चा के बिन्दु

- कुम्भ के वैश्विक महत्व पर चर्चा कीजिए
- कुम्भ के उद्भव एवं विकास पर चर्चा कीजिए

10.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. यूनेस्को
2. हरिद्वार, प्रयाग, नासिक एवं उज्जैन

10.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. ग्रामीण समाजशास्त्र, डॉ. एम.एम. लवानिया एवं शशी के जैन, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर
2. हिन्दू दर्शन: एक समकालीन दृष्टि, डॉ. कर्ण सिंह भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।
3. प्रयाग में दान धर्म के महत्व—प्रकाश पाण्डेय।
4. भारत में प्रयाग की देन—हरेन्द्र प्रताप सिन्हा।

इकाई— 11 : आस्था का प्रतीक कुम्भ (कल्पवास, स्नान, दान, तर्पण एवं श्राद्धादि)

इकाई की संरचना

- 11.1 प्रस्तावना
- 11.2 उद्देश्य
- 11.3 आस्था का अर्थ
- 11.4 आस्था के विभिन्न आयाम
- 11.5 आस्था के महत्वपूर्ण पक्ष
- 11.6 आस्था का प्रतीक कुम्भ
 - 11.6.1 कुम्भ आस्था और संस्कृति का संगम
 - 11.6.2 कुम्भ का आध्यात्मिक महत्व
 - 11.6.3 कुम्भ का सामाजिक महत्व
 - 11.6.4 कुम्भ का सांस्कृतिक महत्व
 - 11.6.5 कुम्भ का पर्यावरणीय महत्व
 - 11.6.6 कुम्भ का वैज्ञानिक महत्व
- 11.7 कुम्भ की दृष्टि से प्रयागराज का महत्व
 - 11.7.1 प्रयागराज : मुनियों की तपोस्थली एवं जनमानस की आस्था का केंद्र
- 11.8 कल्पवास
- 11.9 कल्प का अर्थ और महत्व
- 11.10 कल्पवास के महत्वपूर्ण पक्ष
- 11.11 कल्पवास : आध्यात्मिक यात्रा
- 11.12 कल्पवास के प्रकार एवं अवधि
- 11.13 कल्पवास के प्रमुख नियम
- 11.14 स्नान
- 11.15 कुम्भ स्नान का महत्व
- 11.16 कुम्भ स्नान में नदियों का महत्व
 - 11.16.1 शिप्रा नदी में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में
 - 11.16.2 गोदावरी नदी में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में
 - 11.16.3 हरिद्वार में गंगा नदी में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में
 - 11.16.4 प्रयागराज में संगम स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में
- 11.17 शाही स्नान/राजसी स्नान
- 11.18 दान
 - 11.18.1 दान के प्रकार

- 11.18.2 दान के अंग
- 11.18.3 इष्टापूर्त
- 11.18.4 दानकर्ता
- 11.18.5 दान लेने का अधिकारी
- 11.18.6 दान का महत्व एवं दानोत्सव
- 11.19 श्राद्धादि
- 11.20 तर्पण एवं तर्पण का उद्देश्य
 - 11.20.1 तर्पण के प्रकार
 - 11.20.2 तर्पण की विधि
 - 11.20.3 पितृतर्पण
 - 11.20.4 तर्पण का समय
 - 11.20.5 तर्पण एवं तिल तर्पण का महत्व
 - 11.20.6 पिंडदान
- 11.21 सारांश
- 11.22 अभ्यास के प्रश्न
- 11.23 चर्चा के बिन्दु
- 11.24 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 11.25 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

ऋग्वेद में नदियों के तटों को विशेष महत्व दिया गया है, जिन्हें यज्ञ के पवित्र स्थल के रूप में देखा जाता था। आर्यों ने नदियों के किनारे रहकर भजन—कीर्तन और आध्यात्मिक चिन्तन किया, जिसने भारतीय संस्कृति में नदियों को एक पवित्र स्थान बना दिया। आज भी, हिंदू धर्म में नदियों का विशेष महत्व है और कई धार्मिक अनुष्ठान नदियों के किनारे किए जाते हैं।

गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर स्थित प्रयाग, सभी तीर्थों में सबसे पवित्र माना जाता है। तीर्थराज प्रयाग सदियों से धर्म और अध्यात्म का केंद्र रहा है। मान्यता है कि यहां कुम्भ मेले में स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है। प्रयाग में कल्पवास करने का विशेष महत्व है। गंगा के तट पर एक महीने तक फूस की कुटिया में रहकर सात्विक जीवन जीना, धार्मिक अनुष्ठान करना, गंगा स्नान करना, दान पुण्य करना और भजन कीर्तन करना ही कल्पवास कहलाता है। कुम्भ और अर्द्ध कुम्भ के दौरान साधु—संत अपने अखाड़ों के साथ शाही सवारी पर निकलते हैं, जिसे देखकर श्रद्धालुओं को संत दर्शन का पुण्य मिलता है। दूर—दूर से व्यापारी यहां दुकानें लगाते हैं और नाटक मंडलियां, रासलीलाएं, कथा—प्रवचन, यज्ञ—हवन आदि आयोजन किए जाते हैं, जो यात्रियों को आध्यात्मिक आनंद देते हैं।

कुम्भ मेला हिंदू धर्म का एक महत्वपूर्ण त्योहार है, जिसमें करोड़ों श्रद्धालु हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक जैसे पवित्र स्थलों पर एकत्र होते हैं। यह मेला हर तीन साल के अन्तराल पर इन चार स्थानों में लगता रहता है। हर बारहवें साल कुम्भ और दो कुम्भ मेलों के बीच में अर्द्ध कुम्भ का भी आयोजन होता है। कुम्भ मेले का स्थान ग्रहों की स्थिति पर निर्भर करता है। प्रयाग में कुम्भ तभी लगता है जब माघ अमावस्या के दिन सूर्य और चंद्रमा मकर राशि में हों और गुरु मेष राशि में हो। हरिद्वार में कुम्भ तब लगता है जब गुरु कुम्भ राशि में हो और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करे। नासिक में कुम्भ तब होता है जब सूर्य, चन्द्रमा और गुरु तीनों सिंह राशि में हों।

उज्जैन में कुम्भ तब होता है जब गुरु कुम्भ राशि में प्रवेश करता है और सूर्य मेष राशि में होता है।

कुम्भ मेले की उत्पत्ति का सबसे प्रचलित किस्सा समुद्र मंथन से जुड़ा है। जब देवताओं और दानवों के बीच युद्ध हुआ और देवता हार गए, तो उन्होंने भगवान विष्णु की शरण ली। भगवान विष्णु ने उन्हें क्षीर सागर का मंथन करने की सलाह दी, जिससे अमृत निकलेगा। अमृत पाने के लिए दोनों पक्षों में बारह दिन तक युद्ध हुआ। अंत में, भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर अमृत बांटा और विवाद शांत किया। लेकिन इस खींचातानी में अमृत की कुछ बूंदें प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में गिर गईं।

देवताओं के बारह दिन मनुष्यों के बारह साल के बराबर होते हैं, इसलिए इन चारों स्थानों पर हर बारह साल में कुम्भ मेला लगता है। कुम्भ मेले में नवग्रहों, खासकर सूर्य, चंद्र और गुरु की महत्वपूर्ण भूमिका है। चंद्रमा ने अमृत को बहने से रोका, गुरु ने कलश को छुपाया, सूर्य ने कलश को फूटने से बचाया और शनि ने इंद्र की रक्षा की थी। इसीलिए इन ग्रहों की स्थिति के आधार पर ही कुम्भ मेले की तिथि निर्धारित होती है।

कुम्भ के चारों स्थानों में प्रयाग का विशेष महत्व है। मकर संक्रांति के दिन प्रारंभ होने वाला यह मेला खगोलीय गणनाओं के अनुसार बहुत शुभ माना जाता है। इस दिन स्वर्ग लोक पृथ्वी के नजदीक आता है और स्नान करने से आत्मा को मोक्ष मिलने की मान्यता है। अमृतकाल के अवसर पर गंगाजल औषधीय गुणों से भर जाता है। कुम्भ के दौरान एक नगर जैसा माहौल बनता है और लाखों श्रद्धालु स्नान करते हैं। मकर संक्रांति, पौष पूर्णिमा, मौनी अमावस्या, बसंत पंचमी और माघ पूर्णिमा जैसे दिनों में विशेष स्नान होते हैं। कल्पवास, दान और व्रत से मन शुद्ध होता है।

देश के विभिन्न धार्मिक समुदाय यहां एकत्र होकर धर्म के गूढ़ रहस्यों को समझने का प्रयास करते हैं। प्रयागराज की रेतीली भूमि पर बैठकर धर्म के तत्वज्ञान पर चर्चा करना एक अद्भुत अनुभव है। प्रयाग की यह पावन भूमि आस्था, सत्य की केन्द्र रही है। प्रस्तुत इकाई में आस्था का प्रतीक कुम्भ से संबंधित क्रियाकलापों एवं गतिविधियों का वर्णन किया गया है।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी इस योग्य हो जाएंगे कि –

1. आस्था के अर्थ से परिचित हो सकेंगे।
2. कुम्भ के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. कुम्भ के आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व को समझ सकेंगे।
4. कल्पवास के संबंध में जानकारी प्राप्त कर उसे अभिव्यक्त कर सकेंगे।
5. कुम्भ के दौरान स्नान एवं दान के महत्व से परिचित होकर जीवन में उसकी उपयोगिता को समझ सकेंगे।
6. तर्पण की प्रक्रिया से अवगत हो सकेंगे।

11.3 आस्था का अर्थ

7. आस्था एक ऐसा भाव है जो विश्वास, आशा और समर्थन को अपने में समाहित करता है। यह किसी भी निराकार या साकार स्वरूप के प्रति गहन निष्ठा और समर्पण का भाव है। आस्था व्यक्ति को जीवन की चुनौतियों का सामना करने की शक्ति प्रदान करती है और उसे सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने में मदद करती है।

11.4 आस्था के विभिन्न आयाम

आस्था के विभिन्न आयाम निम्नवत् वर्णित हैं –

1. **विश्वास** – आस्था का सबसे महत्वपूर्ण आधार विश्वास है। यह विश्वास किसी व्यक्ति, विचार, सिद्धांत या देवता में हो सकता है। यह विश्वास व्यक्ति को आंतरिक शक्ति प्रदान करता है और उसे कठिन परिस्थितियों

में भी डटे रहने का साहस देता है।

2. **आशा** — आस्था आशा का पर्यायवाची है। यह व्यक्ति को भविष्य के प्रति आशावादी बनाती है और उसे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। आशा व्यक्ति को निराशा से बाहर आने में मदद करती है और उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।
3. **समर्थन** — आस्था व्यक्ति को एक आंतरिक समर्थन प्रदान करती है। यह उसे अपने आप पर विश्वास करने और अपनी क्षमताओं पर भरोसा करने में मदद करती है। आस्था व्यक्ति को कठिन परिस्थितियों में भी संतुलन बनाए रखने में मदद करती है।
4. **निष्ठा और समर्पण** — आस्था किसी भी निराकार या साकार स्वरूप के प्रति गहन निष्ठा और समर्पण का भाव है। यह निष्ठा व्यक्ति को अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कठिन परिश्रम करने के लिए प्रेरित करती है।

11.5 आस्था के प्रमुख महत्वपूर्ण तथ्य

आस्था के प्रमुख महत्वपूर्ण तथ्य निम्नवत् वर्णित हैं —

1. आस्था व्यक्तिगत अनुभव है।
2. आस्था किसी भी रूप में हो सकती है।
3. आस्था व्यक्ति को सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने में मदद करती है।
4. आस्था व्यक्ति को जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।
5. आस्था व्यक्ति को मानसिक शांति प्रदान करती है।

11.6 आस्था का प्रतीक कुम्भ

कुम्भ शब्द का अर्थ है 'घट' या 'कलश'। यह प्रतीकात्मक रूप से ब्रह्मांड, जीवन और ज्ञान का प्रतिनिधित्व करता है। कुम्भ मेले में स्नान करने से पापों का नाश होता है और मोक्ष प्राप्त होता है ऐसा माना जाता है। कुम्भ का महापर्व भारतीय संस्कृति का एक अद्वितीय और गौरवशाली पर्व है। यह सिर्फ एक धार्मिक आयोजन ही नहीं है, बल्कि यह भारतीय सभ्यता और संस्कृति का एक जीवंत तथा उसमें जनमानस की आस्था का प्रतीक है। लाखों लोग हर बारह वर्ष में चार पवित्र नदियों — गंगा, यमुना, गोदावरी और शिप्रा के तट पर आयोजित होने वाले इस मेले में भाग लेने के लिए आते हैं। कुम्भ का महत्व केवल धार्मिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक भी है। यह मेला लोगों को एक साथ लाता है, उन्हें अपनी संस्कृति और परंपराओं से जोड़ता है और आध्यात्मिक जागरण का अवसर प्रदान करता है तथा वसुधैव कुटुंबकम् की भावना के प्रति आस्था को मजबूत बनाता है। कुम्भ पर्व भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का एक जीवंत उदाहरण है। प्रयागराज, भारत का एक पवित्र तीर्थस्थल है, जो सदियों से धार्मिक आस्था और सांस्कृतिक समृद्धि का केंद्र रहा है। गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों के संगम पर स्थित यह स्थान हिंदू धर्म में विशेष महत्व रखता है। कुम्भमेले के आयोजन के कारण प्रयागराज विश्वभर में प्रसिद्ध है। भारत की समावेशी संस्कृति सदियों से चली आ रही है। यह संस्कृति विभिन्न धर्मों, दर्शनों और विचारधाराओं को समाहित करने की क्षमता रखती है। भारत की समावेशी संस्कृति ने देश को दुनिया में एक अद्वितीय स्थान दिया है। कुम्भ मेला हिंदू धर्म का सबसे बड़ा और सबसे पवित्र तीर्थयात्रा है। प्रयागराज में हर बारह वर्ष में महाकुम्भ का आयोजन होता है। कुम्भमेले का इतिहास लगभग 850 साल पुराना है। माना जाता है कि आदि शंकराचार्य ने इसकी शुरुआत की थी। जनमानस की कुम्भ के प्रति आस्था निम्न महत्व के कारण अत्यधिक है—

- **ज्योतिषीय महत्व** — कुम्भ मेले का आयोजन ग्रहों की विशेष स्थिति के आधार पर किया जाता है।
- **सांस्कृतिक महत्व** — कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति का एक जीवंत उदाहरण है। यहां विभिन्न जाति, धर्म और क्षेत्र के लोग एक साथ आते हैं।

- **आध्यात्मिक महत्व** —कुम्भ मेला आध्यात्मिक जागरण का एक महत्वपूर्ण केंद्र है। यहां लोग ध्यान, योग और अन्य आध्यात्मिक गतिविधियों में भाग लेते हैं।

11.6.1 कुम्भ-आस्था और संस्कृति का संगम

कुम्भ, भारतीय संस्कृति का एक ऐसा महापर्व है जो सदियों से लाखों लोगों को आस्था के कारण एक साथ जोड़ता है। यह केवल एक धार्मिक आयोजन नहीं है, बल्कि एक सांस्कृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक अनुभव है। कुम्भ में लोग विभिन्न जातियों, धर्मों और क्षेत्रों से आते हैं और एकजुट होकर धार्मिक अनुष्ठान करते हैं। कुम्भ में लोगों की गहरी आस्था है। माना जाता है कि कुम्भ में स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है। कुम्भ के दौरान लोग विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान करते हैं, जैसे कि जप, तप, ध्यान और हवन। ये अनुष्ठान व्यक्ति को आध्यात्मिक रूप से समृद्ध बनाने में मदद करते हैं।

11.6.2 कुम्भ का आध्यात्मिक महत्व

कुम्भ में स्नान करने से पापों का नाश होता है और मोक्ष प्राप्त होता है ऐसा माना जाता है। कुम्भ के दौरान लोग विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान करते हैं, जैसे कि जप, तप, ध्यान और हवन। ये अनुष्ठान व्यक्ति को आध्यात्मिक रूप से समृद्ध बनाने में मदद करते हैं जिससे कुम्भ के प्रति लोगों की आस्था प्राचीन समय से अनवरत चलती चली आ रही है।

11.6.3 कुम्भ का सामाजिक महत्व

कुम्भ मेला एक सामाजिक समागम भी है। इस पर्व में आस्था के कारण विभिन्न जातियों, धर्मों और क्षेत्रों से जनमानस आते हैं और एक साथ रहते हैं, खाते हैं और पीते हैं। यह मेला लोगों को एक-दूसरे के प्रति सहनशीलता और सम्मान का भाव विकसित करने में मदद करता है।

11.6.4 कुम्भ का सांस्कृतिक महत्व

कुम्भ पर्व भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह मेला हमें हमारी संस्कृति और परंपराओं से जोड़ता है। कुम्भ मेले में विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, जैसे कि संगीत, नृत्य और नाटक। कुम्भ मेला केवल धार्मिक आयोजन ही नहीं है, बल्कि यह एक सांस्कृतिक उत्सव भी है। यहां विभिन्न जातियों, धर्मों और क्षेत्रों के लोग एक साथ आते हैं और अपनी संस्कृति और परंपराओं को साझा करते हैं। कुम्भ मेले में विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, जैसे कि संगीत, नृत्य और नाटक।

11.6.5 कुम्भ का पर्यावरणीय महत्व

आज के समय में पर्यावरण संरक्षण एक बहुत बड़ा मुद्दा है। कुम्भ मेले में पर्यावरण संरक्षण पर भी जोर दिया जाता है। कुम्भ मेले में स्वच्छता और पर्यावरण संरक्षण के लिए कई पहल की जाती हैं। चूंकि पेड़ पौधों को सनातन धर्म में देव तुल्य माना जाता है इस आस्था व विश्वास के कारण कुम्भ का पर्यावरणीय महत्व और भी बढ़ जाता है।

11.6.6 कुम्भ का वैज्ञानिक महत्व

कुम्भ मेले का आयोजन केवल धार्मिक मान्यताओं पर ही आधारित नहीं है, बल्कि इसके पीछे वैज्ञानिक कारण भी हैं। कुम्भ मेले का समय ग्रहों की स्थिति के आधार पर निर्धारित किया जाता है। वैज्ञानिकों ने यह भी पाया है कि कुम्भ मेले के दौरान नदियों का जल शुद्ध होता है और इसमें कुछ विशेष गुण उत्पन्न हो जाते हैं जिससे व्यक्ति इसमें स्नान कर निरोगी हो जाता है ऐसा लोगों का विश्वास है।

11.7 कुम्भ में आस्था की दृष्टि से प्रयागराज का महत्व

कुम्भ में आस्था की दृष्टि से प्रयागराज धरा का महत्व निम्नवत् वर्णित है —

- **तीर्थों का राजा** — प्रयागराज को तीर्थों का राजा कहा जाता है। गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों का संगम होने के कारण इसे विशेष महत्व प्राप्त है।
- **मोक्ष का द्वार** — मान्यता है कि यहां स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

- **आस्था का केंद्र** – लाखों लोग प्रयागराज में कुम्भ मेले के दौरान आते हैं और यहां स्नान करके अपने जीवन को पवित्र मानते हैं।
- **सांस्कृतिक विरासत** – प्रयागराज भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। यहां कई धर्मों और संप्रदायों के लोग एक साथ आते हैं।
- **विविधता में एकता** – कुम्भ में विभिन्न भाषाएं, संस्कृतियां और रीति-रिवाज देखने को मिलते हैं।
- **धार्मिक सहिष्णुता** – यहां सभी धर्मों के लोग एक साथ रहते हैं और एक-दूसरे का सम्मान करते हैं।
- **सामाजिक समरसता** – कुम्भ में समाज के सभी वर्गों के लोग शामिल होते हैं।

कुम्भ मेला प्रयागराज में आयोजित होने वाला एक विशाल धार्मिक समागम है। यह न केवल धार्मिक, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व का भी है। कुम्भ में विभिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय के लोग एक साथ आते हैं और सामाजिक एकता, अखंडता और पारस्परिक सौहार्द का परिचय देते हैं।

11.7.1 प्रयागराज मुनियों की तपस्थली एवं जनमानस की आस्था का केन्द्र

प्रयागराज सदियों से मुनियों की तपस्थली रहा है। यहां लाखों लोग कुम्भ मेले के दौरान आते हैं और एक महीने से अधिक समय तक तपस्या तुल्य जीवन जीते हैं। वे अपने घर, परिवार और संसार से दूर होकर आध्यात्मिक जीवन जीते हैं। प्रयागराज कुम्भ एक ऐसा महापर्व है जो हमें अपनी संस्कृति, धर्म और परंपराओं से जोड़ता है। यह हमें एकता, भाईचारे और सहिष्णुता का संदेश देता है। कुम्भ मेला न केवल एक धार्मिक आयोजन है, बल्कि यह एक सामाजिक और सांस्कृतिक उत्सव भी है। इन सभी महत्ता के दृष्टिगत लोगों की आस्था सदियों से कुम्भ के प्रति अनवरत बनी हुई है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. आस्था के अर्थ को लिखिए।

.....

2. आस्था के दो आयामों को लिखिए।

.....

3. कुम्भ शब्द का क्या अर्थ है?

.....

4. कुम्भ में आस्था की दृष्टि से प्रयागराज धरा के दो महत्व को लिखिए।

.....

11.8 कल्पवास

कुम्भ के साथ ही कल्पवास की परंपरा भी सदियों से चली आ रही है। कल्पवास का अर्थ है— एक विशेष

अवधि के लिए धार्मिक अनुष्ठान करना, जिसमें जप, तप, हवन और सत्संग शामिल होते हैं। धार्मिक ग्रंथों के अनुसार, प्रयागराज की पवित्र भूमि पर कल्पवास करने से व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है। भगवान ब्रह्मा ने स्वयं इस स्थान पर यज्ञ किया था और इसे तीर्थों का राजा कहा था। वेद, रामायण और महाभारत जैसे ग्रंथों में भी प्रयागराज का उल्लेख मिलता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि इस स्थान का धार्मिक महत्व प्राचीन काल से ही रहा है। प्रयागराज में कल्पवास करने से व्यक्ति को आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है। यहां की पवित्र नदियों का जल और पवित्र वातावरण व्यक्ति के मन को शांत करता है और उसे आत्मज्ञान की प्राप्ति में मदद करता है। यह कहना मुश्किल है कि कल्पवास की परंपरा कुम्भ से पहले शुरू हुई थी या बाद में, लेकिन यह निश्चित रूप से एक बहुत पुरानी परंपरा है। कल्प शब्द का अर्थ है 'काल' या 'समय का एक चक्र'। वैदिक साहित्य में, कल्प को ब्रह्मा जी के एक दिन के बराबर माना जाता है, जिसमें 14 मन्वन्तर होते हैं। प्रत्येक मन्वन्तर में लाखों वर्ष होते हैं। कल्पवास इसी कल्प शब्द से लिया गया है। कल्पवास का अर्थ है एक विशेष अवधि के लिए धार्मिक अनुष्ठान करना। यह आमतौर पर एक महीने का होता है और इसमें जप, तप, ध्यान, साधना आदि शामिल होते हैं।

कल्पवास की परंपरा वेदकाल से ही चली आ रही है। जब प्रयागराज एक घने जंगल और ऋषियों की तपोस्थली था, तब से ही गृहस्थों के लिए कल्पवास का विधान रखा गया था। ऋषियों का मानना था कि गृहस्थों को समय-समय पर आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने और अपनी आत्मा को शुद्ध करने के लिए कल्पवास करना चाहिए।

कल्पवास के दौरान गृहस्थ पर्णकुटी में रहते थे और दिन में एक बार सात्विक भोजन करते थे। वे धैर्य, अहिंसा और भक्ति भाव से भरे रहते थे। पद्मपुराण के अनुसार, संगम तट पर रहने वाले व्यक्ति को सदैव सदाचारी, शांतचित्त और संयमित होना चाहिए। कल्पवासी की दिनचर्या सुबह गंगा स्नान से शुरू होती थी और देर रात तक प्रवचन और भजन-कीर्तन के साथ समाप्त होती थी। कल्पवास के दौरान तप, हवन और दान करना भी महत्वपूर्ण माना जाता था।

11.9 कल्प का अर्थ और महत्व

कल्प का अर्थ है ब्रह्मा जी का एक दिन, जो 4,32,00,00,000 वर्ष के बराबर होता है। कल्पवास के दौरान एक महीने का जो तप किया जाता है, वह एक कल्प के बराबर फलदायी माना जाता है।

11.10 कल्पवास के महत्वपूर्ण पक्ष

कल्पवास के महत्वपूर्ण पक्ष निम्नवत् वर्णित हैं –

- **आध्यात्मिक शक्ति**— कल्पवास करने से व्यक्ति को आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है।
- **मन की शांति**— यहां की पवित्र नदियों का जल और पवित्र वातावरण व्यक्ति के मन को शांत करता है।
- **मोक्ष की प्राप्ति**— मान्यता है कि प्रयागराज में कल्पवास करने से व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- **प्राचीन परंपरा**— कल्पवास की परंपरा बहुत पुरानी है और इसका उल्लेख धार्मिक ग्रंथों में भी मिलता है।

प्रयागराज में कल्पवास एक ऐसी परंपरा है जो सदियों से चली आ रही है और भविष्य में भी जारी रहेगी। यह परंपरा हमें अपनी धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत से जोड़ती है।

11.11 कल्पवास : आध्यात्मिक यात्रा

कल्पवास एक प्राचीन भारतीय परंपरा है जो आध्यात्मिक विकास और मोक्ष प्राप्ति से जुड़ी हुई है। यह विशेष रूप से प्रयागराज में माघ मेले के दौरान किया जाता है। कल्पवास का अर्थ है एक महीने तक संगम तट पर निवास करते हुए जप, तप, ध्यान और साधना में लीन रहना।

11.12 कल्पवास के प्रकार एवं अवधि

कल्पवास मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है –

- **चंद्रमास कल्पवास** — यह पौष पूर्णिमा से माघी पूर्णिमा तक होता है।

- **शौर्य मास कल्पवास** — यह मकर संक्रांति से कुम्भ संक्रांति तक होता है।

कल्पवास की अवधि व्यक्ति की आस्था और क्षमता पर निर्भर करती है। यह एक रात से लेकर जीवन भर तक हो सकती है। कुछ लोग एक महीने, छह महीने या बारह वर्ष तक भी कल्पवास करते हैं। प्रयागराज में कल्पवास की परंपरा बहुत पुरानी है। यहां त्रिवेणी संगम पर हर साल माघ मास में कल्पवास किया जाता है। कुम्भ और अर्धकुम्भ के दौरान भी कल्पवास का विशेष महत्व होता है।

- **न्यूनतम** — एक रात
- **सामान्य** — एक महीना (माघ मास)
- **लंबी अवधि** — छह महीने, बारह वर्ष या जीवन भर
- **प्रयागराज में कल्पवास की परंपरा** —
 - i. प्राचीन काल से प्रयागराज में कल्पवास की परंपरा बहुत पुरानी है।
 - ii. हर साल माघ मास में कल्पवास किया जाता है।
 - iii. कुम्भ और अर्धकुम्भ के दौरान कल्पवास का विशेष महत्व होता है।
 - iv. पौराणिक मान्यता के अनुसार, एक कल्पवास का फल चारों युगों में किए गए तप, ध्यान और दान के बराबर होता है।

11.13 कल्पवास के प्रमुख नियम

- **भोजन** — दिन में एक बार स्वयं पकाया हुआ सादा भोजन या फल का सेवन करना।
- **स्नान** — दिन में तीन बार गंगा, यमुना या त्रिवेणी संगम में स्नान करना।
- **संध्यावंदन** — तीनों समय संध्यावंदन करना।
- **भूमि शयन** — जमीन पर सोना।
- **ब्रह्मचर्य** — ब्रह्मचर्य का पालन करना।
- **जप, हवन, दान** — जप, हवन और दान करना।
- **सत्संग** — सत्संग में भाग लेना।
- **वस्त्र** — शुद्ध रेशमी या ऊनी, श्वेत या पीत वस्त्र धारण करना।

कल्पवास के दौरान गृहस्थों के लिए तीन बार गंगा स्नान करना श्रेष्ठ माना जाता है, जबकि संन्यासी भस्म स्नान कर सकते हैं। कल्पवास के दौरान अग्नि सेवन वर्जित होता है। कल्पवास के दौरान पति-पत्नी दोनों एक साथ कल्पवास कर सकते हैं और विधवा महिलाएं अकेले भी कल्पवास कर सकती हैं। कल्पवास करने से व्यक्ति को आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है, मन शांत होता है और पापों का नाश होता है। माना जाता है कि कल्पवास करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

सनातन धर्म में कुम्भ और कल्पवास के प्रति लोगों की अत्यधिक आस्था है जिसके कारण इसका महत्व अधिक है। माना जाता है कि इन अवसरों पर पवित्र नदियों में अमृत का प्रवाह होता है। अमेरिकी वैज्ञानिक प्रोफेसर बर्नार्ड विटलिन के अनुसार, कुम्भ स्नान और कल्पवास के दौरान शरीर में एंटीबॉडी बनती है जो विभिन्न बीमारियों से लड़ने में मदद करती है। जब हमारा शरीर किसी रोगाणु के संपर्क में आता है तो वह उसके खिलाफ एंटीबॉडी बनाता है। कुम्भ और कल्पवास के दौरान लाखों लोग एक साथ एक जगह इकट्ठा होते हैं। इस दौरान वे विभिन्न प्रकार के रोगाणुओं के संपर्क में आते हैं जिसके कारण उनके शरीर में कई तरह की एंटीबॉडी बन जाती हैं। इससे उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत होती है और वे कई बीमारियों से सुरक्षित रहते हैं।

हमारे पूर्वजों ने यह व्यवस्था बनाई थी कि हर छह साल में अर्धकुम्भ का आयोजन किया जाए ताकि लोग नए रोगाणुओं के संपर्क में आ सकें और उनके शरीर में नए एंटीबॉडी बन सकें। कल्पवास के दौरान लोग सांसारिक सुख-दुखों से दूर रहकर आध्यात्मिक कार्यों में लिप्त रहते हैं। वे संयम और साधना के माध्यम से अपने मन को शांत करते हैं और आत्मज्ञान प्राप्त करते हैं। कल्पवास और कुम्भ लाखों लोगों के लिए आस्था और श्रद्धा का केंद्र है। यह एक ऐसी परंपरा है जो सदियों से चली आ रही है और आज भी इसकी प्रासंगिकता बनी हुई है।

बोध प्रश्न—

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

5. कल्पवास के अर्थ को लिखिए।

.....

6. कल्पवास के प्रकारों के नाम लिखिए।

.....

7. कल्पवास एवं स्नान से व्यक्ति के शरीर में एंटीबॉडी बनती है। किसका मत है?

.....

11.14 स्नान

धार्मिक मान्यताओं में स्नान को केवल शारीरिक स्वच्छता का कार्य ही नहीं माना जाता, बल्कि इसे आध्यात्मिक शुद्धता प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण साधन भी माना जाता है।

11.15 कुम्भ स्नान का महत्व

कुम्भ स्नान सिर्फ एक धार्मिक अनुष्ठान नहीं है बल्कि यह भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। यह लाखों लोगों को एक साथ लाता है और सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक एकता को बढ़ावा देता है।

11.16 कुम्भ स्नान में नदियों का महत्व

कुम्भ मेला भारत का सबसे बड़ा धार्मिक समागम है और इसमें पवित्र नदियों में स्नान का विशेष महत्व है। ये नदियाँ सिर्फ पानी के स्रोत नहीं हैं बल्कि धार्मिक मान्यताओं के अनुसार ये देवी-देवताओं का निवास स्थान भी मानी जाती हैं।

कुम्भ में स्नान के महत्व को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है —

- **पापों का नाश** — विभिन्न धर्मों में स्नान को पापों के नाश करने और मन को शुद्ध करने का एक माध्यम माना जाता है। कुम्भ के दौरान पवित्र नदियों में स्नान करने को विशेष महत्व दिया जाता है।
- **देवताओं का आशीर्वाद** — स्नान को देवताओं को प्रसन्न करने और उनका आशीर्वाद प्राप्त करने का एक तरीका माना जाता है। कुम्भ में स्नान करते समय मंत्रों का जाप किया जाता है।
- **मन को शांत करना** — स्नान मन को शांत करने और एकाग्रता बढ़ाने की एक विधि मानी जाती है। यह ध्यान और आध्यात्मिक अभ्यास के लिए तैयार करने में मदद करता है।

- **नई शुरुआत** – स्नान को अतीत के पापों को धोकर एक नई शुरुआत करने का प्रतीक माना जाता है।
- **शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य** – स्नान को शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक माना जाता है। यह शरीर को ताज़ा करता है और मन को शांत करता है।

11.16.1 शिप्रा नदी में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में

मनुस्मृति के अनुसार, स्नान शरीर और मन दोनों को शुद्ध करता है। विभिन्न प्रकार के स्नान जैसे अग्नि स्नान, जल स्नान, ब्रह्म स्नान आदि के अलग-अलग महत्व हैं। यदि साधारण स्नान इतना लाभदायक है तो पवित्र नदी में स्नान करने का फल अकल्पनीय होगा। सिंहस्थ कुम्भ में शिप्रा नदी में स्नान करने का विशेष महत्व है। शास्त्रों के अनुसार, शिप्रा नदी में स्नान करने से पापों का नाश होता है और मुक्ति की प्राप्ति होती है। स्कंद पुराण में शिप्रा नदी की उत्पत्ति की एक रोचक कथा वर्णित है जिसमें कहा गया है कि भगवान शिव के क्रोध से निकले रक्त से शिप्रा नदी का निर्माण हुआ था। सिंहस्थ कुम्भ में शिप्रा नदी में स्नान करने से धन-धान्य, पुत्र-पौत्र वृद्धि और मन की शांति मिलती है। यह नदी अत्यंत पवित्र मानी जाती है और इसे दूषित करने का पाप बहुत बड़ा माना जाता है।

शिप्रा नदी का उद्गम स्थल मध्य प्रदेश के धार जिले में स्थित विंध्य पर्वतमाला की काकरी-टेकड़ी नामक पहाड़ी है। यह उज्जैन शहर के काफी समीप है। शिप्रा नदी भारत की एक पवित्र नदी है, जिसे मध्य प्रदेश के उज्जैन शहर में स्थित होने के कारण विशेष महत्व प्राप्त है।

शिप्रा नदी का धार्मिक महत्व

- **कुम्भ मेला** – शिप्रा नदी के तट पर लगने वाला कुम्भ मेला विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक समागम है। माना जाता है कि इस नदी में स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- **महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग** – शिप्रा नदी के तट पर ही प्रसिद्ध महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग स्थित है। मान्यता है कि इस नदी में स्नान करने के बाद महाकालेश्वर जी के दर्शन करने से सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।
- **पौराणिक कथाएँ** – शिप्रा नदी से कई पौराणिक कथाएँ जुड़ी हुई हैं। इन कथाओं के अनुसार इस नदी में स्नान करने से देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त होता है और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

शिप्रा नदी से जुड़ी पौराणिक कथाएँ

- **अमृत की बूंदें** – मान्यता है कि जब देवताओं और असुरों के बीच अमृत का समुद्र मंथन हुआ था, तब कुछ अमृत की बूंदें शिप्रा नदी में गिर गई थीं। इसीलिए इस नदी को अमृततुल्य माना जाता है।
- **शिप्रा का उद्भव** – एक अन्य कथा के अनुसार शिप्रा नदी भगवान विष्णु के शरीर से निकली थी। जब भगवान विष्णु ने त्रिपुरासुर राक्षस का वध किया था, तब उनके शरीर से निकले हुए रक्त से शिप्रा नदी का निर्माण हुआ था।
- **महाकालेश्वर की उत्पत्ति** – शिप्रा नदी से महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की उत्पत्ति की कथा भी प्रचलित है।

11.16.2 गोदावरी नदी में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में

गोदावरी नदी, जिसे दक्षिण की गंगा भी कहा जाता है, भारत की प्रमुख नदियों में से एक है। गोदावरी नदी में स्नान करने का महत्व सिर्फ धार्मिक ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक भी है। यह नदी भारतीय सभ्यता और संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। कुम्भ के दौरान इस नदी में स्नान करने से लोग न केवल धार्मिक पुण्य प्राप्त करते हैं बल्कि एक दूसरे के साथ जुड़कर सामाजिक बंधन भी मजबूत करते हैं।

गोदावरी नदी से जुड़ी पौराणिक कथाएँ

- **अमृत की बूंदें** – मान्यता है कि जब देवताओं और असुरों के बीच अमृत का समुद्र मंथन हुआ था, तब कुछ अमृत की बूंदें गोदावरी नदी में गिर गई थीं। इसीलिए इस नदी को अमृततुल्य माना जाता है।

- **गौतम ऋषि** — गोदावरी नदी का नाम महर्षि गौतम से जुड़ा हुआ है। एक कथा के अनुसार, महर्षि गौतम ने कठोर तपस्या की थी जिससे प्रसन्न होकर भगवान शिव ने एक बाल के प्रभाव से गंगा को प्रवाहित किया था। गंगाजल के स्पर्श से एक मृत गाय पुनर्जीवित हो उठी थी। इसी कारण इसका नाम गोदावरी पड़ा।
- **सप्त गोदावरी** — गोदावरी नदी की सात शाखाएँ मानी जाती हैं — गौतमी, वसिष्ठा, कौशिकी, आत्रेयी, वृद्धगौतमी, तुल्या, भारद्वाजी। इन सभी शाखाओं को भी पवित्र माना जाता है।

11.16.3 हरिद्वार में गंगा नदी में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में

हरिद्वार में गंगा नदी का धार्मिक महत्व अतुलनीय है, विशेष रूप से कुम्भ मेले के समय इस पवित्र नदी में स्नान को मोक्ष का साधन माना जाता है। हरिद्वार में गंगा नदी में स्नान का महत्व निम्नवत् है —

- पौराणिक महत्व** — हरिद्वार को चार धामों में से एक माना जाता है। यहां भगवान विष्णु ने वामन अवतार में भूदेव से तीन पग में पृथ्वी को नापा था। इसीलिए इसे हरिद्वार कहा जाता है।
- कुम्भ मेला** — हरिद्वार में कुम्भ मेला लगता है जो विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक समागम है।
- शिवरात्रि** — हरिद्वार में महाशिवरात्रि का पर्व बहुत धूमधाम से मनाया जाता है।
- हर की पैड़ी** — हरिद्वार में हर की पैड़ी एक पवित्र स्थान है जहां गंगा नदी में स्नान करने का विशेष महत्व है।

गंगा नदी से जुड़ी पौराणिक कथाएँ

- **गंगा अवतरण** — पौराणिक कथाओं के अनुसार, भगवान शिव ने देवताओं के अनुरोध पर गंगा को अपने जटाओं में धारण किया था और फिर धरती पर लाया था।
- **हरिद्वार में गंगा का प्रवेश** — मान्यता है कि गंगा ने हरिद्वार से धरती पर प्रवेश किया था।
- **मार्कण्डेय ऋषि** — मार्कण्डेय ऋषि ने गंगा के तट पर कठोर तपस्या की थी और भगवान शिव को प्रसन्न किया था।

11.16.4 प्रयागराज में संगम में स्नान का महत्व : कुम्भ के परिप्रेक्ष्य में

प्रयागराज में स्थित त्रिवेणी संगम, जहां गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती नदियां मिलती हैं, हिंदू धर्म में अत्यंत पवित्र स्थान माना जाता है। कुम्भ मेले के दौरान यहां स्नान करने का विशेष महत्व होता है।

कुम्भ में शिप्रा, गोदावरी, गंगा, संगम (गंगा, यमुना एवं सरस्वती) स्नान का महत्व

कुम्भ में शिप्रा, गोदावरी, गंगा, संगम स्नान का महत्व निम्नवत् वर्णित है —

- **पाप मोचन** — मान्यता है कि कुम्भ में स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मन शुद्ध होता है।
- **मोक्ष की प्राप्ति** — कुम्भ स्नान को मोक्षदायिनी माना जाता है। कुम्भ में यहां स्नान करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- **मनोकामना पूर्ण** — मान्यता है कि कुम्भ स्नान करने से सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।
- **पवित्रता** — कुम्भके दौरान इन नदियों में स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मन शुद्ध होता है।
- **आध्यात्मिक अनुभव** — कुम्भ में स्नान करने से व्यक्ति को आध्यात्मिक अनुभव होता है और मन शांत होता है।
- **पौराणिक महत्व** — कई नदियों के साथ पौराणिक कथाएं जुड़ी हुई हैं। इन नदियों में स्नान करने से इन कथाओं से जुड़े पुण्य प्राप्त होते हैं।

- **धार्मिक एकता** — कुम्भ मेला विभिन्न धर्मों और जातियों के लोगों को एक साथ लाता है। नदियों में स्नान करने से सामाजिक एकता और भाईचारे को बढ़ावा मिलता है।

11.17 शाही स्नान/राजसी स्नान

कुम्भ के दौरान सदियों से नदियों में स्नान की परंपरा चलती चली आ रही है। इस स्नान में 13 अखाड़े शामिल होते हैं। ये कोई वैदिक परंपरा नहीं। ऐसा माना जाता है कि इसकी शुरुआत 14वीं से 16वां सदी के बीच हुई, तब देश पर मुगल शासकों के आक्रमण की शुरुआत हो चुकी थी। धर्म और परंपरा को मुगल आक्रांताओं से बचाने के लिए हिंदू शासकों ने अखाड़े के साधुओं और खासकर नागा साधुओं से मदद ली। नागा साधु धीरे-धीरे आक्रामक होने लगे और धर्म को राष्ट्र से ऊपर देखने लगे। ऐसे में मध्यकालीन हिंदू शासकों ने नागा साधुओं के प्रतिनिधि मंडल के साथ बैठक कर राष्ट्र और धर्म के झंडे और साधुओं और शासकों से काम का बंटवारा किया। साधु स्वयं को विशिष्ट महसूस कर सकें, इसके लिए कुम्भस्नान का सबसे पहले लाभ उन्हें देने की व्यवस्था हुई। इसमें साधुओं का वैभव राजाओं जैसा होता था, जिसकी वजह से इसे शाही स्नान कहा गया। इसके बाद से शाही स्नान की परंपरा चली आ रही है।

वक्त के साथ शाही स्नान को लेकर विभिन्न अखाड़ों में संघर्ष होने लगा। साधु इसे अपने सम्मान से जोड़ने लगे। इतिहास के पन्नों में ऐसा उल्लेख मिलता है कि साल 1310 में महानिर्वाणी अखाड़े और रामानंद वैष्णव अखाड़े के बीच खूनी संघर्ष हुआ। दोनों ओर से हथियार निकल गए और पूरी नदी ने खूनी रंग ले लिया। साल 1760 में शैव और वैष्णवों के बीच स्नान को लेकर तनाव बढ़ गया। ब्रिटिश इंडिया में स्नान के लिए विभिन्न अखाड़ों का एक क्रम तय हुआ जो अब तक चलता चला आ रहा है।

इसमें विभिन्न अखाड़ों से ताल्लुक रखने वाले साधु-संत सोने-चांदी की पालकियों, हाथी-घोड़े पर बैठकर स्नान के लिए पहुंचते हैं। सब अपनी-अपनी शक्ति और वैभव का प्रदर्शन करते हैं। इसे राजयोग स्नान भी कहा जाता है, जिसमें साधु और उनके अनुयायी पवित्र नदी में तय वक्त पर डुबकी लगाते हैं। माना जाता है कि शुभ मुहूर्त में डुबकी लगाने से अमरता का वरदान मिल जाता है। यही वजह है कि ये कुम्भमेले का अहम हिस्सा है और सुर्खियों में रहता है। शाही स्नान के बाद ही आम लोगों को नदी में डुबकी लगाने की अनुमति मिलती है।

ये स्नान तय दिन पर सुबह 4 बजे से शुरू हो जाता है। इस वक्त से पहले अखाड़ों के साधु-संतों का जमावड़ा घाट पर हो जाता है। वे अपने हाथों में पारंपरिक अस्त्र-शस्त्र लिए होते हैं, शरीर पर भभूत होती है और वे लगातार नारे लगाते रहते हैं। मुहूर्त में साधु न्यूनतम कपड़ों में या फिर निर्वस्त्र ही डुबकी लगाते हैं। इसके बाद ही आम जनता को स्नान की इजाजत मिलती है।

शाही स्नान का मतलब है संगम में साधुओं और भक्तों का स्नान। जिसके बाद भव्य परेड निकाली जाती है। भक्तों का मानना है कि इससे पुराने सभी पाप धुल जाते हैं। जन्म-मृत्यु के चक्र से मोक्ष और मुक्ति का मार्ग का प्रशस्त होता है।

कुम्भ मेले की शुरुआत शाही स्नान से होती है। कुम्भ का यह सबसे बड़ा आकर्षण होता है, जिसमें अखाड़ों के आचार्य महामंडलेश्वर, महंत और नागा साधु संत शाही स्नान करते हैं और इस दुर्लभ स्नान को अमृत स्नान मानते हैं।

इसके लिए पहले पूरे विधि-विधान से वह हर प्रक्रिया का पालन करते हैं। कुम्भ मेले के दौरान अखाड़ों के शाही स्नान का वक्त तय कर दिया जाता है। उनसे पहले कोई भी स्नान के लिए नदी में नहीं उतर सकता है।

शाही स्नान के प्रारंभ होने का इतिहास

• शास्त्रों में शाही स्नान का वर्णन

शास्त्रों और पुराणों में शाही स्नान को लेकर निकाली जाने वाली पेशवाई का कोई विवरण वर्णित नहीं है लेकिन यह परंपरा सदियों पुरानी है। माना जाता है कि शाही स्नान की शुरुआत 14वीं से 16वीं सदी के बीच हुई थी। तभी मुगल शासक भारत में अपनी जड़ें जमाने लग गए। दोनों का धर्म अलग-अलग होने की वजह से साधु इन शासकों को लेकर उग्र और उनसे सीधे तौर पर संघर्ष करने लग गए थे। जब साधु और शासकों के बीच संघर्ष बढ़ने लगा तो इसके लिए एक बैठक हुई। जिसमें दोनों एक-दूसरे के धर्म का सम्मान करेंगे और धर्म के काम में

हस्तक्षेप नहीं करेंगे। इस बैठक में काम और झंडे का भी बंटवारा किया गया।

• पेशवाई

साधुओं को सम्मान देने के लिए कुम्भ के दौरान विशेष की अनुभूति कराने के लिए हाथी, घोड़ों पर बैठकर उनकी पेशवाई निकाली जाने की परंपरा प्रारंभ हुई। स्नान के दौरान साधुओं का ठाट-बाट राजाओं जैसा होता था। इस कारण से उनके स्नान को शाही स्नान कहा गया। तभी से शाही स्नान की प्रक्रिया चली आ रही है।

• शाही स्नान का प्रक्रिया

अखाड़े के साधु-संत कुम्भ में शाही स्नान के लिए सोने-चांदी की पालिकयों पर बैठकर पेशवाई निकालते हैं। इसके बाद अंग्रेजों द्वारा बनाए गए क्रम और शुभ मुहूर्त में त्रिवेणी के तट पर पहुंचते हैं और जोर-जोर से जयकारे लगाते हैं। माना जाता है शुभ मुहूर्त में गंगा में स्नान करने से जल अमृत बन जाता है, जिससे अमरता प्राप्त होती है। शाही स्नान के बाद आम जनता त्रिवेणी में स्नान करने पहुंचती है।

शाही स्नान की प्रमुख तिथियाँ

- 1 पौष पूर्णिमा
- 2 मकर संक्रांति
- 3 मौनी अमावस्या
- 4 बसंत पंचमी
- 5 माघी पूर्णिमा
- 6 महाशिवरात्रि पर्व (अंतिम शाही स्नान)

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

8. उज्जैन में किस नदी के तट पर कुम्भ पर्व का आयोजन होता है?

.....
.....
.....

9. शाही स्नान क्या है?

.....
.....
.....

10. शाही स्नान की प्रमुख तिथियों के नाम लिखिए।

.....
.....
.....

11.18 दान

तीर्थराज प्रयाग में स्नान, दान और यज्ञ का बड़ा महत्व है। पुराणों में कहा गया है कि गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम पर किया गया दान परलोक में या जन्म-जन्मांतर तक कई गुना होकर दानकर्ता को प्राप्त होता है। प्रयाग के तीर्थ पुरोहित, श्रद्धालु यात्रियों को चौरासी लाख योनियों में जन्म लेने से मुक्ति दिलाने के लिए उन्हें

चौरासी वस्तुओं का दान करने को कहते हैं।

दान का अर्थ है अपनी किसी वस्तु का स्वामी किसी दूसरे को बना देना। दान लेने की स्वीकृति मन से, वचन से या शरीर से दी जा सकती है। दान को स्वीकार करना प्रतिग्रहण है। यह सिर्फ किसी चीज को लेना नहीं है।

जिस चीज को लेने से आध्यात्मिक पुण्य प्राप्त हो और जिसे देते समय पवित्र मंत्र पढ़े जाएं, वहीं दान है।

11.18.1 दान के प्रकार

शास्त्रों के अनुसार दान के मुख्य प्रकार निम्नवत् है –

1. गोदान	2. गुप्तदान	3. अन्न दान
4. फल दान	5. ताम्बूल दान	6. वेणी दान
7. भूमि दान	8. तुला पुरुष दान	9. किंचिद्दान
10. सर्वस्व दान	11. ब्रह्माण्ड दान	12. हिरण्यगर्भ दान
13. कल्पपादप या कल्पवृक्ष दान	14. गोसहस्र दान	15. कामधेनु दान
16. हिरण्याश्व दान	17. हिरण्याश्वरथ दान	18. हेमहस्तिरथ दान
19. पंचलागलक दान	20. धरादान या हेमधरा दान	

कुछ प्रमुख दान के प्रकार का वर्णन निम्नवत् है –

- अन्नदान** – अन्नदान को सबसे बड़ा दान माना जाता है।
- गौदान** – गाय को दान करना भी एक महत्वपूर्ण दान माना जाता है।
- वस्त्रदान** – वस्त्र दान करने से भी पुण्य की प्राप्ति होती है।
- सृजनादान** – इसमें जीवन के लिए आवश्यक सभी सामानों का दान दिया जाता है।
- वेणीदान** – वेणीदान एक हिंदू धार्मिक अनुष्ठान है, विशेषकर दक्षिण भारतीय और महाराष्ट्रियन संस्कृति में प्रचलित है। इसमें एक विवाहित महिला अपने बालों का एक छोटा सा हिस्सा काटकर पवित्र नदी, विशेषकर त्रिवेणी संगम (गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम) में प्रवाहित करती है।

11.18.2 दान के अंग

दान के छह अंग हैं – दाता, प्रतिग्रहीता (दान लेने वाला), श्रद्धा, धर्मयुक्त देय (उचित ढंग से हासिल किया गया धन), उचित काल (सही पर्व योग या संस्कार के समय किया गया दान) और उचित देश–(तीर्थ स्थान इत्यादि)।

11.18.3 इष्टापूर्त

इष्टापूर्त का अर्थ है— यज्ञ और दान से मिलने वाला पुण्य। इस पुण्य के लिए ही दान किया जाता है और यह जन्म-जन्मान्तर तक दान देने वाले को खुशहाल करता है, उसके कष्टों को दूर करता है।

11.18.4 दानकर्ता

दान धर्म का विशेष अंग है। सभी लोग दान कर सकते हैं। शास्त्रों में कहा गया है— दो प्रकार के लोग बुरे हैं— एक तो वह धनवान, जो धन होने पर भी दान नहीं करता। दूसरा वह दरिद्र, जो तप नहीं करता। दान सभी को कर सकते हैं। स्त्री पुरुष बाल गृद्ध सबको दान का अधिकार है। दान देने वाले को धार्मिक, श्रद्धालु, गुणी,

पवित्र होना चाहिए। जो लोग निन्दित व्यवसाय से धन नहीं कमाते उन्हें दान करने का अधिकार है। दान के लिए अपनी ईमानदारी की कमाई का ही इस्तेमाल करना चाहिए। **महर्षि व्यास ने लिखा है – सौ में एक शूर, सहस्रों में एक विद्वान और सौ हजारों में एक वक्ता मिलता है। दाता तो मुश्किल से ही मिलता है।**

11.18.5 दान लेने का अधिकारी

शास्त्रों में लिखा गया है कि चरित्रवान, उपकारी, दीन, अनाथ और गुणी लोगों को दान करना चाहिए। धूर्त, चाटूकार, जुआरी, ठग, चारण और चोर को दिया गया दान व्यर्थ हो जाता है। कपटी और वेद को न जानने वाले ब्राह्मण को भी दान नहीं देना चाहिए।

11.18.6 दान का महत्व एवं दानोत्सव

दान हिंदू धर्म में एक महत्वपूर्ण कर्मकांड है। दान करने से पुण्य की प्राप्ति होती है और मृतक के पितरों को मोक्ष मिलता है। दान का कोई निश्चित नियम नहीं है। लोग अपनी श्रद्धा और सामर्थ्य के अनुसार दान करते हैं।

भीखारी को भीख दी जाती है— वह शास्त्र के अनुसार दान नहीं है। प्रेम से अपने मित्र या नौकर को जो कुछ दिया जाता है उसकी गिनती दान में नहीं होती।

विद्यादान शब्द भी अलंकारिक है। शिष्य विद्या के बदले में गुरु को दक्षिणा देता है। गुरु की महिमा बहुत है, लेकिन वह शिष्य को जो कुछ देता है, वह शास्त्र के अनुसार दान की परिभाषा में शामिल नहीं किया जा सकता।

हर्षवर्धन और प्रयाग का दानोत्सव

गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद उत्तरी भारत में उत्पन्न अंधकार को हर्षवर्धन ने अपने प्रकाश से दूर किया। उन्होंने न केवल अपने शत्रुओं को पराजित किया, बल्कि वर्धन वंश को भी एक सम्मानजनक स्थिति प्रदान की। हर्षवर्धन के शासनकाल के बारे में हमें बाणभट्ट के हर्षचरित और चीनी यात्री ह्वेनसांग के विवरणों से पता चलता है। इन स्रोतों से हमें हर्षवर्धन के धार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक जीवन के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है।

हर्षवर्धन ने प्रयाग में एक विशाल दानोत्सव का आयोजन किया था। इस दानोत्सव का शुभारंभ एक शोभायात्रा के साथ हुआ जिसमें हर्षवर्धन और अन्य राजा, सेनापति शामिल हुए। इस दानोत्सव में 5 वर्ष का राजकोष खाली हो गया। जब दान देने के लिए कुछ नहीं बचा तो हर्षवर्धन ने अपनी बहन राजश्री के पुराने वस्त्र धारण कर लिए। यह दानोत्सव हर्षवर्धन के उदार स्वभाव और धार्मिक सहिष्णुता का प्रतीक है। इसने हर्षवर्धन को एक महान शासक के रूप में स्थापित किया।

11.19 श्राद्धादि

श्राद्ध एक ऐसा संस्कार है जिसमें मृतक के पितरों का श्राद्ध किया जाता है। श्राद्ध में पिंडदान के अलावा अन्य कई संस्कार भी किए जाते हैं, जैसे कि तर्पण, शांति पाठ आदि। श्राद्ध को आमतौर पर पितृ पक्ष में किया जाता है।

श्राद्ध में तर्पण का विशेष महत्व होता है। यह माना जाता है कि तर्पण करने से पितर संतुष्ट होते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है। ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार, तर्पण का जल अलग-अलग योनियों के पितरों को अलग-अलग प्रकार का आनंद प्रदान करता है, जैसे कि देवों को अमृत, मनुष्यों को अन्न और पशुओं को चारा। पिंडदान और श्राद्ध हिंदू धर्म में महत्वपूर्ण संस्कार हैं। ये संस्कार मृतक के आत्मा की शांति के लिए किए जाते हैं।

11.20 तर्पण एवं तर्पण का उद्देश्य

तर्पण

संस्कृत में 'तृप' का अर्थ है 'संतुष्ट करना'। 'तर्पण' शब्द 'तृप' धातु से बना है। देवताओं, ऋषियों, पितरों और मनुष्यों को जल चढ़ाकर उन्हें संतुष्ट करना ही तर्पण कहलाता है।

तर्पण का उद्देश्य

तर्पण करने का उद्देश्य है कि जिन देवताओं, ऋषियों, पितरों आदि के नामों का उच्चारण तर्पण करते समय

किया जाता है, वे हमारे कल्याण को सुनिश्चित करें। ऐसा माना जाता है कि तर्पण करने से देवताओं, ऋषियों और पितरों को संतुष्ट किया जाता है, जिससे वे प्रसन्न होकर हमें आशीर्वाद देते हैं और हमारे जीवन में सुख-समृद्धि लाते हैं।

तर्पण के दौरान, जल में तिल या चावल मिलाकर उसे अंजलि में लेकर संबंधित देवता, ऋषि या पितर के नाम का उच्चारण करते हुए जल को धीरे-धीरे प्रवाहित किया जाता है। यह माना जाता है कि इस प्रकार जल अर्पित करने से उनका आशीर्वाद प्राप्त होता है।

इसके अलावा, तर्पण करने से पितरों को शांति मिलती है और वे अपने अगले जन्म में सुखी जीवन प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए, हिंदू धर्म में तर्पण को एक महत्वपूर्ण कर्मकांड माना जाता है, जिसे श्रद्धा और भक्ति के साथ किया जाना चाहिए।

11.20.1 तर्पण के प्रकार

ब्रह्मयज्ञांग (यज्ञ की अग्नि में किए जाने वाले तर्पण), स्नानांग (प्रत्येक दिन स्नान के बाद किए जाने वाले तर्पण), श्राद्धांग (श्राद्ध के दौरान किए जाने वाले तर्पण) विभिन्न प्रकार के तर्पण हैं जो विभिन्न संस्कारों का हिस्सा हैं और संबंधित अवसरों के दौरान किए जाने चाहिए।

ब्रह्मयज्ञांग तर्पण यज्ञ के दौरान ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर सहित विभिन्न देवताओं को जल अर्पित करने की प्रक्रिया है। यह माना जाता है कि यज्ञ के दौरान देवताओं को तर्पण करने से यज्ञ का फल प्राप्त होता है और देवता प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं।

स्नानांग तर्पण रोजाना स्नान के बाद किया जाता है। इसमें सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश, गुरु, पितृ और अन्य देवताओं को जल अर्पित किया जाता है। यह माना जाता है कि स्नानांग तर्पण करने से दिन भर शुभता और सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है।

श्राद्धांग तर्पण पितृ पक्ष के दौरान पितरों को श्रद्धांजलि देने के लिए किया जाता है। इसमें पितरों के नाम का उच्चारण करते हुए जल अर्पित किया जाता है। यह माना जाता है कि श्राद्धांग तर्पण करने से पितर प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं और परिवार की सुख-समृद्धि का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

इन विभिन्न प्रकार के तर्पणों को सही समय पर और सही विधि से करने से व्यक्ति को धार्मिक पुण्य प्राप्त होता है और उसके जीवन में सुख-समृद्धि आती है। कुम्भ की अवधि में भी तर्पण करने का विधान प्राचीन काल से चलता आ रहा है।

11.20.2 तर्पण की विधि

- बोधायन ने उल्लेख किया है कि तर्पण नदी के किनारे किया जाना चाहिए। तर्पण करते समय, या तो नदी के जल में खड़े हो जाएं ताकि जल नाभि क्षेत्र को स्पर्श करे या नदी के किनारे पर ही इसे करें।
- नदी के जल में खड़े होकर तर्पण करने से कई लाभ होते हैं। नदी का जल पवित्र माना जाता है और इसका स्पर्श करने से व्यक्ति शुद्ध हो जाता है। इसके अलावा, नदी का प्रवाह भी सकारात्मक ऊर्जा का प्रवाह लाता है।
- यदि नदी के किनारे पर ही तर्पण करना हो तो भी ध्यान रखें कि जल का प्रवाह हो रहा हो। स्थिर जल में तर्पण करने की सलाह नहीं दी जाती।
- तर्पण के दौरान, संबंधित देवता, ऋषि या पितर के नाम का उच्चारण करते हुए जल को धीरे-धीरे प्रवाहित किया जाता है। यह माना जाता है कि इस प्रकार जल अर्पित करने से उनका आशीर्वाद प्राप्त होता है।
- इसलिए, तर्पण करते समय नदी के किनारे या नदी के जल में खड़े होकर करने का प्रयास करें। इससे तर्पण का प्रभाव और अधिक बढ़ जाता है।
- देवताओं और ऋषियों के लिए तर्पण करते समय पूर्व दिशा की ओर और पितरों के लिए दक्षिण दिशा की

ओर मुख करके तर्पण करना चाहिए।

- शास्त्रों के अनुसार, देवताओं के लिए तर्पण साव्य दिशा में, ऋषियों के लिए निवित दिशा में और पितरों के लिए अपसव्य दिशा में किया जाना चाहिए।
- तर्पण करने के लिए दरभा आवश्यक है। देवताओं के लिए तर्पण दरभा की नोक से, ऋषियों के लिए दरभा को बीच में मोड़कर और पितरों के लिए दो दरभों की जड़ और नोक से किया जाता है।
- देवताओं के लिए तर्पण देवतीर्थ, अर्थात् अंगुलियों की नोक से, ऋषियों के लिए तर्पण तर्जनी और छोटी उंगली के आधार से और पितरों के लिए अंगूठे और तर्जनी के मध्य भाग से किया जाता है।

देवताओं को एक अंजलि, ऋषियों को दो अंजलि और पितरों को तीन अंजलि जल अर्पित करें। मातृव्रयी (माँ, दादी और परदादी) के लिए तीन अंजलि और अन्य महिलाओं के लिए एक अंजलि जल अर्पित करें।

शब्द 'अंजलि' का मूल अर्थ हाथों को मिलाकर बनाया गया कटोरा है। हालांकि, इस संदर्भ में, 'एक अंजलि जल अर्पित करना' का अर्थ है केवल एक बार जल अर्पित करना।

11.20.3 पितृतर्पण

पितरों के लिए अर्पित जल को पितृतर्पण कहा जाता है। जीवित पितृ के लिए पितृ तर्पण करना वर्जित है।

पितरों को पिंडदान और ब्राह्मणों को भोजन कराने की अपेक्षा के अलावा, पितर अपने वंशजों से जल अर्पित करने की भी अपेक्षा करते हैं। यह माना जाता है कि पितृतर्पण करने से पितरों को संतुष्टि मिलती है और वे अपने वंशजों को आशीर्वाद देते हैं। पितृतर्पण न केवल पितरों को संतुष्ट करता है, बल्कि यह हमें अपने पूर्वजों के प्रति सम्मान और कृतज्ञता व्यक्त करने का अवसर भी प्रदान करता है।

11.20.4 तर्पण का समय

देवताओं, ऋषियों और पितरों का तर्पण नियमित रूप से (हर दिन) किया जाना चाहिए। तर्पण प्रतिदिन स्नान के बाद प्रातःकाल किया जाना चाहिए। यदि प्रतिदिन पितरों के लिए श्राद्ध करना संभव न हो तो कम से कम तर्पण अवश्य करना चाहिए। पर्वण श्राद्ध के अगले दिन पितृ तर्पण किया जाना चाहिए।

11.20.5 तर्पण एवं तिल तर्पण का महत्व

जब तर्पण किया जाता है, तो केवल पितर ही संतुष्ट होकर नहीं जाते हैं, बल्कि वे तर्पण करने वाले को दीर्घायु, तेज, ब्रह्मवर्चस (ब्रह्म का ज्ञान), धन, सफलता और अन्नाद्य (भोजन पचाने की क्षमता) भी प्रदान करते हैं और उसे संतुष्ट करते हैं।

तिल दो प्रकार के होते हैं – काले और सफेद। श्राद्ध के लिए काले तिल का प्रयोग करना चाहिए। यदि तिल उपलब्ध न हो तो सोने या चांदी का प्रयोग करना चाहिए। तिल के पानी से पितरों के लिए किया जाने वाला तर्पण तिलतर्पण कहलाता है। तिलतर्पण उन्हीं पितरों के लिए किया जाना चाहिए जिनके लिए श्राद्ध किया गया है। तिलतर्पण दशाह श्राद्ध से पहले और वार्षिक श्राद्ध के अगले दिन किया जाता है। अन्य श्राद्धों के मामले में, तिलतर्पण श्राद्ध के तुरंत बाद किया जाता है। नंदी श्राद्ध, सपिंडी श्राद्ध आदि के दौरान तिलतर्पण नहीं किया जाता है। पितरों को तिल पसंद होते हैं। जब तिल का प्रयोग किया जाता है, तो राक्षस श्राद्ध में बाधा नहीं डालते हैं। श्राद्ध के दिन पूरे घर में तिल छिड़कना चाहिए, आमंत्रित ब्राह्मणों को तिल का पानी देना चाहिए और तिल का दान करना चाहिए।

11.20.6 पिंडदान

पिंडदान एक ऐसा संस्कार है जिसमें मृतक के पितरों को तिल के बने पिंड का भोग लगाया जाता है। मान्यता है कि यह पिंड मृतक के पितरों को संतुष्ट करता है और उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती है। पिंडदान को आमतौर पर श्राद्ध के दौरान किया जाता है। पिंड दान कुम्भ मेले के दौरान किया जाने वाला एक और गहत्वपूर्ण अनुष्ठान है। यह मृत पूर्वजों की आत्मा को शांति और मुक्ति प्रदान करने के लिए किया जाता है। श्रद्धातु चावल और तिल से बने पिंड अर्पित करते हैं, जिससे आत्माओं को प्रेत योनि से मुक्ति मिलती है।

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

11. दान का क्या अर्थ है?

.....

12. दान के अंग हैं?

.....

13. तर्पण किसे कहते हैं?

.....

14 तर्पण के महत्व को लिखिए।

.....

15. पिंडदान क्या है?

.....

11.21 सारांश

भारतीय संस्कृति का आधार त्याग और सेवा की भावना है। 'ईशावास्योपनिषद्' में कहा गया है कि इस संसार में जो कुछ भी है, वह ईश्वर का है। हमें उसका त्याग करते हुए, बिना किसी स्वार्थ के, सबके साथ बांटना चाहिए। कुम्भमेले का एक महीने का कल्पवास इसी त्यागमय जीवन दर्शन का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। कल्पवासी सत्य, तप, दान और शुद्धता के लिए प्रतिज्ञा करते हैं और गृहस्थ जीवन के सुखों का त्याग करते हैं। वे भारतीय संस्कृति के उस आदर्श को जीवंत करते हैं जिसमें त्याग और सेवा को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। आज के भौतिकवादी युग में, जब लोग धन और शक्ति के पीछे भाग रहे हैं, कुम्भमेला हमें त्याग और सेवा के मार्ग पर चलने का प्रेरणा देता है। यह भारत की उस अद्वितीय पहचान को दर्शाता है जिसके लिए भारत विश्वभर में जाना जाता है।

भारतीय संस्कृति में नदी-स्नान का विशेष महत्व है। हमारी संस्कृति ने समय और स्थान के इतने सूक्ष्म संबंध को समझा है और उसे इतने व्यापक रूप में जन-जीवन में समाहित किया है कि यह अद्वितीय है। भारत में, देश के विशाल आकार और समय की अनंतता के बीच किसी विशेष क्षण को इतनी महत्ता दी जाती है कि लाखों लोग एक साथ स्नान करने के लिए इकट्ठा होते हैं। यह आस्था का एक अद्भुत प्रदर्शन है। जनता की इस अटूट आस्था को देखकर विदेशी भी प्रभावित हुए हैं और उन्होंने भारतीयों की धार्मिक भावनाओं की गहराई को स्वीकार किया है। तीर्थराज प्रयाग में सदैव तथा कुम्भ के दौरान स्नान, दान और यज्ञ का बड़ा महत्व है। पुराणों में कहा गया है कि गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम पर किया गया दान परलोक में या जन्म-जन्मान्तर तक कई गुना होकर दानकर्ता को प्राप्त होता है। प्रयाग के तीर्थ पुरोहित, श्रद्धालु यात्रियों को चौरासी लाख योनियों में जन्म लेने से मुक्ति दिलाने के लिए उन्हें चौरासी वस्तुओं का दान करने को कहते हैं। मान्यता है कि महाकुम्भके दौरान संगम का जल अमृतमय हो जाता है। जहां स्नान करने से श्रद्धालुओं के पापों का नाश होता है और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

11.22 अभ्यास के प्रश्न

1. आस्था का प्रतीक कुम्भ की विवेचना कीजिए।
2. कल्पवास के अर्थ एवं महत्व को लिखिए।
3. शाही स्नान का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
4. दान और दान के प्रकार को समझाइए।
5. तर्पण की विभिन्न विधियों को लिखिए।

11.23 चर्चा के बिन्दु

1. आस्था का प्रतीक कुम्भ विषय पर चर्चा कीजिए।
2. कल्पवास के महत्व पर चर्चा कीजिए।

11.24 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. आस्था एक ऐसा भाव है जो विश्वास, आशा और समर्थन को अपने में समाहित करता है। यह किसी भी निराकार या साकार स्वरूप के प्रति गहन निष्ठा और समर्पण का भाव है।
2. आस्था के दो आयाम निम्नवत् वर्णित हैं –
 - i. **विश्वास** – आस्था का सबसे महत्वपूर्ण आधार विश्वास है। यह विश्वास किसी व्यक्ति, विचार, सिद्धांत या देवता में हो सकता है। यह विश्वास व्यक्ति को आंतरिक शक्ति प्रदान करता है और उसे कठिन परिस्थितियों में भी डटे रहने का साहस देता है।
 - ii. **आशा** – आस्था आशा का पर्यायवाची है। यह व्यक्ति को भविष्य के प्रति आशावादी बनाती है और उसे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। आशा व्यक्ति को निराशा से बाहर आने में मदद करती है और उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।
3. कुम्भ शब्द का अर्थ है 'घट' या 'कलश'।
4. कुम्भ में आस्था की दृष्टि से प्रयागराज धरा का महत्व निम्नवत् वर्णित है –
 - i. **तीर्थों का राजा** – प्रयागराज को तीर्थों का राजा कहा जाता है। गंगा, यमुना और सरस्वती नदियों का संगम होने के कारण इसे विशेष महत्व प्राप्त है।
 - ii. **मोक्ष का द्वार** – मान्यता है कि यहां स्नान करने से सभी पाप धुल जाते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है।
5. कल्पवास का अर्थ है एक विशेष अवधि के लिए धार्मिक अनुष्ठान करना, जिसमें जप, तप, हवन और सत्संग शामिल होते हैं।
6. कल्पवास मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है –
 - i. **चंद्रमास कल्पवास** – यह पौष पूर्णिमा से माघी पूर्णिमा तक होता है।
 - ii. **शौर्य मास कल्पवास** – यह मकर संक्रांति से कुम्भ संक्रांति तक होता है।
7. अमेरिकी वैज्ञानिक प्रोफेसर बर्नार्ड विटलिन।
8. उज्जैन में शिप्रा नदी के तट पर कुम्भ पर्व का आयोजन होता है।
9. शाही स्नान का मतलब है संगम में साधुओं और भक्तों का स्नान। जिसके बाद भव्य परेड निकाली जाती है। भक्तों का मानना है कि इससे पुराने सभी पाप धुल जाते हैं। जन्म-मृत्यु के चक्र से मोक्ष और मुक्ति का मार्ग का प्रशस्त होता है।

10. शाही स्नान की प्रमुख तिथियाँ हैं — पौष पूर्णिमा, मकर संक्रांति, मौनी अमावस्या, वसंत पंचमी, माघी पूर्णिमा, महाशिवरात्रि पर्व (अंतिम शाही स्नान)।
11. दान का अर्थ है अपनी किसी वस्तु का स्वामी किसी दूसरे को बना देना। दान लेने की स्वीकृति मन से, वचन से या शरीर से दी जा सकती है। दान को स्वीकार करना प्रतिग्रहण है।
12. दान के छह अंग हैं — दाता, प्रतिग्रहीता (दान देने वाला), श्रद्धा, धर्मयुक्त देय (उचित ढंग से हासिल किया गया धन), उचित काल (सही पर्व योग या संस्कार के समय किया गया दान) और उचित देश—(तीर्थ स्थान इत्यादि)।
13. संस्कृत में 'तृप' का अर्थ है 'संतुष्ट करना'। 'तर्पण' शब्द 'तृप' धातु से बना है। देवताओं, ऋषियों, पितरों और मनुष्यों को जल चढ़ाकर उन्हें संतुष्ट करना ही तर्पण कहलाता है।
14. जब तर्पण किया जाता है, तो केवल पितर ही संतुष्ट होकर नहीं जाते हैं, बल्कि वे तर्पण करने वाले को दीर्घायु, तेज, ब्रह्मवर्चस (ब्रह्म का ज्ञान), धन, सफलता और अन्नाद्य (भोजन पचाने की क्षमता) भी प्रदान करते हैं और उसे संतुष्ट करते हैं।
15. पिंडदान एक ऐसा संस्कार है जिसमें मृतक के पितरों को तिल के बने पिंड का भोग लगाया जाता है। मान्यता है कि यह पिंड मृतक के पितरों को संतुष्ट करता है और उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती है।

11.25 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भारतीय संस्कृति, नरेन्द्र मोहन, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
2. वैदिक साहित्य और संस्कृति, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली-7
3. हिन्दू दर्शन: एक समकालीन दृष्टि, डॉ. कर्णसिंह, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
4. भारतीय समाज व संस्कृति, रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली-7
5. अग्रवाल, मीनू (2013) : कुम्भ पर्व प्रयाग, इलाहाबाद: राजपाल एंड कम्पनी।
6. क्रासा, मिलोस्लाव (1965): कुम्भ मेला: द ग्रेटेस्ट पिलग्रीमेज इन द वर्ल्ड, न्यू ओरिन्ट
7. गुप्ता, एस.पी. एवं अलका गुप्ता (2019): भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएँ, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन ।
8. गुप्ता, मोतीलाल (2013): भारत में समाज, जयपुर: राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
9. दिनकर, रामधारी सिंह (2009): संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन
10. दूबे, देवी प्रसाद (2009): कुम्भपर्व प्रयाग, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन
11. दूबे, डी.पी. (सं.) (2013): कुम्भ मेला, पिलग्रीमेज टू द ग्रेटेस्ट कॉस्मिक फेयर इलाहाबाद: सोसाइटी ऑफ पिलग्रीमेज स्टडीज ।
12. दूबे, एच. एन. (2012): भारतीय संस्कृति, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन ।
13. नेहरू, जवाहरलाल (1961): द डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, न्यू देल्ही: नेहरू मेमोरियल फण्ड।
14. महात्मा गाँधी (2010): हिन्द स्वराज, इलाहाबाद: कस्तूरबा गाँधी केन्द्र: प्रभात प्रकाशन
15. बनर्जी, एन. एन. (1977): पूर्ण कुम्भ ऐट प्रयाग, हिन्दुत्व, 9-10

इकाई – 12 : सामाजिक समरसता और कुम्भ

इकाई की रूपरेखा

- 12.0 प्रस्तावना
 - 12.1 उद्देश्य
 - 12.2 सामाजिक समरसता से तात्पर्य
 - 12.3 भारतीय संस्कृति और सामाजिक समरसता
 - 12.4 तीर्थ यात्रा और कुम्भ
 - 12.5 कुम्भपर्व, लघु भारत की संकल्पना और सामाजिक समरसता
 - 12.6 सम्राट हर्ष का महादानपर्व
 - 12.7 पौराणिक कुम्भ कथाएं सामूहिक प्रयास का महत्व निरूपित करती हैं
 - 12.8 कुम्भपर्व में देव, प्रकृति और जन
 - 12.9 कुम्भपर्व स्नान परम्परा, कल्पवास और सामूहिक जीवन
 - 12.10 सांस्कृतिक-सामाजिक व्यवस्था के प्रतीक अखाड़े
 - 12.11 सारांश
 - 12.12 अभ्यास के प्रश्न
 - 12.13 चर्चा के बिन्दु
 - 12.14 बोध-प्रश्नों के उत्तर
 - 12.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें
-

12.0 प्रस्तावना

कुम्भ मेले को यूनेस्को ने मानवता की अमूर्त धरोहर का दर्जा दिया है। कुम्भ मेला शायद दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक मेला है। सभी पंथ, जाति, वर्ग, आयु के लोग इसमें शामिल होते हैं। भारत का सांस्कृतिक वैभव इन मेलों में जीवन्त हो उठता है। प्रयाग, नासिक, हरिद्वार और उज्जैन में नदियों के तट पर लगने वाले कुम्भ की आध्यात्मिक, पौराणिक, ज्योतिषीय गाथाएं कुम्भ की अवधारणाओं से सम्बन्धित जिज्ञासाओं का आधार है। तथापि मेले, त्योहार, धार्मिक आयोजन समाज को एक सूत्र में बांधने का कार्य भी करते हैं। यह विश्व का अद्वितीय मेला है। आस्था और तपस्या का अनूठा संगम है। भारतीय संस्कृति ने सहस्राब्दियों से जिन सांस्कृतिक और दार्शनिक मूल्यों को जन्म दिया, जिन जीवनमूल्यों और जीवन शैलियों की रचना की, उन सबका समागम कुम्भ पर्व आयोजन में देखा जा सकता है। सामूहिक पूजा, आराधना, प्रवचन, सत्संग, अखाड़े, मठ, मठाधीश, रंग बिरंगी पताकाएं, धर्मध्वजाएं, तम्बू, मण्डप, मंचान से जुड़कर कुम्भ से जुड़े नगर अद्भुत नगरी का रूप धारण कर लेते हैं। चारों नगरों – प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन – के अलग अलग समयों पर पड़ने वाले कुम्भ पर्व छोटे-बड़े, अमीर-गरीब, राजा-प्रजा, बाल-वृद्ध, गृहस्थ-संन्यासी, सभी को तीर्थयात्रा या स्नान कर्म के लिए आकर्षित करते हैं।

12.1 उद्देश्य

1. भारतीय संस्कृति में समरसता के भाव को उजागर करना
2. सामाजिक समरसता के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना
3. सामाजिक समरसता की स्थापना में मेलों की भूमिका स्पष्ट करना

4. कुम्भ पर्व के विशेष सन्दर्भ में सामाजिक एकता, सौहार्द, समरसता का भाव जाग्रत करने की प्रेरणा देना

12.2 सामाजिक समरसता से तात्पर्य

सामाजिक समरसता का मूल मंत्र समानता है, समाज में व्याप्त सभी प्रकार के भेदभावों को मिटाकर परस्पर प्रेम और सौहार्द से सभी वर्गों में एकता का संचार होना समरसता है। समरसता का आशय है— संसार में विद्यमान चेतन — अचेतन जगत के समस्त घटकों को अपने समान समझना तथा उनका आदर करना। सामाजिक समरसता की कसौटी है कि हर व्यक्ति विशिष्ट है, परन्तु एक दूसरे से जुड़ा है।

12.3 भारतीय संस्कृति और सामाजिक समरसता

“असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय।।” (वृहदारण्यक उपनिषद्, 1,3,28,) में असत से सत की ओर, अन्धकार से ज्योति की ओर तथा मृत्यु से अमरत्व की ओर जाने की प्रार्थना है। कुम्भपर्व अमरता पाने की उत्कंठा का पर्व कहा जा सकता है।

समरसता के उद्घोषमूलक कई मंत्र भारतीय साहित्य में गुंजित हैं। जैसे — “अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्” अर्थात् अपना पराया की गणना लघु यानि संकुचित हृदय वाले करते हैं। “उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्” उदारचरित वालों के लिए पूरी वसुधा कुटुम्ब के समान है। वसुधैव कुटुम्बकम् की यह भारतीय अवधारणा पाश्चात्य शब्दावली में ग्लोबलाइजेशन या वैश्वीकरण का पर्याय मान ली गई। उपनिषदों का मूल मंत्र था— “सर्वं खलु इदं ब्रह्म” अर्थात् परमात्मा इस सृष्टि के सभी सूक्ष्म या स्थूल तत्वों में विद्यमान है। जब सभी में परमतत्त्व विद्यमान है तो भेदभाव कैसा?

सूरदास कहते हैं— “जात पात पूछत नहि कोउ, श्रीपति के दरबार”। भारतीय संस्कृति में सभी के सुखी, निरोगी और स्वस्थ होने की कामना मंत्रों में की गई है— “सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग भवेद्।।” सहयोग, सहकार की भावना भारतीय संस्कृति में स्वीकृत थी—“संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम्,”।

12.4 तीर्थयात्रा और कुम्भ

कुम्भमेले में लोगों का आना तीर्थयात्रा का अंग है। तीर्थ शब्द का अर्थ होता है—किसी नदी के किनारे उतरने के लिए बना रास्ता, सड़क घाट या सीढ़ियां इसप्रकार तीर्थ यात्रा का अर्थ—नदी घाटों की यात्रा करना कहा जा सकता है। तीर्थयात्रा का उद्देश्य भौतिक सांसारिक जटिलताओं से दूर पुण्यार्जन लाभ होता है। कुम्भपर्व ऐसे ही अवसर है। कुम्भ के दौरान एकतीर्थ पर एक स्नानपर्व पर कई बार इतने तीर्थयात्री एकत्र हो जाते हैं कि उनकी संख्या कई देशों की जनसंख्या से भी अधिक हो जाती है। उनकी श्रद्धा और आस्था ही उनमें समरसता की बेल सींचती है। भक्ति समरसता को दृढ़ता देती है।

12.5 कुम्भपर्व, लघु भारत की संकल्पना और सामाजिक समरसता

प्रत्येक देश, प्रदेश, नगर की अपनी विशिष्टता होती है। कुम्भ मेले में अलग अलग भाषा, वेशभूषा, बोली, परम्परा, संस्कृति, विचार, कार्य के लोगों का समागम होता है। कुम्भ मेले राष्ट्रीय समरसता, सौहार्द, समभाव, सहिष्णुता, एकता, वसुधैव कुटुम्बकम् की प्रेरणा दे जाते हैं। कुम्भपर्व पर विराट मेला लगता है। श्रद्धालु, दर्शक, महन्त—सन्यासी—गृहस्थ स्नानार्थी, कर्मकाण्डी पुजारी, पर्यटक आदि मेले में एकत्र होते हैं। दुकानदार, खरीददार, व्यवसाय, व्यापार, विपणन, आधारभूत जरूरतों की उपलब्धता, अस्थाई वास, तम्बू, प्रवचन, भण्डारे, संगीत—भजन, स्नान, मुण्डन, वेणीदान, श्राद्ध आदि क्रियाएं होती हैं। आवश्यकता और व्यवस्था सांस्कृतिक एकीकरण का साधन बनती हैं। साधु, सन्त विचारक और करोड़ों तीर्थयात्री देश विदेश के कोने कोने से आकर प्रवास करते हैं एवं विचारों का आदान प्रदान करते हैं, जिससे नगर की संस्कृति विराट रूप ले लेती है। सर्वधर्म समभाव, सर्वभाषा समवाय, सर्वमतानुयायी सन्तों का सम्मिलन, संस्कृति का प्रवाह, तीर्थ क्षेत्र में लघु भारत का रूप धारण कर लेता है। कुम्भ मेलों में जाति, पंथ, भाषा के भेदों को भुलाकर सभी दर्शनार्थी, स्नानार्थी और कल्पवासी आध्यात्मिक पुण्य की प्राप्ति के लिए एकत्र होते हैं। भारत की समन्वित संस्कृति को यहां देखा जा सकता है जिसमें नदी के पावन जल में स्नान करके पुण्य अर्जन की कामना है, साथ ही भविष्य में पुण्य कार्यों के सम्पादन के लिए संकल्प भी है। मानव कल्याण की भावना इन पर्वों पर बलवती होती है। सामर्थ्यवान अपने से कम सामर्थ्यवालों को दान देते हैं। धार्मिक

चर्चाएं, भण्डारे, भजन, गीत, वाद्य, कर्मकाण्ड सभी सामूहिक रूप से सम्पन्न होते हैं। इस सामूहिकता में समरसता दर्शित होती है। भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिक चेतना का प्रधान तत्व त्याग वृत्ति है। भोग का त्यागपूर्वक उपभोग अनासक्तिपूर्वक भोग, और दानपूर्वक भोग की परम्परा भारतीय साहित्य और जीवन में अभिव्यक्त हुई है। ईशावास्योपनिषद में कहा गया है –

**ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चित् जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यचिद् धनम् ।”**

अर्थात् इस जगत में सर्वत्र ईश्वर व्याप्त है। तुममें भी ईश्वर है। इस जगत में जो कुछ व्याप्त है वह सब ईश्वर से व्याप्त है, अतः त्यागपूर्वक उसका भोग करो, किसी के धन पर लालच मत करो। कुम्भ मेलों में सामर्थ्यवानों द्वारा वंचितों, दीनों, गरीबों को दान देना समरसता स्थापना की कोशिश है, भले ही उसका उद्देश्य धार्मिक कल्याण या पुण्यार्जन हो। कुम्भपर्व आयोजन का मूल तत्व मानव मात्र का कल्याण है। ह्वेनसांग ने लिखा है कि सम्राट हर्ष प्रति पांचवे वर्ष प्रयाग में त्रिवेणी तट पर एक बड़े धार्मिक अनुष्ठान में भाग लेते थे और अपनी अर्जित सम्पत्ति विद्वानों, पुरोहितों, साधुओं, भिक्षुओं, विधवाओं, और असहायों में वितरित कर देते थे।

12.6 सम्राट हर्ष का महादानपर्व

सम्राट हर्ष के प्रयाग में आगमन पर, 18 देशों के राजा भी उनके भव्य जुलूस में शामिल हुए थे। ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार पहले दिन बुद्ध की मूर्ति स्थापित की गई थी। हर्ष ने उन्हें बहुमूल्य रत्नाभरण भेंट किए। दूसरे दिन सूर्य की मूर्ति स्थापित की गई और पहले दिन की अपेक्षा आधी वस्तुएं दान दी गईं। तीसरे दिन महादेव की मूर्ति स्थापित की गई और दूसरे दिन की तरह ही दान वितरित किया गया। चौथे दिन बौद्ध धर्म संघ के 10,000 पंडितों और भिक्षुओं को दान दिया गया। लगातार 20 दिनों तक दान दिया गया। 10 दिन तक अन्य धर्मावलम्बियों को दान दिया गया। फिर 10 दिन तक दूर दूर से आए व्यक्तियों को दान दिया गया। इसप्रकार 74 दिवसों तक दान का क्रम चलता रहा था।

उक्त विवरण के आधार पर कह सकते हैं कि ब्राह्मण, श्रमण, तथा अन्यान्य सम्प्रदाय के लोग भी उनके दान के पात्र थे।

12.7 पौराणिक कुम्भ कथाएं सामूहिक प्रयास का महत्व निरूपित करती हैं

समुद्रमंथन से अमृत कुम्भ की प्राप्ति हुई थी। समुद्र मंथन देवों और असुरों के सामूहिक प्रयास का प्रतिफल था। समुद्र मंथन से 14 रत्न मिले थे जिसमें अमृत कलश सबसे महत्वपूर्ण था। भारतीय संस्कृति की जाग्रत संचेतना का उत्स अमरत्व की प्राप्ति है। “मृत्योर्मा मृतं गमय”। अमृतकुम्भ पाने की लालसा ने ही देवों और असुरों को अमृत कलश लेने के लिए आतुर किया। इस आतुरता में दोनों ही समरसता की सुध खो बैठे। अमृत कलश लेकर भागा दौड़ी में देवों और असुरों ने अपनी ताकत लगा दी। सामूहिक प्रयास से ही रत्न मिले, अमृत मिला। अमृत पाने की जिजीविषा आपसी होड़ का भी कारण बनती है। लिप्सा और अति लालसा व्यक्ति को स्वार्थी बना देती है। सामूहिक प्रयास से प्राप्त अमृत का वितरण समूह में होना चाहिए, जो दुष्कर है।

12.8 कुम्भ पर्व में देव, प्रकृति और जन

सनातन धर्म सामंजस्य का धर्म है। जहां विरोध और घर्षण है, वहां विनाश और, अराजकता है। कुम्भ में देव हैं, प्रकृति है, जन हैं। पर दूर देश से आए साइबेरियन पक्षी भी प्रयाग संगम में आते हैं। कुम्भ पर्व भौतिकतावादी संस्कृति में थके हारे जन को प्रकृति से मित्रता, करने की शिक्षा भी देता है। कुम्भपर्व पर पूरे भारत से लोग जाति, वर्ग, पंथ, सम्प्रदाय, प्रान्त, भाषा, बोली, पहनावा, खानपान की दीवारों को लांघकर समानरूप से उपलब्ध भौतिक साधनों का उपयोग करते, स्नानदान क्रियाएं सम्पन्न करते, धार्मिक प्रवचनों, क्रियाओं में भाग लेते, समरसता का सन्देश देते हैं। अमर पुण्य की प्राप्ति उनका ध्येय होता है जिसमें परोपकार, सहयोग, समानता जैसे गुण पल्लवित होते हैं।

12.9 कुम्भपर्व स्नान परम्परा, कल्पवास और सामूहिक जीवन

मेले प्राचीन काल से ही भारत के सामूहिक जीवन की महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। धार्मिक मेले भारतीय संस्कृति

की सामूहिक पूजा और आराधना के भाव को व्यक्त करते हैं। चार स्थानों पर विशिष्ट ग्रह योग में लगने वाले कुम्भ मेले में प्रति 12वें वर्ष अनगिनत यात्री, स्नानार्थी, ग्रहस्थ, साधु-सन्त, महात्मा, सन्यासी, पर्यटक आस्था और दर्शन, अमृत और मोक्ष, पुण्य की प्राप्ति और पाप के विनाश हेतु आते हैं। प्रयाग में प्रत्येक वर्ष माघ मास में एक मास तक कल्पवास करने, धार्मिक आचरण और क्रियाएँ करने की परम्परा भी है जिसमें विविध संस्कृतियों, भाषाओं, परिधानों, के लोग होते हैं, घासफूस की कुटिया बनाकर रहते हैं, एक साथ सामूहिक रूप से स्नान-दान-श्राद्ध आदि करते और तपस्वी जैसा जीवन व्यतीत करते हैं। कुम्भ पूरे एक महीने चलता है। कुछ विशिष्ट तिथियों पर स्नान का महत्व अधिक होता है। चैत्र पूर्णिमा के दिन हरिद्वार स्थित हरि की पौड़ी में, प्रयाग में संगम पर माघ अमावस्या पर तथा नासिक में रामघाट पर भाद्रपद की अमावस्या या सावन की पूर्णिमा पर स्नान होता है। उज्जैनी में वैशाख पूर्णिमा या कार्तिक अमावस्या को स्नान महत्वपूर्ण माना जाता है।

12.10 सांस्कृतिक – सामाजिक व्यवस्था के प्रतीक अखाड़े

अखाड़ा शब्द संस्कृत के अखण्ड शब्द का अपभ्रंश कहा गया है। “अखाड़ा नाहमादिखण्डो यत्र स अखण्ड उदाहृतः” अर्थात् मैं और मेरा का भेद न हो उसे अखाड़ा कहते हैं। अखाड़े सांस्कृतिक –सामाजिक व्यवस्था के प्रतीक हैं। अलग अलग संगठनों में विभक्त होते हुए भी एकता के द्योतक हैं। अखाड़ों में विभिन्न पदों पर प्रतिष्ठित महंत, श्रीमहंत, मुख्य महंत, स्थानीय महंत, सचिव, अधिकारी, कोठारी, पुजारी – सबका अलग अलग दायित्व होता है। प्रायः ये पदाधिकारी आजीवन ब्रह्मचारी रहते हैं और विरक्त जीवन बिताते हुए अखाड़ों की सेवा करते हैं। इन अखाड़ों का कर्तव्य त्याग, तपस्या, विवेक, वैराग्य, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की समाज में स्थापना करना होता है।

12.11 सारांश

भारतीय संस्कृति समरसता का पोषण करती है। कुम्भ परम्परा भारतीय संस्कृति की इस विशिष्टता से अछूती नहीं रही। कुम्भपर्व पर लगने वाले मेले सामाजिक समरसता का सन्देश देते हैं। पंथ, जाति, भाषा, वर्ग, समुदाय, देश, नगर, परम्पराएं, जीवनस्तर आदि के भौतिक बन्धनों को विस्मृत कर त्याग और संयमपूर्वक जीवनयापन की शिक्षा से समरसता की बेल पनपती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. अखाड़ा शब्द का क्या अर्थ होता है?

.....

2. कल्पवास से आप क्या समझते हैं?

.....

12.12 अभ्यास के प्रश्न

1. सामाजिक समरसता से आप क्या समझते हैं?
2. सामाजिक समरसता और कुम्भपर्व पर लगभग 200 शब्दों में अपने विचार लिखिए।
3. कुम्भ के सन्दर्भ में महादान पर्व से क्या आशय है?
4. कुम्भ पर्व आयोजन सामाजिक समरसता स्थापित करने में किस प्रकार सहायक हो सकता है?

12.13 चर्चा के बिन्दु

- अखाड़ों पर चर्चा कीजिए।
- कल्पवास पर चर्चा कीजिए।

12.14 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. जहाँ मैं और मेरा का भेद न हो उसे अखाड़ा कहते हैं।
2. प्रयाग में संगम के किनारे स्नान-दान-श्राद्ध आदि धार्मिक क्रियाओं को करते हुए एक माह तक तपस्वी की भाँति आचरण करते हुए रहना कल्पवास कहलाता है।

12.15 शब्दावली

1. अखाड़े – साधु सन्तों का संगठन
2. कल्पवास – एक मास तक माघ मास में प्रयाग में संगम तट पर अस्थायी आवास में रह कर स्नान, दान आदि करना
3. तीर्थ शब्द का अर्थ होता है—किसी नदी के किनारे उतरने के लिए बना रास्ता, सड़क घाट या सीढ़ियाँ
4. तीर्थयात्रा – धार्मिक यात्रा
5. वसुधैव कुटुम्बकम्— वसुधा के सभी प्राणी कुटुम्ब के समान

12.16 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. डा मीनू अग्रवाल, कुम्भपर्व प्रयाग, 2013, प्रकाशक : राजपाल एंड कम्पनी इलाहाबाद, ISBN 81-89538-13-6
- 2- डा मीनू अग्रवाल, कुम्भपर्व, राजपाल एंड कम्पनी, इलाहाबाद, 2013, ISBN- 81-89538-13-6
3. राम नरेश त्रिपाठी, कुम्भ दर्शन 2001, इलाहाबाद, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तरप्रदेश
4. राम नरेश त्रिपाठी, अर्द्धकुम्भ 2007, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तरप्रदेश
5. चतुर्वेदी, हेरम्ब, कुम्भ ऐतिहासिक वाङ्मय, वाणी प्रकाशन, 2019,
6. पं. सीताराम शास्त्री एवं पं. रामावतार शर्मा कृत प्रयाग माहात्म्य, प्रकाशन वर्ष अज्ञात, ई गंगोत्री पर उपलब्ध,
- 7- Dr. D.P. Dubey, Prayag, The Site of Kumbh Mela, Aryan Books International, New Delhi 2001

इकाई – 13 : प्रमुख अखाड़ों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

13.0 प्रस्तावना

13.1 उद्देश्य

13.2 अखाड़ों की स्थापना

13.3 अखाड़ों की विशेषताएँ

13.4 प्रमुख अखाड़े

13.4.1 दशनामी अखाड़े

13.4.1.1 जूना अखाड़ा

13.4.1.2 निर्वाणी अखाड़ा

13.4.1.3 निरंजनी अखाड़ा

13.4.1.4 आवाहन अखाड़ा

13.4.1.5 अटल अखाड़ा

13.4.1.6 आनन्द अखाड़ा

13.4.1.7 अग्नि अखाड़ा

13.5 वैष्णव अखाड़ा

13.5.1 दिगम्बर अनी अखाड़ा

13.5.2 श्री निर्वाणी अनी अखाड़ा

13.5.3 निर्मोही अखाड़ा

13.6 उदासीन अखाड़ा

13.6.1 उदासीन बड़ा पंचायती अखाड़ा

13.6.2 उदासीन नया अखाड़ा

13.7 निर्मल अखाड़ा

13.8 किन्नर अखाड़ा

13.9 सांराश

13.10 अभ्यास के प्रश्न

13.11 चर्चा के बिन्दु

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.0 प्रस्तावना

भारतीय सनातन धर्म में अखाड़ा एक धार्मिक संस्थाओं का प्राचीन स्वरूप है, जो संत समाज को संगठित रखने तथा धार्मिक क्रियाकलाप, पूजा पद्धतियों तथा विचारों के प्रचार-प्रसार में योगदान देने के उद्देश्य से स्थापित

हुए। ये अखाड़े न केवल धर्म और समाज की रक्षा करते थे बल्कि हिन्दू धर्म के आध्यात्मिक मूल्यों एवं परम्पराओं को जीवित रखने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। सनातन धर्म में अखाड़ों का अत्यंत महावपूर्ण स्थान है।

अखाड़ा, मूलतः साधुओं का एक सैनिक संगठन था, जिसके अनुयायी वर्तमान समय में प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन व नासिक के कुंभ, अर्द्धकुम्भ व महाकुम्भ के पर्व पर अपने शस्त्र धारण करते हैं। सामान्यतः अखाड़ा शब्द की संज्ञा मठ से की जाती है। परन्तु अखाड़े वे स्थान हैं, जहाँ परम्परागत सम्प्रदाय के योद्धा संन्यासी निवास करते हैं।

13.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्, आप इस योग्य हो जायेंगे कि :-

- अखाड़ों के बारे में जान सकेंगे।
- अखाड़ों की स्थापना के उद्देश्य के बारे में जान सकेंगे।
- प्रमुख अखाड़ों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- शैव अखाड़े, वैष्णव अखाड़े और उदासी अखाड़ों का वर्णन कर सकेंगे।
- अखाड़ों के रीति-रीवाजों के बारे में जान सकेंगे।

13.2 अखाड़ों की स्थापना

अखाड़ा शब्द 'अखण्ड' का तत्सम रूप है, जिसका तात्पर्य 'अखण्ड धर्म रक्षक समूह' है। इनका संन्यास जीवन सर्वदा परोपकार के लिए होता है। अखाड़ों का इतिहास प्राचीन काल से मिलता है। उसका सम्बन्ध मुख्य रूप से उस समय से है जब सनातन धर्म की रक्षा के लिए साधू-संतों को एक जुट किया गया था। पौराणिक मान्यता है कि 8वीं शताब्दी में आदि गुरु शंकराचार्य ने अखाड़ों की स्थापना की थी। इनका उद्देश्य धर्म की रक्षा और समाज में सद्भावना का प्रसार करना था। मध्य काल में इसकी स्थापना के समय अखाड़ों का स्वरूप सैनिक छावनी के रूप में था तथा अका उद्देश्य बाहरी आक्रमणों से धर्म और संतों की रक्षा करना था। धर्म की रक्षा के लिए उन्होंने अनेकों लड़ाईयाँ लड़ी तथा धर्मार्थ अत्याचारी शासकों का मुकाबला डटकर किया। अखाड़े के संत अपने जीवन को सदाचार परोपकार संयम धैर्य, विवेक व धार्मिक मूल्यों को साँचे में ढालकर समाज के लोगों को सही मार्ग पर चलने की सीख प्रदान करते हैं। वर्तमान युग में अखाड़े अपने सम्प्रदाय की रक्षा तथा विचारों के प्रचार-प्रसार पर अधिक बल देते हैं। इनके माध्यम से विभिन्न प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान आयोजित किये जाते हैं। अखाड़ों में दलितों व किन्नरों को भी प्रवेश देकर जातिगत भेद-भाव को कम करने में विशेष योगदान दिया।

13.3 अखाड़ों की विशेषताएँ

अखाड़ों की विशेषताएँ निम्नवत हैं:-

1. कुम्भ पर्व में एक अखाड़े से जुड़े सभी संन्यासी एक ही स्थान पर रहते हैं, जहाँ पर वे आपस में विचार-विमर्श करते हैं तथा भविष्य की योजनाएँ बनाते हैं।
2. जिन संन्यासियों न्यूनतम 12 वर्ष तक साधना की है या विशेष आध्यात्मिक शक्तियाँ अर्जित की हैं उन्हें संप्रदायिक धार्मिक संघ उच्च पद प्राप्त होते हैं।
3. कुंभ पर्व के समय निर्वाणी और अटल अखाड़ा के संन्यासी एक साथ रहते हैं, जबकि निरंजनी और आनंद अखाड़ा के संन्यासी एक साथ रहते हैं।
4. अखाड़ों में कठोर अनुशासन का पालन किया जाता है।
5. प्रत्येक अखाड़े में महामंडलेश्वर, मंडलेश्वर महत के पदानुक्रम हैं।

13.4 प्रमुख अखाड़े

प्रमुख अखाड़े निम्नवत् वर्णित हैं।

13.4.1 दशनामी अखाड़े

- आचार्य शंकराचार्य ने शैव सम्प्रदाय के अद्वैतवाद की न. केवल पुनः प्रतिष्ठापित किया बल्कि इस मत की दश शाखाओं को भी संगठित किया। इन संघों में दीक्षा के उपरान्त संन्यासियों द्वारा जो नाम ग्रहण किये जाते हैं उनके साथ जो दास शब्द जोड़े जाते हैं उसी से दशनाम प्रचलित हुआ। इसे योग पट्ट भी कहा जाता है। संन्यासियों के नाम के साथ जोड़े जाने वाले शब्द इस प्रकार हैं— पुरी, गिरि, भारती वन, अरण्य, सागर, तीर्थ, सरस्वती और आश्रम।
- दशनामी सम्प्रदाय के प्रत्येक संन्यासी अपनी आध्यात्मिक उन्नति उच्चता के अनुसार चार श्रेणियों में विभाजित है — प्रथम कुठिचक्र द्वितीय बहुदक तृतीय हंस व चतुर्थ परमहंस।
- इनमें से प्रथम दो त्रि-दंडी उपाधि धारण करते हैं अर्थात् तीन दण्ड धारण करते हैं जो वाणी, विचार एवं कर्म पर नियंत्रण की प्रतिज्ञा के प्रतीक है। शेष दो एक-दंडी कहलाते हैं अर्थात् एक दण्ड धारण करते हैं।
- दशनामी सम्प्रदाय के साधू प्रायः भगवा वस्त्र पहनते हैं परन्तु कट्टर दशनामी निर्वस्त्र रहते हैं जिन्हें नागा साधू कहा जाता है। इस सम्प्रदाय के संत सिर तथा शरीर के अन्य भागों पर भस्म की तीन धारियों का तिलक लगाते हैं, गले में 54 सा 108 रुद्राक्षों की माला पहनते हैं। इस सम्प्रदाय के साधुओं की हिन्दू धर्म में सर्वाधिक प्रतिष्ठा है। इस सम्प्रदाय के साधुओं में अदम्य साहस और नेतृत्व शक्ति होती है। कुम्भ के सबसे पवित्र राजसी स्नान में सर्वप्रथम स्नान का अधिकार इसी सम्प्रदाय के साधुओं का है।
- मठान्नाथ के अनुसार दशनामी के 7 अखाड़े के प्रमुख हैं — जूना, निर्वाणी, निरंजनी अटल, आवाहन अग्नि तथा आनन्द । इनका अपना स्वतंत्र संगठन होता है। उनका अपना निजी लवाजमा है, जिसमें डंका, भगवा निशान, छड़ी, भाला बाघ, घोड़े, ऊँट आदि होते हैं। इन अखाड़ों की सम्पत्ति की व्यवस्था श्री पंच द्वारा निर्वाचित थानापति महन्तों तथा 8 कारबारी सचिवों द्वारा होता है, तथा इन्हीं को सारी व्यवस्था का अधिकार रहता है।

13.4.1.1 जूना अखाड़ा

- इस अखाड़े की स्थापना कार्तिक शुक्ल दशमी विक्रम संवत् 1202 दिन मंगलवार को उत्तराखण्ड के कर्ण प्रयाग में भैरव अखाड़े के नाम से हुई इसलिए इसे भैरव अखाड़ा के नाम से भी जानते हैं। उसके संस्थापकों में मोखामगिरि, सुन्दर गिरि, मौनी दिगम्बर, दलपतगिरि, नागा, लक्ष्मण गिरि, महाभारती आदि थे।
- इसके इष्टदेव रुद्रावतार दत्तात्रेय हैं। इस अखाड़े का मुख्यालय वाराणसी के हनुमान घाट पर है। हरिद्वार में माया देवी मंदिर के पास इसका आश्रम है। अखाड़ों में इस अखाड़े का तीसरा स्थान है। नागा संन्यासियों की सर्वाधिक संख्या इसी अखाड़े में। इस अखाड़े के नागा संन्यासी कुम्भ पर्व शाही स्नान (राजसी स्नान) के लिए संगम की ओर बढ़ते हैं तथा मेले में सभी श्रद्धालुओं के साथ-साथ दुनिया के प्रत्येक लोग इस अद्भुत दृश्य देखने के लिए उत्साहित हो जाते हैं। वर्तमान में स्वामी अवधेशानंद गिरि जूना पीठाधीश्वर हैं। जूना अखाड़े ने अनुसूचित जाति से आने वाले महामंडलेश्वर महेन्द्रानंद गिरि को जगतगुरु की उपाधि दी है। इसका मुख्य उद्देश्य समाज को एक जुटता में बांधे रखने धर्मांतरण रोकने और सनातन धर्म के प्रभाव को बनाये रखना है।
- इतिहास बताता है कि 1260 ई० में भगत भगवानंद गिरि के नेतृत्व में 22 हजार नागा साधुओं ने कनरवल स्थित मंदिर को आक्रमणकारी सेना के कब्जे से मुक्त कराया। इनकी शाखाएं हरिद्वार, उज्जैन, त्रयंबकेश्वर, ओंकारेश्वर व कनरवल में हैं।

13.1.1.2 निर्वाणी अखाड़ा

- इस अखाड़े की स्थापना शुक्ल दशमी विक्रम सम्वत् 805 को बिहार के अर्न्तगत झारखण्ड के वैद्यनाथ के समीप हुआ था। इनके संस्थापकों में रूपगिरि सिद्ध, उत्तम गिरि रामस्वरूपागिरि, शंकर पुरी मौनी दिगम्बर भावनापुरी आदि थे। इसके इष्टदेव सगर पुत्रों को भस्म करने वाले कपिल मुनि हैं।
- निर्वाणी अखाड़े के संन्यासियों द्वारा कुछ लड़ाईयाँ लड़ी गयी थी। इस अखाड़े के भवानन्द, सुरसरानन्द और कमलानन्द ने वैरागियों पर हरिद्वार चौक संवत्— 131० वि० ईसवी सन् 1366 में विजय प्राप्त की थी। हरिद्वार क्षेत्र में इन्होंने शंख ध्वनि कर अपनी झण्डा तथा निशान स्थापित किया। काशी क्षेत्र में सन् 1664 में सुल्तान औरंगजेब से युद्ध में भी विजय प्राप्त कर महान यश को प्राप्त किया। दशनामी नागा साधुओं ने काशी विश्वनाथ की गद्दी की सुरक्षा की तथा मिर्जाअली तुरंग खाँ और अब्दुल अली को पराजित किया। इसका मुख्य केन्द्र कनरवल में तथा प्रयाग, ओंकार काशी, त्रयंबक और उज्जैन में शाखाएं हैं।

13.4.1.3 निरंजनी अखाड़ा

- इसकी स्थापना विक्रम संवत् 960 कृष्ण पक्ष अष्टमी को अत्रिभौनी सिद्धि, सरजूनाथ पुरुषोत्तम गिरि, हरिशंकर गिरि, जंगधारी, जगजीवन भारती, जगन्नाथपुरी फलाहारी, उचितपुरी नागा, उदुम्बरी आदि ने कच्छ के माण्डवी नामक स्थान पर की थी।
- इनके इष्टदेव कार्तिक स्वामी हैं। इसका केन्द्र प्रयाग है तथा हरिद्वार, काशी, त्रयंबक, ओंकार, उज्जैन, ज्वालामुखी आदि में हैं।
- इस अखाड़े में सबसे ज्यादा साधु संत उच्च शिक्षा प्राप्त किये हुए हैं, जिसमें डाक्टर, प्रोफेसर और प्रोफेशनल शामिल हैं। इस अखाड़े में लगभग 10 हजार से अधिक नागा संन्यासी हैं। महामंडलेश्वरों की संख्या लगभग 33 हजार है तथा मंहत और श्री मंहत की संख्या एक हजार से अधिक है।

13.4.1.4 आवाहन अखाड़ा

- इस अखाड़े की स्थापना विक्रम संवत् 603 में सन् 1547 को ज्येष्ठ कृष्ण नवमी पर हुई थी। दीनानाथ गिरि, रत्नागिरि नागा, गणपति भारती, हरद्वारभारती गुदरबल भारती, गणेशपुरी आदि इसके संस्थापक थे। इसके इष्टदेव श्री दत्तात्रेय और गजानन हैं। यह जूना अखाड़ा के साथ रहता है। इसका केन्द्र काशी है। इसका आश्रम ऋषिकेश में भी है।
- पहले इसे 'आवाहन सरकार' के नाम से भी जानते थे क्योंकि यह धर्म रक्षा के साथ-साथ लोगों को भी धर्म के पथ पर चलना सिखाता है। इस अखाड़े का प्रमुख उद्देश्य सदैव धर्म की रक्षा करना रहा है।

13.4.1.5 अटल अखाड़ा

- अटल अखाड़ा सबसे प्राचीन है। इसकी स्थापना माघ शुक्ल चतुर्थी 569 ईशवी को गोंडवाना में हुई थी। इसके संस्थापकों में वनखण्ड भारती, सागरी भारती, शिवचरण भारती, अटलनिर्माण दत्तपुरी, दयालगिरि, मौनी, महेशगिरि पौहरी फलाहारी आदि थे।
- इसके इष्टदेव गणेश हैं। इसका केन्द्र काशी में तथा शखाएं प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन, बड़ौदा, त्रयंबक आदि में हैं।
- वर्तमान में वश्रवात्मानंद जी सरस्वती जी अटल अखाड़े के आचार्य महामण्डलेश्वर हैं। अटल अखाड़ा महानिर्माणी अखाड़े के साथ धर्म ध्वजा, पेशवाई और राजसी (शाही) स्नान में शामिल होता है।
- इस अखाड़े में शामिल नागा संन्यासियों ने अपने पराक्रम से सर्वप्रथम बौद्धधर्म से सनातन हिंदुधर्म संस्कृति की रक्षा में अपनी प्रमुख भूमिका निभाई।

13.4.1.6 आनन्द अखाड़ा

- आनन्द अखाड़ा शैव सम्प्रदाय के सात अखाड़ों में से एक है। इसकी स्थापना ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्थी सं 912 को बरार में हुई थी। इसके संस्थापकों में कथागिरि, हरिहरगिरि, खालसा पठान गिरि, शिवश्यामपुरी आदि थे।
- इसके इष्टदेव सूर्य है। इसका केन्द्र काशी में है। वर्तमान में स्वामी बालकानंद गिरि आनंद अखाड़े के पीठाधीश्वर है।

13.4.1.7 अग्नि अखाड़ा

- इस अखाड़े की स्थापना वर्ष 1957 में गिरनार की पहाड़ी पर हुई थी। इस अखाड़े के सन्यासी नर्मदाखण्डी, उत्तराखण्डी और नैस्टिक में विभाजित है। इसमें कोई नागा संन्यासी नहीं है। बल्कि यह चारों पीठ के ब्रह्मचारियों का संगठन है। 'अग्नि' इसके इष्टदेवता है। इसका प्रमुख केन्द्र काशी में है। अग्नि अखाड़े में ब्रह्मचारी संतों की संख्या सीमित है। इसमें संत बनने के लिए ब्राह्मण होना आवश्यक है। ब्रह्मचारी को गायत्री मंत्र की दीक्षा दी जाती है। इस अखाड़ों के संतों की पहचान सिर पर शिखा और शरीर पर जनेऊ से होती है। ये ब्रह्मचारी संत 16 माला गायत्री जप करते हैं।

13.5 वैष्णव अखाड़ा

- वैष्णव सम्प्रदाय के अखाड़े की स्थापना सन् 1729 में माधव, निम्बार्क विष्णु स्वामी और रामानन्दियों को मिलाकर श्री बालानन्द जी ने की। वे ही इसके प्रथम आचार्य चुने गये। वैष्णव का बड़ा स्थान दारागंज में है, जिसके संस्थापक माधव मुरारी जी थे। इनका अखाड़ा त्रयंबकेश्वर में मारुति मंदिर के समीप था।
- वैष्णव धर्म के प्रचार-प्रसार का श्रेय आलवार संतो, विष्णु स्वामी, रामानन्द स्वामी माधवाचार्य, बल्लभाचार्य, चैतन्य तुलसी, सूर आदि हैं। इसमें विष्णु स्वामी के 24 अवतार हुए, जिसमें राम एवं कृष्ण को प्रधानता मिली। विष्णु की पूजा के बाद राम और कृष्ण की पूजा प्रचलित हुई। वैष्णव सम्प्रदाय के अखाड़ों को तीन अखाड़ों में विभाजित किया गया है—

13.5.1 दिगम्बर अनी अखाड़ा

- यह अखाड़ा वैष्णव सम्प्रदाय के तीन अखाड़ों में से एक है। इसकी स्थापना अयोध्या में की गयी थी। इस अखाड़े के संन्यासी माथे पर उर्ध्वपुंड अर्थात् एक प्रकार का तिलक लगाते हैं तथा जटाजूट और सफेद कपड़े पहनते हैं। दिगम्बर अखाड़े का धर्म ध्वज पाँच रंगों का होता है। इस ध्वज पर हनुमान जी की छवि होती है। चित्रकूट, अयोध्या, वृन्दावन, जगन्नाथपुरी, उज्जैन और नासिक में इसके एक-एक स्थानीय श्रीमंथ है।

13.5.2 श्री निर्वाणी अनी अखाड़ा

- निर्वाणी अनी अखाड़ा की स्थापना अभयरामदास जी ने की थी। इसका मुख्य केन्द्र अयोध्या हनुमानगढ़ी है। इसका संविधान संस्कृत भाषा में सन् 1825 में लिखा गया तथा 1963 में इसका हिन्दी रुपान्तरण किया गया। इस अखाड़े के सन्यासियों को चार पढ़ियों में विभाजित किया गया है— सागरिया, उज्जैनिया, हरद्वारी और वंसतिया ।

13.5.3 निर्मोही अखाड़ा

- इस अखाड़े की स्थापना 1720 ई. रामानन्दाचार्य ने की थी। इस अखाड़े के इष्टदेव भगवान 'राम' हैं। इस अखाड़े के मठ उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, उत्तराखण्ड, राजस्थान, गुजरात और बिहार में हैं। इस अखाड़े के संन्यासियों को तलवारबाजी और कुश्ती की शिक्षा दी जाती थी। निर्मोही अखाड़े के संन्यासी अयोध्या में राम जन्मभूमि से जुड़े कई मुद्दों पर लड़ाईयाँ लड़ी।

13.6 उदासीन अखाड़ा

- उदासीन का शाब्दिक अर्थ उत्+आसीन है, जिसमें उनका तात्पर्य ऊंचा हुआ, अर्थात् ब्रह्म में आसीन या समाधिस्थ है। 1493–1643 के मध्य गुरु नानक देव के पुत्र श्रीचन्द महाराज ने इस अखाड़े की स्थापना की थी। इस अखाड़े का मुख्य उद्देश्य विधर्मिया के अत्याचार से हिन्दुओं की रक्षा करना था। इस सम्प्रदाय के संत सनातनी थे तथा पंच प्रकृति अर्थात् जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी व आकाश की पूजा करने वाले थे। इस सम्प्रदाय के संत बड़ी-बड़ी जटा रखते हैं। गुलाबी, गेरुआ या श्वेत-श्याम वस्त्र धारण करते हैं। इस अखाड़े का साधु वेला आश्रम वाराणसी, हरिद्वार, प्रयाग, मुम्बई आदि क्षेत्रों में है। इस सम्प्रदाय में दो अखाड़े हैं – बड़े उदासीन अखाड़े व छोटे। नया उदासीन अखाड़ा।

13.6.1 उदासीन बड़ा पंचायती अखाड़ा

- इस अखाड़े की स्थापना 1825 ई० में बसंत पंचमी के दिन हरिद्वार में हरि की पौड़ी पर की गयी थी। इसका उद्देश्य सनातन धर्म के प्रचार-प्रसार व लोक कल्याण की भावना था। इस अखाड़े के संस्थापक निर्वाण बाबा प्रीतम दास जी थे। इस अखाड़े के ईष्टदेव शिव स्वरूप भगवान 'चन्द्रदेव' हैं। इसका मुख्य केन्द्र प्रयागराज के कीडगंज मुहल्ले में है। इसकी शाखाएं गोपीगंज, सुल्तानगंज, कुरुक्षेत्र, हरदोई, वृन्दावन, बलिया, उज्जैन, हैदराबाद आदि में हैं। अखाड़े के द्वारा निःशुल्क शिक्षा और चिकित्सा के साथ ही लोगों के रहने के लिए धर्मशाला का निर्माण कराया गया।

13.6.2 उदासीन नया अखाड़ा

- उदासीन बड़ा अखाड़ा के संतो में आपसी सौहार्द न होने के कारण कई महन्तों ने मिलकर प्रयागराज बांध के महात्मा सूरदास जी के नेतृत्व में 1902 में उदासीन नया अखाड़ा की स्थापना की। इसकी शाखाएँ हरिद्वार, गया, काशी, कुरुक्षेत्र में भी हैं।

13.7 निर्मल अखाड़ा

- निर्मल अखाड़े की स्थापना गुरु गोविंद सिंह के सहयोग व वीर सिंह की आज्ञा से की गयी थी। इस अखाड़े का केन्द्रास्थान प्रयागराज के कीडगंज मोहल्ले में पीली कोठी के नाम से प्रसिद्ध है। आचरण की पवित्रता एवं आत्मशुद्धि इनका मूलमंत्र है। ये ब्रह्मचारी होते हैं, श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। ऊन या रुद्राक्ष की माला हाथ में रखते हैं।

13.8 किन्नर अखाड़ा

- किन्नर अखाड़ा किन्नर समुदाय द्वारा उज्जैन में हुए सिंहस्थ कुम्भ 2016 के पहले अक्टूबर 2015 में स्थापित किया गया था। यह जूना अखाड़े के अधीन कार्य करता है। किन्नर अखाड़े की आचार्य महामंडलेश्वर डॉ. लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी हैं। किन्नर अखाड़े द्वारा हिन्दू धर्म छोड़कर मुस्लिम धर्म अपना चुके दर्जनों किन्नरों की घर वापसी करायी है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. निर्वाणी अखाड़ा के ईष्टदेव का क्या नाम है?
2. जूना अखाड़ा का मुख्यालय कहां है?
3. किन्नर अखाड़े के महामंडलेश्वर कौन हैं?

13.9 सारांश

इस इकाई में भारतीय सनातन धर्म के अन्तर्गत कुल 14 अखाड़ों की चर्चा की गयी है। इन अखाड़ों का मूल उद्देश्य सनातन धर्म की रक्षा, प्रचार-प्रसार तथा लोक कल्याण की भावना को बनाये रखना है। वर्तमान समय में इन संगठनों या अखाड़ों का कर्तव्य त्याग, तपस्या वैराग्य, विवेक तथा नैतिक सांस्कृतिक व अध्यात्मिक मूल्यों से एक स्वस्थ समाज की स्थापना करना है।

वर्ष 2025 में प्रयागराज महाकुम्भ का आयोजन बृहद् स्तर पर किया जा रहा है ऐसा माना जा रहा है कि सभी अखाड़े विश्व के सबसे बड़े सांस्कृतिक महापर्व में आकर अपने अध्यात्म ज्ञान और अपने क्रियाकलापों से तीर्थयात्रियों को आनन्दित करेंगे तथा विश्वकल्याण का संदेश भी देंगे।

13.10 अभ्यास के प्रश्न

1. अखाड़ों से आप क्या समझते हैं?
2. अखाड़ों का मुख्य उद्देश्य क्या है।
3. जूना अखाड़े के बारे में एक टिप्पणी लिखिए।
4. दशनाम अखाड़ा की स्थापना का क्या उद्देश्य है।
5. निरंजनी अखाड़ा से आप क्या समझते हैं।
6. वैष्णव अखाड़ा पर टिप्पणी कीजिए।
7. उदासीन अखाड़ा के बारे संक्षेप में वर्णन कीजिए।

13.11 चर्चा के बिन्दु

- भारतीय सनातन धर्म में अखाड़ों की भूमिका के बारे में चर्चा कीजिए।
- अखाड़ों के उद्देश्य की चर्चा कीजिए।
- कुम्भ, अर्द्धकुम्भ तथा महाकुम्भ में अखाड़ों की विशेषताओं के बारे में चर्चा कीजिए।

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. कपिल मुनि।
2. वाराणसी के हनुमान घाट पर।
3. डॉ० लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी।

13.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. हिन्दू धर्म कोश : डॉ. राजबली पाण्डेय।
2. तीर्थों में तीर्थराज प्रयाग : श्री प्रकाश लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद।
3. तीर्थराज प्रयाग : रतिभान त्रिपाठी, सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षणकेन्द्र।
4. प्रयागराज माहात्म्य और कुम्भ : डॉ. स्मिता अग्रवाल।
5. कुम्भ पर्व और नागा सम्प्रदाय : डॉ. रामजी मिश्र।
6. प्रयाग कुम्भ : विश्व की सांस्कृतिक विरासत : प्रदीप कुमार केसरवानी।

इकाई – 14 : विभिन्न सम्प्रदायों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

- 14.1 प्रस्तावना
- 14.2 उद्देश्य
- 14.3 सम्प्रदायों में सहयोग सत्संग
- 14.4 संप्रदायों के शिविर
- 14.5 विभिन्न सम्प्रदाय
- 14.6 एकता समरसता के आधार स्तम्भ
- 14.7 सारांश
- 14.8 अभ्यास के प्रश्न
- 14.9 चर्चा के बिन्दु
- 14.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 6.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

कुम्भ भारतीय मनीषा की प्रखरता को अक्षुण्ण रखने का सर्वोत्तम उपाय है। युग-युग से भारतीय मनीषी अपने-अपने विचारों को प्रमाणित प्रासंगिक और उपयोगी सिद्ध करने के लिए प्रत्येक कुम्भ मेले में प्रति द्वादश वर्ष एकत्र होते रहे हैं और अपने विचारों को विद्वानों तथा जनता तक पहुंचाने का प्रयास करते रहे हैं। इस इकाई में कुम्भ में आयोजित होने वाले विभिन्न धार्मिक और आध्यात्मिक क्रियाकलापों के साथ उसमें लगने वाले विभिन्न सम्प्रदायों के शिविरों और उनकी साधना के बारे में जान सकेंगे।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

- भारत में प्रचलित अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक संप्रदायों को जान सकेंगे।
- आध्यात्मिकता की प्राचीन परंपरा को समझ सकेंगे।
- कुम्भ मेले में आये हुए विभिन्न सम्प्रदायों को जान सकेंगे।
- कुम्भ मेले में आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

14.3 सम्प्रदायों में सहयोग सत्संग

कुम्भ मेले में आने वाले विभिन्न संप्रदाय, भारत में प्रचलित अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक संप्रदायों को संदर्भित करते हैं। इसके अन्तर्गत भारत में जन्मे और विकसित हुए धार्मिक सांस्कृतिक सम्प्रदाय आते हैं।

धर्म, दार्शनिक दृष्टिकोण से कुम्भ मेला सभी सम्प्रदायों के सह-अस्तित्व और सहयोग का एक अनोखा उदाहरण है। कभी-कभी प्रत्यालोचना से कुछ सम्प्रदायों के बीच संघर्ष भी हो जाता है। किन्तु सामान्यतः सभी विवाद शान्ति से सुलझाये जाते हैं। मुण्डे-मुण्डे मतिभिन्ना के अनुसार यहाँ सभी मतों का संग्रह या समन्वय कर लिया जाता है— सभी का लक्ष्य एक है भगवद्प्राप्ति। उसके उपाय विभिन्न हैं। इन उपायों में कार्य भक्ति, ज्ञान, योग तथा उनके समन्वय मुख्य हैं। इन सबको पदार्थ पाठ सीखना हो तो कुम्भ मेला के किसी शिविर में जाकर सीखना चाहिए। यही पता चलता है कि सत्संग ही भक्ति का सर्वश्रेष्ठ प्रकार है।

आखिर सत् का अपरोक्ष अनुभव करना ही तो भगवद्प्राप्ति है। वह सत् में संग (रहना) या सत् से संग

(जुड़ना) ही है। अतः सत्संग स्वयं साध्य है। उसको साधन समझना उसका अवमूल्यन करना है। सत्संग कभी मौन द्वारा होता है, कभी संवाद से होता है, कभी भगवद्गीता से। इसी का स्पष्टीकरण यह कहकर किया गया है कि तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया, अर्थात् प्रणिपात् परिप्रश्न तथा सेवा द्वारा तत्त्व का ज्ञान प्राप्त करो।

14.4 सम्प्रदायों के शिविर

त्रिवेणी को समझ लेने के अनन्तर अब थोड़ा धर्माचार्यों के अनुदानों पर दृष्टिपात करना है। यहाँ विशेष रूप से उन अनुदानों का विश्लेषण किया जायेगा, जिनके दर्शन महाकुम्भ पर्व में सर्वसाधारण को भी सुलभ हैं।

प्रयाग के कुम्भ मेला में प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रमुख अपना शिविर लगाते हैं। उनके साथ वहाँ उनके अनुयायीगण भी रहते हैं। अनुयायियों में विभिन्न श्रेणी के साधक रहते हैं। कुछ नये लोग भी उनके सम्प्रदाय में शिक्षित होते हैं और उन्हें विधिवत् दीक्षा दी जाती है। शिविर में उन सबकी दिनचर्या सम्प्रदाय के अनुसार होती है। वहाँ एक मन्दिर का भी निर्माण किया जाता है। मंदिर में पूजा संप्रदायानुसार होती है। पूजा के अतिरिक्त उपदेश तथा प्रवचन होते हैं, जिनमें सम्प्रदाय के दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों की व्याख्या की जाती है। कहीं यज्ञ हो रहा है, तो कहीं पंचाग्नि तप हो रहा है तो कहीं कीर्तन। कहीं भजन-संगीत हो रहा है तो कहीं वेदपाठ। कहीं भागवत कथा हो रही है, तो कहीं रास लीला। कहीं दुर्गा पूजा हो रही है तो कहीं सरस्वती पूजा। कहीं शास्त्रार्थ चिन्तन, कहीं अखण्ड रामायण पाठ तो कहीं अखण्ड हवन हो रहा है।

इन शिविरों के कई प्रकार हैं, जिनमें मुख्यतः शांकर वेदान्त के संन्यासियों को शिविर और रामानन्दी वैरागियों के शिविर संख्या में सबसे अधिक रहते हैं। शांकर संन्यासियों में भी दर्शनार्थी नागाओं के शिविर और जगद्गुरु शंकराचार्यों के शिविर अलग-अलग रहते हैं। इसी प्रकार वैरागियों के अनेक शिविर होते हैं। इन शिविरों के परिचय से सम्प्रदाय और उसके असंप्रदायों का ज्ञान होता है। उनके महन्तों महामण्डलेश्वरों तथा शंकराचार्यों के कृतित्व तथा व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। इन शिविरों के अतिरिक्त रामानुज, वल्लभ और चौतन्य के मतावलम्बी भी अपने-अपने शिविर लगाते हैं और अपने सिद्धान्त तथा साधना का प्रदर्शन तथा प्रचार-प्रसार करते हैं। सन्तों में तुलसीदास, कबीरदास, मलूकदास, रैदास आदि के अनुयायी अपने-अपने शिविर लगाते हैं।

आधुनिक सन्तों में रामकृष्ण परमहंस स्वामी दयानन्द सरस्वती, साई बाबा, श्री अरविन्द आदि के अनुयायी भी अपने-अपने शिविर लगाते हैं। अनेक नवीन महात्मा तथा साधु भी अपना शिविर अलग से लगाकर सिद्ध करते हैं कि उनकी प्रतिष्ठा साधु समाज में बढ़ गयी है और उनके अनुयायियों की संख्या काफी हो गयी है।

कुम्भ मेले में प्राचीन तथा नवीन दोनों धार्मिक प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। कुम्भ मेले में अन्तरराष्ट्रीय कृष्ण भावना समाज का शिविर विशेष रूप से उल्लेखनीय रहता है। यह गौड़ीय वैष्णवमत की एक आधुनिक शाखा है। इनके अनुयायियों में विदेशी अधिक हैं जो भारतीय जीवन शैली अपनाकर वैष्णव साधना करते हैं।

इसके प्रवर्तक चैतन्य मतावलम्बी त्रिदण्डी स्वामी प्रभुपाद महाराज थे जिनका हाल ही में स्वर्गवास हो गया। भजन, कीर्तन, रासलीला, भागवतकथा, भक्ति वैराग्य समन्वय, सुन्दरम और शिवम का मेल आदि विषयों को लेकर इस समाज ने एक सुन्दर विचारधारा बनायी है। पुराने मतों के साधु अपनी परम्परा का और नये साधु अपने नवीन पन्थ का प्रचार प्रसार करते हैं।

शैव और शाक्त मतों के अनुयायी भी अपने-अपने शिविर लगाते हैं। नये सन्तों में ब्रह्म कुमारियों, नारायण महाप्रभु, सच्चा बाबा, बाबा भूतनाथ पाइलट बाबा आदि के शिविर विशेष उल्लेखनीय हैं। आगे विभिन्न संप्रदायों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

14.5 विभिन्न सम्प्रदाय

कुम्भ मेले में विभिन्न सम्प्रदाय अपने-अपने शिविर लगाते हैं जिसमें प्रमुख सम्प्रदाय निम्न हैं –

रुद्र संप्रदाय (पुष्टिमार्ग या बल्लभ मत)

इस संप्रदाय के मूल प्रवर्तक विष्णु स्वामी माने जाते हैं। आचार्य वल्लभ ने उच्छिन्न हो चुकी इस परंपरा को पुनः संवर्धित करने का कार्य किया। वल्लभाचार्य के समय में देश की सत्ता मुसलमानों के हाथ में थी। इस्लाम के आक्रमण के साथ-साथ अनेक कुरीतियाँ व्याप्त हो गयी थी। वल्लभाचार्य ने घोषित किया कि वर्ण, जाति या देश के

भेद से रहित होने के कारण पुष्टि मार्ग ही इस कलिकाल के जीवों के लिए एकमात्र सुलभ व सुगम मार्ग है। बल्लभ संप्रदाय के अंतर्गत अष्टछाप के कवियों कुम्भनदास, सूरदास, कृष्णदास आदि ने तत्कालीन परिस्थितियों में समाज रक्षा एवं राष्ट्रीय एकता के लिए अपनी काव्यधारा के माध्यम से महनीय कार्य किया है।

गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय या चैतन्य मत

चैतन्य महाप्रभु द्वारा चलाये गए गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय में सामाजिक एवं व्यावहारिक उदारता और सर्वसामान्य द्वारा ग्राह्य भक्ति का उपदेश निहित है। महाप्रभु के अनुसार अभिमान भक्ति मार्ग के प्रतिकूल है, इसलिए साधक अपने आप को तिनके से भी तुच्छ जानकर और वृक्ष के समान सहिष्णु होकर निरंतर हरि नाम का कीर्तन करे। यदि श्वपच भी श्री श्रीभगवन्नाम श्रवण, कीर्तन या स्मरण इनमें से कोई भी एक बार कर ले तो उसी क्षण उसे सोमयज्ञ करने की योग्यता प्राप्त हो जाती है। चैतन्य महाप्रभु के भक्तों में सभी वर्णों के साथ यवन हरिदास जैसे संत भी थे।

राधा वल्लभ संप्रदाय

राधावल्लभ संप्रदाय के प्रवर्तक हितहरिवंश जी ने प्रेम तत्व को सर्वोपरि माना है। उन्होंने परमात्मा को रस कहकर संबोधित किया है। 'रसो वै सः' उनका ध्येय वाक्य है। राधा उनकी प्रमख उपास्य हैं। राधा की उपासना से ही कृष्ण की प्राप्ति संभव है।

टटिया संप्रदाय

प्राचीन भारत के संगीत शास्त्र में हरिदास स्वामी का नाम प्रसिद्ध है। उन्होंने निम्बार्क सम्प्रदाय के अन्तर्गत टटिया सम्प्रदाय के नाम से एक उपशाखा का प्रवर्तन किया था। ये प्रसिद्ध संगीतज्ञ तानसेन के गुरु थे।

रामदासी संप्रदाय

रामदासी संप्रदाय की स्थापना छत्रपति शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास ने की थी। समर्थ रामदास उन विशिष्ट महापुरुषों में थे, जिन्होंने पारमार्थिक मुक्ति के साथ-साथ लोकव्यवहार, सामाजिक मर्यादा की शिक्षा, दुराचारी विधर्मियों से मुक्ति की सामाजिक चेतना को जागृत करने में अभूतपूर्व योगदान दिया। उनके द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'दासबोध' सामाजिक एवं धार्मिक शिक्षण की अमूल्य निधि है। समर्थ रामदास के अनुसार चारों वर्णों के लोगों को राम स्मरण का अधिकार है। उत्तम पुरुष का निरूपण करते हुए वे कहते हैं कि अनेक को उनके कार्य में मदद करनी चाहिए, पराये लोगों को अपना बना लेना चाहिए, जितना आवश्यक हो उतना ही बोलना चाहिए। समर्थ रामदास ने संपूर्ण देश में सोलह सौ स्थानों पर बजरंगबली का मंदिर और व्यायामशाला की स्थापना कर युवाओं में शक्ति उपासना को बल प्रदान किया।

रामसनेही संप्रदाय

रामसनेही संप्रदाय के तीन प्रमुख संत—दरिया साहब (रेण—नागौर), संत हरिराम दास (सिंहथल—बीकानेर), संत रामचरण (शाहपुरा—मेवाड़) हैं। राजस्थान की धरती पर प्रवाहित इन तीनों धाराओं का संगत रामोपासना बनी। रामसनेही संतों ने सामाजिक विषमताओं को दूर करने के लिए ऐसी साधना पद्धति का उपदेश दिया, जिसमें न कोई ऊँचा था, न नीचा, न कोई कुलीन था, न अन्त्यज। उन्होंने अपने विचारों के माध्यम से शांति, एकता, भ्रातृत्व, प्रेम व ईश्वर के प्रति अनुराग की भावना का प्रचार—प्रसार किया। रामसनेही संतों ने वाह्य आडंबर को निरर्थक मानते हुए केवल आंतरिक शुचिता एवं सत्यता को ही अपनी साधना का अवलंबन बनाया है।

'दरिया प्रेमी आत्मा आवै सतगुरु संग।'

स्वामी नारायण संप्रदाय

सतगुरु सेती सब्द ले, मिले सब्दु के रंग।

स्वामीनारायण संप्रदाय, स्वामी सहजानंद।।

स्वामीनारायण संप्रदाय के प्रवर्तक स्वामी सहजानंद का जन्म उत्तर—प्रदेश के गोण्डा जनपद में हुआ था। हिमालय में साधना करने के उपरांत भ्रमण करते हुए वे गुजरात पहुँच गए। वहीं पर स्वामी रामानंद के शिष्य मुक्तानंद से दीक्षा लेकर उन्होंने धर्म प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया। यज्ञ में हिंसा, बलि, प्रथा, सतीप्रथा, कन्या—हत्या

और भूतबाधा जैसी सामाजिक कुसूरियों को बंद कराने के लिए उन्होंने व्यापक कार्य किया। उनके द्वारा लिखी गयी एकमात्र पुस्तक **‘शिक्षापत्री’** है। स्वामी नारायण सम्प्रदाय अपने भव्य एवं विशाल मन्दिरों के लिए प्रसिद्ध है।

ब्रह्म समाज

स्वामी दयानंद ने हिन्दुओं को उनकी समृद्ध विरासत की शिक्षा देने और भारत की सामाजिक संरचना में सुधार के लिए 1875 ई. में आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी दयानंद बहुत ही उच्च क्षमता के समाज सुधारक और धार्मिक नेता थे। उन्होंने सती प्रथा, बाल विवाह, दहेज, छुआ-छूत को समाप्त करने एवं स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये। **एक ही परम सत्य को विद्वान बहुत प्रकार से कहते हैं।**

गायत्री परिवार

गायत्री परिवार के संस्थापक आचार्य श्रीराम शर्मा थे। उन्होंने अखिल भारतीय गायत्री परिवार के माध्यम से समाज के सांस्कृतिक एवं चारित्रिक उत्थान के लिए अनेक कार्य किए। आचार्य जी ने गायत्री मंत्र को आधार बनाकर संपूर्ण समाज में धार्मिक जागरण का एक अनूठा आंदोलन प्रारंभ किया। गायत्री परिवार के माध्यम से यज्ञ-अनुष्ठान, शोध एवं साहित्य के द्वारा हिन्दू समजा को जागृत करने का कार्य व्यापक स्तर पर किया गया। जाति-पाँत, छुआ-छूत जैसी विसंगतियों से समाज को मुक्त कर सद्गुण की दिशा में प्रवृत्त करने का कार्य गायत्री परिवार द्वारा सतत रूप से किया जा रहा है।

डिवाइन लाइफ सोसाइटी

स्वामी शिवानंद ने सन् 1936 ई. में डिवाइन लाइफ सोसाइटी की स्थापना ऋषिकेश में की थी। वे आजीवन वेदांत के प्रचार-प्रसार के साथ साधु-संतों एवं दीन-दुखियों की सेवा में लगे रहे। यह संस्था आज भी वैश्विक स्तर पर इस कार्य में संलग्न है।

नारायण गुरु

भारत के महान संत एवं समाज सुधारक नारायण गुरु का जन्म केरल में 26 अगस्त, 1854 को हुआ था। कन्याकुमारी जिले में मारुतवन पहाड़ों की एक गुफा में उन्होंने तपस्या की, जहाँ उन्हें आत्मबोध प्राप्त हुआ। नारायण गुरु ने जाति-पाँत और ऊँ-नीच के भेद को दूर कर ऐसे धर्म मार्ग की स्थापना की बात कही, जिसमें सभी के लिए समान स्थान हो। वे महान समाज सुधारक थे।

चिन्मय मिशन

चिन्मय मिशन की स्थापना स्वामी चिन्मयानन्द सरस्वती ने की। आध्यात्मिक जगत् के प्रख्यात संत स्वामी शिवानन्द से संन्यास दीक्षा लेकर वेदांत की शिक्षा उन्होंने संत तपोवन जी से प्राप्त की। स्वामी चिन्मयानन्द ने अपने ज्ञान यज्ञों के माध्यम से न केवल भारत में अपितु दुनिया के अनेक देशों में वेदांत का प्रचार-प्रसार किया। वर्तमान में उनके द्वारा स्थापित संस्था के माध्यम से उनके अनुयायी इस कार्य में संलग्न हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ की स्थापना सन् 1966 ई. में स्वामी प्रभुपाद भक्ति वेदांत द्वारा की गयी। चैतन्य महाप्रभु के सन्देश को संपूर्ण विश्व में प्रचारित एवं प्रसारित करने के लिए भक्ति वेदांत स्वामी ने अपने शिष्यों को दुनिया के अनेक देशों में भेजा। उन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता का अनेक खण्डों में आंग्लभाषा में व्याख्या की। प्रभुपाद ने चैतन्य चरितामृत एवं ईशोपनिषद् आदि ग्रंथों की भी आंग्ल भाषा में व्याख्या की। 1977 में उन्होंने इस संसार को छोड़ दिया।

योगदा सत्संग सोसाइटी

योगदा सत्संग सोसाइटी की स्थापना परमहंस योगानंद ने सन् 1920 में की। वे क्रिया योग के महान सन्त महावतार बाबा तथा श्यामाचरण लाहड़ी की परम्परा के स्वामी मुक्तेश्वर गिरि के शिष्य थे। ये संस्था योग एवं वेदांत के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ दीन-दुखियों की सेवा एवं समाज में संस्कार निर्माण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य कर रही है।

महिमा सम्प्रदाय

महिमा सम्प्रदाय की स्थापना 1833 ई. में महिमा स्वामी द्वारा उड़ीसा ढेन्कालल जनपद में सन् 1833 में की गयी। उन्होंने अपने 64 शिष्य बनाये, जिन्हें चौसठ सिद्ध के नाम से जाना जाता है। महिमा सम्प्रदाय अद्वैत निराकार ईश्वर का उपासक है। इसमें मूर्तिपूजा का विधान नहीं है। उड़ीसा में धर्मान्तरण रोकने में महिमा सम्प्रदाय का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

डिवाइन लाइफ सोसाइटी

स्वामी प्रणवानंद ने भारत सेवाश्रम संघ की स्थापना सन् 1917 ई. में की थी। संघ का उद्देश्य सनातन धर्म के सार्वलौकिक आदर्शों के आधार पर राष्ट्रीय जीवन का पुनः संगठन करना है। इसमें सन्यासी और निःस्वार्थी कार्यकर्ता भातृभाव से कार्य करते हैं। संघ के प्रमुख कार्य मनुष्य को ऊँचा उठाने वाली शिक्षा का प्रसार, पवित्र तीर्थ स्थानों का सुधार, पाप और अपराध निवारण का प्रयत्न, हिन्दू समाज का पुनर्निर्माण तथा सुधार, भारतीय संस्कृति के सार्वलौकिक आदर्शों का भारत तथा विश्व में प्रचार-प्रसार करना है।

महापुरुषिया सम्प्रदाय

महापुरुषिया सम्प्रदाय के प्रवर्तक शंकरदेव ने भारत का व्यापक भ्रमण कर सांस्कृतिक एकात्मता की अनुभूति की। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भारत की राष्ट्रीय जीवन की एकात्मता राजनीतिक न हाकर सांस्कृतिक है और इस सांस्कृतिक एकता को उन्होंने भक्ति के आधार पर स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने घोषणा की कि यवन, कर्क, तुर्क, मलेच्छ, चंछाल चाहे जो कोई भी हो वह कृष्ण का नाम लेते ही पवित्र हो जाता है। वे भारतवर्ष में जन्म, मनुष्य का तन और हरि का नाम प्राप्त होना जीवन का महाभाग्य मानते हैं। उन्होंने पूर्वोत्तर भारत विशेष रूप से असम में सामाजिक और सांस्कृतिक एकता स्थापित करने का महान कार्य किया। असम में सन्तों के माध्यम से आज भी यह भक्ति भावना प्रवाहित हो रही है।

रामकृष्ण मठ

रामकृष्ण मठ के संस्थापक रामकृष्ण परमहंस के प्रख्यात शिष्य स्वामी विवेकानंद थे। स्वामी विवेकानंद के जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना सन् 1893 ई. में अमेरिका के शिकागो शहर में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेकर भारतीय तत्व-ज्ञान एवं संस्कृति का वैश्विक स्तर पर सम्मानवर्धन करना है। उन्होंने अपने व्याख्यानों के माध्यम से अमेरिका एवं यूरोप में भारतीय संस्कृति की धर्म ध्वजा फहरायी। समाज की सेवा तथा आध्यात्म के प्रचार-प्रसार हेतु स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरु भाइयों के साथ मिलकर एक मई, 1897 ई. को रामकृष्ण मठ की स्थापना की, जिसका ध्येय वाक्य 'आत्मनो मोक्षार्थं जगत् च' है। स्वामी विवेकानंद का प्रसिद्ध उद्घोष है— 'गर्व से कहो हम हिन्दू हैं।'।

गरीबदासी पंथ

गरीबदासी पंथ के संस्थापक संत गरीबदास का जन्म हरियाणा के झज्जर जिले के संपन्न जाट परिवार में सन् 1717 में हुआ था। संत गरीबदास जी के उपदेशों में संत कबीर के विचारों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। बाबा गरीबदास की वाणी के नाम से प्रसिद्ध ग्रन्थ में संत कबीर की सात सौ और गरीबदास जी की सत्रह सौ वाणियाँ संग्रहीत हैं। वेदान्त की शिक्षाओं का सरल एवं सहज रूप में सामान्य समाज में प्रचार-प्रसार करने के कार्य में गरीबदासी पंथ निरंतर लगा हुआ है।

घीसा पंथ

घीसा पंथ के संस्थापक जी का जन्म दिल्ली के निकट खेकड़ा नामक ग्राम में हुआ था। इनके माता-पिता संत कबीर के अनुयायी थे। संत घीसादास जी की वाणियों में भी कबीर की निर्गुण ईश्वरोपासना की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ता है।

निरंकारी पंथ

निरंकारी पंथ की स्थापना सहजधारी सिख मल्होत्रा खत्री बाबा दयाल के द्वारा की गयी। बाबा दयाल निरंकार के उपासक थे। उनका गुरु मंत्र 'धन निरंकार' है।

दादू पंथ

दादू पंथ के संस्थापक संत दादूदयाल के गुरु कौन थे, इस संबंध में उन्होंने स्वयं कुछ नहीं कहा है, परंतु उनकी साधना पद्धति संत कबीर के इतने समरूप है कि दादू पंथ को कबीर पंथ की ही एक शाखा माना जाता है। संत दादू दयाल ने अपने पंथ का नाम ब्रह्म संप्रदाय रखा था, लेकिन बाद में यह 'दादू पंथ' के नाम से जाना गया। इनके प्रमुख बावन शिष्य थे, जिनमें निश्रलदास, गरीबदास, सुन्दरदास, जगन्नाथदास और रज्जबदास अत्यंत प्रसिद्ध हैं। दादू पंथ के मंदिरों को दादू द्वारा कहा जाता है।

पाशुपत लकुलीश मत

शिव पुराण के कारवण महात्म्य के अनुसार पाशुपत मत के संस्थापक का नाम नकुलीश या लकुलीश था। लुगड़ (लाठी) धारण करने के कारण इन्हें लकुलीश कहा जाता है। पाशुपत शब्द पशुपति (शिव) से बना है। पशुपतों का मूल ग्रंथ महेश्वर रचित पाशुपत सूत्र है।

कापालिक तथा कालमुख

कालपालिक मत शैव संप्रदाय के पाशुपत मत की शाखा है। कापालिकों की साधना में बौद्ध मत के वज्रयानियों से समानता है। इसमें शिव को जीव से अभिन्न माना गया है और योगाम्वास द्वारा शिव को प्राप्त किया जा सकता है।

कश्मीर शैव मत या प्रत्यभिज्ञा दर्शन

कश्मीर शैव मत के प्रमुख आचार्यों में आचार्य वसुगुप्त, सोमानंद और अभिनवगुप्त का नाम प्रमुख रूप से आता है। कश्मीर शैव मत अद्वैतवादी होने के कारण दार्शनिक दृष्टिकोण से समानतावादी है। प्रत्यभिज्ञा का द्वार जनसाधारण के लिए खुला है। प्रत्यभिज्ञा दर्शन में वाह्य क्रियाकलापों अथवा लौकिक कर्मकांड के स्थान पर केवल अपने शुद्ध स्वरूप के ज्ञान मात्र को परम अवस्था की प्राप्ति का साधना माना गया है।

नामधारी पंथ

नामधारी पंथ के संस्थापक राम सिंह कूका का जन्म लधुयाना के भैणी साहब में हुआ था। उन्होंने भक्ति एवं वीर भाव को जागृत कर देश में प्रेम, आपसी भाईचारा, सहनशीलता व मिल-बाँटकर रहने की प्रेरणा दी। गुरु राम सिंह कूका ने गोरक्षा, स्वदेशी, नारी उद्धार आदि क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य किया। कूका विद्रोह के बाद अंग्रेजों द्वारा उन्हें उन्हें बर्मा के मांडले जेल भेज दिया गया।

निर्गुण धारा

नाम की महिमा या रामोपासना पर आधारित इस निर्गुण धारा के प्रवर्तक कौन हैं इस संबंध में कोई ऐतिहासिक जानकारी नहीं है। इसके पुनरुद्धारक संतों में जगजीवन दास (बाराबंकी), इलनदास (रायबरेली) और घासीदास (छत्तीसगढ़) प्रसिद्ध हैं। कबीर के नाम महिमा की अद्वैत परंपरा को लेकर सोलहवीं सदी में यह पंथ प्रचलित हो गया था। दिल्ली के निकट नरनौला नामक स्थान पर मुगल बादशाह औरंगजेब की सेना और सतनामियों के मध्य संघर्ष में बहुत बड़ी संख्या में सतनामियों को मार दिया गया था।

बौद्ध धर्म

बौद्ध धर्म भारत की श्रमण परंपरा का एक आध्यात्मिक मार्ग है। बौद्ध धर्म का प्रवर्तन ईसा पूर्व छठवीं शताब्दी में महात्मा बुद्ध ने किया था। बौद्ध धर्म की दो प्रमुख शाखाएँ थेरवाद (हीनयान) और महायान हैं। बौद्ध धर्म में बुद्ध, धम्म और संघ को त्रिरत्न के रूप में स्वीकार किया गया है। भगवान बुद्ध ने चार आर्य सत्य का उपदेश किया। 1) दुःख, 2) दुःख समुदय, 3) दुःख निरोध, 4) दुःख निरोध-गामिनी प्रतिपदा। बौद्ध साधना को अष्टांगिक मार्ग के नाम से जाना जाता है। यह आठ अंग हैं—1) सम्यक दृष्टि, 2) सम्यक संकल्प, 3) सम्यक वाणी, 4) सम्यक कर्मात्, 5) सम्यक आजीव, 6) सम्यक व्यायाम, 7) सम्यक स्मृति, 8) सम्यक समाधि। बौद्ध धर्म में कर्म एवं पुनर्जन्म को महव दिया गया है। सम्पूर्ण विश्व में बौद्ध धर्म का व्यापक प्रचार-प्रसार है।

सिख पंथ

पंजाब की धरती पर निर्गुणोपासना की ज्योति जलाने वाले गुरु नानक देव ने सिख पंथ की आधारशिला

रखी। सिख पंथ में गुरु नानक देव, गुरु अंगद देव, गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव, गुरु हरगोविन्द, गुरु हरि राय, गुरु हरिकृष्ण, गुरु तेगबहादुर और गुरु गोविन्द सिंह। इनके बाद पवित्र ग्रंथ गुरुपंथ साहब को गुरु की पदवी प्रदान कर दी गयी, जिसमें छः गुरुओं की वाणियों सहित देश के विभिन्न भागों के संतों की वाणियाँ संग्रहीत हैं। सिख पंथ का मूलाधार सादगी, सच्चरित्र, सद्भावना, एकता एवं उदारता है। मुस्लिम शासकों ने सिख गुरुओं को तरह-तरह से प्रताड़ित किया, परन्तु वे विचलित नहीं हुए। दो गुरुओं गुरु अर्जुनदेव और तेगबहादुर को अपना बलिदान भी देना पड़ा।

जैन पंथ

जैन धर्म भी भारत में उद्भूत श्रमण परंपरा का प्राचीनतम धर्म है। जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव का उल्लेख वेदों में भी प्राप्त होता है। जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म ई.पू. 599 में माना जाता है। उन्होंने ही जैन धर्म में संघ व्यवस्था का निर्माण किया। मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका यह चतुर्विध संघ कहलाया। भगवान महावीर के काल में ही इस श्रमण परंपरा का नाम जिन (जैन) पड़ा। बाद में जैन धर्म दो मुख्य शाखाओं श्वेताम्बर और दिगंबर में विभक्त हो गया। दोनों सम्प्रदायों में मतभेद दार्शनिक सिद्धांतों से ज्यादा चरित्र को लेकर है। दिगम्बरों की तीन शाखाएँ हैं – मंदिरमार्गी, मूर्तिपूजक और तेरापंथी। श्वेताम्बरों की दो शाखाएँ हैं – मंदिर मार्गी और स्थानकवासी। जैन धर्म का प्रमुख दर्शन स्यादवाद और अनकांतवाद है। जैन दर्शन में सात तत्वों को महत्त्व दिया गया है – जीव, अजीव, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष। जैन साधना के पांच व्रत हैं – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

निर्मल पंथ

निर्मल पंथ सिख विद्वानों का पंथ है। निर्मल पंथ की स्थापना गंडा सिंह, कर्म सिंह, सेन सिंह, वीर सिंह और राम सिंह के पाँच सिखों ने की, जिन्हें गुरु गोविन्द सिंह ने संस्कृत की शिक्षा के लिए सन् 1688 ई. में पाउन्टा साहब से बनारस भेजा था। गुरु गोविन्द सिंह ने इन लोगों को बिना किसी भेदभाव के अनपढ़ लोगों को शिक्षित करने एवं एक निरंकार ईश्वर के प्रचार का दायित्व दिया। वर्तमान में यह विरक्त सन्यासियों की एक शाखा है।

अकाली निहंग खालसा

अकाली निहंग खालसा सिख योद्धाओं का संगठन है, जिसकी ऐतिहासिक उत्पत्ति सत्रहवीं शताब्दी में हुई। अकाली निहंगों के अनुसार चंडी महाकाल की प्राथमिक शक्ति हैं, जो दुष्टों से युद्ध करती हैं। चंडी की उपासना तेगा (तलवार) के रूप में की जाती है। अकाली निहंगों को गुरुजी की लाडली फौज के नाम से जाना जाता है।

नाथ संप्रदाय

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में नाथ संप्रदाय कितना प्राचीन है, यह निश्चित कर पाना अत्यंत दुष्कर है। इसके संस्थापक मत्स्येन्द्र नाथ माने जाते हैं। उनके शिष्य गोरक्षनाथ ने नाथ सम्प्रदाय का परिष्कार कर वर्तमान स्वरूप प्रदान किया। वर्तमान नाथ संप्रदाय के प्रवर्तक गुरु गोरक्षनाथ का स्थितिकाल 9वीं शताब्दी के आस-पास माना जाता है। गुरु गोरक्षनाथ ने विभिन्न मतों की श्रेष्ठ परम्पराओं को अंगीकार कर अपने मत का प्रवर्तन किया। गोरक्षनाथ ने जाति, भाषा, वर्ण के भेद-भाव से ऊपर उठकर संपूर्ण समाज को एकता के सूत्र में पिरोने का महान कार्य किया। संप्रदाय प्रवर्तकों में गोरक्षनाथ उन महापुरुषों में हैं जिनका व्यापक प्रभाव संपूर्ण भारतवर्ष में है।

सेवा पंथ

सेवा पंथ के संस्थापक भाई कन्हैया का जन्म 1648 ई. में हुआ था। वे नवें गुरु तेगबहादुर के शिष्य थे। गुरु तेगबहादुर ने इन्हें मानवता की सेवा का निर्देश दिया था। आनंदपुर साहब के युद्ध में उन्होंने गुरु गोविन्द सिंह की सेना और शत्रु सेना की समान रूप से सेवा की। लोगों के शिकायत करने पर जब गुरु गोविन्द सिंह ने उनसे पूछा तब उन्होंने कहा कि 'मैं शत्रु और मित्र में भेद नहीं कर सकता, क्योंकि मुझे सभी में आपके ही दर्शन होते हैं।' इनकी मृत्यु के पश्चात् इनके अनुयायियों को सेवा पंथी के नाम से जाना जाने लगा।

वारकरी संप्रदाय

वारकरी संतों ने साधना के क्षेत्र में जाति, वर्ण, कुल, गोत्र आदि किसी भी चीज को महत्त्व नहीं दिया। वारकरी संप्रदाय के मूल प्रवर्तक पुंडरीक माने जाते हैं। उनकी मान्यता है कि भगवान की प्राप्ति के लिए मात्र

भक्तिभाव का होना ही पर्याप्त है। संत ज्ञानेश्वर कहते हैं कि भगवान को प्राप्त करने के लिए न शुद्ध कुल की आवश्यकता है, न प्रसिद्धि की जरूरत है, न मिथ्या ज्ञान के अभिमान की और न ही संपत्ति की, केवल भक्ति से ही भगवान प्रसन्न होते हैं। इन संतों के अतिरिक्त ज्ञानेश्वर के भाई बहन निवृत्तिनाथ, स्वपान देव और मुक्ताबाई का वारकरी संप्रदाय में विशेष योगदान है।

उदासीन पंथ

उदासीन पंथ के संस्थापक गुरु नानक देव के पुत्र श्री चन्द्र जी थे, जिन्होंने अविनाशी मुनि से शिक्षा प्राप्त कर वैदिक धर्म के उद्धार का सकल्प लिया। विरक्त होते हुए भी पञ्चदेवोपासना में दृढ़ विश्वास रखते थे। उन्होंने शैव, शाक्त, वैष्णव, गणापत्य तथा सौर मतावलंबियों को एक सूत्र में गूँथने का कार्य किया। श्री चन्द्र जी ने धर्म के प्रचार के लिए तिब्बत, भूटान, नेपाल, कंधार, काबुल सहित भारत के सभी महत्वपूर्ण स्थानों का भ्रमण किया। उनका उद्घोष था –

चेतहु नगरी, तारहु गाँव,

अलख पुरुष का सिमरहु नाँव।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥ गीता 4/11

जो मुझे जिस प्रकार भजते हैं, मैं भी उनको उसी प्रकार भजता हूँ, क्योंकि सभी मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते हैं।

प्रणामी संप्रदाय

प्रणामी संप्रदाय एक वैष्णव संप्रदाय है, जिसके प्रवर्तक देवचन्द्र महाराज थे। बुंदलेखंड के प्रतापी राजा छत्रसाल के गुरु प्राणनाथ स्वामी ने इसका व्यापक प्रचार-प्रसार किया, उन्हीं के नाम पर यह प्रणामी सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस संप्रदाय में भगवान श्रीकृष्ण को बालरूप में पूजा जाता है। प्रणामी सम्प्रदाय एक समन्वयवादी सम्प्रदाय है।

रुचीनां वैचित्र्यादृजकुटिल नानापथजुषां

नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव। –शिवमहिम्नस्तोत्रम्।

अलग-अलग स्रोतों से निकली नदियाँ अंत में समुद्र में जाकर मिल जाती हैं, उसी तरह मनुष्य अपनी इच्छा के अनुरूप अलग-अलग मार्ग चुनता है, जो देखने में भले ही सीधे या टेढ़े-मेढ़े लगें लेकिन सब आप (भगवान) तक ही जाते हैं।

14.6 एकता समरसता के आधार सम्प्रदाय

अमृत महाकुम्भ भारतीय मनीषा की प्रखरता को अक्षुण्ण रखने का सर्वोत्तम उपाय है। युग-युग से भारतीय मनीषी अपने-अपने विचारों को प्रमाणित प्रासंगिक और उपयोगी सिद्ध करने के लिए प्रत्येक कुम्भ मेला में प्रति द्वादश वर्ष एकत्र होते रहे हैं और अपने विचारों को विद्वानों तथा जनता द्वारा ग्रहण करने का प्रयास करते रहे हैं।

हिन्दू धर्म ने, जो वर्ण व्यवस्था में बँटा है, कुम्भ के द्वारा एक विराट् (सार्वभौम) संस्था का आविष्कार तथा संरक्षण किया है। इस संस्था ने हिन्दू धर्म की एकता और निरूपता को किया है। यहाँ प्रत्येक धर्माचार्य ने अपनी परम्परा को अतीत, वर्तमान तथा अनागत से जोड़ने का प्रयत्न किया। न केवल उन्होंने नये सदस्यों को अपनी धार्मिक संस्था में दीक्षित किया अपितु नवीन विचारों और रीतियों को भी मान्यता दी। पुरातत्त्व नवल होता है, कैसे पुरा, इसका प्रमाण देखना हो तो कुम्भ मेला को देखो। प्रत्येक धर्माचार्य ने राष्ट्रहित को सर्वोपरि महत्त्व देते हुए राष्ट्रीय एकता के आधारों को सुदृढ़ किया और राष्ट्रीय संकट के निवारण के लिए न केवल धार्मिक उपाय किये अपितु सशस्त्र संघर्ष एवं विद्रोह आदि के राजनीतिक प्रयास भी किये। नागा साधुओं की जमात इसी संघर्ष की देन है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. कुम्भ में सत्संग की व्याख्या कीजिए।

.....
.....

2. संप्रदायों के शिविरों में प्रमुख कार्यों की व्याख्या कीजिए।

.....
.....

3. गायत्री परिवार की चर्चा कीजिए।

.....
.....

4. कश्मीर शैव मत क्या है।

.....
.....

14.7 सारांश

कुम्भ मेले ने हिन्दू धर्म की एकता और निरूपता को किया है। यहाँ प्रत्येक धर्माचार्य ने अपनी परम्परा को अतीत, वर्तमान तथा अनागत से जोड़ने का प्रयत्न किया। न केवल उन्होंने नये सदस्यों को अपनी धार्मिक संस्था में दीक्षित किया अपितु नवीन विचारों और रीतियों को भी मान्यता दी। पुरातत्त्व नवल होता है, कैसे पुरा, इसका प्रमाण देखना हो तो कुम्भ मेला को देखो। धर्म, दार्शनिक दृष्टिकोण से कुम्भ मेला सभी सम्प्रदायों के सह-अस्तित्व और सहयोग का एक अनोखा उदाहरण है। कभी-कभी प्रत्यालोचना से कुछ सम्प्रदायों के बीच संघर्ष भी हो जाता है। किन्तु सामान्यतः सभी विवाद शान्ति से सुलझाये जाते हैं। मुण्डे-मुण्डे मतिभिन्नः के अनुसार यहाँ सभी मतों का संग्रह या समन्वय कर लिया जाता है— सभी का लक्ष्य एक है भगवद्प्राप्ति। उसके उपाय विभिन्न हैं। इन उपायों में कार्य भक्ति, ज्ञान, योग तथा उनके समन्वय मुख्य हैं।

14.8 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भमेले की आध्यात्मिक दृष्टि को स्पष्ट कीजिए।
2. कुम्भ मेले में आयोजित शिविरों पर एक लेख लिखिए।
3. कुम्भ मेले में आयोजित होने वाले विभिन्न कार्यक्रमों और उनकी उपयोगिता पर एक निबन्ध लिखिए।

14.9 चर्चा के बिन्दु

- विभिन्न संप्रदायों के भौगोलिक प्रभावों की चर्चा कीजिए।
- विभिन्न संप्रदायों के भीतर उप शाखाओं की चर्चा कीजिए।
- निर्गुण सगुण भक्ति धारा के स्वरूप की चर्चा करें।
- आस्तिक नास्तिक संप्रदायों की चर्चा करें।

14.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. धर्म, दार्शनिक दृष्टिकोण से कुम्भ मेला सभी सम्प्रदायों के सह-अस्तित्व और सहयोग का एक अनोखा उदाहरण है। कभी-कभी प्रत्यालोचना से कुछ सम्प्रदायों के बीच संघर्ष भी हो जाता है। किन्तु सामान्यतः सभी विवाद शान्ति से सुलझाये जाते हैं। मुण्डे-मुण्डे मतिभिन्ना के अनुसार यहाँ सभी मतों का संग्रह या समन्वय कर लिया जाता है— सभी का लक्ष्य एक है भगवद्प्राप्ति। उसके उपाय विभिन्न हैं। इन उपायों में कार्य भक्ति, ज्ञान, योग तथा उनके समन्वय मुख्य हैं। इन सबको पदार्थ पाठ सीखना हो तो कुम्भ मेला के किसी शिविर में जाकर सीखना चाहिए। यही पता चलता है कि सत्संग ही भक्ति का सर्वश्रेष्ठ प्रकार है।
2. प्रयाग के कुम्भ मेला में प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रमुख अपना शिविर लगाते हैं। उनके साथ वहाँ उनके अनुयायीगण भी रहते हैं। अनुयायियों में विभिन्न श्रेणी के साधक रहते हैं। कुछ नये लोग भी उनके सम्प्रदाय में शिक्षित होते हैं और उन्हें विधिवत् दीक्षा दी जाती है। शिविर में उन सबकी दिनचर्या सम्प्रदाय के अनुसार होती है। वहाँ एक मन्दिर का भी निर्माण किया जाता है। मंदिर में पूजा संप्रदायानुसार होती है। पूजा के अतिरिक्त उपदेश तथा प्रवचन होते हैं, जिनमें सम्प्रदाय के दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों की व्याख्या की जाती है। कहीं यज्ञ हो रहा है, तो कहीं पंचाग्नि तप हो रहा है तो कहीं कीर्तन। कहीं भजन-संगीत हो रहा है तो कहीं वेदपाठ। कहीं भागवत कथा हो रही है, तो कहीं रास लीला। कहीं दुर्गा पूजा हो रही है तो कहीं सरस्वती पूजा। कहीं शास्त्रार्थ चिन्तन, कहीं अखण्ड रामायण पाठ तो कहीं अखण्ड हवन हो रहा है।
3. गायत्री परिवार के संस्थापक आचार्य श्रीराम शर्मा थे। उन्होंने अखिल भारतीय गायत्री परिवार के माध्यम से समाज के सांस्कृतिक एवं चारित्रिक उत्थान के लिए अनेक कार्य किए। आचार्य जी ने गायत्री मंत्र को आधार बनाकर संपूर्ण समाज में धार्मिक जागरण का एक अनूठा आंदोलन प्रारंभ किया। गायत्री परिवार के माध्यम से यज्ञ-अनुष्ठान, शोध एवं साहित्य के द्वारा हिन्दू समजा को जागृत करने का कार्य व्यापक स्तर पर किया गया। जाति-पाँत, छुआ-छूत जैसी विसंगतियों से समाज को मुक्त कर सद्गुण की दिशा में प्रवृत्त करने का कार्य गायत्री परिवार द्वारा सतत रूप से किया जा रहा है।
4. कश्मीर शैव मत के प्रमुख आचार्यों में आचार्य वसुगुप्त, सोमानंद और अभिनवगुप्त का नाम प्रमुख रूप से आता है। कश्मीर शैव मत अद्वैतवादी होने के कारण दार्शनिक दृष्टिकोण से समानतावादी है। प्रत्यभिज्ञा का द्वार जनसाधारण के लिए खुला है। प्रत्यभिज्ञा दर्शन में वाह्य क्रियाकलापों अथवा लौकिक कर्मकांड के स्थान पर केवल अपने शुद्ध स्वरूप के ज्ञान मात्र को परम अवस्था की प्राप्ति का साधना माना गया है।

14.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भारतीय संस्कृति, नरेन्द्र मोहन, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. प्रयाग कुम्भ विश्व की सांस्कृतिक विरासत, प्रदीप कुमार केसरवानी, संरचना प्रकाशन, प्रयागराज।

इकाई – 15 : योग एवं सूर्य नमस्कार

इकाई की संरचना

- 15.1 प्रस्तावना
- 15.2 उद्देश्य
- 15.3 योग का अर्थ
- 15.4 योग की विभिन्न परिभाषाएँ
 - 15.4.1 वेदों के अनुसार योग की परिभाषाएँ
 - 15.4.2 श्रीमद्भागवतगीता के अनुसार योग की परिभाषाएँ
 - 15.4.3 उपनिषदों में वर्णित योग की परिभाषाएँ
 - 15.4.4 पुराणों में वर्णित योग की परिभाषाएँ
 - 15.4.5 धर्मों और दर्शनों के अनुसार योग की परिभाषाएँ
 - 15.4.6 श्रेष्ठजनों के अनुसार योग की कुछ परिभाषाएँ
- 15.5 अष्टांग योग
 - 15.5.1 अष्टांग योग की परिभाषाएँ
- 15.6 अष्टांग योग के प्रकार
 - 15.6.1 यम (नैतिक कर्तव्य)
 - 15.6.2 नियम
 - 15.6.3 आसन
 - 15.6.4 प्राणायाम
 - 15.6.5 प्रत्याहार
 - 15.6.6 धारणा
 - 15.6.7 ध्यान
 - 15.6.8 समाधि
- 15.7 सूर्य नमस्कार
- 15.8 सूर्य नमस्कार हेतु प्रयुक्त मंत्रों के प्रयोग की विधि
- 15.9 सूर्य नमस्कार की विभिन्न मंत्र
- 15.10 सूर्य नमस्कार के विभिन्न आसन एवं उनकी स्थितियाँ
- 15.11 सूर्य नमस्कार के महत्व
- 15.12 सूर्य नमस्कार से होने वाले लाभ
- 15.13 सूर्य नमस्कार के समय ली जाने वाली सावधानियाँ
- 15.14 सारांश
- 15.15 अभ्यास के प्रश्न
- 15.16 चर्चा के बिन्दु

15.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.18 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

योग की जड़ें भारत में बहुत पुरानी हैं और इसे शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए एक आवश्यक साधन माना जाता है। कुम्भ मेले में, आध्यात्मिक गुरु, तपस्वी एवं कल्पवासी से लेकर आम भक्त तक अपने शरीर और मन को शुद्ध करने के लिए ध्यान, योग और सूर्य नमस्कार जैसे विभिन्न अनुष्ठानों में शामिल होते हैं। हाल के दशकों में, कुम्भ मेला एक ऐसा स्थान बन गया है जहाँ न केवल पारंपरिक आध्यात्मिक अनुष्ठान बल्कि ध्यान, योग और सूर्य नमस्कार जैसे व्यायामों एवं अनुष्ठानों का भी प्रशिक्षण और प्रदर्शन किया जाता है। कुम्भ के दौरान कई योग शिविरों और सभाओं में विभिन्न योग आसन (मुद्राएँ), प्राणायाम (साँस लेने की तकनीक) और ध्यान अभ्यास आयोजित किए जाते हैं। योग को “मोक्ष” (मुक्ति) और शारीरिक स्वास्थ्य दोनों प्राप्त करने के तरीके के रूप में देखा जाता है।

सूर्य नमस्कार सूर्य को नमस्कार करने और सूर्य देव (सूर्य) की ऊर्जा का आह्वान करने के लिए भोर में किया जाता है। यह शरीर और मन दोनों के लाभों के लिए जाना जाता है, जो पूरे शरीर की कसरत प्रदान करता है और साथ ही शरीर में ऊर्जा को संतुलित करता है। कुम्भ मेले में सूर्य नमस्कार अक्सर बड़े समूहों में किया जाता है, जिसमें हजारों साधु-सन्यासी, कल्पवासी एवं प्रतिभागी सूर्योदय के समय समन्वय अभ्यास में शामिल होते हैं। आधुनिक युग में, कुम्भ मेले ने दुनिया भर के योग चिकित्सकों का ध्यान आकर्षित किया है। अंतर्राष्ट्रीय योग साधक, स्वास्थ्य के प्रति उत्साही और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक व्यक्ति सूर्य नमस्कार के आध्यात्मिक और शारीरिक लाभों का प्रत्यक्ष अनुभव करने के लिए मेले में आते हैं।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. योग के अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे।
2. योग की विभिन्न परिभाषाओं की व्याख्या कर सकेंगे।
3. योग के व्यापक अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. अष्टांग योग के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5. अष्टांग योग के विभिन्न अवस्थाओं से परिचित हो सकेंगे।
6. योग के महत्व को प्रचारित व प्रसारित कर सकेंगे।
7. सूर्य नमस्कार के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
8. सूर्य नमस्कार के विभिन्न अवस्थाओं से परिचित हो सकेंगे।
9. सूर्य नमस्कार के मंत्रों का उच्चारण कर सकेंगे।
10. सूर्य नमस्कार से संबंधित आसनों को कर सकेंगे।

15.3 योग का अर्थ

योगशास्त्र का गहरा संबंध भारत के सभी धर्मों और दर्शनों से है। प्रत्येक धर्म और दर्शन ने अपने अनुयायियों को उनके लक्ष्य तक पहुँचने के लिए एक विशिष्ट योग विधि प्रदान की है। पतंजलि योग सूत्र के अनुसार, योग का अर्थ है चित्त की वृत्तियों को शांत करना या इंद्रियों को वश में करना। यह समाधि की अवस्था प्राप्त करने का मार्ग है। ‘योग’ शब्द संस्कृत के ‘युज्’ धातु से बना है जिसका अर्थ है जोड़ना, मिलाना या एक होना। योग का उद्देश्य व्यक्ति को उसके आंतरिक स्वरूप से जोड़ना है।

पतंजलि महाभाष्य की भांति, योगसूत्र भी “अथ योगानुशासन” से प्रारंभ होता है। इस वाक्य का अर्थ है कि अब हम योग के शास्त्र का अध्ययन आरंभ करते हैं। ‘अनुशासन’ शब्द का प्रयोग करके पतंजलि योग को एक

प्राचीन और निरंतर चली आ रही परंपरा के रूप में स्थापित करते हैं। 'अथ' शब्द से वे योग साधना की शुरुआत करने की प्रतिज्ञा करते हैं। योग को सदैव तप से जोड़ा गया है। वैदिक ग्रंथों में तप और उसके प्रभावों का विस्तृत वर्णन मिलता है। हालांकि योग का उल्लेख अक्सर संन्यास आश्रम के संदर्भ में किया जाता है, लेकिन यह मानना गलत होगा कि योग का अभ्यास केवल संन्यासियों तक ही सीमित था। योग सभी आश्रमों के लिए उपयुक्त है।

योग शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'युज्' धातु से हुई है। यह धातु तीन विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होती है: 'योगे', 'समाधौ' और 'संयमने'। 'योगे' का अर्थ है जुड़ना या मिलना, 'समाधौ' का अर्थ है एकाग्रता, और 'संयमने' का अर्थ है नियंत्रण या संयम। योग शब्द का 'युक्त' अर्थ दो विपरीत दिशाओं में प्रयुक्त हुआ है। ब्राह्मण काल के बाद के ग्रंथों में, योग को जीवात्मा और परमात्मा के मिलन के रूप में देखा गया है। परमहंस उपनिषद में भी इसी तरह के भाव व्यक्त किए गए हैं, जहाँ योग को जीवात्मा और परमात्मा की समता की अवस्था के रूप में परिभाषित किया गया है। भक्ति मार्ग में भी योग का यही अर्थ प्रचलित है। इस दृष्टिकोण से, योग का अर्थ है मिलन, एकता या संयोग। अर्थात्, योग शब्द का मूल अर्थ जुड़ना या मिलना है। यह व्यक्ति को उसके आंतरिक स्वरूप से जोड़ने की प्रक्रिया है।

"योग" शब्द का अर्थ विभिन्न ग्रंथों में भिन्न-भिन्न रूप में प्रयुक्त हुआ है। यह शब्द सिर्फ एक ही अर्थ तक सीमित नहीं है, बल्कि विभिन्न संदर्भों में इसके विभिन्न अर्थ निकलते हैं। पालि निकायों में, 'योग' शब्द का अर्थ 'बंधन' या 'पाश' से लगाया गया है। इसमें चार प्रकार के योगों का उल्लेख किया गया है: काम, भव, दिष्टी और अविद्या। ये सभी मनुष्य को मोह और दुःख के बंधन में बांधते हैं। सांख्य दर्शन में, 'योग' शब्द का अर्थ पुरुष (आत्मा) और प्रकृति के मिलन को दर्शाता है। यह मिलन व्यक्ति को दुःख और बंधन में डालता है। मोक्ष या मुक्ति इस बंधन से मुक्ति पाने की अवस्था है। इसी प्रकार, जैन दर्शन में भी 'योग' शब्द का अर्थ आत्मा और पदार्थ के मिलन से है। यह मिलन आत्मा को बंधन में डालता है और मोक्ष के मार्ग में बाधा बनता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि विभिन्न दर्शनों में 'योग' शब्द का अर्थ भिन्न-भिन्न है। कभी-कभी इसका अर्थ मिलन होता है, तो कभी-कभी बंधन। यह उस संदर्भ पर निर्भर करता है जिसमें इस शब्द का प्रयोग किया गया है।

आचार्य धर्मोत्तर ने कहा है 'योगः समाधिः स यस्यास्ति स योगी', जिसके पास समाधि है, वही योगी है। यानी उन्होंने योग और समाधि को समानार्थक माना है। इसी तरह, ध्यान को भी इन दोनों के समानार्थक माना जाता है। इस परंपरा में योगी शब्द का प्रयोग श्रमण, मुनि, ध्यानी, समाहित और प्रतिसंलीन के समानार्थक के रूप में किया गया है। ये सभी शब्द एक ही अवस्था को दर्शाते हैं, जो कि गहरे ध्यान और आत्मज्ञान की अवस्था है। अर्थात्, योगी वह व्यक्ति है जो गहन ध्यान में लीन रहता है और जिसने आत्मज्ञान प्राप्त कर लिया है।

उपनिषदों में योग को 'युज्यते अनेन इति योगः' शब्दों से परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है "जो जोड़ता है वह योग है"। यह परिभाषा योग के मूल सार को बहुत ही सटीक रूप से व्यक्त करती है। उपनिषदों के अनुसार, योग का अर्थ केवल शारीरिक अभ्यास तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यक्तिगत चेतना को सार्वभौमिक चेतना से जोड़ने की एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है। यह एक ऐसा मार्ग है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने भीतर निहित परमात्मा के साथ एकात्मता का अनुभव कर सकता है।

जब हम योग का अभ्यास करते हैं, तो हम अपने मन और शरीर को शांत करते हैं और अपनी चेतना को एकाग्र करते हैं। इस प्रक्रिया के माध्यम से हम अपने अंदर एक गहरी शांति और स्थिरता का अनुभव करते हैं। और जब हम इस अवस्था में पहुँच जाते हैं, तो हम अपने आप को सार्वभौमिक चेतना के साथ एक रूप में अनुभव करते हैं।

योग, जुड़ने की एक अद्वितीय प्रक्रिया है। यह केवल शारीरिक अंगों को जोड़ने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मन, शरीर और आत्मा का एक गहरा संगम है। योग का अंतिम लक्ष्य व्यक्तिगत आत्मा को सार्वभौमिक चेतना या परमात्मा से जोड़ना है। यह टुकड़ों को जोड़ने जैसा नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा अभ्यास है जो व्यक्ति को इस सत्य का अनुभव कराता है कि सब कुछ परस्पर जुड़ा हुआ है और एक ही स्रोत से उत्पन्न हुआ है। शरीर आत्मा की अभिव्यक्ति का मात्र एक साधन है, जबकि आत्मा स्वयं चेतना, ज्ञान और आनंद का स्वरूप है। योग का लक्ष्य इस सत्य को समझना और महसूस करना है कि हमारा सच्चा स्वरूप शरीर नहीं, बल्कि आत्मा है। योग के माध्यम से हम इस अस्थायी शरीर से परे जाकर उस शाश्वत और अमर आत्मा का अनुभव करते हैं। यह अनुभव ही योग का परम लक्ष्य है।

योग मन, वचन और कर्म को आत्मा के साथ मिलाने की एक प्रक्रिया है। जब मानवीय भौतिक ऊर्जा आध्यात्मिक ऊर्जा के साथ सम्मिलित होती है, तो एक असीमित शक्ति का अनुभव होता है। यह मिलन ही योग है।

योग को मोक्ष प्राप्ति का मार्ग माना जाता है। इसे विभिन्न धर्मों और दर्शनों जैसे जैन, वैदिक, ब्राह्मण और बौद्ध में अलग-अलग तरीके से देखा गया है। ऐतिहासिक रूप से, योग को श्रमणयोग और ब्राह्मणयोग में विभाजित किया जा सकता है। श्रमणयोग अनीश्वरवादी और अनात्मवादी है, जबकि ब्राह्मणयोग ईश्वरवादी, पुरुषवादी और ब्रह्मात्मवादी है। इस प्रकार, योग का अर्थ विभिन्न धर्मों और दर्शनों में अलग-अलग है।

15.4 योग की परिभाषाएँ

पतंजलि के योगसूत्र योग दर्शन का आधारभूत ग्रंथ है। इनकी रचना कब हुई, इस पर विद्वानों में मतभेद है। कुछ का मानना है कि ये लगभग 3000 वर्ष पूर्व लिखे गए थे, जबकि प्रोफेसर जैकोबी अपनी पुस्तक *Dates of Philosophical Sutras*, JAOS (1911) में योगसूत्र का समय 5 वीं शताब्दी के अंत के आस-पास का माना है। यदि दूसरा मत सही है, तो ये वैयाकरण पतंजलि द्वारा नहीं लिखे जा सकते क्योंकि वे दूसरी शताब्दी के थे। योगसूत्र में पतंजलि ने योग को 'चित्तवृत्तिनिरोध' यानी चित्त की वृत्तियों को रोकने के रूप में परिभाषित किया है। इस परिभाषा में 'चित्त', 'वृत्ति' और 'निरोध' शब्दों का सही अर्थ समझना बहुत जरूरी है।

चित्त को मन, अहंकार और बुद्धि का समूह माना जाता है। इसे प्रकृति का पहला उत्पन्न तत्व भी कहा जाता है जिसमें सत्व गुण प्रधान होता है। योग के अर्थ को अधिक स्पष्ट करते हुए महर्षि पतंजलि ने आगे कहा है —

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् । 3।

15.4.1 वेदों के अनुसार योग की परिभाषाएँ

भारत में योग का महत्व बहुत प्राचीन काल से रहा है। जीवन के चार पुरुषार्थों — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में योग का विशेष स्थान है। प्रयोग और फल के आधार पर योग को लौकिक और अलौकिक दो प्रकार का माना जाता है। वेद, जो विश्व के प्राचीनतम ग्रंथों में से हैं, योग के मूल स्रोत माने जाते हैं। सभी वेदों में योग का उल्लेख मिलता है, लेकिन अक्सर योग को केवल योग सूत्र, घेरण्ड संहिता, योग दर्शन, गोरक्ष संहिता और गीता जैसे ग्रंथों से जोड़कर देखा जाता है। इसका कारण यह है कि लोगों को वेदों में योग के उल्लेखों को पहचानने और समझने में कठिनाई होती है।

वेद भारतीय ज्ञान का मूल स्रोत हैं। वेदों में कहा गया है कि सभी विद्याओं का मूल वेदों में ही निहित है। देव विद्या से लेकर राजनीति तक, हर विषय का उल्लेख वेदों में मिलता है। योग भी इनमें से एक है। वेदों में योग के लौकिक और अलौकिक दोनों तरह के प्रयोगों का वर्णन मिलता है और योग को परिभाषित भी किया गया है। जो निम्नवत् है —

योग को भारतीय जीवन के ऋग्वेद के प्रथम मंडल के अठारहवें सूक्त के सातवीं ऋचा में योग की परिभाषा इस प्रकार से दी है —

यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन् ।

स धीनां योगमिन्वतिः ॥ (ऋग्वेद 1/18/7)

अर्थात् विद्वानों के सभी कार्यों को सिद्ध करने के लिए योग आवश्यक है। योग व्यक्ति के कर्मों में ही निहित है। ऋग्वेद के अनुसार, योग चित्त को स्थिर करने का अभ्यास है और यह हर कर्म में शामिल है।

अथर्ववेद के बीसवें कांड के छब्बीसवें सूक्त के प्रथम श्लोक में उल्लिखित है कि —

योगे योगे तवस्तरं वाजे वाजे हवामहे ।

सखाय इन्द्रभूतये ॥ 20/26/1 ॥

अर्थात् हम सखा (साधक), समाधि की प्राप्ति और हर परेशानी से मुक्ति के लिए इंद्र को आवाहन करते हैं।

15.4.2 श्रीमद्भागवतगीता के अनुसार योग की परिभाषाएँ

श्रीमद्भगवद्गीता योग के विषय में एक स्पष्ट दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। गीता के 18 अध्यायों में से प्रत्येक को एक विशेष योग के नाम से जाना जाता है। जैसे प्रथम अध्याय को अर्जुनविषाद योग, द्वितीय को सांख्य योग, तृतीय को कर्मयोग, चतुर्थ को ब्रह्मयोग, पाँचवे को कर्म सन्यास योग, छठे को आत्मसंयम योग, सातवें को ज्ञानविज्ञान योग, आठवें को अक्षरब्रह्म योग, नवें को राजविद्याराजग्रह योग, दसवें को विभूति योग, ग्यारहवें को विश्वरूपदर्शन योग, बारहवाँ भक्तियोग, तेरहवाँ क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग, चौदहवाँ गुणत्रय विभाग योग, पंद्रहवें को पुरुषोत्तम योग, सोलहवें को दैवासुरसम्पद् विभाग योग, सत्रहवें को श्रद्धात्रय विभाग योग एवं अठारहवें को मोक्षसन्यास योग की संज्ञा दी गयी है। गीता के दूसरे अध्याय के श्लोक 50 में, योग को 'योगः कर्मसु कौशलम्' कहा गया है, अर्थात् कर्मों में कुशलता ही योग है। सम्पूर्ण श्लोक इस प्रकार से वर्णित है।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।

तस्माद्योगाय युज्यस्व योगरू कर्मसु कौशलम्॥

अर्थात् बुद्धिमान व्यक्ति इस लोक में ही पुण्य और पाप के बंधन से मुक्त हो जाता है। इसलिए तुम भी समत्व योग में लगे रहो, क्योंकि यह कर्मों के बंधन से मुक्ति का मार्ग है।

श्रीमद्भागवतगीता के दूसरे अध्याय के अनुसार योग का स्वरूप

'समत्वं योग उच्यते'

अर्थात् योगी का मन सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान जैसे सभी द्वंद्वों में एक समान रहता है। जब योगी की बुद्धि सिद्धि और असिद्धि में समान होती है, तब वह जगत के सभी पदार्थों को समान दृष्टि से देखता है। इस अवस्था में पहुँचकर योगी का अज्ञान दूर हो जाता है और सभी दुःख समाप्त हो जाते हैं। इसी समत्व भाव को ही योग कहते हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. योग शब्द की उत्पत्ति किस धातु से हुई है?

.....

.....

2. 'युज् संयमने' का योग के संदर्भ में क्या तात्पर्य है?

.....

.....

3. योग दर्शन का मूल ग्रंथ क्या है?

.....

.....

4. योगसूत्र के अनुसार योग क्या है?

.....

.....

15.4.3 उपनिषदों में वर्णित योग की परिभाषाएँ

उपनिषदों को वेदांत भी कहा जाता है और ये सनातन धर्म के सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथों में से एक हैं। ये वैदिक साहित्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। हालांकि उपनिषदों की संख्या 108 बताई जाती है, लेकिन मुख्य रूप से 13 उपनिषदों को अधिक महत्व दिया जाता है। इनमें ईशावास्योपनिषद, केनोपनिषद, कठोपनिषद, प्रश्नोपनिषद, मुण्डकोपनिषद, माण्डूक्योपनिषद, तैत्तिरीयोपनिषद, ऐतरेयोपनिषद, छान्दोग्योपनिषद, बृहदारण्यकोपनिषद, श्वेताश्वतरोपनिषद, कौशितकी उपनिषद और मैत्रायणी उपनिषद प्रमुख हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार, मुख्य उपनिषदों की संख्या दस है और बाकी के तीन को गौण माना जाता है। सभी 108 उपनिषद किसी न किसी वेद से जुड़े हुए हैं। इनमें से 10 उपनिषद ऋग्वेद, 19 उपनिषद शुक्ल यजुर्वेद, 32 उपनिषद कृष्ण यजुर्वेद, 16 उपनिषद सामवेद और 31 उपनिषद अथर्ववेद से संबंधित हैं। इन सभी उपनिषदों में योग को विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है।

कठोपनिषद् के द्वितीय अध्याय के तृतीय वल्ली के श्लोक संख्या 10 तथा 11 में यम योग के विषय में समझाते हुए नचिकेता से कहते हैं कि –

यदा पंचावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।

बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम् ॥ 10 ॥

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभावाप्ययौ ॥ 11 ॥

जब व्यक्ति की पाँचों इंद्रियाँ शांत होकर स्थिर हो जाती हैं और मन भी उनके साथ स्थिर हो जाता है, साथ ही बुद्धि की गतिविधियाँ भी शांत हो जाती हैं, तो यह स्थिति परम गति कहलाती है। ऐसा मनीषी कहते हैं। इस स्थिर अवस्था को ही योग कहते हैं। क्योंकि इस अवस्था में व्यक्ति अत्यंत स्थिर और निश्चययुक्त हो जाता है। योग शुभ का उदय और अशुभ का अस्त करता है।

15.4.4 पुराणों में वर्णित योग की परिभाषाएँ

पुराण शब्द का अर्थ प्राचीन या अतीत से है। पुराण शब्द, 'पुरा' (प्राचीन) और 'अण' (कहना) शब्दों के मेल से बना है। इस प्रकार, पुराण वे ग्रंथ हैं जो प्राचीन काल की घटनाओं, सिद्धांतों, शिक्षाओं और नियमों का वर्णन करते हैं। ये ग्रंथ हिंदू धर्म के सबसे प्राचीन ग्रंथों में से हैं। हमारे हिंदू धर्म के प्राचीन साहित्य में अठारह पुराणों का उल्लेख मिलता है। ये पुराण ब्रह्मा पुराण, पद्म पुराण, विष्णु पुराण, वायु पुराण, भागवत पुराण, नारद पुराण, मार्कण्डेय पुराण, अग्नि पुराण, भविष्य पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, लिंग पुराण, वराह पुराण, स्कन्द पुराण, वामन पुराण, कूर्म पुराण, मत्स्य पुराण, गरुड पुराण तथा ब्रह्मांड पुराण हैं। नारद पुराण सभी अन्य पुराणों से जुड़ा हुआ है और इसमें सभी पुराणों का सार निहित है। पुराणों को मनुष्य के अतीत, वर्तमान और भविष्य का दर्पण भी कहा जा सकता है। वेदों की भाषा अक्सर जटिल होती है, जिससे उन्हें समझना कठिन हो जाता है। इसके विपरीत, पुराणों में जटिल विषयों को सरल और रोचक तरीके से बताया गया है। पुराणों में योग के बारे में भी कई जगह अलग-अलग परिभाषाएँ मिलती हैं।

श्रीमद्भागवत महापुराण के तेरहवें अध्याय में उद्धव के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्लोक 14 में श्रीकृष्ण कहते हैं कि –

एतावान योग आदिष्टो मच्छिश्यैः सनकादिभिः।

सर्वतो मन आकृष्य मय्यद्धाऽऽवेशयते यथा ॥ 14 ॥

अर्थात्, हे प्रिय उद्धव! मेरे शिष्यों सनकादि मुनियों ने योग का जो स्वरूप बताया है, वह यह है कि साधक को अपना मन सब ओर से खींचकर विराट आदि में नहीं, बल्कि सीधे मुझमें ही लगा देना चाहिए।

कूर्म पुराण में लिखा है कि –

मदृयेकचित्ता योगो वृत्त्यन्तरनिरोधतः ॥ 11 ॥

अर्थात् वृत्तिनिरोध के माध्यम से ही योग की प्राप्ति होती है।

15.4.5 धर्मों और दर्शनों के अनुसार योग की परिभाषाएँ

योग एक तीक्ष्ण परशु की तरह है जो आध्यात्मिक, भौतिक और दैविक रूप से हमारे जीवन में आने वाली सभी समस्याओं को काटता है। यह हमें दुखों से मुक्ति दिलाता है। योग के माध्यम से हम परम पुरुषार्थ यानी मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। जगत में अन्य साधनों जैसे जड़ी-बूटियों, मंत्र-तंत्र के द्वारा सिद्धियाँ प्राप्त करने के लिए अनेक प्रयास करने पड़ते हैं। परंतु योग इन सबके बिना ही मोक्ष जैसी महान सिद्धि को प्राप्त करने का सबसे सरल और प्रभावी उपाय है।

भूयांसोऽपि हि पाप्मानः प्रलयं यांति योगतः।

वण्डवाताद् घनघना घनाघनघटा इव॥६॥

अर्थात् जैसे प्रचंड वायु के वेग से आकाश में छाए घने बादल बिखर जाते हैं, उसी प्रकार योग साधना के प्रभाव से मनुष्य के मन में जमे हुए अनेक पापों का नाश हो जाता है।

वैशेषिक दर्शन में योग को परिभाषित करते हुए लिखा गया है कि –

तदनारम्भ आत्मस्य मनसि शरीरस्य दुखाभावः संयोगः॥ (6/2/16)

जब मन को आत्मा में स्थिर कर दिया जाता है, तब वह बाहरी विषयों से मुक्त हो जाता है और इसके कर्म रुक जाते हैं। इस अवस्था को ही योग कहते हैं। यह वह स्थिति है जहां मन का कोई भी अनायास कार्य नहीं होता, क्योंकि यह पूर्णतः आत्मा में लीन हो जाता है। यही वह योग है जो शरीर के दुःखों का कारण बनने वाले मन के कर्मों को समाप्त करता है।

महाभारत के शांति पर्व में कहा गया है कि “विद्या योगेन रक्षति”, अर्थात् ज्ञान की रक्षा योग के द्वारा ही होती है। योग वह माध्यम है जो ज्ञान को सुरक्षित रखने में सहायक होता है। उच्च कोटि का ज्ञान प्राप्त करने के लिए योग का अभ्यास अनिवार्य है। योग के बिना परम ज्ञान को प्राप्त करना असंभव है।

“मनः प्रशमनः उपायः योग इति धियते” जिसका अर्थ है कि मन को शांत करने का सबसे प्रभावी उपाय योग है। योग की विधियाँ अत्यंत सूक्ष्म और कुशल होती हैं, जिनमें किसी प्रकार के बल का प्रयोग नहीं किया जाता। मन को समझना और उसे नियंत्रित करने की कुंजी योग में निहित है। योग के माध्यम से हम अपने मन को शांत कर सकते हैं और एक स्थिर चित्त की प्राप्ति कर सकते हैं।

15.4.6 श्रेष्ठजनों के अनुसार योग की कुछ परिभाषाएँ

महर्षि व्यास के अनुसार, ‘योगः समाधिः’ अर्थात् योग का अर्थ है समाधि। दूसरे शब्दों में, योग और समाधि एक ही हैं। जब आत्मा की चेतना परमात्मा के सत्य, चैतन्य और आनंद स्वरूप से जुड़ जाती है, तो उसे ही योग कहते हैं। इस अवस्था में व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान लेता है और सभी दुखों से मुक्त हो जाता है।

मनुस्मृति में कहा गया है कि –

ध्यानं योगेन सम्यश्यदगतिस्यान्तरात्मनः (16, 731)

योग के माध्यम से हम अपनी आत्मा को जान सकते हैं, और यह ज्ञान ध्यान के अभ्यास से प्राप्त होता है। इसलिए, ध्यान करना योग का एक अभिन्न अंग है। ध्यान के बिना योग अधूरा है।

याज्ञवल्क्य ने लिखा गया है कि –

संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मा परमात्मनोः॥

योग का अर्थ है जीवात्मा और परमात्मा का मिलन या एकीकरण। जब आत्मा परमात्मा से मिलती है, तो यह मिलन की अवस्था ही योग कहलाती है। आत्मा और परमात्मा का यह मिलन मन को पवित्र किए बिना और ऊर्ध्व गति दिए बिना संभव नहीं है। सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर और मन को ऊंचे लक्ष्य की ओर उन्मुख करके ही जीव परमात्मा से प्रेम कर सकता है और अपनी आत्मा को परमात्मा में विलीन कर सकता है।

15.5 अष्टांग योग

महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग कोई मत-पंथ या सम्प्रदाय नहीं है बल्कि यह स्वस्थ जीवन जीने की एक पद्धति है। अष्टांग योग के पालन से ही वैयक्तिक, सामाजिक समरसता, शारीरिक स्वास्थ्य, बौद्धिक विकास, शान्ति एवं आत्मिक आनन्द की प्राप्ति की जा सकती है।

अष्टांग योग, हठ का एक बहुत ही गतिशील रूप है। यह 6 स्तरों से निर्मित होता है, जिसमें मुद्राओं का निश्चित क्रम होता है। यह एक शारीरिक अभ्यास है जो मानसिक स्पष्टता और आन्तरिक शक्ति को बढ़ाने में सहायक होता है।

अष्टांग शब्द संस्कृत के दो भाषाओं से मिलकर बना है— प्रथम अष्ट और दूसरा अंग। अष्ट गणितीय संख्या आठ को इंगित करता है जबकि अंग मनुष्य के शरीर के अंग का बोध कराता है इस प्रकार अष्टांग योग का अर्थ हुआ योग के आठ अंगों का पूर्ण मिलन। योग के आठ अंग योग सूत्रों के दर्शन की विभिन्न शाखाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। अर्थात् हम कह सकते हैं योग आठ अंगों का मिलन ही अष्टांग योग है।

अष्टांग योग में साधना करने वाले को अपने मन एवं बुद्धि को नियंत्रित करके, मन को वश में करके, परमात्मा में ध्यान लगाकर, परमात्मा से संपर्क करना और समाधि में लीन हो जाना ही अष्टांग योग है।

15.5.1 अष्टांग योग की परिभाषाएँ

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि का अनुसरण करके शरीर के इंद्रियों और मन को वश में करके ध्यान कि उस अवस्था में जाना जहां विचार आने बन्द हो जाएं जहां सम्पूर्ण शांति और आनन्द की प्राप्ति हो, साधक का मन उसके जीव आत्मा को परमात्मा से मिला दे और इसके बाद व्यक्ति को पूर्ण समाधि प्राप्त हो जाती है तथा आत्मज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। इसे ही अष्टांग योग कहते हैं।

अष्टांग योग वह है जो ज्ञानरूपी प्रवाह को स्थिर कर ज्ञानरूपी प्रवाह की ओर ले जाय। इसके लिए लगातार अभ्यास की जरूरत होती है।

अष्टांग योग को सभी योगों में श्रेष्ठ माना गया है। अष्टांग योग को योग के राजा के रूप में स्थान प्रदान किया जाता है। अष्टांग योग समस्त योग मार्गों से श्रेष्ठ होने के कारण योग का राजा कहा जाता है। अष्टांग योग मार्ग का अनुसरण कोई भी कर सकता है। इस मार्ग पर समाज में वास करने वाला कोई भी नागरिक कर सकता है। जिस प्रकार राज्य में बने हुए राज्यमार्गों पर चलने का अधिकार सब को, सभी को प्राप्त होता है ठीक उसी प्रकार से अष्टांग योग सभी के लिए समानता का भाव समाहित करता है।

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

5. किस योग को श्रेष्ठ योग माना जाता है?

.....
.....

6. अष्टांग योग किसे कहते हैं?

.....
.....

15.6 अष्टांग योग के प्रकार

अष्टांग योग को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है —

(1) बहिरंग

(2) अंतरंग

1. **बहिरंग** — इसके अन्तर्गत यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार अंग आते हैं। इन पांचों अंगों को बहिरंग कहते हैं। इन अंगों की विशेषताओं का सम्बन्ध बाहर की क्रियाओं से होता है।
2. **अंतरंग** — इसके अन्तर्गत धारणा, ध्यान व समाधि आते हैं। इन क्रियाओं का सम्बन्ध अन्तःकरण से होने के कारण इन्हें अंतरंग कहते हैं।

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

7. अष्टांग योग में कितने अंग होते हैं?

.....
.....

8. अष्टांग योग के अंगों के नाम लिखिए।

.....
.....

9. बहिरंग किसे कहते हैं।

.....
.....

अपने चंचल मन की वृत्तियों का निरोध करके मन को स्थिर करना और अपनी सम्पूर्ण शक्ति को रचनात्मक कार्य में लगाने की पद्धति ही योग है। योग के आठ अंग बताए गये हैं जो निम्नवत् वर्णित हैं —

15.6.1 यम (नैतिक कर्तव्य)

अष्टांग योग का पहला अंग यम है। इसके अन्तर्गत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह आते हैं। ये उपदेश समाज और व्यक्ति के लिए नैतिक नियम हैं। यम के अर्थ को निम्न श्लोक के माध्यम से समझा जा सकता है —

यमयन्ति निर्वर्तयन्ति इति यमाः।

वे नियम जो प्राणियों को अवांछनीय कार्यों को करने से रोकता है, उसे हम यम कहते हैं।

महर्षि पतंजलि के अनुसार यम पाँच प्रकार के होते हैं—

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः। (पतंजलि योग सूत्र 2/30)

(1) अहिंसा

(2) सत्य

(3) अस्तेय

(4) ब्रह्मचर्य

(5) अपरिग्रह

1. **अहिंसा (हिंसा न करना)** — अहिंसा का तात्पर्य अपनी आत्मा को अधोगति में नहीं पहुंचाने से है। किसी भी

प्राणी को मन, वचन व कर्म के द्वारा किसी भी प्रकार का रंच मात्र भी कष्ट न पहुंचाना अहिंसा कहलाता है। धर्म ग्रंथों में उल्लिखित है कि सभी जीवों के साथ संयमित व्यवहार करना चाहिए। जीवों को न तो मारना चाहिए और न ही मारने के लिए प्रेरित करना चाहिए। इसे निम्न श्लोक के माध्यम से समझा जा सकता है।

मनसा वाचा कर्मणा सर्वभूतेषु सर्वदा (याज्ञवल्क्य संहिता)

मन, वचन एवं कर्म से किसी को कष्ट नहीं देना चाहिए तथा सभी प्राणियों के सुख की कामना करना अहिंसा कहलाता है।

2. **सत्य** — इसका अभिप्राय मन, वचन तथा कर्म से सत्य का दृढतापूर्वक पालन करने से है। सत्य, नित्य, परमतत्त्व सनातन, दृष्टा, ध्येय परमात्मा है। जब मन सत्य का विचार करता है और जिह्वा सत्य वचन बोलती है और मनुष्य का सारा जीवन सत्य पर आधारित होता है तब साधक परमात्मा से एकरूप होने के योग्य हो जाता है।

सत्य के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि के विचार—

सत्य प्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/36)

सत्य की प्रतिष्ठा होने पर वाणी और विचारों में क्रियाफल देने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। कहने का तात्पर्य है कि व्यक्ति तब जो कुछ बोलता है वह फलित होने लगता है।

3. **अस्तेय (चोरी न करना)** — चोरी अथवा छिपावा करना अस्तेय है। चोरी न करना, शरीर, मन और वाणी द्वारा दूसरों के सामान की लालसा ना रखना अस्तेय कहलाता है।

मनसा वाचा कर्मणा परद्रव्येषु निग्रहः। (याज्ञवल्क्य संहिता)

योग सूत्र में अस्तेय प्राप्ति के सम्बन्ध में वर्णित है —

अस्तेयप्रतिष्ठा यां सर्वरत्नो प्रस्थानम्। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/37)

अस्तेय की दृढ स्थिति होने पर सभी रत्नों की प्राप्ति होती है। इच्छा से मुक्ति व्यक्ति को बड़े-बड़े प्रलोभनों से दूर रहने में सक्षम बनाती है।

4. **ब्रह्मचर्य** — जो ब्रह्म का आचरण करता है वही ब्रह्मचर्य होता है।

“ब्रह्मं आचरति स ब्रह्मचारी”

जब ब्रह्मचर्य व्रत की दृढ अवस्था आ जाती है तब सामर्थ्य, वीर्य, शौर्य और पराक्रम का लाभ प्राप्त हो जाता है। व्यक्ति धैर्यवान हो जाता है।

शंकराचार्य के अनुसार ब्रह्मचारी वह है जो पवित्र वैदिक विद्या के अध्ययन में लीन है, ब्रह्म में निरन्तर विचरण करता है और जानता है कि सबका अस्तित्व ब्रह्म में है। पतंजलि ने ब्रह्मचर्य में शरीर, वाणी और मन के संयम पर बल दिया है। ब्रह्मचर्य का शब्दकोशीय अर्थ है — अविवाहित जीवन, धार्मिक अध्ययन और आत्म संयमन।

ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में महर्षि व्यास का मत है —

ब्रह्मचर्यं गुप्तेन्द्रियस्योपस्थरस्य संयमः ।

गुप्त इन्द्रिय के संयम का नाम ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में पतंजलि योग सूत्र में वर्णित है—

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठा या वीर्यलाभः (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/38)

ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा होने पर साधक को वीर्य लाभ होता है। वीर्य लाभ होने पर साधना के अनुकूल गुण समूह प्राप्त होते हैं। उससे योगी को आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है।

5. **अपरिग्रह** — सामाजिक सन्दर्भों में आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का स्वार्थ की दृष्टि से संग्रह न करना अपरिग्रह कहलाता है। योगी का अनुभव है कि वस्तुओं का संग्रह या संचय करना परमात्मा में विश्वास के अभाव को प्रकट करता है। संचय वृत्ति का त्याग अपरिग्रह है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार—

अपरिग्रहस्थैर्य जन्मदृक्कथन्ता सम्बोध । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/39)

अपरिग्रह के स्थिर होने से जन्म-जन्मान्तर का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इस ज्ञान का उदय होना अपरिग्रह साधना द्वारा ही सम्भव होता है।

15.6.2 नियम

नियम का सम्बन्ध आन्तरिक अनुशासन से होता है। चरित्र सम्बन्धी विधान को नियम कहते हैं जो व्यक्तिगत अनुशासन के लिए लागू होता है। पतंजलि ने पाँच नियम बताए हैं— शौच (शुद्धता), संतोष (समाधान), तप (व्यग्रता या दृढ़ता), स्वाध्याय (आत्म-चिन्तन) और ईश्वर प्रणिधान (परमेश्वरार्पण)

शौचसन्तोषतपस्स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानि नियमा । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/32)

1. शौच — शौच से अभिप्राय बाह्य एवम आन्तरिक अर्थात् शरीर और चित्त की शुद्धि से होता है। इससे अन्तःकरण की शुद्धि, मन में प्रसन्नता, चित्त की एकाग्रता, इन्द्रियों का वश में होना और आत्म-साक्षात्कार की योग्यता विकसित हो जाती है।

शौच के दो प्रकार बताये गये हैं—

(अ) बाह्य शौच

(ब) आन्तरिक शौच

(अ) बाह्य शौच

जल, मिट्टी के द्वारा शरीर की शुद्धि, स्वार्थ त्याग, सत्य आचरण के द्वारा मानव के व्यवहार में शुद्धता, विद्या तथा तप द्वारा पंचभूतों की शुद्धि, ज्ञान से बुद्धि की शुद्धि ये सभी बाह्य शौच कहलाते हैं।

(ब) आन्तरिक शौच

अहंकार, राग, द्वेष, ईर्ष्या काम, क्रोध व लालच आदि विकारों को दूर करना आन्तरिक शौच कहलाता है।

योग सूत्र में इसके सम्बन्ध में वर्णित है —

शौचात्स्वागजुप्सा परैरसंसर्गः । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/40)

शौच की स्थिरता होने पर निजी अंगों के प्रति घृणा और परदेह संसर्ग की अनिच्छा होती है।

2. संतोष — संतोष का अर्थ है — जो सम है, जिसमें विषमता नहीं है, वह एक परमतत्त्व परमात्मा है। उससे तोष या तृप्ति प्राप्त होना संतोष है। वह सर्वोत्तम सुख का स्रोत है। महर्षि जी कहते हैं—

सन्तोषादनुत्तमसुखलाभ । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/42)

संतोष योगी को अद्वितीय परमसुख देता है। संतुष्ट व्यक्ति पूर्ण है क्योंकि वह परमात्मा के प्रेम को जान गया है और उसने अपने कर्तव्य को पूर्ण कर लिया है।

3. तप — ईष्ट के अनुसार मन के साथ इन्द्रियों को तपाना तप है। तप से आशय सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास, सुख-दुख आदि समस्याओं को सहन करने से सम्बन्धित है। इस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण हो जाता है। तप दिव्यात्मा से अन्तिम मिलन की प्राप्ति का और इस उद्देश्य के मार्ग में बाधक बनने वाली सभी कामनाओं को जलाने का जागृत प्रयास है। तप तीन प्रकार के होते हैं —

(1) कायिक तप — ब्रह्मचर्य और अहिंसा कायिक तप हैं।

(2) वाचिक तप — ऐसे वचन का प्रयोग करना जो कष्ट न दे, परमात्मा का गुणगान करना, अपने स्वयं के परिणाम का विचार किए बिना सत्य कथन करना और दूसरों की बुराई तथा निन्दा ना करना वाचिक तप है।

(3) मानसिक तप — मानसिक स्थिति का विकास करना, जिससे व्यक्ति सुख और दुःख में शान्त और संतुलित रहता है और आत्म संयम रखता है, मानसिक तप है।

निष्काम कर्म भी तप है। योगी तप से शरीर, मन और चरित्र की शक्ति का विकास करता है।
महर्षि के शब्दों में –

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयान्तफपस । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/43)

तप के प्रभाव से जब अशुद्धि का नाश हो जाता है तब शरीर और इन्द्रियों की सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

4. स्वाध्याय – स्वयं का अध्ययन स्वाध्याय है। स्वयं से अध्ययन करते हुए आत्म मूल्यांकन द्वारा अपनी कमियों को दूर करते हुये, आत्म विकास की प्रक्रिया में आगे बढ़ना ही स्वाध्याय है।

पतंजलि के अनुसार

स्वाध्यादिष्टा देवता सम्प्रयोग । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/44)

स्वाध्याय से ईष्ट देवता से सीधे साक्षात्कार हो जाता है।

5. ईश्वर प्रणिधान – व्यक्ति द्वारा अपने कर्म और इच्छा का ईश्वर को समर्पण ईश्वर प्रणिधान है। जिसे ईश्वर पर विश्वास है वह निराश नहीं होता है। ईश्वर के निमित्त अर्पित कर देना ईश्वर प्रणिधान है।

महर्षि के अनुसार –

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात् । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 1/23)

ईश्वर प्रणिधान से समाधि की प्राप्ति हो जाती है। ईश्वर प्रणिधान से ईश्वर की कृपा प्राप्त होती है।

15.6.3 आसन

स्थिर, सुखपूर्वक बैठने का नाम आसन है। आसन द्वारा शरीर स्वस्थ होता है तथा साथ ही साथ मन स्थिर होता है। अनन्त में मन लगाने से स्पष्ट है कि यह स्थिरता मात्र शरीर की नहीं बल्कि मन की भी स्थिरता है।

आसान से महर्षि जी का आशय स्थिर बैठने से है –

स्थिरसुखमासनम् । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/46)

आसन के सम्बन्ध में तेजबिन्दुपनिषद में वर्णित है –

सुखेनैव भवेत् यस्मिन्न जसं ब्रह्मयिन्तम् ।

अर्थात् जिस स्थिति में बैठकर सुखपूर्वक लगातार परमब्रह्म का चिन्तन किया जा सके उस अवस्था को ही आसन समझना चाहिए।

15.6.4 प्राणायाम

प्राणायाम दो शब्दों से मिलकर बना है— प्राण एवम आयाम। प्राण का अर्थ श्वास, जीवन, वायु, ऊर्जा या शक्ति है। आयाम का अर्थ लम्बाई, विस्तार कसाव या प्रतिरोध है। इस प्रकार प्राणायाम शब्द का अर्थ श्वासों की व्याप्ति, विस्तार एवं नियंत्रण है। जिस प्रकार वायु द्वारा राख का आवरण हटाए जाने पर अग्नि प्रज्वालित हो जाती है उसी प्रकार प्राणायाम के अभ्यास से वासनाओं के मिट जोन पर शरीर के अन्दर की दिव्य ज्योति अपनी पूर्ण महिमा के साथ प्रकाशमान हो जाती है। प्राणवायु का निरोध करना प्राणायाम कहलाता है।

योग सूत्र में प्राणायाम को इस प्रकार वर्णित किया गया है

तस्मिन्सति श्वासप्रश्वाससयोगतिविच्छेद प्राणायामः (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/49)

आसन के करते ही श्वास प्रश्वास की गति का रुक जाना प्राणायाम है।

15.6.5 प्रत्याहार

प्रत्याहार योग की पांचवीं अवस्था है। इस अवस्था में इन्द्रियाँ वश में हो जाती है। जब साधना करने वाले को स्रष्टा की या सृष्टि की पूर्णता की अनुभूति होती है तब उसके इन्द्रिय विषयों की तृष्णा समाप्त हो जाती है और वह उन्हें वैराग्य की दृष्टि से देखता है। मानसिक विकास के उच्च स्तर पर प्राणायाम के परिणाम स्वरूप इन्द्रियों

का अपने विषयों से सम्बन्ध त्यागकर चित्त के स्वरूप के अनुकरण जैसा प्रवाहित होना प्रत्याहार है अर्थात् इन्द्रियों पर या मन पर पूर्ण नियंत्रण प्रत्याहार कहलाता है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार –

स्वथविषयासम्प्रयोगे चित्तम स्वतरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहार ।

प्रत्याहार के लाभ के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि के विचार –

ततः परमा वश्यततेन्द्रियाणाम । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/55)

अर्थात् प्रत्याहार से इन्द्रिया एकदम वशीभूत हो जाती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

10. यम कितने प्रकार के होते हैं? उनके नाम लिखिए।

11. पतंजलि के अनुसार नियम कितने प्रकार के होते हैं? उनके नाम लिखिए।

12. आसन किसे कहते हैं?

13. प्राणायाम कितने शब्दों से मिलकर बना है? उनके नाम लिखिए।

14. प्रत्याहार के लाभ के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि के विचार लिखिए।

15.6.6 धारणा

महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग के अन्तरंग के अन्तर्गत आने वाला योग का यह छठा अंग है। मन को एक विशेष स्थान पर स्थिर करने का नाम धारणा है। अतः यह मन की स्थिरता का घटक है। महर्षि पतंजलि के अनुसार धारणा के लक्षण को निम्न सूत्र में देखा जा सकता है –

देशबन्धश्चतस्य धारणा । (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 3/1)

किसी एक स्थान पर चित्त को स्थिर करना धारणा है। धारणा में चित्त किसी एक विषय वस्तु पर केन्द्रित हो जाती है। इस अवस्था को प्राप्त हो जाने के बाद साधक ध्यान के योग्य हो जाता है।

15.6.7 ध्यान

धारणा की उच्च अवस्था ध्यान है। ध्यान शब्द की उत्पत्ति ध्येचित्तायाम धातु से हुयी है, जिसका अर्थ होता

है, चिन्तन करना। परन्तु यहां पर ध्यान से आशय चिन्तन से नहीं अपितु चिन्तन का एकाग्रिकरण अर्थात् चित्त को एक ही लक्ष्य पर स्थिर करने से सम्बन्धित है।

ध्यान के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि ने लिखा है –

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 3/2)

जहाँ चित्त को लगाया जाय, उस ध्येय में वृत्ति का एक बार चलना, क्रम का न टूटना ध्यान कहलाता है। ध्येय के प्रति लगातार अखण्ड रूप से एकाकार होना ध्यान है। वस्तुतः ध्यान एक सहज परिणाम है।

15.6.8 समाधि

जब केवल लक्ष्य का आभास रह जाये चित्तवृत्ति का निज स्वरूप शून्य हो जाय तब वही ध्यान समाधि में बदल जाता है। यह बौद्धिक विकास की पराकाष्ठा है। समाधि स्तर पर आत्मा का आलोक मात्र रह जाता है।

ऋतम्भरा : तत्र प्रज्ञा। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 1/48)

इस समय व्यक्ति की बुद्धि ऋतम्भरा अर्थात् सत्य से संयुक्त हो जाती है। सत्य एक मात्र परमात्मा है। अतः वह उस परमतत्त्व परमात्मा को धारण करने की क्षमता वाली हो जाती है। साधना की यह चरम अवस्था है। इस अवस्था में योगी का बाह्य जगत से सम्बन्ध टूट जाता है। समाधि योग की एक ऐसी अवस्था है जिसमें योगी चरमोत्कर्ष को प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करने की तरफ उन्मुख होता है और यही योग साधना का लक्ष्य होता है। योगशास्त्र में समाधि को मोक्ष प्राप्त करने का मुख्य साधन बताया गया है। योगश्चित्तवृत्ति निरोध समाधि अवस्था में योगी की सभी प्रकार की चित्त वृत्तियां रुक जाती हैं।

महर्षि पतंजलि ने समाधि के स्वरूप को निम्न सूत्र के माध्यम से वर्णित किया है –

तदेवार्थमात्रनिर्भासंस्वरूपशून्यमिव समाधि। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 3/3)

जब ध्यान में केवल ध्येय मात्र ही प्रतीत होता है और चित्त का अपना स्वरूप शून्य सा हो जाता है तब वह ध्यान की प्रक्रिया ही समाधि हो जाती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

15. ध्यान किसे कहते हैं?

.....

16. धारणा किसे कहते हैं?

.....

17. महर्षि पतंजलि के अनुसार समाधि क्या है?

.....

18. अष्टांग योग के दो लाभ लिखिए।

.....

19. धारणा, ध्यान और समाधि क्रियाओं का सम्बन्ध किससे होता है?

15.7 सूर्य नमस्कार

सूर्य हमारी आध्यात्मिक चेतना का शक्तिशाली प्रतीक है। सूर्य नमस्कार का अर्थ सूर्य देव को नमन या प्रणाम से है। सूर्य के कारण ही यह संसार है। सूर्य के प्रकाश को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह श्वेत है परंतु यह सप्त वर्णों की प्रकाश की किरणों का मिश्रण है। सूर्य नमस्कार से मनुष्य का शारीरिक विकास तो होता ही है, साथ ही साथ आध्यात्मिकता का विकास भी होता है। सूर्य नमस्कार के समय जो स्तुतियां की जाती हैं उससे मनुष्य का मन एवं मस्तिष्क ध्यान केंद्रित करने के कारण एकाग्रचित हो जाता है और इसके कारण परम सुख एवं शांति का अनुभव होता है। सूर्य नमस्कार की परम्परा हमें ऋषियों एवं मुनियों के द्वारा प्राप्त हुई है। सृष्टि के संरक्षक, संवाहक एवं अन्नदाता होने के कारण सूर्य का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है। प्राचीन काल में दैनिक क्रियाकलापों में सूर्य उपासना के महत्व को देखा जा सकता है जो आज भी मानव करता चला आ रहा है। सूर्य नमस्कार सूर्योदय के समय पूर्वाभिमुख होकर जब किया जाता है तो प्रकाश के मूल रंगों की तीन किरणें हमें निरोगी बनाती हैं।

15.8 सूर्य नमस्कार हेतु प्रयुक्त मंत्रों के प्रयोग की विधि

सूर्य नमस्कार के लिए सबसे उपयुक्त समय प्रातः काल की बेला में सूर्योदय के समय होता है। स्वच्छ मन से प्रसन्न होकर सुविधाजनक ढीले परिधान को धारण कर शांत एवं मनमोहक वातावरण में अभ्यास करना चाहिए। प्रातः काल (सूर्योदय) एवं सायंकाल (सूर्यास्त) के समय अभ्यास करने से सूर्य के द्वारा जो किरणें निकलती हैं वे हानिकारक नहीं होती। वैसे यह अभ्यास किसी भी समय किया जा सकता है बस इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि अभ्यास के समय पेट खाली होना चाहिए। अभ्यास की शुरुआती अवस्था में साधक को अपने शरीर का ध्यान रखते हुए दो या तीन बार अभ्यास करना चाहिए। सूर्य नमस्कार प्रारंभ करने से पहले मनुष्य को अपने संपूर्ण शरीर के प्रति सचेष्ट होना चाहिए और उसके साथ सामंजस्य बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि शरीर में किसी भी प्रकार के तनाव का अनुभव हो रहा है, यदि मनुष्य को तनाव का अनुभव हो कि तलवों के माध्यम से गुरुत्व बल के कारण पृथ्वी में समाहित हो रहा है तब ऐसी परिस्थिति में उस समय यह भी अनुभव करें कि पृथ्वी से जीवन शक्ति आपके अंदर प्रवाहित हो रही है तथा यह क्रिया संपूर्ण व्यक्तित्व को ऊर्जावान बना रही है। इस क्रिया के अंत में सजगता को भूमध्य में ले जाएं और वहां उदीयमान सूर्य का दर्शन करें।

सूर्य की आराधना अथवा सूर्य नमस्कार शुरू करने से पहले निम्नलिखित मन्त्र की स्तुति कर सूर्य को प्रणाम अथवा नमस्कार करें –

**आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर।
दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोस्तुते॥**

सूर्य नमस्कार के सभी मंत्र सूर्य नमस्कार के पूर्व (आह्वान मंत्र) एवं सूर्य नमस्कार के पश्चात् (विसर्जन मंत्र) कहे जाने वाले मंत्र सूर्य नमस्कार की स्थिति में ही वाचन करना चाहिए। सूर्य नमस्कार प्रारम्भ करने से पूर्व निम्नलिखित मंत्र को पढ़ना चाहिए –

**ॐ ध्येय सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती,
नारायणः सरसिजासन सन्निविष्टः
केयूर वान मकर कुण्डलगान किरीट,
हारी हिराग्यमय वपुर्धृत शंखचक्रः॥**

सूर्य नमस्कार के पूर्ण होने पर निम्नलिखित मन्त्रों के साथ उसका समापन करना चाहिए—

**आदित्याय नमस्कारान ये कुर्वन्ति दिने दिने,
दीर्घमार्गुबलम् वीर्य तेजस्तेषां च जायते,
जन्मान्तर सहस्रेणु दारिद्र्यं नोपजायते ।**

नमो धर्म विधानाय नमस्ते कृत साक्षिने,
नमः प्रत्यक्ष देवाय, भास्कराय नमो नमः ।
अकाल मृत्यु हरणम् सर्व व्याधि विनाशनम्
सूर्य पापोदकम् नीर्थम् जठरे धारयाभ्यम् ।।
सूर्य नमस्कार आसनों की प्रयोगात्मक तैयारी –

15.9 सूर्य नमस्कार के विभिन्न मंत्र

सूर्य नमस्कार करते समय तथा उनकी आराधना करने के पश्चात प्रत्येक अवस्था के साथ सूर्य भगवान के विभिन्न नामों का उच्चारण करते हुए उनकी आराधना करनी चाहिए।

ॐ मित्राय नमः

ॐ सूर्याय नमः

ॐ भानवे नमः

ॐ रवये नमः

ॐ खगाय नमः

ॐ मरीचये नमः

ॐ पूष्णे नमः

ॐ हिरण्यगर्भाय नमः

ॐ आदित्याय नमः

ॐ सावित्रे नमः

ॐ अर्काय नमः

ॐ भास्कराय नमः

15.10 सूर्य नमस्कार के विभिन्न आसन एवं उनकी स्थितियाँ

सूर्य नमस्कार के अंतर्गत 12 स्थितियाँ होती हैं। सूर्य नमस्कार प्रातः काल सूर्य के सामने खड़े होकर करने से अत्यधिक लाभ की प्राप्ति होती है। सूर्य नमस्कार करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सूर्य नमस्कार के समय पेट खाली हो। सूर्य नमस्कार की एक-एक आवृत्ति में अलग-अलग स्थितियाँ होती हैं। प्रत्येक आसन का अपना एक मंत्र है। इसके अंतर्गत सात प्रकार के आसनों से 12 प्रकार की अलग-अलग स्थितियाँ बनाई जाती हैं, जो निम्नानुसार वर्णित हैं –

1. प्रणाम आसन या नमस्कारासन
2. हस्त उत्तानासन
3. पाद हस्तासन
4. अश्व संचालनासन
5. पर्वतासन
6. अष्टांग नमस्कारासन
7. भुजंगासन
8. पर्वतासन (अधोमुख स्वनासन)
9. अश्व संचालनासन

10. पाद हस्तासन
11. हस्त उत्तानासन
12. प्रणामासन

बोध प्रश्न —

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

20. सूर्य नमस्कार का संबंध किससे है?

21. सूर्य नमस्कार कब एवं किस स्थिति में करना चाहिए?

22. सूर्य नमस्कार के दो मंत्र लिखिए।

23. सूर्य नमस्कार के अंतर्गत कितनी स्थितियां आती हैं?

सूर्य नमस्कार के आसन

(1) प्रणामासन या नमस्कारासन —

प्रार्थना की मुद्रा में पंजों को मिलाकर पूर्व दिशा की तरफ सीधे खड़े होना चाहिए। नमस्कार की मुद्रा में दोनों अंगूठों के पर्व अनाहत चक्र पर तथा दोनों प्रकोष्ठ जमीन के समान्तर, कंधे पीछे की ओर सिर सन्तुलित, गर्दन सीधी, व दृष्टि सामने होनी चाहिए।



(2) हस्तउत्तानासन—

इस आसन में मनुष्य को दोनों भुजाओं को सिर के ऊपर उठाना चाहिए। मनुष्य को दोनों भुजाओं के बीच कन्धों की चौड़ाई के बराबर दूरी बनाए रखना चाहिए। इस अवस्था में मनुष्य को सिर, भुजाओं और धड़ के ऊपरी भाग को थोड़ा सा पीछे की तरफ झुकाना चाहिए। इस आसन के दौरान भुजाओं को ऊपर उठाते समय श्वास लेना चाहिए।



(3) पादहस्तासन—

इस आसन में सामने की तरफ झुकते हुए दोनों हाथों के पंजों को पैरों के बगल में स्पर्श कराना चाहिए तथा ललाट को घुटने से स्पर्श कराने के साथ पैरों को सीधा रखना चाहिए।



(4) अश्व संचालन —

इस आसन के अंतर्गत मनुष्य को बाएं पैर को जितना सम्भव हो पीछे की तरफ ले जाना चाहिए। बाएं घुटने एवं पाद के पृष्ठ भाग को जमीन से स्पर्श कराना चाहिए। इस आसन में

दाएं पंजे को अपनी जगह पर स्थिर रखते हुए घुटने को मोड़ना चाहिए तथा भुजाओं को सीधा रखना चाहिए। इस आसन के दौरान दोनों हाथ के पंजों को तथा दाएं पैर के पंजे को एक सीधी रेखा में ही बनाए रखना चाहिए।

इस आसन के अन्तिम स्थिति में शरीर का भार दोनों हाथों पर, बाएं पैर का पाद पृष्ठ पर, घुटना एवं दाएं पैर के ऊपर शरीर का भार इस आसन को करते समय स्थित रहेगा। इस आसन में सिर को पीछे झुकाएं, पीठ को धनुषाकार तथा दृष्टि ऊपर की ओर भूमध्य पर केन्द्रित करना चाहिए। इस योगासन के समय पैर को पीछे ले जाते समय सांस को लेना चाहिए।



(5) पर्वत आसन – (पर्वतासन के स्थान पर – कहीं- कहीं दण्डासन)

इस आसन के अंतर्गत शरीर के वजन को दोनों हाथ पर स्थिर रखते हुए, दाएं पैर को सीधा करके, बाएं पंजे के पास रखना चाहिए। इस आसन के दौरान नितम्बों को अधिकतम् ऊपर की तरफ उठना चाहिए तथा सिर को दोनों भुजाओं के बीच में ले आना चाहिए। नाड़ियां जमीन से ऊपर न उठें और घुटनों की तरफ देखते हुए पैर और भुजाओं को एक सीध में रखना चाहिए। इस आसन के समय दाएं पैर को पीछे ले जाते समय तथा नितम्बों को उठाते समय श्वास को छोड़ना चाहिए।



(6) अष्टांग नमस्कारासन –

इस आसन में घुटने को मोड़ते हुए शरीर को नीचे लाकर अष्टांग नमस्कार की स्थिति बनानी चाहिए। इस आसन में घुटने, छाती तथा टुड्डी को जमीन से स्पर्श कराना चाहिए इस दौरान नितम्ब का थोड़ा भाग उठा रहेगा तथा इस क्रिया में श्वास को बाहर ही रोक कर रखना चाहिए। इस आसन को करते समय श्वसन नहीं करना चाहिए।



(7) भुजंगासन –

इस आसन में नितम्ब और श्रेणी प्रदेश को नीचे लाकर जमीन से स्पर्श कराना चाहिए। कोहनियों को सीधा करते हुए पीठ को धनुषाकार और वक्ष को सर्प की भंगिमा में आगे की ओर ले जाना चाहिए। इस दौरान सिर को पीछे की ओर झुकाना चाहिए।



(8) पर्वतासन (अधोमुख स्वानासन) –

यह आसन पर्वतासन के समान है अथवा उसकी पुनरावृत्ति है। भुजंगासन की स्थिति से पर्वत आसन में आ जाए। इस आसन में नितम्बों को ऊपर उठाएं और एड़ियों को जमीन पर ले आयें।



(9) अश्व संचालनासन –

यह आसन अश्वसंचालन की आंशिक पुनरावृत्ति है। अश्वसंचालन आसन में बायां पैर पीछे ले जाते हैं, जबकि अश्वसंचालनासन स्थिति में दाया पैर पीछे की ओर रहता है।



(10) पादहस्तासन –

यह आसन स्थिति 3 पादहस्तासन की पुनरावृत्ति है। दाहिने पंजे को आगे की तरफ बाएं पंजे के बंगल में ले आना चाहिए। दोनों घुटनों को सीधा रखना चाहिए। बिना जोर लगाये ललाट को जितना सम्भव हो घुटनों के

पास ले जाना चाहिए। ।



(11) हस्त उत्तानासन –

यह आसन स्थिति 2 हस्त उत्तानासन की पुनरावृत्ति है। इस प्रक्रिया में झुके हुए शरीर को उठाएँ एवं दोनों हाथों को सिर के ऊपर ले जाएँ। कंधों की चौड़ाई के बराबर दोनों भुजाओं के बीच दूरी को बनाए रखें। सिर, भुजाओं और धड़ के ऊपरी भाग को थोड़ा पीछे की ओर झुकाए। मनुष्य की दृष्टि हाथों की अंगुलियों के पोरों पर होनी चाहिए तथा हाथों को ऊपर उठाते समय श्वास लेना चाहिए।



(12) प्रणामासन –

यह स्थिति क्रमांक 1 प्रणामासन या नमस्कारासन की पुनरावृत्ति है। इस आसन के समय ऊपर उठे हुए हाथों के पंजों को मिलाकर प्रार्थना की मुद्रा बनाकर सीधे खड़े हो जाना चाहिए। इस अवस्था में पूरे शरीर को शिथिल कर दें। इस प्रक्रिया के समय सिर को सन्तुलित, गर्दन को सीधी व दृष्टि को सामने रखना चाहिए। इस योगाभ्यास के समय श्वास छोड़कर सामान्य श्वास-प्रश्वास करना चाहिए।



15.11 सूर्य नमस्कार के महत्व

सूर्य नमस्कार आध्यात्मिक चेतना का प्रतीक है। इनका महत्व हमारे धर्म ग्रन्थों में अनादिकाल से वर्णित है। योग के क्षेत्र में सूर्य नमस्कार का महत्व जीवन शक्ति एवं प्राणदायक अभ्यास के रूप में प्रचलित है। सूर्योपासना प्रकृति की उन शक्तियों को अनुकूल बनाने हेतु की गयी है, जो मनुष्य के नियंत्रण सीमा से बाहर हैं। शारीरिक विकास तथा उसकी गति में वृद्धि लाने के लिए सूर्य नमस्कार का अभ्यास एक प्रभावी अभ्यास है। यह प्राण शक्ति को प्रदान करने वाला है। इसमें शारीरिक और मानसिक दोनों स्तरों पर ऊर्जा सन्तुलित होती है। इसके अभ्यास से सारे शरीर का व्यायाम हो जाता है।

मेरुदण्ड के बारी-बारी से आगे पीछे मुड़ने के कारण, चूंकि सुषुम्ना का मार्ग मेरुदण्ड ही है, अतः ऊर्जा उर्ध्वमुखी होती है। इससे स्मरण शक्ति, बल, वीर्य व तेज की वृद्धि होती है। यह क्रिया विधि समस्त बीमारियों का नाश करती है। सूर्य नमस्कार से सजकता में वृद्धि तथा अच्छे स्वास्थ्य के लिए सूर्य नमस्कार एक आदर्श अभ्यास है, लेकिन ये सारे लाभ हमें तभी मिलेंगे जब सूर्य नमस्कार की कई आवृत्तियों का नियमित अभ्यास किया जाए सूर्य नमस्कार नियमित करने से मनुष्य को उसके सबसे बड़े शत्रु आलस्य से मुक्ति मिल जाती है।

15.12 सूर्य नमस्कार से होने वाले लाभ

नियमित पांच से पन्द्रह मिनट तक सूर्य नमस्कार करने से निम्नलिखित लाभ की प्राप्ति की जा सकती है –

- सूर्य नमस्कार करने से प्राण शक्ति की प्राप्ति होती है।
- इसको करने से शारीरिक और मानसिक दोनों स्तरों पर ऊर्जा संतुलित होती है।
- सूर्य नमस्कार के अभ्यास से सारे शरीर का व्यायाम हो जाता है।

सूर्य नमस्कार मानसिक शांति देता है तथा स्मरण शक्ति बढ़ाता है। बल, वीर्य व तेज की वृद्धि करता है।

- सूर्य नमस्कार के करने से कब्ज से मुक्ति मिलती है तथा यौवन बना रहता है।
- इस आसन के द्वारा स्त्रियां अपने शरीर को आकर्षक, सुंदर व सुडौल बना सकती हैं।
- सूर्य नमस्कार समस्त बीमारियों का नाश करता है।

- नियमित सूर्य नमस्कार करने करने से आयु प्रज्ञा अच्छी बुद्धि बल और तेज की प्राप्ति होती है।
- यह रक्त परिसंचरण, श्वसन और पाचन, प्रणाली सहित समस्त शारीरिक संस्थानों को उद्दीप्त और संतुलित करता है।

15.13 सूर्य नमस्कार के समय ली जाने वाली सावधानियाँ

सूर्य नमस्कार अभ्यास के समय निम्नलिखित, बातों का ध्यान रखना चाहिए।

1. सूर्य नमस्कार का अभ्यास अन्य आसनों से पूर्व करना चाहिए। वैसे तो यह आसन सभी के लिए उपयुक्त है, परन्तु अधिक उम्र के लोगों तथा 8 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए यह आवश्यक नहीं है।
2. मेरुदण्ड की समस्या, उच्च रक्त चाप, हृदय- रोग, हार्निया, रोगग्रस्त व्यक्ति किसी प्रशिक्षक के निर्देशन में ही यह आसन करें।
3. मासिक धर्म आरम्भ होते समय इस अभ्यास को नहीं करना चाहिए।
4. गर्भाधान के पश्चात बारह वें सप्ताह के प्रारम्भ तक थोड़ी सावधानी के साथ यह अभ्यास किया जा सकता है। प्रसव के 40 दिनों के बाद यह अभ्यास पुनः प्रारम्भ कर सकते हैं। क्षमतानुसार धीरे-धीरे अभ्यास को बढ़ाना चाहिए।
5. इस अभ्यास को एक झटके में नहीं अपितु धीरे-धीरे करना चाहिए।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. हस्तउत्तानासन क्या है?

.....

.....

2. पादहस्तासन को लिखिए।

.....

.....

3. सूर्य नमस्कार के समय ली जाने वाली दो सावधानियों को लिखिए।

.....

.....

15.14 सारांश

प्रस्तुत अध्याय में हमने योग के विभिन्न अर्थों के साथ योग के लिए दी गयी भिन्न-भिन्न परिभाषाओं का अध्ययन किया। हमने देखा की ग्रंथों तथा दर्शनों में योग का उल्लेख हुआ है और यह उल्लेख भिन्न-भिन्न अर्थों में हुआ है। इतना ही नहीं, एक ही ग्रंथ में योग का उल्लेख अलग-अलग अर्थों में किया गया है। योग जिसकी उत्पत्ति संस्कृत भाषा के युजिर् धातु से हुई है, का अर्थ अत्यंत विशद और व्यापक है। शाब्दिक अर्थ के रूप में हम योग का आशय बाँधना, युक्त करना, जोड़ना, सम्मिलित करना, से लेते हैं परन्तु यह अर्थ मात्र यहीं तक सीमित नहीं है। योग का आशय उस एकीकरण से है जहाँ जीवात्मा तथा परमात्मा का एकीकरण अथवा मनुष्य के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं या पक्षों जैसे शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, आध्यात्मिक आदि का सम्मिलन हो जाता है। अन्य अर्थों में मानव का उसके पर्यावरण के साथ समन्वयन योग के नाम से जाना जाता है। योग वह माध्यम है जिसके

द्वारा व्यक्ति के ज्ञान-चक्षु खुलते हैं और वह अपने अज्ञानरूपी अंधकार को दूर करते हुए विवेकवान बनता है।

अष्टांग योग मार्ग सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के लिए शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश है। जो मानव को 'स्व' (अस्तित्व) का ज्ञान कराते हुए उसके जीवन को सार्थक बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रस्तुत अध्याय में योग के विभिन्न पद्धतियों के अंतर्गत आने वाले महत्वपूर्ण योग पद्धति अष्टांग योग के संबंध में विस्तार पूर्वक चर्चा की गई। योग एक विधा नहीं अपितु विज्ञान है योग शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास का एक सशक्त माध्यम है। हमारे ऋषियों एवं मनीषियों ने योग के माध्यम से तन एवं मन की शुद्धि के अनेकों सर्वोत्तम उदाहरण मानव मात्र के कल्याणार्थ प्रस्तुत किए हैं। जिस प्रकार हठ योग द्वारा शारीरिक शुद्धि, भक्ति योग द्वारा आध्यात्मिकता का विकास होता है उसी प्रकार अष्टांग योग द्वारा मानसिक शुद्धि की प्राप्ति की जाती है। इस अध्याय में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि के माध्यम से तन मन की शुद्धि कैसे होती है तथा इसके द्वारा मानसिक शांति कैसे प्राप्त की जा सकती है, इसका विवेचन विभिन्न विद्वानों के मतों के माध्यम से किया गया है।

ब्रह्मांड की संरचना में सूर्य का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। सूर्य के बिना पृथ्वी की कल्पना करना कोरी संकल्पना है। सूर्य मानव, जीव-जन्तु एवं पेड़-पौधों के लिए प्राणतत्व है। सूर्य संपूर्ण जगत को सनातन काल से ही आकर्षित करता आ रहा है। यह हमारे जीवन को ही नहीं अपितु जीवन की संपूर्ण गतिविधियों को जीवन्तता प्रदान करता है। वैज्ञानिक सूर्य को एक आग का गोला मानते हैं और इसे ग्रह की संज्ञा देते हैं। जबकि हमारे मनीषियों ने सूर्य के रहस्य को समझ कर आध्यात्मिक चेतना के विकास के लिए इनके महत्व को जगत के सम्मुख प्रस्तुत किया। हमारे ऋषि मनीषियों ने सूर्य के महत्व को समझते हुए उनके सम्मान में नतमस्तक होते हुए उनकी पूजा प्रारंभ की। इन्हीं ऋषियों एवं मनीषियों द्वारा सूर्य नमस्कार की परम्परा हमें प्राप्त हुई। सूर्य नमस्कार स्वयं में एक पूर्ण साधना है। प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत सूर्य नमस्कार के मंत्र, सूर्य नमस्कार की विभिन्न अवस्थाओं, सूर्य नमस्कार के प्रयोग की विधि, सूर्य नमस्कार के विभिन्न आसन एवं उनके निमित्त निर्मित मंत्रों के साथ सूर्य नमस्कार मानव मात्र के लिए क्यों उपयोगी है तथा इसके क्या महत्व हैं इत्यादि का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

15.15 अभ्यास के प्रश्न

1. योग के अर्थ को स्पष्ट करते हुए वेदों के आधार पर योग को परिभाषित करें।
2. श्रीमद्भागवतगीता में योग के लिए दिए गए विभिन्न अर्थों और परिभाषाओं की व्याख्या करें।
3. उपनिषदों और पुराणों में योग के लिए दी गयी विभिन्न परिभाषाओं का वर्णन करें।
4. अष्टांग योग क्या है? इसके विभिन्न अवस्थाओं की विवेचना कीजिए।
5. अष्टांग योग के विभिन्न अंगों का वर्णन कीजिए?
6. अष्टांग योग किसके द्वारा रचित है? वर्तमान समय में अष्टांग योग की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए।
7. सूर्य नमस्कार में प्रयुक्त कुछ प्रमुख मंत्रों को लिखिए।
8. सूर्य नमस्कार के विभिन्न आसनों का सचित्र वर्णन कीजिए।
9. सूर्य नमस्कार के महत्व की विवेचना कीजिए।
10. सूर्य नमस्कार के विभिन्न लाभों का वर्णन कीजिए।
11. सूर्य नमस्कार के लिए क्या सावधानियाँ अपेक्षित हैं? लिखिए।

15.16 चर्चा के बिन्दु

1. योग की महत्ता एवं उसकी प्रासंगिकता पर चर्चा कीजिए।
2. श्रीमद्भागवतगीता मुख्यतः कर्मयोग का वर्णन करती है। इस तर्क के विषय में चर्चा कीजिए।
3. छात्र अष्टांग योग के विभिन्न अंगों के सम्बन्ध में चर्चा कर सकेंगे।

4. छात्र अष्टांग योग के महत्व पर चर्चा कर सकेंगे।
5. सूर्य नमस्कार की महत्ता पर चर्चा कीजिए।

15.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. योग शब्द की उत्पत्ति युज अथवा युजिर धातु से हुई है।
2. युज् संयमने' का तात्पर्य नियंत्रित अथवा निरुद्ध होने के संदर्भ में लिया जाता है।
3. पतंजलि के द्वारा लिखित योगसूत्र योग दर्शन का मूल ग्रन्थ है।
4. योगसूत्र के अनुसार "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध करना अथवा उनको संयमित करना ही योग है।
5. अष्टांग योग
6. अष्टांग योग में साधना करने वाले को अपने मन, बुद्धि को नियंत्रित करके मन को वश में करके परमात्मा में ध्यान लगाकर परमात्मा से संपर्क करना और समाधि में लीन हो जाना ही अष्टांग योग है।
7. आठ अंग
8. यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि।
9. इसके अन्तर्गत यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार अंग आते हैं। इन पांचों अंगों को बहिरंग कहते हैं। इन अंगों की विशेषताओं का सम्बन्ध बाहर की क्रियाओं से होता है।
10. पांच प्रकार के होते हैं अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह
11. पांच नियम होते हैं शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान
12. स्थिर, सुखपूर्वक बैठने का नाम आसन है। आसन द्वारा शरीर स्वस्थ होता है तथा साथ ही साथ मन स्थिर होता है। अनन्त में मन लगाने से स्पष्ट है कि यह स्थिरता मात्र शरीर की नहीं बल्कि मन की भी स्थिरता है।
13. दो शब्दों से मिलकर बना है प्राण एवं आयाम
14. प्रत्याहार के लाभ के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि के विचार—

ततः परमा वश्यततेन्द्रियाणाम। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 2/55)

अर्थात् प्रत्याहार से इन्द्रिया एकदम वशीभूत हो जाती है।

15. धारणा की उच्च अवस्था ध्यान है। ध्यान शब्द की उत्पत्ति ध्येचित्तायाम धातु से हुयी है, जिसका अर्थ होता है, चिन्तन करना। परन्तु यहां पर ध्यान से आशय चिन्तन से नहीं अपितु चिन्तन का एकाग्रीकरण अर्थात् चित्त को एक ही लक्ष्य पर स्थिर करने से सम्बन्धित है। ध्यान के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि ने लिखा है—

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 3/2)

16. जहाँ चित्त को लगाया जाय, उस ध्येय में वृत्ति का एक बार चलना, क्रम का न टूटना ध्यान कहलाता है। ध्येय के प्रति लगातार अखण्ड रूप से एकाकार होना ध्यान है। वस्तुतः ध्यान एक सहज परिणाम है।
17. किसी एक स्थान पर चित्त को स्थिर करना धारणा है। धारणा में चित्त किसी एक विषय वस्तु पर केन्द्रित हो जाती है। इस अवस्था को प्राप्त हो जाने के बाद साधक ध्यान के योग्य हो जाता है।
18. महर्षि पतंजलि ने समाधि के स्वरूप को निम्न सूत्र के माध्यम से वर्णित किया है—

तदेवार्थमात्रनिर्भासंस्वरूपशून्यनमिव समाधि। (महर्षि पतंजलि योग सूत्र 3/3)

जब ध्यान में केवल ध्येय मात्र ही प्रतीत होता है और चित्त का अपना स्वरूप शून्य सा हो जाता है तब वह ध्यान की प्रक्रिया ही समाधि हो जाती है।

- इस योग के द्वारा मन को नियंत्रित किया जा सकता है।
- इस योग से व्यक्ति परमात्मा को प्राप्त कर सकता है।

19. अंतः करण से
20. सूर्य भगवान की वंदना से।
21. सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय। इसके साथ ही खाली पेट करना चाहिए।
22. ॐ मित्राय नमः , ॐ सूर्याय नमः
23. बारह स्थितियाँ
24. दोनों भुजाओं को सिर के उपर उठाएं। भुजाओं के बीच कन्धों की चौड़ाई के बराबर दूरी बनाए रखें। सिर, भुजाओं और धड़ के ऊपरी भाग को थोड़ा सा पीछे की तरफ झुकाएं। भुजाओं को ऊपर उठते समय श्वास लें।
25. इस आसन में सामने की तरफ झुकते हुए दोनों हाथों के पंजों को पैरों के बगल में स्पर्श कराए। ललाट को घुटने से स्पर्श कराएं तथा पैरों को सीधा रखें।
26. सूर्य नमस्कार का अभ्यास अन्य आसनों से पूर्व करना चाहिए। वैसे तो यह आसन सभी के लिए उपयुक्त है, परन्तु अधिक उम्र के लोगों तथा 8 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए यह आवश्यक नहीं है।
27. मेरुदण्ड की समस्या, उच्च रक्त चाप, हृदय- रोग, हार्निया, रोगग्रस्त व्यक्ति किसी गुरु के निर्देशन में ही यह आसन करें।

15.18 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. सिन्हा, जे. (2010). भारतीय दर्शन. दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड.
2. हिरियन्ना, एम. (2018). भारतीय दर्शन की रुपरेखा. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.
- 3- Srimad Bhagavadgita. Gorakhpur: Geeta Press
- 4- अग्नि पुराण (2019). गोरखपुर : गीता प्रेस.
- 5- कठोपनिषद् (सानुवाद शंकरभाष्यसहित). (2008). गोरखपुर: गीताप्रेस।
- 6- स्कन्द पुराण (काशी खण्ड)
- 7- हेमचंद्राचार्य. योग शास्त्र (गाथा और अर्थ). अहमदाबाद: श्री आशापूर्ण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार
8. सिन्हा, जे. (2010) – भारतीय दर्शन. दिल्लीरू मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड।
9. हिरियन्ना, एम. (2018) – भारतीय दर्शन की रुपरेखा. नई दिल्लीरू राजकमल प्रकाशन।
10. नेमिचन्द्र (म्क) (1975) – कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचंद्राचार्यरचित योगशास्त्र. दिल्ली: श्री निर्ग्रंथ साहित्य प्रकाशसंघ।
11. शर्मा, आर. के. एवं दुबे एस. के. (2017) – योग शिक्षा. आगरारू राधा प्रकाशन मन्दिर प्राइवेट लिमिटेड।
12. शर्मा, आर.के. एवं दुबे, एस. (2016) – योग शिक्षा. आगरारू राधा प्रकाशन मन्दिर प्राइवेट लिमिटेड।
13. शर्मा, सी. (2019) – भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन. दिल्लीरू मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड।
14. योग विज्ञान, योग के आधार भूत तत्व – पंचम संस्करण, देव संस्कृत विश्वविद्यालय दूरस्थ शिक्षा केन्द्र हरिद्वार
15. द्विवेदी श्वेता, योग शिक्षा, एम0 ए0 ई0 डी0 – 113, इकाई – 05, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
16. द्विवेदी जी. के., योग शिक्षा, एम.ए.ई.डी.-113, इकाई –12, , उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

इकाई – 16 : कुम्भ और ज्ञान परम्परा

इकाई की रूपरेखा

- 16.0 प्रस्तावना
- 16.1 उद्देश्य
- 16.2 भारतीय ज्ञान परम्परा से तात्पर्य और 'कुम्भ' शब्द का अर्थ
- 16.3 भारतीय ज्ञान परम्परा और चतुर्कुम्भ की संकल्पना
- 16.4 नासिक, हरिद्वार, उज्जैन और प्रयाग का कुम्भ पर्व
- 16.5 भारतीय ज्ञान परम्परा : कुम्भ पर्व मुख्यतः नदी पर्व
- 16.6 भारतीय ज्ञान परम्परा, दर्शन और कुम्भ पर्व
- 16.7 भारतीय ज्ञान परम्परा में ज्योतिषीय आधार पर कुम्भ पर्व
- 16.8 प्रयाग में कुम्भपर्व की ज्योतिषीय स्थिति
- 16.9 सारांश
- 16.10 अभ्यास के प्रश्न
- 16.11 चर्चा के बिन्दु
- 16.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 16.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16.0 प्रस्तावना

भारत की संस्कृति में प्रत्येक 6 वर्ष पर अर्द्ध कुम्भ तथा 12 वर्षों पर महाकुम्भ पर्व आयोजित होते हैं। नासिक, हरिद्वार, उज्जैन और प्रयाग कुम्भ के बड़े तीर्थ हैं जहां कुम्भ योग में मेले लगते हैं। युनेस्को ने भी प्रयाग के कुम्भ पर्व को अमूर्त विरासत सूची में स्थान दिया है। प्रयाग में 2025 में मकर संक्रान्ति से महाकुम्भ योग शुरू होने वाला है। कुम्भपर्व की अद्भुत सांस्कृतिक विरासत पूरे भारत की आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, विशिष्टताओं का महासंगम कहा जा सकता है।

16.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. भारतीय ज्ञान परम्परा के निहितार्थ को संक्षेप में स्पष्ट कर सकेंगे।
2. कुम्भ शब्द के अर्थ से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
3. भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में नदी संस्कृति और कुम्भपर्व की सातत्यता से परिचित हो सकेंगे।
4. भारतीय ज्ञान परम्परा में कुम्भ पर्व के ज्योतिषीय आधार को समझ सकेंगे।
5. भारतीय संस्कृति की अमूर्त विरासत की ज्ञान परम्परा की निरन्तरता के प्रति जागरूक हो सकेंगे।

16.2 भारतीय ज्ञान परम्परा से तात्पर्य और 'कुम्भ' शब्द का अर्थ

अनुभव की अनुभूति ही ज्ञान कहलाता है। विचारक कहते हैं कि सत्य और आस्था के संयोग ही 'ज्ञान' है जब वह विशिष्ट होता है तो 'विज्ञान' कहा जाता है।

प्राचीन काल से ही हमारा देश मानवीय मूल्यों एवं विशिष्ट वैज्ञानिक परंपराओं का देश रहा है। भारतीय संस्कृति में माना गया कि "अयं निजः परोवेति गणना लघु चेतसाम् उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।" अर्थात्

यह अपना है, यह पराया है, इसकी गणना संकुचित चित्त वाले करते हैं, उदार चित्त वालों के लिए तो पूरी वसुधा एक कुटुम्ब के समान है। पाश्चात्य शैली के अनुकरण पर 'वैश्वीकरण' की अवधारणा वस्तुतः भारतीय संस्कृति की 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा थी जिसमें पूरी वसुधा के निवासियों से समभाव से एक कुटुम्ब की तरह आचरण करने की अपेक्षा का भाव निहित था।

सरल भाषा में, भारतीय ज्ञान परम्परा भारतीय परिप्रेक्ष्य में ज्ञान विज्ञान के क्षितिज का प्रसार है वैचारिक रूप से, बौद्धिक रूप से लिखित या अलिखित रूप से, परम्परा से हस्तान्तरित होता भारतीय ज्ञान, जिसे हम भारतीय ज्ञान परम्परा के अन्तर्गत समाहित करते हैं, जिसमें विज्ञान, चिकित्सा प्रणाली, स्वच्छता, स्वास्थ्य और योग, कला कौशल, लिपि (पुरालेख), कृषिज्ञान, अर्थशास्त्र, सैन्य विज्ञान, भूगोल, राजनीति, धर्मदर्शन, आध्यात्मिकता, मनोविज्ञान, मूल्य शिक्षा, भारतीय खेल, इत्यादि का उल्लेख कर सकते हैं।

भारत के पास समृद्ध ज्ञान भंडार रहा है, भारत ने जिन ज्ञान राशियों को संजोया है उनमें सांस्कृतिक विरासत कुम्भपर्व का आयोजन भी एक है जो विशिष्ट खगोलीय स्थितियों में विशिष्ट स्थानों पर आयोजित होता है।

'कुम्भ' शब्द का शाब्दिक अर्थ घड़ा या कलश होता है। कुम्भ से तात्पर्य मृत्तिकानिर्मित जलपात्र विशेष, ग्यारहवीं राशि, कोई तौल, योग की एक प्रक्रिया, एक राशि, तथा जायफल वृक्ष भी होता है। तेइस तीर्थकरों में एक तीर्थकर के पिता का नाम भी 'कुम्भ' है। हाथी के मस्तक के ऊपर दो मांस पिंडों का नाम भी 'कुम्भ' है। 'कुम्भ' ग्यारहवीं राशि का नाम भी है। प्राचीन भारत में परिमाणक के रूप में 20 द्रोण का एक 'कुम्भ' माना जाता था। अगस्त्य ऋषि की उत्पत्ति कुम्भ से कही गई है इसी लिए वे 'कुम्भज' कहे गए।

वैदिक काल में कलश सोम रखने के पात्र के रूप में व्यवहृत हुआ है। भारतीय संस्कृति में कलश को या कुम्भ को अत्यन्त मंगलकारी माना गया है। हर मांगलिक अवसर पर मंगलकलश स्थापना की जाती है। भारतीय मनीषी द्वारा मंगल अवसर पर यह श्लोक वाचित किया जाता है —

“कलशस्य मुखे विष्णुः कंठे रुद्रो समाहितः।

मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।

कुक्षो तु सागराः सर्वे, सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदो सामवेदोऽथर्वणः।

अंगैश्च संहिता सर्वे कलशे तु समाश्रिता।”

अर्थात् कलश के मुख में विष्णु, कंठ में रुद्र, मूल में ब्रह्मा, मध्य में मातृगणों का वास माना जाता है, अन्तर्वस्था में समस्त सागर, सप्त द्वीपीय वसुन्धरा, चारो वेद में समाया ज्ञान इसी कुम्भ यानि कलश में समाया है।

पर्व के रूप में कुम्भ संस्कृतियों का संगम है। पूर्ण कुम्भ में भरा जल जीवन का रस है जिसके कारण उसे अमृतकुम्भ कहा जाता है। अग्नि पुराण में निधियों से भरे कुम्भ का उल्लेख आया है।

- “कुं प्रथ्वीं भावयति पोषयति विविधयागादिभिरिति वा कुम्भः” अर्थात् विविध यज्ञों आदि से पृथिवी का पोषण करे, वह 'कुम्भ' है।
- कुं प्रथ्वीं भापयति दीपयति तेजोवर्द्धनेनेति वा कुम्भः” अर्थात् पृथ्वी को तेज से दीपित करने वाले पर्व को 'कुम्भ' कहा जाता है।
- कं जलं उम्भति पूरयति अवर्षणादिदुर्भिक्षेभ्यो दूरयतीति कुम्भः” अर्थात् अवर्षण से दुर्भिक्ष या अकाल के समय जल आपूर्ति जो करे, वह 'कुम्भ' है।
- कुं कुत्सितं उम्भति दूरयति जगद्धितायेति वा कुम्भः” अर्थात् जगत हित में जो कुत्सित भावों को दूर करें वह 'कुम्भ' है।
- कुं पृथ्वीं भावयन्ति भविष्यत्कल्याणादिकाय महत्याकाशे स्थिताः वृहस्पत्यादयोऽग्रहाः संयुज्य हरिद्वारप्रयागादि तत्तत्पुण्यस्थानानुदिदश्य यस्मिन् स कुम्भः”

डा जगदीश गुप्त के शब्दों में 'कुम्भ घट का पर्याय है और घट शरीर का पर्याय है जिसमें घट घट व्यापी आत्मा का अमृत रस व्याप्त रहता है। कुम्भ का रूपक जिसमें कबीर शरीर की तुलना कच्चे घड़े से करते हैं—

‘यह तन काचा कुम्भ है, लियाँ फिरै था साथि।

ठपका लागा फुटि गया, कछू न आया हाथि।।’

अन्यत्र कबीर शिष्य को कच्चे घड़े की तरह बताते हैं—

गुरु कुम्हार शिष्य कुम्भ है, गढ़ि—गढ़ि काढ़ै खोट।

अन्तर हाथ सहार दै, बाहर बाहै चोट।।

16.3 भारतीय ज्ञान परम्परा और चतुर्कुम्भ की संकल्पना

वैदिक काल में कुम्भ आध्यात्मिकता का प्रतीक था। अग्निपुराण में चतुर्कुम्भ शब्द आया है। पौराणिक काल में समुद्रमंथन से उपजे अमृत के साथ कुम्भ का सम्बन्ध स्थापित हुआ। कालान्तर में इसे आधार बनाकर अनेक दंतकथाएं कुम्भपर्व के साथ जुड़ गईं।

अथर्ववेद में कहा गया है—“चतुरः कुम्भा चतुर्धा ददामि...”। अर्थात् चार कुम्भ को चार दिशाओं में देना। नासिक, उज्जैन, हरिद्वार और प्रयाग के कुम्भपर्व की प्रेरणा का आदि स्रोत अथर्ववेद के ‘चतुरः कुम्भाः’ में ढूँढा जा सकता है।

वर्तमान चार कुम्भ तीर्थ — नासिक, उज्जैन, हरिद्वार और प्रयाग—अमृत तुल्य ज्ञान की प्राप्ति के तीर्थ हैं।

16.4 नासिक, हरिद्वार, उज्जैन और प्रयाग का कुम्भ पर्व

उज्जैन—प्राचीन अवन्तिका वर्तमान में उज्जैन नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन भारत की सात पुरियों में से एक उज्जैनी है। 51 शक्तिपीठों में से एक शक्तिपीठ यहां भी है। उज्जैन महाकाल की नगरी मानी जाती है। महाकवि कालिदास इसी उज्जैन में महाराजा विक्रमादित्य के दरबारी कवि थे। चार कुम्भ मेलों में से एक कुम्भ उज्जैन में आयोजित होता है।

प्रयागराज—तीर्थराज प्रयाग त्रिवेणी — गंगा यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम स्थल पर बसा है। अनेक पौराणिक कथाओं के आलोक में प्रयाग को प्रजापतिक्षेत्र, प्रकृष्टयाग का क्षेत्र, वेणी, महादानपर्वक्षेत्र, अनशन क्षेत्र आदि कहा गया है। पांचवे वर्ष प्रयाग में सम्राट हर्ष के द्वारा महादानपर्व आयोजित करने का उल्लेख ह्वेनसांग के विवरण में मिलता है। यहां अर्द्धकुम्भ और कुम्भ योग में त्रिवेणी में स्नान, दान, कल्पवास की परम्पराओं का उल्लेख पुराण करते हैं। प्रयाग के महाकुम्भ में विश्व का शायद सबसे बड़ा मेला आयोजित होता है।

हरिद्वार—पुराणों में हरिद्वार को मायापुरी भी कहा गया है। किसी समय यह गंगाद्वार के नाम से भी जाना जाता था। हरिद्वार का मुख्य आकर्षण गंगा है। यहां के ग्रहयोग में कुम्भस्थ बृहस्पति होने पर ही कुम्भ लगता है।

नासिक—नासिक को दक्षिण की काशी कहा जाता है। इसका नाम पञ्चनगर भी मिलता है। त्रेतायुग में इसका नाम त्रिकंठका था। द्वापर में इसका नाम जनस्थान पड़ा। जालंधर की पत्नी वृन्दा के श्राप से ग्रस्त ‘हरि’ और ब्रह्म हत्या के श्राप से ग्रस्त ‘हर’ गोदावरी में स्नान करके पाप मुक्त हुए थे, इस कारण नासिक की ख्याति ‘हरिहर’ क्षेत्र के रूप में भी है।

भारत के इन चार नगरों — नासिक, हरिद्वार, उज्जैन और प्रयाग — में अलग अलग समय पर कुम्भपर्व आयोजित होता है।

“प्रथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते।

चतुस्थले च पतनात् सुधाकुम्भस्य भूतले।।

विश्वद्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरीतटे।

सुधाबिन्दु विनिक्षेपात् कुम्भपर्वेति विश्रुतम्।।”

ये चारों कुम्भ पर्व नदियों के तट पर मनाए जाते हैं। नासिक का कुम्भ गोदावरी नदी के तट पर, उज्जैन का कुम्भ क्षिप्रा नदी के तट पर, हरिद्वार का कुम्भ गंगा नदी के तट पर तथा प्रयाग का कुम्भ त्रिवेणी—गंगा यमुना

और अदृश्य सरस्वती के संगमतट पर होता है। प्रयाग में गंगा यमुना संगम तीरे लगने के कारण कुम्भ का महत्व अधिक बढ़ जाता है।

कुम्भपर्व के मूल में सागरमंथन से उपजे अमृत कलश की पौराणिक कथाएं हैं जिसके अनुसार अमृत कलश को पाने के लिए सुर असुर की छीनाझपटी में अमृत की कुछ बूंदें इन चार स्थानों पर छलकी, फलतः इन चार स्थानों पर कुम्भ पर्व मनाया जाने लगा, इन स्थानों की नदियों के जल में स्नान, दान, क्रियाएं सम्पन्न होने लगी।

16.5 भारतीय ज्ञान परम्परा : कुम्भ पर्व मुख्यतः नदी पर्व

नदी संस्कृति भारतीयता की आत्मा है। भारतीय ज्ञान परम्परा में 'नदीतमे अम्बितमे' के रूप में नदियां देवतुल्य मानी गईं। धार्मिक दृष्टि से नदियों के पावन जल में अवगाहन की परम्परा सैन्धव काल से ही प्रमाणित है। अमृत तत्व, मोक्ष, मुक्ति, पुण्य के लिए धार्मिक आचारों, संस्कारों की परम्परा भारतीय संस्कृति में निरन्तर प्रवाहमान रही। गंगा, गोदावरी, शिप्रा, आदि नदियों के तट पर लगने वाले कुम्भ पर्व की सातत्यता यही है। पौराणिक काल में ही ग्रहों और नक्षत्रों की स्थितियों के महत्व के आधार पर पावन नदियों के तट पर स्नान आदि के महत्व को लोक स्वीकृति मिल चुकी थी, विशेषकर प्रयाग में त्रिवेणी संगम, नासिक में गंगा गोमती, हरिद्वार में गंगा तथा उज्जैन में शिप्रा के तटों पर विशिष्ट राशि समन्वित तिथियों पर इस प्रकार की धार्मिकता को अपनाया जा रहा था, जो आगे जल कर कुम्भपर्व के रूप में प्रसिद्ध हो गया। हरिद्वार गंगा के किनारे हिमालय की तलहटी में स्थित है जहां नदी समतल में प्रविष्ट होती है। प्रयाग में गंगा यमुना और अदृश्य सरस्वती का संगम है। नासिक में गोदावरी तट तथा उज्जैन में शिप्रा नदी तट कुम्भ पर्व का केन्द्र है। स्पष्ट है कि पावन नदियों की परम्परा पर ही कुम्भपर्व केन्द्रित है। गोदावरी को दक्षिण की गंगा कहा जाता है। गौतम ऋषि गंगा के नाम से गोदावरी को लाए थे इसलिए उसे 'गौतमी' भी कहा जाता है। ब्रह्म पुराण में कहा गया है कि विन्ध्य पर्वत के दक्षिण में गंगा का नाम गौतमी पड़ा और उत्तर में भागीरथी— "विन्ध्यस्य दक्षिणे गंगा गौतमी सा निगद्यते। उत्तरे सापि विन्ध्यस्य भागीरथ्यभिधीयते।।" नासिक में गोदावरी के तट पर रामघाट है। वहां गंगा का मंदिर है। यह मंदिर 12 वर्ष पर खुलता है। कहा जाता है कि उस समय मूल गंगा जल इसी मंदिर से निकलता था। उज्जैन में शिप्रा नदी अपने उत्तर प्रवाह के कारण पवित्रतम हो जाती है। इसकी तुलना काशी के उत्तरगामिनी गंगा के प्रवाह से की जा सकती है। स्कन्दपुराण 5.1,2,42,33 के अनुसार शिप्रा उस बिन्दु से पूर्ववाहिनी हो जाती है जहां वह एक बार गंगा द्वारा आलिङ्गित हुई थी। यहां गंगेश्वर नामक शिवलिंग है जो गंगा द्वारा पूजित है। "एवमुक्त्वा गता गंगा कलया तत्र संस्थिता। गंगेश्वरं तु यः पश्येद् स्नात्वा शिप्रांमसि प्रिये।।" यह महत्वपूर्ण शिवलिंग उज्जयिनी में शिप्रा के दक्षिण तट पर स्थित है। वास्तव में कुम्भ पर्व का धार्मिक चरित्र गंगा से जुड़ा है। गंगा नदियों में पवित्रतम मानी गई। गंगा के किनारे ही धार्मिक अमरत्व का बोध समाए प्रयाग में एक मास तक कल्पवास की परम्परा, प्रतिवर्ष माघमास में स्नान दान परम्परा भी है। तुलसीदास ने भी प्रयाग में माघमास में संगम में स्नान की परम्परा के बारे में लिखा है—

“माघ मकर गति रवि जब होई। तीरथ पतिहि आव सब कोई।।

देव मनुज किन्नर नर श्रेणी। सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी।।

पूजहिं माधव पद जल जाता। परसि अखयवटु हरषहिं जाता।।

भरद्वाज आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिवर मन भावन।।

वहाँ होइ मुनि ऋषय समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा।।

मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहिं परस्पर हरि गुन गाहा।।

कुम्भ पर्व वस्तुतः पवित्र नदियों के किनारे धार्मिक स्नान पर्व है।

16.6 भारतीय ज्ञान परम्परा, दर्शन और कुम्भ पर्व

प्रत्येक कुम्भ 12 वर्षों के अन्तराल पर पड़ता है। मानव शरीर में 5 कर्मेन्द्रियां + 5 ज्ञानेन्द्रियां + एक मन + एक बुद्धि अर्थात् 12 तत्व होते हैं। शुद्ध अमृत तत्व तक पहुंचने के लिए इन 12 तत्वों या इन्द्रियों पर विजय पाने के बाद ही मानव स्थितप्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त होकर मोक्ष का द्वार पा सकता है। मन (चन्द्र) को केन्द्रित करके ज्ञान (बृहस्पति) के प्रकाश में स्व (सूर्य) की अनुभूति ही कुम्भपर्व में नदीजल में अवगाहन है। अमृत को पाने के लिए

अन्तस में निरन्तर दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों में संग्राम चलता रहता है, विवेक और अविवेक देवासुर संग्राम को जन्म देते हैं जिससे भौतिक शरीर में अमृत अर्थात् कल्याण का भाव जाग्रत होता है। मानव जीवन का वास्तविक कुम्भ इन्हीं 12 तत्वों पर विजय पाना है।

सौरमंडल के तीन विशेष ग्रहों की स्थिति को जिस प्रकार से समुद्रमंथन से उत्पन्न अमृतकुम्भ से जोड़ा गया है उससे यह भी कल्पना की जा सकती है कि ऐसी स्थितियों में नदियों के जल में विशेष जीवनीय गुण आ जाते हैं जिससे मन की शुद्धि के साथ साथ आध्यात्मिक विकास, नीरोगता और शारीरिक लाभ भी होता है।

16.7 भारतीय ज्ञान परम्परा में ज्योतिषीय आधार पर कुम्भ पर्व

भारत ही अकेला देश है जहां ज्योतिषीय गणनाओं के आधार पर पर्व विशिष्ट मनाने की संकल्पना पलती है। 27 नक्षत्रों और 12 राशियों की कल्पना वाले भारत की ज्ञानविद्या में कुम्भ ग्यारहवीं राशि है। भारत की ज्ञान परम्परा में कुम्भ पर्व पर ज्योतिषीय पक्ष की जानकारी महत्वपूर्ण है। कुम्भपर्व में सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति की स्थिति विशेष रहती है।

सूर्य —स्थावर और जंगम जगत की आत्मा है। वह 'प्रजापति' है। वह दीप्तवान देवता है। वह अखण्ड ज्योतिर आत्मा है, तमस को दूर करता है, तमस दूर हो जाने पर जीव विशुद्ध चैतन्यपरक हो जाता है। यह ज्योति अमरता का प्रतीक है। चन्द्र अमृत है। सोम ही चन्द्रमा है तभी तो कहा गया है— 'चन्द्रमा मनसो जातः'। भास्कराचार्य के सिद्धान्त शिरोमणि में चन्द्रमा को 'पियूषपिण्ड' अर्थात् अमृत पिण्ड कहा गया है। जब यह चन्द्रमा रूपी अमृत पिण्ड सूर्य के सातवें घर में स्थित होता है तो वह प्रकाशपुंज बन जाता है और किरणों से सुशोभित होता है। किन्तु जब वह सूर्य के साथ स्थित होता है तब प्रकाश रहित काले रंग का घट मात्र हो जाता है अमृत पिण्ड चन्द्रमा की यह 'घट' रूप की स्थिति ही बृहस्पति के शुभ प्रभावों से प्रभावित होने पर 'कुम्भपर्व' की मूलाधार बनती है। बृहस्पति ग्रह जीवनवर्द्धक तत्वों का सर्वप्रमुख केन्द्र माना जाता है वैदिक साहित्य में इसे 'जीव' भी कहा गया है। इसके विपरीत शनि को संहारक तत्वों से युक्त बताया गया है।

1. नासिक के कुम्भ में सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति, तीनों कर्क राशि में रहते हैं। कर्क राशि चन्द्र की स्वराशि है।

“कर्क गुरुस्तदा भानुस्चन्द्रत्रयस्तदा। गोदावर्या तदाकुम्भे जायतेऽवनिमण्डले।”

2. उज्जैन के कुम्भ में सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति, तीनों सिंह राशि में रहते हैं, सिंह राशि सूर्य की स्वराशि है।

“घटे गुरुः शशिःसूर्य कुह्वांदामोदरो यदा। धरायां च यदाकुम्भो जायते खलुमुक्तिदः।”

3. हरिद्वार के कुम्भ में सूर्य, चन्द्र मेष राशि में तथा बृहस्पति कुम्भ राशि में रहते हैं।

“पद्मिनीनायकोमेशे कुम्भराशिगते गुरुः। गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामा तदोत्तमः।”

4. प्रयाग में कुम्भ के लिए सूर्य और चन्द्र का मकर राशि में तथा बृहस्पति का मेष अथवा वृष राशि में होना अनिवार्य होता है।

“माघे मेशगते जीवे मकरे चन्द्रभास्करो। अमावस्या तदा योगःकुम्भाख्यस्तीर्थ नायकः।।

मकरे च दिवानाथे ह्यजगे च बृहस्पतौ। कुम्भयोगो भवेत्तत्र प्रयागे ह्यति दुर्लभः।”

अर्थात् बृहस्पति मेष राशि में, सूर्यचन्द्र मकर राशि में हो, अमावस्या तिथि हो तब प्रयाग में कुम्भयोग होता है।

इसे अधोलिखित चार्ट से भी समझा जा सकता है—

पहली मान्यता

वर्ष	स्थान	मास	ग्रहों की स्थिति	पर्व का नाम
0	हरिद्वार	चैत्र (मार्च-अप्रैल)	सूर्य चन्द्रमा मेष राशि में तथा बृहस्पति कुम्भ राशि में	कुम्भ
3	प्रयाग	माघ	सूर्य और चन्द्रमा मकर राशि में, बृहस्पति वृष राशि में,	कुम्भ

		(जनवरी-फरवरी)	अमावस्या हो	
6	नासिक	भाद्रपद (अगस्त-सितम्बर)	सूर्य चन्द्रमा और बृहस्पति कर्क राशि में हो	कुम्भ
	हरिद्वार	चैत्र मार्च- अप्रैल	सूर्य मेष राशि में तथा बृहस्पति सिंह राशि में हो	अर्द्ध कुम्भ
9	उज्जैन	वैशाख (अप्रैल-मई)	सूर्य चन्द्रमा और बृहस्पति सिंह राशि में हो	कुम्भ
	प्रयाग	माघ (जनवरी-फरवरी)	सूर्य मकर राशि में तथा बृहस्पति वृश्चिक राशि में हो	अर्द्धकुम्भ
12	हरिद्वार	चैत्र मार्च- अप्रैल	सूर्य चन्द्रमा मेष राशि में तथा बृहस्पति कुम्भ राशि में हो	कुम्भ

चार्ट से स्पष्ट है कि कुम्भ राशि पर बृहस्पति के रहने पर केवल हरिद्वार में कुम्भ का आयोजन होता है, अन्यत्र मेष, सिंह आदि राशियों का विचार किया जाता है और ग्रह भी बदल जाते हैं। शेष तीन स्थानों पर –उज्जैन, प्रयाग और नासिक– में बृहस्पति कुम्भस्थ होता ही नहीं है।

नासिक में कुम्भ योग में तीनों ग्रह –सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति – कर्क राशि (चन्द्र की स्वराशि) में रहते हैं। उज्जैन में कुम्भ योग में तीनों ग्रह – –सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति – सिंह राशि (सूर्य की स्वराशि) में रहते हैं। लेकिन प्रयाग और हरिद्वार में स्थिति भिन्न है। इनमें सूर्य/ चन्द्र या दोनों की युति तो होती है लेकिन बृहस्पति एक विशिष्ट स्थान पर रह कर अपना मंगल प्रभाव डालता है।

16.8 प्रयाग में कुम्भ पर्व की ज्योतिषीय स्थिति

प्रयाग में दो प्रकार की स्थितियों में कुम्भ पर्व होता है–

एक मत के अनुसार – सूर्य +चन्द्र जब मकर राशि (शनि का गृह) में हों तथा बृहस्पति मेष राशि (सूर्य का उच्च गृह) में हो तो प्रयाग में कुम्भ पर्व लगता है।

दूसरा मत के अनुसार सूर्य +चन्द्र जब मकर राशि (शनि का गृह) में हों तथा बृहस्पति वृष राशि (सूर्य का उच्च गृह) में हो तो प्रयाग में कुम्भ पर्व लगता है

दोनों ही स्थितियों में प्रयाग में बृहस्पति सूर्य के उच्च घर में स्थित होकर मांगलिकता को प्राप्त कर लेता है। बृहस्पति जीवनवर्धक तत्वों का केन्द्र माना जाता है असुरों के गुरु शुक्र हैं इनकी राशि वृष राशि है कुम्भ काल में बृहस्पति वृष (शुक्र की राशि) में उपस्थित होकर आसुरी प्रवृत्ति का नाश करने में सक्षम है। सूर्य और चन्द्र मकर राशि में आकर मकर के स्वामी शनि के दुष्प्रभाव को समाप्त कर अपनी जीवनदायिनी किरणों का पूर्ण प्रभाव प्रयाग के संगम के जल पर छोड़ते हैं, इसप्रकार की ग्रह युति में अमृत कणों की वर्षा करते हैं सूर्य के मकरस्थ होने पर अमावस्या पर जब चन्द्र की शीतल किरणें सूर्य की किरणों से मिलती हैं तब त्रिवेणी में विशेष ऊर्जा का जन्म होता है। प्रत्येक 6 वर्ष के अन्तराल पर अर्द्धकुम्भ तथा 12 वर्षों पर महाकुम्भ प्रयाग में पड़ता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. भारत के किन चार स्थानों पर कुम्भ पर्व लगता है?

.....

2. चार कुम्भ किन चार नदियों के तटों पर लगते हैं?

.....

3. कुम्भ राशि पर बृहस्पति के रहने पर कहां कुम्भ पर्व होता है?

4. तीनों ग्रह –सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति – सिंह राशि (सूर्य की स्वराशि) में रहते हैं तब कहां कुम्भ लगता है?

प्रत्येक देश के मेले और त्योहार उसकी संस्कृति के प्रतिबिम्ब होते हैं। मेले और पर्व मानव जगत के समाजीकरण का भी स्थल होता है। मेले में विभिन्न क्षेत्रों, प्रान्तों तथा देशों से तीर्थाटन के लिए लोग आते हैं। एक दूसरे के आचार, परम्पराएं, संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम् का रूप ले लेते हैं। ग्रह नक्षत्रों के संयोग में गंगा आदि पावन नदियों के तट पर उमड़ने वाली आस्था कुम्भ रूपी जीवनदायिनी अमृत का बोध कराती है। अलग भाषा, बोली, रूप, पहनावा, तरीका होते हुए भी कुम्भ समागम में सबकी भावनाएं समरसता के रस में लीन होती है। ये कुम्भ मेले अनेकता में एकता की मिसाल कायम करते हैं। कुम्भ मेला को अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मान्यता प्रदान करने की अनुशंसा करते हुए विशेषज्ञ समिति ने कहा था—“यह प्रथ्वी पर तीर्थवासियों का सबसे बड़ा शान्तिपूर्ण जमावड़ा है। यह धार्मिक महोत्सव, सहिष्णुता और समावेशी प्रकृति को प्रदर्शित करता है।”

16.10 अभ्यास के प्रश्न

1. भारतीय ज्ञान परम्परा से आप क्या समझते हैं?
2. भारतीय ज्ञान परम्परा से ज्ञात ‘कुम्भ’ शब्द के नाना अर्थों को बताइये।
3. भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में कुम्भपर्व का दार्शनिक पक्ष लगभग 100 शब्दों में लिखिए
4. प्रयाग में कुम्भ पर्व किन ज्योतिषीय स्थितियों में पड़ता है?

16.11 चर्चा के बिन्दु

1. नासिक, हरिद्वार, उज्जैन और प्रयाग में कुम्भपर्व की ज्योतिषीय स्थितियों पर चर्चा कीजिए।
2. कुम्भ पर्व किस प्रकार नदियों से जुड़ा है? चर्चा कीजिए।

16.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भारत में हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन तथा नासिक में कुम्भ पर्व लगता है।
2. कुम्भ गंगा, गंगा-यमुना-सरस्वती, क्षिप्रा तथा गोदावरी के तट पर लगता है।
3. बृहस्पति के कुम्भ राशि में रहने पर हरिद्वार में कुम्भ लगता है।
4. सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति तीनों के सिंह राशि में होने पर नासिक में कुम्भ लगता है।

16.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. डा मीनू अग्रवाल, कुम्भपर्व प्रयाग, 2013, प्रकाशक : राजपाल एंड कम्पनी इलाहाबाद, ISBN 81-89538-13-6
- 2- डा मीनू अग्रवाल, कुम्भपर्व, राजपाल एंड कम्पनी, इलाहाबाद, 2013, ISBN- 81-89538-13-6
3. राम नरेश त्रिपाठी, कुम्भ दर्शन 2001, इलाहाबाद, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तरप्रदेश
4. राम नरेश त्रिपाठी, अर्द्धकुम्भ 2007, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तरप्रदेश
5. चतुर्वेदी, हेरम्ब, कुम्भ ऐतिहासिक वाङ्मय, वाणी प्रकाशन, 2019,
6. पं. सीताराम शास्त्री एवं पं. रामावतार शर्मा कृत प्रयाग माहात्म्य, प्रकाशन वर्ष अज्ञात, ई गंगोत्री पर उपलब्ध,
- 7- Dr.D.P. Dubey, Prayag, The Site of Kumbh Mela, Aryan Books International, New Delhi 2001

खण्ड-5 तीर्थराज प्रयाग और कुम्भ

इकाई – 17 : प्रयाग माहात्म्य एवं राजसी स्नान का महत्व

इकाई की रूपरेखा

- 17.0 प्रस्तावना
- 17.1 उद्देश्य
- 17.2 तीर्थराज प्रयाग
- 17.3 प्रयाग-माहात्म्य
 - 17.3.1 कूर्मपुराण
 - 17.3.2 ब्रह्मपुराण
 - 17.3.3 वाराहपुराण
 - 17.3.4 स्कंदपुराण अवन्तिखण्ड
 - 17.3.5 काशीखण्ड
- 17.4 प्रयाग मण्डल का स्वरूप
- 17.5 तीर्थराज में मोक्षत्व
- 17.6 प्रयागराज तीर्थ-दर्शन माहात्म्य
- 17.8 त्रिवेणी संगम और प्रयागराज
- 17.9 गंगा माहात्म्य
- 17.10 प्रयाग में संगम स्नान माहात्म्य
 - 17.10.1 माघ-स्नान माहात्म्य
- 17.11 प्रयागराज का भौगोलिक स्वरूप
- 17.12 पौराणिक प्रयाग
- 17.13 राजसी स्नान
- 17.14 राजसी स्नान का अर्थ
- 17.15 राजसी स्नान की प्रक्रिया
- 17.16 2025 जनवरी में लगने वाले प्रयाग कुम्भ में शाही/राजसी स्नान
- 17.17 सारांश
- 17.18 अभ्यास के प्रश्न
- 17.19 चर्चा के बिन्दु
- 17.20 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 17.21 कुछ उपयोगी पुस्तकें

17.0 प्रस्तावना

इस इकाई में प्रयागराज का महत्त्व, उसका भौगोलिक स्वरूप, गंगा स्नान तथा माघ स्नान का महत्त्व वर्णित

है। 'प्रयाग' शब्द की व्युत्पत्ति समझकर हम इसके नाम की सार्थकता समझ सकेंगे। प्राचीन नाम 'प्रयाग' को बदलकर वर्तमान इसका नाम 'प्रयागराज' किया गया है।

प्रयाग की धरती की महिमा अनन्तकाल से वेद-वेदांगों के स्वर्णिम पृष्ठों पर अंकित है। त्रिदेवों के वास से महिमामण्डित इस पुण्यभूमि के विषय में जितना भी लिखा जाए, उतना कम है। इसके अनन्त पुण्यभंडार को देखते हुए ही भगवान शिव और विष्णु ने इसे 'प्रयाग' नाम से अभिसिंचित किया है। 'प्र' उपसर्ग तथा 'यज्' धातु से निष्पन्न प्रयाग का अर्थ होता है – 'उत्कृष्टो यागो यत्र सः प्रयागः।' यज्ञों की निरन्तरता के कारण ही इस धरती को 'प्रयाग' नाम से अभिहित किया गया। ब्रह्मा द्वारा यज्ञ किये जाने के कारण यह 'प्रजापति क्षेत्र' कहलाया। भगवान विष्णु स्वयं द्वादश माधव के रूप में विराजमान हुए और भगवान विष्णु के सान्निध्य में रहने के भाव से शिव ने भी इसे अपने वास का स्थान चुना। शिव की शिवा भगवती ललिता के रूप में यहाँ प्रतिष्ठापित हुई जो इक्ष्वावन् शक्तिपीठों में से एक हैं। भगीरथ के प्रयास से भगवान विष्णु के चरणों से निकल कर ब्रह्मा के कमण्डल और शिव की जटाओं में ठहरती हुई, अनेकानेक तीर्थों को उपकृत करती हुई गंगासागर में राजा सगर के पुत्रों तथा भगीरथ के पूर्वजों का उद्धार करने वाली गंगा का प्रादुर्भाव गोमुख से हुआ। सूर्य तनया श्यामसलिला यमुना का उद्गम यमुनोत्री से हुआ। प्रयागराज में हिमालय की गोद से निकलने वाली भारत राष्ट्र की धमनी स्वरूपा इन दोनों पवित्र नदियों का संगम हुआ है।

कालिदास प्रयाग में गंगा-यमुना के पवित्र संगम के दृश्य को देखकर इनका समुद्र की पत्नियों के रूप में चित्रण करते हैं – **'समुद्रपत्न्योः जल सन्निपातः'**। प्रयाग का संकेत हमें ऋग्वेद में प्राप्त होता है जहाँ 'सितासिते सरिते यत्र संग' थे अर्थात् श्वेत और श्याम जल का जहाँ मिलन होता है। ऋग्वेद के साथ ही यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद में तीर्थ के रूप में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है। भारतीय संस्कृति में तीर्थों का बहुत महत्व रहा है – 'तारयति इति तीर्थः'। जो प्राणियों को इस भवसागर से तारते हैं वहीं तीर्थ हैं। इसीलिए प्रयागाष्टकम् में स्पष्ट किया गया है – **'श्रुति प्रमाणं स्मृत्योर्प्रमाणं पुराणम्यत्र परमप्रमाणं। यत्रास्ति गंगायमुना प्रमाणं स तीर्थराजो जयति प्रयागः।'** श्रुति, स्मृति तथा पुराण जिसके साक्षी हैं, और जहाँ गंगा और यमुना स्वयं जिसकी प्रमाण हैं, ऐसे तीर्थराज की मैं वंदना करता हूँ। यह वह भूमि है जहाँ पर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी चारों पदार्थ प्राप्त होते हैं। यहाँ किया गया पाप और पुण्य दोनों अक्षय रहता है। इसलिए इसे अक्षय क्षेत्र भी कहा गया है।

गोस्वामी तुलसीदास जिन्होंने नाना प्रकार के पुराणों, निगम-आगम के निष्कर्ष के रूप में हनुमान जी की कृपा से रामचरितमानस की रचना की है वे एक सीमा तक प्रयागराज का वर्णन करते हैं। अंत में उन्हें भी कहना पड़ता है – **'को कहि सकहि प्रयाग प्रभाऊ। कलुश पुंज कुंजर मृगराऊ।'**

महाभारत में स्पष्ट कहा गया है कि यह पृथ्वी का मध्य भाग है। यहाँ से इसके पास से कर्क रेखा गुजरती है। गंगा सूर्य की दस किरणों में से एक हैं जिसका नाम कपिला है। यमुना सूर्य की पुत्री हैं। अन्तःसलिला सरस्वती वाक् की अधिष्ठात्री है। सूर्य पुत्र शनि का जन्म भी प्रयाग में हुआ। सूर्य अपनी गति के क्रम में बारह राशियों का भोग करता है। सूर्य प्रतिवर्ष दक्षिणायन से उत्तरायन गति में जाते समय प्रयाग में अपने बेटे शनि के घर ठहरते हैं। अपने परिवार के मध्य आकर सूर्य साक्षात् नारायण स्वरूप होते हैं – **'ध्येयः सदा सवितृगण्डल मध्यवर्ती नारायणः सरसिजा शनशन्निविष्टः।'**

सूर्य के उत्तरायन होने पर सूर्य की सीधी किरण प्रयाग की धरती पर पड़ती है जिससे सूर्य प्राणदायी हो जाते हैं। प्रत्येक 12 वर्षों के अन्तराल पर सूर्य, शनि और गुरु ग्रहों की स्थिति में परिवर्तन होता है और सूर्य और शनि मकर राशि में, देव गुरु बृहस्पति मेष अथवा वृश में होता तब यहाँ कुम्भ लगता है।

17.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

- आप तीर्थराज प्रयाग के महत्त्व को जान सकेंगे।
- पुराणों के अनुसार प्रयाग माहात्म्य को समझ सकेंगे।
- प्रयागराज मण्डल का स्वरूप समझ सकेंगे।
- तीर्थराज में मोक्ष प्राप्त करने का महत्त्व समझ सकेंगे।

- त्रिवेणी संगम की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- गंगा जी के महत्त्व को समझ सकेंगे।
- प्रयाग में संगम स्नान का महत्त्व समझ सकेंगे।
- प्रयागराज के भौगोलिक स्वरूप तथा पौराणिक प्रयाग को समझ सकेंगे।
- सन्यासियों के राजसी स्नान के महत्त्व एवं उसके इतिहास समझ सकेंगे।

17.2 तीर्थराज प्रयाग

सितासिते यत्र तरंगचामरे, नद्यौ विभाते मुनिभानुकन्यके।

नीलात्पत्रं वट एव साक्षात्, स तीर्थराजो जयति प्रयागः॥

(गंगा और यमुना की लहरों से संजीवित, सघन पत्तों से मण्डित अक्षयवट द्वारा सूर्य की रश्मियों का निवारण कर नीले क्षेत्र के रूप में, लेकिन राजा के समान अलंकृत कर प्रकृति ने इसे स्वयं तीर्थराज बनाया है।)

भारत के मानचित्र को आलोकित करता हुआ प्रकाशपुंज स्वरूप पुण्यसलिला गंगा, सूर्यतनया यमुना तथा अन्तःसलिला सरस्वती का पवित्र संगम भारतीय मनीषा को सदैव आकर्षित करता रहा है। प्रयाग की पावन धरती ऋषि-मुनियों की धरती रही है और पावन भूमि सदैव आध्यात्म, संस्कृति एवं ऐतिहासिकता से सम्पन्न भूमि रही है।

तीर्थराज प्रयाग (अब प्रयागराज) के नामकरण अथवा प्रयाग शब्द की व्युत्पत्ति के संबंध में विभिन्न पुराणों और अन्यान्य ग्रंथों में विभिन्न उल्लेख मिलते हैं। महाभारत के वन पर्व (87/18-19) में उल्लिखित है कि गंगा-यमुना-सरस्वती के पावन संगम पर पुरातनकाल में पितामह ब्रह्मा ने यज्ञ किया था। अतः प्रकृष्ट यजन-भूमि होने के कारण विष्णु-महेश आदि देवताओं ने उसे 'प्रयाग' नाम दिया। स्कंदपुराण में भी 'प्र' एवं 'यज्' धातु से निष्पन्न नाम वाले इस स्थल को समस्त यज्ञों के लिए उत्तम निरूपित किया गया है। उसमें वर्णित है कि उत्कृष्ट यज्ञ-यागादि और दान-दक्षिणादि से परिपोषित (सम्पन्न) देखकर विष्णु एवं शंकर आदि देवताओं ने इस स्थल का 'प्रयाग' नामकरण किया। स्कन्द पुराण में कहा गया है – **प्रकृष्टं सर्वयागेभ्यः प्रयागमिति गीयते। दृष्ट्वा प्रकृष्ट यागेभ्यः पुष्टेभ्यः दक्षिणादिभिः। प्रयागमिति तन्नाम कृतं हरिहरादिभिः॥**

इसी प्रकार 'मत्स्यपुराण' में भी प्रयाग को अन्य विभिन्न तीर्थों की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण और उत्कृष्ट बताया गया है। 'ब्रह्मपुराण' में भी यज्ञ-यागादि के सर्वथा उपयुक्त होने के कारण 'प्रयाग' तथा प्रकृष्टता के कारण 'राज' शब्द से सुशोभित कर इस पुण्य-स्थली को प्रयागराज/तीर्थराज की भव्यता दी गई है – **'प्रकृष्टत्वात् प्रयागोऽसौ प्राधन्याद् राजशब्दान्'।**

प्रयाग वैदिक यज्ञों एवं अनुष्ठानों की प्राचीनकाल से ही सर्वश्रेष्ठ भूमि रहा है। महाभारत में इसे 'यजनभूमि' कहा गया है तथा देवों के लिए भी पूजनीय माना गया है। माना जाता है कि प्रजापति ने यहाँ हजारों वर्षों तक यज्ञ किया था, इसलिए इसका नाम प्रयाग पड़ा। कालान्तर में अनेक चक्रवर्ती राजाओं ने भी इस अपनी यज्ञ की भूमि बनाया। अग्निपुराण में वर्णन आता है कि स्वयं वेद और यज्ञ यहाँ साक्षात् मूर्तिमान् थे। मत्स्य पुराण ने भी प्रयाग की उत्कृष्ट एवं तपोनिष्ठ धरती पर यज्ञों एवं अनुष्ठानों की बहुलता को स्वीकार किया है। स्कन्द पुराण में वर्णन प्राप्त होता है –

प्रकृष्टः सर्व योगेभ्यः प्रयागमिति गीयते।

दृष्ट्वा प्रकृष्ट यागेभ्यः पुष्टेभ्यः दक्षिणादिभिः।

प्रयागमिति तन्नाम कृतं हरिहरादिभिः॥

शास्त्रों का मत है कि ग्रहों में सूर्य और चन्द्र जिस प्रकार श्रेष्ठ माने गए हैं, उसी प्रकार समस्त तीर्थों में प्रयाग सर्वोत्तम तीर्थ स्वीकृत है –

ग्रहाणां यथा मूयो नक्षशणां यथा शशी।

तीर्थानामुत्तमं तीर्थं प्रयागाख्यमनुत्तमम्॥

गंगा, यमुना तथा सरस्वती के जल का पान करने से मनुष्य आवागमन के चक्र से मुक्त हो परमधाम को प्राप्त होता है। स्कंदपुराण, मत्स्यपुराण, कुर्मपुराण पुराण, अग्निपुराण, बृहन्नारदीयपुराण, मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण, महाभारत आदि अनेक प्रयाग की महिमा के साक्षी हैं। रामचरितमानस में प्रयाग की महिमा कुछ इस प्रकार कही गयी है—

माघ मकरगत रवि जब होई। तीरथपतिहिं आव सब कोई॥
देव—दनुज किन्नर नर श्रेणी। सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी॥
पूजिंह माधव पद जल जाता। परसि अछैवट हरशहिं गाता॥
भरद्वाज आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिवर मनभावन॥
तहां होइ मुनि रिसय समाजा। जहि जे मज्जन तीरथराजा॥

17.3 प्रयाग—माहात्म्य

वेदों, शास्त्रों, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति तथा रामचरितमानस आदि विविध ग्रन्थों में प्रयाग की महनीयता का व्यापक रूप से वर्णन मिलता है। तीर्थराज प्रयाग की महिमा का वर्णन करने के लिए पौराणिक मुनि—महात्मा—संतों ने पृथक रूप से “प्रयाग माहात्म्य” का निरूपण किया है।



पुराणों में लिखा गया है कि भोगों और मुक्ति को देने वाले इस प्रयाग के कल्याणकारी माहात्म्य का मैं (मार्कण्डेय मुनि) वर्णन करता हूँ। विष्णु, शंकर, ब्रह्मा आदि जितने भी देवता, ऋषि—मुनि, सरिताएँ, सागर, तपस्वी, गन्धर्व और अप्सराएँ हैं, वे सब इस प्रयागराज में विद्यमान हैं —

वक्ष्ये प्रयागमाहात्म्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं परम् ।
प्रयागे ये च विष्णवाद्या देवा मुनिवराः स्थिताः ।
सरितः सागरः सिद्धा गन्धर्वाप्सरस्थाः ॥

ऋग्वेद में गंगा, यमुना तथा सरस्वती के संगम त्रिवेणी के रूप में प्रयाग का वर्णन प्राप्त होता है –
‘सितासिते सरिते यत्र संगथे, तत्राप्लुतासो दिव मुत्पतन्ति ।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते, जनासो अमृतत्वं भजन्ते ॥’

—ऋक् संहिता – 10/17/5

तथा

यत्र गंगा च यमुना यत्र प्राची सरस्वती ।
यत्र सोमेश्वरो देवस् तत्र मामृतंकृद्धीन्द्रायोपरिश्रवा ।

— ऋक् संहिता 9/113/11

प्रयाग की महिमा का वर्णन विभिन्न पुराणों में प्राप्त होता है। यहाँ कुछ उद्धरण दिए जा रहे हैं जिनसे प्रयाग की महिमा को जान सकेंगे –

17.3.1 कूर्मपुराण

अन्यक्षेत्रे कृतं पापं पुण्यक्षेत्रे विनश्यति ।
पुण्यक्षेत्रे कृतं पापं प्रयागे तीर्थनायके ॥

किसी अन्य क्षेत्र में किये गये पाप का नाश पुण्य क्षेत्र के प्रवास से होता है, किन्तु किसी पुण्य क्षेत्र में किया गया पाप तीर्थराज प्रयाग के प्रवास से नष्ट होता है।

17.3.2 ब्रह्मपुराण

न माधवसमो देवो न च गंगासमा नदी ।
न तीर्थराजसदृशं क्षेत्रमस्ति जगत्त्रये ॥

अर्थात् स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल तीनों लोकों में भगवान माधव के समान दूसरा देवता नहीं है। गंगा के समान कोई दूसरी नदी नहीं है और तीर्थराज प्रयाग के सदृश्य कोई दूसरा तीर्थ नहीं है।

17.3.3 वाराहपुराण

ब्रह्मा ने जहाँ सैकड़ों यज्ञों से भी अधिक यज्ञों का संपादन किया है, उसे “प्रयाग” नाम से जाना गया है। यह स्थान सब प्रकार के पापों का विनाशक है। ब्रह्मक्षेत्र के रूप में यह प्रयाग तीनों लोकों में विश्रुत है।

17.3.4 स्कंदपुराण अवन्तिखण्ड

गंगायमुनयोर्मध्ये यत्र गुप्ता सरस्वती ।
प्रयागः स तु विज्ञेयः सर्वपाप प्रणाशनः ॥ 2/71/62

अर्थात् जो व्यक्ति तीर्थराज प्रयाग को छोड़कर किसी अन्य तीर्थ से मनोकामनाओं को पूरा करने की इच्छा करता है, वह इस विशाल भारतवर्ष में कहीं भी अपनी मनोकामना पूरी नहीं कर सकता है, यह स्पष्ट है।

स्कन्दपुराण के काशीखण्ड

सरस्वती रजोरूपा तमोरूपा कलिन्दजा ।

17.3.5 काशीखण्ड

प्रथमं तीर्थराजं तु प्रयागाख्यां सुविश्रुतम् ।

कामिकं सर्वतीर्थानां धर्मकामार्थमोक्षदम् ।।

तीर्थराज प्रयाग का नाम सर्वश्रेष्ठ तीर्थ के रूप में विश्रुत है। यह सर्व तीर्थों के पुण्य फलों को देने वाला और धर्म— अर्थ—काम—मोक्ष इस चतुर्वर्ग का प्रदाता है।

17.4 प्रयाग मण्डल का स्वरूप

ऐसी मान्यता है कि प्रयाग त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) की निवास भूमि है। प्रतिष्ठानपुर (झूँसी) के उत्तर में ब्रह्मा गुप्त रूप में विष्णु वेणीमाधव के रूप में तथा शिव अक्षयवट के रूप में विद्यमान हैं। वेणीमाधव में विष्णु योगमूर्ति के रूप में अवस्थित हैं। कल्प में जब भगवान रुद्र के ताण्डव से प्रलय की सहज अवस्था उत्पन्न होती है, तब भी इन त्रिदेवों के निवास के कारण प्रयाग अपने सहज रूप में स्थिर एवं अक्षय बना रहता है। यही कारण है कि प्रयाग में देव, गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, साधक, ऋषि और मुनिजन एक साथ निवास करते हैं।

प्रयागराज के देवताओं में शक्ति स्वरूपा ललिता देवी और त्रिकाल भैरव का स्थान सर्वोपरि है। तंत्रचूड़ामणि से ज्ञात होता है कि दक्षपुत्री सती की हस्तांगुलि प्रयाग में गिरी थी। जिस स्थल पर वह गिरी थी वहाँ ललिता देवी का मंदिर (मीरापुर) है। पौराणिक ग्रंथों में भी इसकी चर्चा मिलती है – “प्रयागे ललितादेवी”। ललिता देवी की मान्यता शक्तिपीठों के रूप में है। यहीं पर ‘भव’ नामक भैरव का भी निवास स्थल है, जो साधकों के लिए सिद्ध स्थल माना जाता है। पुराणों में प्रयाग के सप्त नायकों का भी उल्लेख है –

त्रिवेणी माधवं दुष्टिं भरद्वाजं च वासुकीम् ।

वन्दे अक्षयवटं सोमं प्रयागं सप्तनायकम् ।।

प्रयागराज मण्डल की सुरक्षा के लिए भगवान नारायण अष्ट माधव के रूप में अवस्थित हैं, जिनके नाम हैं – १. शंखमाधव, २. चक्रमाधव, ३. गदामाधव, ४. पद्ममाधव, ५. अनन्तमाधव, ६. बिन्दुमाधव, ७. मनोहरमाधव और ८. असिमाधव ।

1. **शंखमाधव** — इनका निवास पूर्व दिशा में छतनाग में है। ये अष्टसिद्धियों से परिपूर्ण हैं।
2. **चक्रमाधव** — इनका निवास अरैल में अग्निकोण में अग्निआश्रम है। ये विपत्ति नाशक और चतुर्दश विद्याओं के आधान हैं।
3. **गदामाधव** — इनका निवास दक्षिण भाग में है। ये दुष्ट विनाशक और चतुःषष्टि कलाओं के अधिष्ठाता हैं।
4. **पद्ममाधव** — नैऋत्यकोण (बीकर) में पद्ममाधव विष्णु का चौथा पीठ है। जो संपूर्ण सिद्धियों के प्रदाता तथा लक्ष्मीपति कहे जाते हैं।
5. **अनन्तमाधव** — इनका निवास स्थान पश्चिम दिशा (देवगिरवा) में है। इस पीठ को वरुणपीठ भी कहा जाता है। बिन्दुमाधवकृबिन्दुमाधव का निवास वायव्यकोण (द्रौपदीघाट) में है। इसे सप्तऋषि क्षेत्र भी कहा जाता है।
6. **बिन्दुमाधव** — इनका निवास द्रौपदी घाट के पास है। इनके दर्शन का विशेष फल होता है।
7. **मनोहरमाधव** — इनका निवास उत्तर दिशा में कुबेर आश्रम के निकट सूरज कुण्ड में है। यहाँ पर धनपति कुबेर, गंधर्वों और उर्वशी आदि देवांगनाओं का निवास भी है। यहाँ पर भक्तजनों की सभी कामनाएँ पूरी होती हैं।
8. **असिमाधव** — यह विष्णु का आठवाँ पीठ है। यह ईशानकोण में शिव के आश्रम के समीप नागवासुकी में स्थित है। इनके समीप नागों तथा नाग कन्याओं का निवास है।

इनके अतिरिक्त वट वृक्ष के नीचे रहने वाले आदिवटमाधव, आदिवेणीमाधव संकटहरणमाधव और गंगा—यमुना तट (मनोहर वेणी) पर वेणीमाधव विराजमान हैं।

17.5 तीर्थराज में मोक्षत्व

ब्रह्मपुराण में वर्णित प्रयाग महिमा के अनुसार —

तीर्थराजं तु ये यान्ति ये स्मरन्ति सदा मुनि ।

ते सर्वपापनिर्मुक्ताः पदगच्छन्त्यनामयम् ॥

इस पावन धरती पर रहने वाले जो मनुष्य सदा तीर्थराज प्रयाग जाते रहते हैं और हमेशा उसका स्मरण करते हैं, वे सभी पापों से मुक्त होकर अन्त में मुक्ति पद को प्राप्त करते हैं। उनको सीधे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है।



इस संपूर्ण पृथ्वी पर जितने भी तीर्थ हैं, उन सबमें सर्वश्रेष्ठ तीर्थराज प्रयाग की महिमा वेदों से लेकर विभिन्न शास्त्रों, धर्मग्रंथों, पुराणों और परवर्ती साहित्य में प्रचुर रूप में उपलब्ध है। इसे समस्त तीर्थों के पुण्यफलों का प्रदाता और धर्म— अर्थ—काम—मोक्ष, इस पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति का साधन बताया गया है। कहा गया है कि विभिन्न स्थानों पर किये गये पापों, दुष्कर्मों का शमन अन्य तीर्थों पर जाकर किया जा सकता है, किन्तु विभिन्न तीर्थों पर जो दुष्कृत्य किये जाते हैं, वे प्रयागराज के दर्शन मात्र से ही क्षीण हो जाते हैं। यह भूमि अपनी पवित्रता—पावनता से मनुष्य को इस आवागमन के चक्र से मुक्ति दिलाती है। यह प्रयागराज देवलोक और पितृलोक दोनों है। इसके दर्शन करने, इसका नामोच्चारण करने या शरीर पर इसकी मृत्तिका का स्पर्श करने मात्र से ही मनुष्य पाप—मुक्त हो जाता है। जो यहाँ स्नान करते हैं। स्वर्गधाम को प्राप्त होते हैं। जो यहाँ आकर मरते हैं, उन्हें पुनर्जन्म नहीं लेना पड़ता। स्वयमेव शरीर त्याग या आत्महत्या को सभी शास्त्रकारों ने महापाप माना है, किन्तु प्रयागराज में अक्षयवट के पादमूल में आत्महत्या करना मोक्षत्व देने वाला कहा गया है। यही तीर्थराज प्रयाग की विशेषता एवं उत्कृष्टता है। इसी कारण अनेक राजाओं तथा साधु—संतों यहाँ तक कि तत्त्ववेत्ताओं ने तीर्थराज में आकर शरीर त्याग किया। गंगा, यमुना और सरस्वती इन तीनों नदियों के संगम के कारण ही इसे त्रिवेणी नाम दिया गया है। परमेश्वर पितृमह ब्रह्मा ने तीनों लोकों को छानबीन कर अन्त में प्रयागराज को ही अपने निवास के लिए चुना। अतः प्रजापति—क्षेत्र होने के कारण प्रयाग को परंपरा से ही तीर्थराज होने का गौरव प्राप्त रहा।

पुराणों में प्राप्त वर्णन के अनुसार प्रजापति ब्रह्मा की पांच वेदियाँ हैं। इनके नाम हैं — प्रयाग, गया विरजा

(उत्कल), पुश्कर तथा कुरुक्षेत्र। प्रयाग को मध्यमावेदि, गया को पूर्व वेदि, विरजा को दक्षिण वेदि, पुश्कर को प्रतीचि अर्थात् पश्चिम वेदि तथा कुरुक्षेत्र को उत्तर वेदि माना गया है। इन सभी वेदियों में प्रयाग, गया तथा कुरुक्षेत्र अधिक महत्त्वपूर्ण माने गये हैं। प्राचीन काल में कुरुक्षेत्र ही यज्ञों का केन्द्र माना जाता था। यहीं से ऋषियों के प्रयास से वैदिक धर्म का अन्य स्थानों तक प्रचार-प्रसार हो सका। पुराणों में इसके साक्ष्य मिलते हैं।

एतावतो नाम प्रजापतेर्वेदिर्यावत् कुरुक्षेत्रमिति।

— ताण्ड्य ब्राह्मण 25/13/3

ब्रह्मवेद्यां कुरुक्षेत्रे ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः।

— नारद पुराण, उत्तरभाग 64/23

महाभारत के अनुसार —

एतत् कुरुक्षेत्र समन्त पञ्चक प्रजापतेरुत्तर वेदिरुच्यते

— महाभारत वनपर्व — 83/208

प्रयाग को मध्यम वेदि तथा प्रजापति ब्रह्मा को क्षेत्र स्वीकार करने में पुराणों में मतैक्य है —

एतत् प्रजापतेः क्षेत्रं त्रिंशु लोकेषु विश्रुतम्।

मत्स्यपुराण — 103/4 तथा

कूर्म पुराण — 1/34 — 20

महाभारत के वनपर्व में गंगा-यमुना के संगम क्षेत्र प्रयाग को ब्रह्मा की यजनभूमि माना है —

गंगा यमुनयोर्वीर संगमं लोक विश्रुतम्।

यत्रायजत् भूतात्मा पूर्वमेव पितामहः।

प्रयाममिति विख्यातं तस्माद् भारत सत्तम्॥

महा0 वनपर्व — 87/18-19

गंगा-यमुना के मध्य के जघन प्रदेश को ब्रह्मा की यजन सामग्री फैल होने के कारण विकिर क्षेत्र कहा गया है। इससे प्रयाग की स्थिति पृथ्वी के मध्य भाग की सिद्ध होने के कारण इसका महत्त्व अधिक बढ़ जाता है। मत्स्यपुराण में पूरा प्रयाग मण्डल ही प्रजापति की वेदी है—

प्रयागं सप्रतिष्ठानं कम्बलाश्वतरावुभौ।

भोगवत्यथ या चैशा वेदिरेशा प्रजापतेः॥ 8/112

अर्थात् पूरब में प्रतिष्ठानपुरी (वर्तमान में झूंसी), यमुना के तट पर दक्षिण में कम्बल तथा अश्वतरनाग, वासुकि के उत्तर में विद्यमान भोगवती उत्तर में है। इन सभी स्थानों से घिरा हुआ प्रयाग मण्डल का क्षेत्र प्रजापति की वेदी है। गंगा और यमुना के बीच का प्रदेश पृथ्वी का जघन स्थल माना गया है, इसके अनुसार प्रयाग की स्थिति पृथ्वी के मध्य भाग में सिद्ध होती है, इससे प्रयाग का महत्त्व और बढ़ जाता है।

शास्त्रीय ग्रन्थों के आधार पर प्रयाग के क्षेत्र को तीन खण्डों में विभक्त माना गया है — 1. प्रयाग मण्डल 2. प्रयाग क्षेत्र तथा 3. वेणी या त्रिवेणी। पांच योजन में फैला प्रयाग मण्डल 'वहिवेदि', प्रयाग क्षेत्र 'मध्यवेदि' तथा त्रिवेणी 'अन्तर्वेदी' माना जाता है। मत्स्यपुराण में इसका साक्ष्य मिलता है —

आ प्रयाग प्रतिष्ठानात् आ पुरा वासुकेर्हदात्।

कम्बलाश्वतरौ नागौ नागश्च बहुमूलकः

एतत् प्रजापतेः क्षेत्रं त्रिंशु लोकेषु विस्तृतम्॥

— मत्स्यपुराण 104/4-4

इस श्लोक में प्रयागक्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले स्थल — प्रतिष्ठानपुर (झूंसी), वासुकि, यमुना के किनारे स्थल — कम्बल, अश्वतट तथा बहुमूलक नाग की चर्चा आई है। निम्न श्लोक में इसमें स्नान तथा जल-पान का महत्त्व वर्णित है —

कम्बलाश्वतरौ नागौ विपुले यमुना तटे ।

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च सर्व पापैः प्रमुच्यते ॥

— मत्स्यपुराण 106/27

इन स्थलों से घिरे प्रदेश को प्रयागक्षेत्र कहा गया है। वासुकि के उत्तर में भोगवती तथा दशाश्वमेघ तीर्थ का तथा दशाश्वमेघ के समीप ही वेणीमाधव का भी उल्लेख मत्स्यपुराण (106/46) में मिलता है।

अन्तर्वेदी के रूप में त्रिवेणी का अनन्य माहात्म्य वर्णित है। गंगा, यमुना तथा सरस्वती नदियों के पवित्र संगम को त्रिवेणी कहा जाता है। त्रिवेणी ही ब्रह्मा जी की यजन भूमि होने के कारण देवताओं के लिए भी अभिलिखित है। यज्ञवेदी के समीप यज्ञ की वस्तुएँ फैली होने से इसे विकिर क्षेत्र भी कहा गया है। पुराणों के अनुसार अक्षयवट के समीप 'मूलवेणी', गंगा-यमुना के संगम को 'मध्यवेणी' तथा यमुना के पार अरैल स्थित सोमेश्वर मन्दिर तक 'अन्त्यवेणी' का विस्तार माना जाता है। त्रिवेणी को प्रणव का स्वरूप भी माना गया है। 'त्रिस्थली सेतु' में नारायण भट्ट जी ने इसे ओंकार माना है।

17.6 प्रयागराज तीर्थ—दर्शन माहात्म्य

शास्त्रों में कहा गया है कि प्रयागराज का दर्शन बड़े भाग्य से होता है। प्रयागराज के दर्शन से सभी पाप एवं अज्ञान उसी प्रकार दूर हो जाते हैं, जैसे सूर्योदय के बाद अंधकार। इस सर्वश्रेष्ठ और सर्वसुलभ तीर्थ के दर्शन से ही जन्म-जन्मान्तरों के संचित पापों का नाश होकर सद्गति की प्राप्ति होती है। ब्रह्महत्या जैसा महापाप भी प्रयागराज के दर्शन से ही दूर हो जाता है।

कूर्मपुराण भी ऐसा ही उपदेश देता है —

दर्शनात्तस्य तीर्थस्य नामसंकीर्तनादपि ।

मृत्तिकालम्बनाद्वाऽपि नरः पापात्प्रमुच्यते ॥

उस प्रयागराज तीर्थ के दर्शन, नामसंकीर्तन अथवा वहाँ की मिट्टी के स्पर्श मात्र से ही मनुष्य पाप मुक्त हो जाता है। पद्मपुराण में भी वर्णित है —

ब्रह्महत्यादिपापानि सप्तजन्मार्जितान्यपि ।

दर्शनादस्य तीर्थस्य विनाशं यान्ति तत्क्षणात् ॥

मनुष्य के पूर्व के सात जन्म-जन्मान्तरों से संचित ब्रह्महत्यादि जितने भी महापाप हैं, उस तीर्थराज प्रयाग के दर्शन मात्र से ही तुरन्त नष्ट हो जाते हैं।

17.7 प्रयागराज तीर्थ—सेवन माहात्म्य

प्रयागराज तीर्थ के सेवन से जन्म-जन्मान्तरों के पापों का नाश हो जाता है। ऐसा पुराणों में लिखा है। प्रयागराज तीर्थ— सेवन का संकल्प कर जो मनुष्य प्रयाग की ओर एक कदम भी चलता है, उससे उसके सारे पापों का नाश हो जाता है। अनजाने में भी यदि कोई प्रयाग की भूमि में आ जाता है तो उसकी सभी इच्छाएँ स्वयमेव पूरी हो जाती हैं और स्वर्ग-लोक की प्राप्ति हो जाती है। जो बार-बार प्रयाग की यात्रा करते हैं अथवा वहीं जाकर बस जाते हैं ऐसे लोग सीधे शिवधाम को प्राप्त करते हैं, ऐसा काशी खण्ड में वर्णित है —

जन्मान्तरेष्वसंख्येषु यः कृतं पापं संचयः ।

पुंसः शरीरान्निर्यातुमपेक्षेत पदान्तरम् ॥

करोड़ों जन्म-जन्मान्तरों के संचय पाप प्रयागराज तीर्थ की यात्रा करने से दूसरे ही कदम पर मनुष्य के शरीर से निकल कर भाग जाते हैं। ऐसा ब्रह्मपुराण में कहा गया है। ऐसा ही मत्स्यपुराण में भी वर्णित है—

प्रयागमनुगच्छेद् वा वसते तदपि यो नरः।

सर्वपापविशुद्धाच्च रुद्रलोकं स गच्छति॥

17.8 त्रिवेणी संगम और प्रयागराज

पूरे भारतवर्ष में नदियों एवं महानदियों के परस्पर मिलन अनेक स्थानों पर हुआ है, जिनका अपना अलग-अलग महत्त्व है। वेदों से लेकर परवर्ती समस्त भारतीय साहित्य में नदियों की महत्ता तथा पवित्रता का विस्तार से वर्णन प्राप्त होता है। नदियों को सदैव दैवीय शक्ति-सम्पन्न माना गया है। नदियाँ ही राष्ट्र की प्राणदायिनी शक्तियाँ मानी गई हैं। ऋग्वेद के अनेक मंत्रों के माध्यम से देव स्वरूप में नदियों की स्तुति की गई है। नदियों का आवाहन दोषों और पापों से मुक्ति दिलाने वाला होता है। 'आपो देवीरिह मामवन्तु' कहकर नदियों से प्रार्थना की गई है कि देवी जल हमारी रक्षा करें। तैत्तिरीय संहिता में 'आपो वै सर्वा देवताः' कह कर सभी देवताओं को जल में केन्द्रित बताया गया है। अथर्ववेद में जल को सुख एवं पवित्रता देने वाला बताया गया है। इसी प्रकार पुराणों में भी नदियों की अनन्त महिमा का गान किया गया है।

प्रयाग की धरती धन्य है, जहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती का मिलन होता है, उसे स्थल को ही त्रिवेणी संगम कहा गया है। इस संगम में मोक्षदायिनी गंगा, सूर्यतनया यमुना तथा अन्तःसलिला सरस्वती की पावन त्रिवेणी प्रवाहित है। यह त्रिवेणी ज्ञान, भक्ति और कर्म की त्रिवेणी है। जिसमें अवगाहन करने से मनुष्य कर्म-चक्र से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त कर लेता है। गंगा भक्ति स्वरूपा, यमुना कर्ममयी तथा सरस्वती ज्ञान स्वरूपा हैं।



“तीर्थ-चिन्तामणि” में ऋग्वेद के एक मंत्र में उल्लेख है कि जिस जगह पर श्वेतवर्णा गंगा और नीलवर्णा यमुना दोनों नदियाँ मिलती हैं, उस स्थान पर स्नान करने से स्वर्ग लोक की प्राप्ति होती है। जो उस स्थान पर प्राण त्यागते हैं वे भी अमर हो जाते हैं। इससे यह विदित होता है कि प्रयागराज में गंगा-यमुना के मिलन को ही महत्त्व दिया गया है। इसके विपरीत “त्रिवेणी” शब्द से गंगा-यमुना तथा सरस्वती के संगम का अभिप्राय सिद्ध होता है और इन तीनों महानदियों के मिलन का स्थल प्रयाग को बताया जाता है। परन्तु त्रिवेणी (गंगा, यमुना, सरस्वती के मिलन) के संबंध में विभिन्न मत हैं। ऋग्वेद के मंत्र “यत्र गंगा च यमुना च यत्र प्राची सरस्वती” से इसकी पुष्टि होती है। नारायण भट्ट ने लिखा है कि “अकारस्वरूप सरस्वती, उकार-स्वरूप यमुना और मकार स्वरूप गंगा” से संबन्धित “प्रणव” (ओंकार) ही प्रयाग है। “तीर्थ चिन्तामणि” में भी तीन नदियों के संगम का उल्लेख है –

सितासिता तु या धारा सरस्वत्या विदर्मिता।

सरस्वती के उद्गम-स्थल तथा अन्तर्ध्यान के संबंध में अनेक मत हैं। कुछ विद्वान सरस्वती का उद्गम मीरपुर पर्वत और विलुप्त होना बीकानेर में बताते हैं। कतिपय विद्वान के अनुसार कुरुक्षेत्र से निकल कर पटियाला में विलुप्त हुई अथवा पटियाला की वर्तमान “सुस्सुति” ही अदृश्य रूप में प्रयाग में सरस्वती कहलाई।

जेमिनीय ब्राह्मण (२/२६/१२), ताण्ड्यब्राह्मण (३२/१-४), महाभारत (शल्यपर्व ५१/१६), वामनपुराण (२/४२-४३), ब्रह्मपुराण (३/८) आदि में सरस्वती का उद्गम व विलुप्ति स्थल अलग-अलग वर्णित है।

इन विभिन्न मतों का मंथन करने पर ऐसा ज्ञात होता है कि शायद ब्रह्मपुराण के समय में ही सरस्वती को गंगा-यमुना के संगम के साथ जोड़ने का प्रयास हुआ है।

17.9 गंगा माहात्म्य

गंगा के माहात्म्य से इस धरा का कौन-सा व्यक्ति परिचित नहीं है। गंगा की महानता को लेकर वेद, पुराण, रामायण, महाभारत के साथ अनेक परवर्ती साहित्य भरे पड़े हैं। गोमुख तथा गंगोत्री के पहाड़ों से बहती हुई हरिद्वार से गंगासागर तक सृष्टि की अनादि परम्परा के साथ अनवरत प्रवहमान, पापियों के ज्ञात-अज्ञात सभी पापों को धोने वाली पतितवानी, ऋशि-मुनियों तथा मनुष्यों द्वारा चिरवन्दिता गंगा प्रत्यक्षतः देवनादी है। चिरकाल तक पात्र में रखे जाने पर भी दूषित न होने से 'नदीशु गंगा' रूप में सार्वजनिक रूप प्रशस्य है। अपने आध्यात्मिक स्वरूप में अनेक सभ्यता एवं संस्कृति के उदय एवं ह्रास की प्रत्यक्षमूकद्रष्टी गंगा भीष्म की जननी तथा वसुओं की माँ है। महर्षि वेद व्यास गंगा के महत्त्व को बताते हुए कहते हैं —

न गंगा सदृशं तीर्थं न देवः केशवात् परः।

ब्राह्मणेभ्यः परं नास्ति एवमाहः पितामहः॥

— महा० वनपर्व — ८७-९६

तथा

पुनाति कीर्तिता पापं दृष्ट्वा भद्रं प्रयच्छति।

अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

— वनपर्व — ८७-९३



वेदों, विभिन्न धर्मशास्त्रों और पुराणों सभी जगह गंगा जी के महत्त्व का वर्णन देखने को मिलता है। साहित्यकारों एवं महापुरुषों ने भी अपने ग्रंथों में गंगा की अनन्त महिमा का वर्णन किया है। माँ गंगा के स्मरण, ध्यान, नामसंकीर्तन और दर्शन मात्र से मनुष्य के सारे संकल्पित कार्य पूरे हो जाते हैं। गंगाजल पान करने और उसमें स्नान करने से समस्त इच्छाओं की पूर्ति, पापों का विनाश तथा देवताओं की संतुष्टि और पितरों की तृप्ति होती है। प्रयाग में गंगा का स्नान करने से विशेष फल प्राप्त होता है। पुराणों ने गंगाजी को त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश) की प्रतिमूर्ति और चारों वेदों का स्वरूप बताया है। इसकी महिमा का वर्णन कूर्मपुराण में इस प्रकार है —

योजनानां सहस्रेषु गंगा य स्मरते नरः।

अपि दुष्कृतकर्माऽसौ लभते परमां गतिम्॥

कृते युगे तु तीर्थानां पुष्करं परमं मतम्।

द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलौ गंगा विशिष्यते ।।

गंगामेव निषवेत प्रयागे तु विषेषतः ।

सहस्र योजन की दूरी से भी यदि कोई गंगाजी का स्मरण करता है, तो चाहे उसने कितने भी पाप क्यों न किये हों, वह भी सद्गति को प्राप्त कर लेता है। पुष्कर को सतयुग में सभी तीर्थों में श्रेष्ठ माना गया है, द्वापर में कुरुक्षेत्र और कलयुग में गंगाजी की महिमा का विशेष महत्त्व है। अतः प्रयाग में अन्य तीर्थों की अपेक्षा गंगाजी का विशेष रूप से पूजन व सेवन का महत्त्व है।

ब्रह्मपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण तथा मत्स्यपुराण में भी गंगाजी की अनन्त महिमा बताई गई है। महाभारत के अनुसार, गंगा ऋग्वेद स्वरूपा, यमुना यजुर्वेद स्वरूपा और सरस्वती अथर्ववेद स्वरूपा हैं। गंगा समस्त नदियों की जननी है।

लिंगपुराण के अनुसार—

वर्ज्य पर्युषितं तोयं वर्ज्य पर्युषितं दलम् ।

अवर्ज्य जाह्नवीतोयमवर्ज्य तुलसी दलम् ।।

किसी भी धर्म अथवा शुभ कार्य में बासी जल और बासी दूर्वादल वर्जित बताये गये हैं परन्तु गंगाजल और तुलसीदल दोनों सभी अवस्थाओं में अवर्ज्य हैं, अर्थात् ये दोनों कभी बासी नहीं होते और सदा पवित्र रहते हैं।

विष्णुपुराण के अनुसार —

कई सौ योजनों की दूरी से भी “गंगा—गंगा” अथवा “नमामि गंगे” नाम—संकीर्तन करने से गंगा प्राणियों को पाप मुक्त कर देती है।

स्कंदपुराण में गंगा की महिमा इस प्रकार है —

गंगा किं वर्ण्यते देवी हरेण शिरसा घृता ।

गौरी चार्धशरीरस्था हरस्य परमेशितुः ।।

गंगा जी की ‘त्रिपथगा’ भी एक संज्ञा है, अर्थात् वह तीनों लोकों के निवासियों को तार देती हैं या मोक्ष प्रदान करती हैं। गंगजल साक्षात् ब्रह्मजल है जो पाताल लोक में नागों को, तत्स्यलोक में मनुष्यों को तथा देवलोक में देवों को मोक्ष प्रदान करती हैं। हमारे पुराण गंगा माहात्म्य से भरे-पड़े हैं। मत्स्यपुराण में उल्लेख प्राप्त होता है कि मृत्यु के पश्चात् मनुष्य की अस्थियाँ जितने दिन गंगाजल में रहती हैं, उतने सहस्र वर्षों तक उसका निवास स्वर्गलोक में होता है —

क्षितौ तारयते मर्त्यान् नागान् तारयतेऽप्यधः ।

दिवि तारयते देवान् तेन त्रिपथगा स्मृता ।।

— मत्स्यपुराण 106/51

तथा

यावदस्थीनि गंगायां तिष्ठन्ति हि शरीरिणः ।

तावद् वर्ष सहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ।।

— मत्स्यपुराण 106/52

देवी गंगा की महिमा को इस अद्वितीय वर्णन से जाना जा सकता है कि स्वयं भगवान् शंकर ने उन्हें अपने सिर पर धारण किया है जबकि भगवती पार्वती को तो अपने आधे शरीर में ही धारण किया है।

17.10 प्रयाग में संगम स्नान माहात्म्य

पुराणों में विस्तार से प्रयाग और प्रयाग में संगम स्नान, गंगा माहात्म्य आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।

कूर्मपुराण में प्रयाग को प्रजापति ब्रह्मा का क्षेत्र माना है तथा यहाँ किये जाने वाले स्नान का विशेष महत्त्व बतलाया है। कूर्मपुराण के अनुसार प्रयाग के संगम में स्नान कर मनुष्य आवागम के चक्र से छूट जाता है—

एतत् प्रजापति क्षेत्रं त्रिशुलोकेशु विश्रुतम् ।

अत्र स्नात्वा दिवं यान्ति, ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः॥

— कूर्मपुराण

गंगा स्नान एवं गंगा के तट पर पितरों का तर्पण एवं पिण्डदान आदि कर्म करने से हिन्दू मान्यता के अनुसार मनुष्य समस्त कर्मफलों से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करता है पद्मपुराण में वर्णन आता है कि ब्रह्महत्या जैसे भीषण पाप भी यहाँ स्नान से धुल जाते हैं —

ब्रह्महत्यादीनि पापानि सप्तजन्मार्जितानि ।

स्नानादत्र विनाशं यान्ति तत्क्षणम्॥

— पद्मपुराण

रामचरित मानस में वर्णन आता है कि स्वयं भरत जब भगवान राम से मिलने चित्रकूट जाते हैं तो मार्ग में प्रयाग पहुँचने पर अपने स्वर्गलोक सिधारे पिता को जलाञ्जल देने की इच्छा करते हैं —

दातुं च तावदिच्छामि स्वर्गतस्य महीपतेः ।

और्ध्वदेह निमित्तार्थमवतीर्थोदकं नदीम्॥

विष्णुपुराण के अनुसार कुम्भ में त्रिवेणी स्नान का विशेष महत्त्व बताया गया है —

अश्वमेघ सहस्राणि वाजपेय शतानि च ।

लक्षं प्रदक्षिणाः पृथिव्याः कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥

स्कन्दपुराण के अनुसार सित तथा असित नदियों का जल देवताओं को भी दुर्लभ है, उनमें स्नान करके पापी मनुष्य भी ब्रह्म पद को प्राप्त करता है —

सितासिते सिरश्चेष्टे यत्रास्तां सुरदुर्लभे ।

यत्राप्लुतो नरः पापः परं ब्रह्मधिगच्छति॥

— स्कन्दपुराण 4/7/46

17.10.1माघ—स्नान माहात्म्य

देवों की यज्ञभूमि प्रयाग में कभी भी गंगा—स्नान करने से मोक्ष तथा तप, दान, यज्ञ करने से पुण्य फल प्राप्त होता है। गंगा में स्नान करने से सभी अज्ञात रूप से किये गये पाप भी विनष्ट हो जाते हैं। प्रयाग में गंगा—स्नान करने के लिए किसी विशेष तिथि या अवस्था की आवश्यकता नहीं है। सभी तिथियों और समयों में यहाँ स्नान करने से पुण्य प्राप्त होता है पाप विनष्ट होते हैं तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है।

शास्त्रों के अनुसार — प्रयागे माघ पर्यन्तं त्रिवेणी संगमे शुभे ।

निवासः पुण्यशीलानां कल्पवासे हि कश्यते ।

अर्थात् माघ मास में एक मास पर्यन्त गंगा के तट पर कल्पवास करना पुण्यप्रदायी होता है।

ब्रह्मपुराण के अनुसार— मासमेकं तु यः स्नायात् प्रयागे नियतेन्द्रियः ।

गुच्यते सर्वपापेभ्यः गच्छेत् परंपदम्॥

तेशु स्नात्वा दिवं यान्ति, ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः॥

तीर्थराज में स्नान सर्वदा सुलभ है। प्रयाग में देश, काल आदि का कोई प्रतिबंध नहीं है। सभी दिक् और

सभी काल यहाँ के लिए कल्याणमयी होते हैं।

भविष्यपुराण में वर्णित है कि—गंगायमुनयोश्चैव संगमोलोकविश्रुतः।

स एव कामिकं तीर्थं तत्र स्नानेन भक्तिः॥

यस्य यस्य च यः कामस्तस्य भवेद्भिः सः।

गंगा और यमुना का संगम तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। यह सभी मनोवांछित इच्छाओं को पूरा करने वाला तीर्थ है। यहाँ भक्तिभाव से स्नान करने से जिसकी जो कामना होती है वह निश्चित ही पूरी हो जाती है। इस बात की पुष्टि मत्स्यपुराण और स्कन्दपुराण से भी होती है। साथ ही, पुराणों में यह भी वर्णित है कि प्रयागराज में यदि माघ मास में तीर्थाटन करके, एक माह तक दर्शन करके वहाँ प्रतिदिन गंगा स्नान किया जाय तो उससे मनुष्य को अनन्त पुण्य फलों के साथ-साथ, करोड़ों गायों के दान करने का फल भी सहज ही प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार अश्वमेध यज्ञ करने का जो फल होता है, वह माघ मास में स्नान करने से ही प्राप्त हो जाता है। माघ मास में संगम स्नान से मनुष्य की सभी इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं तथा उसकी सभी वासनाएँ शान्त होकर उसको दिव्य लोक की प्राप्ति होती है। माघ मास में गंगा-यमुना के संगम में स्नान करके दस हजार या दस करोड़ तीर्थों की यात्रा से भी अधिक फल प्राप्त होता है —

दशतीर्थ सहस्राणि दश कोट्यस्तथा परा।

माघमासे प्रयागे तु गंगा यमुन संगमे॥ — मत्स्यपुराण

माघमास में गंगा-यमुना के संगम में स्नान की महिमा बखान स्वयं तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में किया है —

माघ मकर गति रवि जब होई तीरथ पतिहि आव सब कोई।

देव दनुज किन्नर नर श्रेणी, सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी॥

— रामचरित मानस

माघमास में देव, किन्नर आदि सभी प्रयागराज के संगम में स्नान करने आते हैं। स्कन्दपुराण में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है —

माघमासे गमिष्यन्ति, गंगा यमुन संगमे,

ब्रह्मविष्णुमहादेव रुद्रादित्य मरुद्गणाः। — स्कन्दपुराण

प्रयाग में स्नान करने के लिए सभी तिथियाँ और समय शुभ माने गये हैं, परन्तु यदि माघ मास की मकर संक्रान्ति (प्रायः १४ जनवरी) को गंगा-यमुना-सरस्वती के संगम में स्नान और देवों का दर्शन करके दान आदि किया जाय तो अनन्त फल प्राप्त होता है।

महाभारत में भी मकर संक्रान्ति के अवसर पर सूर्य के उत्तरायण होने पर प्रयाग में स्नान एवं दान की महिमा बताई गई है —

रवे मकर संक्रान्तौ प्रयागे स्नान दानयोः।

फलमानं न शक्नोति वक्तुं ब्रह्मर्षि तत्त्वतः॥

— महाभारत

प्रयाग में मौनी अमावस्या तथा सोमवती अमावस्या पर स्नान का भी विशेष फल स्वीकार किया गया है —

अमावस्या भवेद्दारो यदा भूमि सुतस्य वै।

जाह्नवी स्नान मात्रेण गो सहस्र फलं लभेत्॥ — निर्णय सिंघु

प्रयाग में माघमास में पड़ने वाले सभी विशेष पर्वों पर स्नान का फल वर्णित है। प्रयाग में कुम्भ के अवसर पर स्नान का विशेष फल बताया गया है —

सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानं शतानि च।

वैशाखे नर्मदा कोटिः कुम्भ स्नानेन तत्फलम्॥

अर्थात् कार्तिक मास में एक हजार बार गंगा स्नान करने, माघ मास में सौ बार स्नान करने तथा वैशाख मास में नर्मदा में एक करोड़ बार स्नान करने का जो फल होता है, वह प्रयाग में कुम्भ के अवसर पर केवल एक बार स्नान करके प्राप्त हो जाता है। यही कारण है कि मकर संक्रान्ति के दिन प्रयागराज में देश के कोने-कोने से हजारों, लाखों लोग आकर संगम में स्नान-दान कर पुण्य लाभ करते हैं तथा बालुकामय गंगा-यमुना के तट पर एक माह तक कल्पवास (वहीं रहकर) करके प्रतिदिन गंगा स्नान करते हैं और कथा-वार्ता, सत्संग, रामलीलाएँ तथा कृष्ण की लीलाएँ देखते हैं। प्रयागराज में संगम के तट पर माघ मास में लाखों श्रद्धालु, दुकानदार, प्रशासक आदि डेरे (जूट से बने टेंटों) और झोपड़ियों में रहते हैं, जिससे एक अस्थायी टेण्टों का नगर यहाँ बस जाता है। प्रत्येक छः वर्ष तथा बारह वर्ष पर पड़ने वाले कुम्भ (अर्ध-कुम्भ) तथा महाकुम्भ (पूर्ण कुम्भ) के अवसर पर यह संख्या करोड़ों में पहुँच जाती है।

17.11 प्रयागराज का भौगोलिक स्वरूप

विभिन्न ग्रन्थों में प्राप्त उल्लेखों तथा कौशाम्बी, झूँसी, लक्षागिरि तथा भीटा आदि ऐतिहासिक स्थलों से प्राप्त हुई सामग्री के आधार पर प्रयाग के प्राचीन महत्त्व को एक मत से स्वीकार किया गया है, परन्तु उसका निर्माण कब और कहाँ से शुरू हुआ इस विषय में बहुत कुछ जानना अभी शेष है। प्रयाग का भौगोलिक स्वरूप आज जिस रूप में वर्तमान है, पुरातन काल में वह इससे सर्वथा भिन्न था। वर्तमान कौशाम्बी, जहाँ भगवान बुद्ध ने निवास किया था और लोक मंगलकारी उपदेश दिये थे, वह प्रयाग का अभिन्न अंग थी। उसके अतिरिक्त भीटा, लक्षागिरि, प्रतिष्ठानपुर (झूँसी) और पातालपुरी आदि ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्थलों तक वर्तमान प्रयागराज की सीमाएँ थीं। वर्तमान प्रयाग का नव-निर्माण मुगलकाल में हुआ और उसका विकास ब्रिटिश शासन काल में हुआ। प्रयाग के नगर निर्माण की इन अवस्थाओं का विशेष अनुशीलन करके वास्तविक स्थिति ज्ञात कर सकते हैं।

17.12 पौराणिक प्रयाग

पौराणिक प्रयाग के साक्ष्य पुराणों में भरे पड़े हैं। मत्स्यपुराण में (१०८/६-१०) तथा अन्य विभिन्न पुराणों में वर्णित है कि “प्रयागमण्डल की भू-परिधि पाँच योजन में विस्तृत है।” तथा “मत्स्यपुराण” (१०४/५) में एक स्थान पर वर्णित है कि “पूर्व में प्रतिष्ठानपुर का कूप, उत्तर में वासुकी का कूप, पश्चिम में कम्बल नाग तथा अश्वतर नाग और दक्षिण में बहुमूलक नाग” प्रयाग की ये चतुर्दिक् सीमाएँ हैं—

आप्रयागं प्रतिष्ठानात् यत्पुरा वासुकेर्हर्लदात्।

कम्बालश्वतरौ नागौ नागश्च बहुमूलकः॥

एतत्प्रजापते क्षेत्रं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्।

कूर्मपुराण (२/३५/४) में भी उल्लिखित है—

पञ्चयोजनविस्तीर्णं ब्रह्मणः परमेष्ठिनः।

प्रयागं प्रथितं तीर्थं यस्य माहात्म्यमीरितम्॥

वाचस्पति मिश्र ने “तीर्थ चिन्तामणि” (पृ. २३) में प्रयाग क्षेत्र के तीन पवित्र कुण्डों या कूपों का वर्णन किया है — प्रथम प्रयाग नगर में, दूसरा प्रतिष्ठानपुर झूँसी में और तीसरा यमुना के दक्षिण ओर अलर्क नगर (अरैल) में। ऐसा विदित होता है कि प्राचीन प्रयाग में उत्तर में भरद्वाज आश्रम, पूर्व में प्रतिष्ठानपुर (झूँसी) और पश्चिम में अरैल (अलर्क नगर) ये स्थान ही लोगों के आवागमन तथा रहने के लिए तथा बीच में गंगा-यमुना का कछार रहा होगा। कुछ छोटे-छोटे गाँव भी रहे होंगे जिनमें भरद्वाज आश्रम ही प्रमुख रहा होगा।

‘रामायण’ के वर्णन से ज्ञात होता है कि प्रयाग चारों ओर से सघन वन से घिरा था और बीच में गंगा-यमुना का संगम तथा भरद्वाज मुनि का आश्रम था। संत तुलसीदास लिखते हैं—

भरद्वाज मुनि बसिंह प्रयागा।

तिन्हिं रामपद अति अनुरागा॥

अतः ऐसा ज्ञात होता है कि जहाँ पर वर्तमान भरद्वाज मुनि का आश्रम है, वहीं प्राचीन प्रयाग था और उसी के निकट से गंगा बहती थी। दक्षिण में वर्तमान अतरसुइया के आस-पास अत्रि ऋषि तथा महासती अनुसूइया का आश्रम था तथा यमुना का किनारा था। धीरे-धीरे दोनों महानदियों की जलधाराओं में परिवर्तन के कारण अन्य क्षेत्रों (दारागंज, नागवासुकि आदि) में लोग बसते चले गये।

चीनी यात्री ह्वेनत्सांग (६२६-६४५ ई.) ने लिखा है कि “प्रयाग में केवल दो बौद्ध प्रतिष्ठान और अनेक देव मन्दिर थे। यहाँ के अधिकतर निवासी अबौद्ध थे। यहाँ पर हरे-भरे शाक और फलों के वृक्ष अधिक थे। यहाँ की जलवायु गरम एवं सहाय थी। यहाँ के निवासी मृदुल एवं विनम्र स्वभाव के थे। वे विद्यानुरागी थे।” इससे ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय प्रयाग संगम के निकट ही बसा हुआ था जो वर्तमान दारागंज को ही प्राचीन प्रयाग दर्शाता है।

17.13 राजसी स्नान

वैदिक सनातन धर्म की रक्षा के लिए आद्य शंकराचार्य जी के सम्पूर्ण भारत में भ्रमण कर बौद्धों, जैनियों तथा अन्य धर्म एवं अन्य मतावलम्बियों को शास्त्रार्थ में परास्त कर सनातन धर्म में दीक्षित करने के बाद भारत के चारों दिशाओं में मठ स्थापित किया। सनातन धर्म के निरन्तर प्रचार-प्रसार के लिए एक स्थान पर एकत्र होकर विचारों के आदान-प्रदान पर बल दिया। इसलिए उन्होंने निरन्तर तीर्थाटन तथा कुम्भ और अर्द्धकुम्भ की परम्परा प्रारम्भ की। बौद्धों के भिक्षुओं को सनातन धर्म की दीक्षा देकर उन्हें धर्म की रक्षा में शास्त्र एवं शस्त्र की शिक्षा देकर लगाया।



वर्तमान में, सभी 13 अखाड़ों के साधु-सन्यासी कुम्भ तथा अर्द्धकुम्भ के अवसर पर स्थल पर पहुँचते हैं। इनमें नागा साधुओं की परम्परा अद्भुत होती है। अपनी धार्मिक आध्यात्मिक परम्परा के अनुसार ये संसार से विरक्त वैरागी अपने लाव-लश्कर, हाथी-घोड़ों पर चाँदी के हौदे पर सवार होकर शाही स्नान के लिए जाते हैं। शून्य से अनन्त तक की यात्रा जनमानस के आकर्षण का केन्द्र होती है।

कुम्भ के अवसर पर विशेष मुहूर्त पर नदियों में स्नान का विशेष महत्त्व होता है। मान्यता है कि ग्रह-नक्षत्रों की विशेष स्थिति होने पर नदियों का जल अमृत-स्वरूप हो जाता है, इसलिए इसमें स्नान का विशेष महत्त्व है। नागाओं तथा साधुओं के स्नान के बाद जल और अधिक पवित्र हो जाता है। माना जाता है कि ग्रहों की स्थिति विशेष होने पर देवताओं को भी आगमन होता है, और इस जल में स्नान करने पर मनुष्य कर्म-चक्र से छूट जाता है और उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। इसीलिए साधु-सन्यासी भी ब्रह्म मूहूर्त में स्नान कर मोक्ष की कामना करते हैं। शाही स्नान का नाम वर्ष 2025 में आयोजित होने वाला प्रयाग कुम्भ से ‘राजसी स्नान’ कर दिया गया है। इस स्नान में सर्वप्रथम नागा साधु स्नान करते हैं तदुपरान्त अन्य अखाड़े तथा साधु स्नान करते हैं। इसके बाद आमजन को स्नान का अवसर मिलता है। इससे आध्यात्मिक ऊर्जा एवं शक्ति प्राप्त होती है।

17.14 राजसी स्नान का अर्थ

कुम्भ के अवसर पर अमृतकाल में निर्धारित मुहूर्त एवं तिथि पर नागाओं के अखाड़ों एवं संत-महात्माओं के एक साथ किये जाने वाले स्नान को शाही स्नान या राजसी स्नान भी कहते हैं। इसका एक नाम राजयोगी स्नान भी है।

17.15 राजसी स्नान की प्रक्रिया

राजसी स्नान प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में सुबह चार बजे शुरू होता है। धर्म की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व त्याग करने के कारण अखाड़ों के शस्त्रधारी सन्यासियों को प्राथमिकता के आधार पर प्रथम स्नान का अवसर मिलता है। अखाड़ों के सन्यासी अस्त्र-शस्त्र धारण कर अपने समस्त शिष्यों के साथ हाथी, ऊँट, घोड़े पर बैठकर बैड-बाजे के साथ स्नान के लिए जाते हैं। बड़े-बड़े महन्त, महामण्डलेश्वर आदि का वैभव देखते ही बनता है। इनके सिर पर चाँदी के छत्र आदि होते हैं।



नागा सन्यासी अपने नग्न शरीर पर भस्म लगाते हैं तथा रुद्राक्ष आदि की बड़ी-बड़ी मालाएँ धारण करते हैं। इस अवसर पर उनके ऊपर पुष्पों की वर्षा की जाती है। सरकार के द्वारा हेलिकॉप्टर से की जानी वाली पुष्प वर्षा जनमानस के मन को उल्लसित कर देती है। सड़क के दोनों ओर श्रद्धालु नारे लगाते हुए पारम्परिक ढंग से अखाड़ों का स्वागत कौतुहल के साथ करते हैं।

17.16 2025 जनवरी में लगने वाले प्रयाग कुम्भ में शाही/राजसी स्नान

2025 जनवरी में होने वाले कुम्भ का प्रारंभ पौष पूर्णिमा से होगा तथा इसका समापन महाशिवरात्रि के स्नान के बाद होगा। इस कुम्भ के अवसर पर छह राजसी स्नान होंगे।

राजसी स्नान की तिथियाँ

1. 13 जनवरी, 2025
2. 14 जनवरी, 2025
3. 29 जनवरी, 2025
4. 3 फरवरी, 2025
5. 12 फरवरी, 2025
6. 26 फरवरी, 2025

मुख्य पर्व

- पौष पूर्णिमा
मकर संक्रांति
मौनी अमावस्या
बसंत पंचमी
माघ पूर्णिमा
महाशिवरात्रि

सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्नान मौनी अमावस्या का माना जाता है। इस दिन ग्रहों की विशेष स्थिति से गंगा का जल अमृत के समान हो जाता है। ऐसी मान्यता है कि इस दिन स्नान करने से समस्त पाप धुल जाते हैं तथा सभी रोगों से मुक्ति मिल जाती है। पूर्वजों के निमित्त किये गए कार्यों का फल तुरन्त प्राप्त होता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गये प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अन्त में दिए गये बोध प्रश्नों के सम्भावित उत्तर से मिलान कीजिए।

1. 'प्रयाग' शब्द की व्युत्पत्ति बताइये।

.....

2. चारों पुरुषार्थों के नाम बताइए।

.....

3. अष्टमाधव के विभिन्न नाम लिखिए।

.....

4. त्रिवेणी के अन्तर्गत किन-किन नदियों की धाराएँ प्रवाहित होती हैं ?

.....

5. किस नदी का जल कभी दूषित नहीं होता है ?

.....

6. इस कुम्भ में कितने राजसी स्नान होंगे ?

.....

7. सबसे पहले कौन गंगा में स्नान करता है ?

.....

8. साधु संत स्नान करने कैसे आते हैं ?

.....

9. मौनी अमावस्या में क्या होता है ?

.....

10. राजसी स्नान के प्रमुख पर्व कौन-कौन हैं ?

.....

1.17 सारांश

प्रयाग की धरती की महिमा अनन्तकाल से वेद-वेदांगों के स्वर्णिम पृष्ठों पर अंकित है। 'प्र' उपसर्ग तथा 'यज्' धातु से निष्पन्न प्रयाग का अर्थ होता है – 'उत्कृष्टो यागो यत्र सः प्रयागः।' यज्ञों की निरन्तरता के कारण ही इस धरती को 'प्रयाग' नाम से अभिहित किया गया। प्रयाग का संकेत हमें ऋग्वेद में प्राप्त होता है जहाँ 'सितासिते सरिते यत्र संग' थे अर्थात् श्वेत और श्याम जल का जहाँ मिलन होता है। यह वह भूमि है जहाँ पर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी चारों पदार्थ प्राप्त होते हैं। यहाँ किया गया पाप और पुण्य दोनों अक्षय रहता है। इसलिए इसे अक्षय क्षेत्र भी कहा गया है।

भारत के मानचित्र को आलोकित करता हुआ प्रकाशपुंज स्वरूप पुण्यसलिला गंगा, सूर्यतनया यमुना तथा अन्तःसलिला सरस्वती का पवित्र संगम भारतीय मनीषा को सदैव आकर्षित करता रहा है। प्रयाग की पावन धरती ऋषि-मुनियों की धरती रही है और पावन भूमि सदैव आध्यात्म, संस्कृति एवं ऐतिहासिकता से सम्पन्न भूमि रही है।

तीर्थराज प्रयाग की महिमा का वर्णन करने के लिए पौराणिक मुनि-महात्मा-संतों ने पृथक् रूप से "प्रयाग माहात्म्य" का निरूपण किया है। पुराणों में लिखा गया है कि भोगों और मुक्ति को देने वाले इस प्रयाग के कल्याणकारी माहात्म्य का मैं (मार्कण्डेय मुनि) वर्णन करता हूँ। विष्णु, शंकर, ब्रह्मा आदि जितने भी देवता, ऋषि-मुनि, सरिताएँ, सागर, तपस्वी, गन्धर्व और अप्सराएँ हैं, वे सब इस प्रयागराज में विद्यमान हैं।

जो मनुष्य सदा तीर्थराज प्रयाग जाते रहते हैं और हमेशा उसका स्मरण करते हैं, वे सभी पापों से मुक्त होकर अन्त में मुक्ति पद को प्राप्त करते हैं। उनको सीधे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। इस संपूर्ण पृथ्वी पर जितने भी तीर्थ हैं, उन सबमें सर्वश्रेष्ठ तीर्थराज प्रयाग की महिमा वेदों से लेकर विभिन्न शास्त्रों, धर्मग्रंथों, पुराणों और परवर्ती साहित्य में प्रचुर रूप में उपलब्ध है।

इस सर्वश्रेष्ठ और सर्वसुलभ तीर्थ के दर्शन से ही जन्म-जन्मान्तरों के संचित पापों का नाश होकर सद्गति की प्राप्ति होती है। प्रयागराज तीर्थ के सेवन से जन्म-जन्मान्तरों के पापों का नाश हो जाता है। पूरे भारतवर्ष में नदियों एवं महानदियों के परस्पर मिलन अनेक स्थानों पर हुआ है, जिनका अपना अलग-अलग महत्त्व है। वेदों से लेकर परवर्ती समस्त भारतीय साहित्य में नदियों की महत्ता तथा पवित्रता का विस्तार से वर्णन प्राप्त होता है।

कई सौ योजनों की दूरी से भी “गंगा-गंगा” अथवा “नमामि गंगे” नाम-संकीर्तन करने से गंगा प्राणियों को पाप मुक्त कर देती है। पुराणों में विस्तार से प्रयाग और प्रयाग में संगम स्नान, गंगा माहात्म्य आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। माघ मास में एक मास पर्यन्त गंगा के तट पर कल्पवास करना पुण्यप्रदायी होता है। गंगा और यमुना का संगम तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। यह सभी मनोवांछित इच्छाओं को पूरा करने वाला तीर्थ है।

वर्तमान में, सभी 13 अखाड़ों के साधु-सन्यासी कुम्भ तथा अर्द्धकुम्भ के अवसर पर स्थल पर पहुँचते हैं। इनमें नागा साधुओं की परम्परा अद्भुत होती है। अपनी धार्मिक आध्यात्मिक परम्परा के अनुसार ये संसार से विरक्त वैरागी अपने लाव-लश्कर, हाथी-घोड़ों पर चाँदी के हौदे पर सवार होकर शाही स्नान के लिए जाते हैं। शून्य से अनन्त तक की यात्रा जनमानस के आकर्षण का केन्द्र होती है। कुम्भ के अवसर पर अमृतकाल में निर्धारित मुहूर्त एवं तिथि पर नागाओं के अखाड़ों एवं संत-महात्माओं के एक साथ किये जाने वाले स्नान को शाही स्नान या राजसी स्नान भी कहते हैं। इसका एक नाम राजयोगी स्नान भी है।

17.18 अभ्यास के प्रश्न

1. प्रयाग माहात्म्य का वर्णन कीजिए।
2. प्रयाग में गंगा स्नान का क्या महत्त्व है ?
3. गंगा की मोक्षदायिनी क्यों कहा जाता है ?
4. प्रयाग भौगोलिक स्वरूप क्या है ?
5. तीर्थ-दर्शन से क्या फल प्राप्त होता है ?

17.19 चर्चा के बिन्दु

1. प्रयाग माहात्म्य पर चर्चा कीजिए।
2. गंगा दर्शन के महत्त्व पर चर्चा कीजिए।
3. अष्टमाधव की स्थिति पर चर्चा कीजिए।
4. राजसी स्नान या शाही स्नान की तिथियों पर चर्चा कीजिए।

17.20 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ‘प्र’ उपसर्ग तथा ‘युज्’ धातु से प्रयाग शब्द की उत्पत्ति हुई है।
2. धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष।
3. अष्टमाधव के नाम इस प्रकार हैं — १. शंखमाधव, २. चक्रमाधव, ३. गदामाधव, ४. पद्ममाधव, ५. अनन्तमाधव, ६. बिन्दुमाधव, ७. मनोहरमाधव और ८. असिमाधव।
4. प्रयागराज की त्रिवेणी में गंगा, यमुना तथा सरस्वती की धाराएँ प्रवाहित हैं।
5. गंगा नदी के जल को कभी भी दूषित नहीं माना जाता है।

6. इस (2025) कुम्भ में पाँच राजसी स्नान होंगे।
7. सबसे पहले नागा साधुओं के स्नान की परम्परा है।
8. साधु-संत गाजे-बाजे के साथ हाथी-घोड़े तथा पालकियों पर सवार होकर स्नान के लिए आते हैं।
9. मौनी अमावस्या के दिन संगम का जल अमृतमय हो जाता है।
10. राजसी स्नान के मुख्य पर्व पौष पूर्णिमा, मकर संक्रान्ति, मौनी अमावस्या, बसंत पंचमी तथा महाशिवरात्रि हैं।

17.21 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. प्रयागराज कुम्भ (2019), कुम्भ मेला एक परिचय, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश
2. अग्रवाल, स्मिता (2019), प्रयाग माहात्म्य और कुम्भ, अर्पित प्रकाशन, झूंसी, इलाहाबाद।
3. अग्रवाल, मीनू रानी (2013), कुम्भ पर्व प्रयाग, राजपाल एंड कम्पनी, इलाहाबाद।

इकाई – 18 : प्रयागराज की धार्मिक परम्पराएँ

इकाई की रूपरेखा

- 18.0 प्रस्तावना
- 18.1 उद्देश्य
- 18.2 प्रयागराज में दान की परम्परा
- 18.3 प्रयागराज में वपन (मुण्डन) की परम्परा
- 18.4 प्रयागराज में पिण्डदान एवं श्राद्ध की परम्परा
- 18.5 अक्षयवट का पूजन
- 18.6 पंचकोशी (क्रोशी) परिक्रमा
- 18.7 प्रयाग में त्रिवेणी के तट पर कल्पवास
- 18.8 गंगा-स्नान की धार्मिक परम्परा
- 18.9 प्राणोत्सर्ग की परम्परा
- 18.10 सारांश
- 18.11 अभ्यास के प्रश्न
- 18.12 चर्चा के बिन्दु
- 18.13 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 18.14 कुछ उपयोगी-पुस्तकें

18.0 प्रस्तावना

कुम्भ भारतवर्ष के चारों स्थानों – हरिद्वार, नासिक, उज्जैन तथा प्रयाग में प्रत्येक 12 वर्षों के अन्तराल पर लगता है। नदियों से घिरे होने के कारण ही प्राचीन काल से यहाँ यह मेला या पर्व आयोजित हो पाया क्योंकि किसी नागरीय संस्कृति के विकसित होने में वहाँ के संसाधनों का भी महत्त्व होता है। इस दृष्टि से प्रयाग का विशेष महत्त्व है क्योंकि यहाँ तीन नदियों का संगम है। इसलिए यहाँ आयोजित होने वाले कुम्भ पर्व का विशेष धार्मिक महत्त्व होता है। यहाँ की भूमि प्राचीन काल से ही धर्म-कर्म की भूमि मानी गई है। यहाँ किये गए सभी धार्मिक कार्यों का कई गुना फल प्राप्त होता है। इसलिए यहाँ दान, मुण्डन, पितृ तर्पण, शरीर त्याग आदि धार्मिक कार्यों को सम्पन्न करने में जनसामान्य की अधिक रुचि होती है। वर्तमान में भी जनमानस गंगा जी, यमुना के प्रति बहुत अधिक आस्था रखता है और त्रिवेणी दर्शन-स्नानादि क्रियाएँ सम्पन्न करता है। इसके पहले की इकाई में हम प्रयाग महात्म्य तथा गंगा जी का महत्त्व, स्नान का महत्त्व आदि की जानकारी दी जा चुकी है।

प्रयाग की त्रिवेणी पर लाखों लोग प्रतिवर्ष स्नान करने तथा मुण्डन आदि के लिए आते हैं। आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिक यहाँ देहान्त के बाद परिजनों के शव की अत्येष्टि गंगा के किनारे लाकर करते हैं। उनका मानना है कि इस कार्य से उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हो जाएगी। प्रयागराज का कुम्भ पर्व एक विशेष पर्व है क्योंकि केवल यहीं त्रिवेणी तट पर कल्पवास करने का धार्मिक विधान है। अन्य किसी भी स्थान पर मास-पर्यन्त कल्पवास करने का कोई विधान शास्त्रों में नहीं है। प्रस्तुत इकाई में प्रयागराज की धार्मिक परम्पराओं का विवेचन किया गया है—

18.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. प्रयागराज में किये जाने वाले धार्मिक कार्यों को समझ सकेंगे।
2. प्रयाग में दान की प्रक्रिया समझ सकेंगे।
3. मुण्डन की परम्परा को समझ सकेंगे।
4. पिण्डदान की परम्परा को समझ सकेंगे।
5. कल्पवास की प्रक्रिया को जान सकेंगे।
6. आत्मोत्सर्ग के माध्यम से त्याग की भावना को समझ सकेंगे।

18.2 प्रयागराज में दान की परम्परा

कलियुग में दान को ही सर्वोत्तम धर्म माना गया है अतः इसे गृहस्थों के लिए अनिवार्य माना गया है। दान दानदाता को देवत्व की प्राप्ति कराता है – **देवः दानाद्वा, द्योतनाद्वा** – ऋग्वेद 1/1/1 पर सायण भाष्य।

भू-लोक पर अनेकों तीर्थ हैं और उन पर भी किये गये दान-पुण्य का कम महत्त्व नहीं है, परन्तु प्रयाग में दान करने वाले दानी को महान पुण्यों, अनन्त कामनाओं और दुर्लभ फलों की प्राप्ति होती है, क्योंकि वे अक्षय फलों को देने वाले होते हैं। देवताओं द्वारा संपोषित इस यज्ञ-भूमि पर किया गया थोड़ा-सा भी दान विशाल फल को देने वाला होता है और उसका प्रभाव अनन्त काल तक बना रहता है।

“मत्स्यपुराण” तथा पद्मपुराण में प्रयाग की यात्रा और वहाँ पर किये गये दान-पुण्य का तथा उससे प्राप्त होने वाले फल का विस्तार से उल्लेख किया गया है। इसमें एक स्थान (१०४/१८) पर लिखा है कि तीर्थ यात्रा के इच्छुक व्यक्ति को प्रयाग जाना चाहिए और वहाँ पर एक मास तक निवास करना चाहिए। वहाँ दान-पुण्य करना चाहिए। इसमें (१०५/१६-१८ पर) कपिला गाय के दान की भी बड़ी प्रशंसा की गई है—

गंगायमुनयोर्मध्ये यस्तु मां संपृच्छति।

स गोराम समाजदीनि लभते स्वर्गमुत्तमम्॥

— मत्स्य पुराण – 105/13

माघमास में तिल दान की भी अनन्त महिमा बताई गई है —

तस्मास्माद्ये प्रयत्नेन तिल देयं नृपोत्तमम् — पद्मपुराण — 6/124/27

कन्यादान, जलदान, तुलादान, हिरण्यगर्भदान, सहस्रगोदान — ग्रामदान, विद्यादान, स्वर्ण गौ, स्वर्ण अश्व, पृथिविदान, पुस्तकदान, फलदान, गजदान, शैव्यादान, ताम्बूलदान, तिलदान आदि को महादान माना गया है। यहाँ किया गया गुप्तदान, वेणीदान, स्वस्वदान विशेष महत्त्व रखता है — **‘तत्र दानं प्रशंसन्ति नियमांश्च तथैव च’** — पद्मपुराण — 6/25/22

सम्राट हर्षवर्धन के प्रत्येक 05 वर्षों के बाद प्रयाग आकर अपना सर्वस्वदान करने से कौन अनभिज्ञ है। इसी प्रकार यहाँ पर कन्या-विवाह (कन्या-दान) का भी विशेष महत्त्व बताया गया है।

18.3 प्रयागराज में वपन (मुण्डन) की परम्परा

काशी खण्ड में वर्णन है कि प्रयागराज में किये गये वपन (मुण्डन) का, गया में किये गये पिण्डदान, कुरुक्षेत्र के दान तथा काशी क्षेत्र में देह छोड़ने से भी अधिक महत्त्व है। यहाँ के मुण्डन से सभी फल एक साथ प्राप्त हो जाते हैं। प्रयाग में विधवाओं और सुहागिनों द्वारा मुण्डन कराने की भी परम्परा रही है। सुहागिनों को पति की आज्ञा से, अपने सौभाग्य की अभिवृद्धि के लिये अपनी चोटी (वेणी) को काटकर उस पर मंगल द्रव्य हल्दी, कुमकुम आदि रखकर संगम में प्रवाहित करने का विधान है। प्रयाग के अलावा अन्य तीर्थ-स्थलों पर नारी के मुण्डन अथवा वेणी दान की परम्परा नहीं है, ऐसा शास्त्रकार कहते हैं। ब्रह्मपुराण में उल्लेख है —

स्त्रीणां सभतृकाणां सर्वपापापनुत्तये।

प्रयागे वपनं कार्यम् न्यायक्षेत्रे कदाचन ।।
 अकालेऽप्यथवाकाले रात्रावहनि सन्ध्ययोः ।
 निशिद्धेऽपि दिने कुर्यात् प्रयागे वपन सदा ।।
 किं गया पिण्डदानेन, काश्यां मरणेन किम् ।
 किं कुरुक्षेत्रे दानेन, प्रयागे वपनं यदि ।।

18.4 प्रयागराज में पिण्डदान एवं श्राद्ध की परम्परा

प्रयागराज में पितरों का श्राद्ध और पिण्डदान करने से महान पुण्य मिलता है। विभिन्न ग्रन्थों में वर्णित है कि तीर्थों पर पितरों का निवास स्वयमेव होता है। रामायण में वर्णन प्राप्त होता है कि भरत जन राम को मनाने चित्रकूट के मार्ग में प्रयाग आते हैं तो वहाँ अपने स्वर्ग सिधारे पिता के पारलौकिक कल्याण के लिए गंगा जी के तट पर जलाञ्जलि देने की इच्छा व्यक्त करते हुए कहते हैं –

दातुं च तावदिच्छामि स्वर्गतस्य महीपतेः ।
 और्ध्वदेहनिमित्तार्थमवतीर्योदकं नदीम् ।।

— वाल्मीकि रामायण

तीर्थों पर होने वाले श्राद्ध-कर्म से पितरों को परम तृप्ति प्राप्त होती है। वायु पुराण (११०/५१-५२) में पिण्डदान का जो मंत्र द्रष्टव्य है, उसका आशय है – “इस तीर्थ पर मैं अपने पितृकुल, मातृकुल, गुरुकुल तथा ऐसे लोग जिन्हें अपने परिवार से पिण्ड नहीं मिलने वाला है, जो अज्ञात हैं, उन सभी को मैं यह पिण्ड दे रहा हूँ। यह पिण्ड उन्हें बिना समाप्त हुए प्राप्त हो।”

अनेक ऐतिहासिक अभिलेखों में प्रयाग में आत्मोसर्ग करने उल्लेख मिलता है। अफसड़ लेख से कुमारगुप्त के शरीरान्त का तथा मऊ चन्देल लेख से अनन्त द्वारा गंगा यमुना के जल में जल समाधि लेने का उल्लेख मिलता है। गांगेयदेव ने अपनी सौ रानियों के साथ प्रयाग में आत्मोसर्ग किया था तथा उनके पुत्र यशःकर्ण ने पिता का श्राद्ध तर्पण प्रयाग में किया था।

18.5 अक्षयवट का पूजन

अक्षयवट को पुराणों में आदिवट कहा गया है जो प्रलय और कल्पान्तर के बाद भी अक्षय बना रहता है। यहाँ भगवान नारायण, देवी महालक्ष्मी, देवी पार्वती, भगवान भोलेनाथ और करोड़ों देवता निवास करते हैं। अनेक शास्त्रों में वर्णन प्राप्त होता है कि यह अक्षयवट अनेक सिद्धियों को देने वाला है। इसके स्मरण से ही सारे पाप धुल जाते हैं। इसके दर्शन मात्र से सभी पुण्यों का फल प्राप्त हो जाता है। पद्मपुराण में अक्षयवट की महिमा इस प्रकार की गई है—

आदिवटः समाख्यातः कल्पान्तेऽपि च दृश्यते ।
 शेते विष्णुर्यस्य पत्रे अतो अयमव्ययः स्मृतः ।।

अर्थात् अक्षयवट आदिवट के नाम से विख्यात है और कल्प के अन्त (प्रलय) में भी स्थित रहता है। उसके पत्तों पर भगवान विष्णु विश्राम करते हैं। इसलिए उसको अक्षय (अव्यय) वट कहा गया है। ब्रह्मपुराण में भी वर्णित है—

(१) साक्षात् विष्णु अक्षयवट का मूल (जड़) हैं। माँ लक्ष्मी स्कन्ध (तना) हैं, देवी सरस्वती उसके पत्र और देवाधिदेव शंकर पुष्प तथा फल ब्रह्मा हैं। इन सबके आधार (मूल) में भगवान विष्णु हैं।

(२) प्रयागराज के इस अक्षयवट में सभी वेद, शास्त्र, पुराण तथा सम्पूर्ण दान-तीर्थ और व्रत विराजमान हैं।

विभिन्न विद्वानों का मत है कि अक्षयवट के नीचे प्राणोत्सर्ग या आत्महत्या करने से मुक्ति प्राप्त होती है और आत्महत्या का पाप भी नहीं लगता। अक्षयवट के बारे में काफी मतभेद है। “रामायण” (अयो. ५५/४-६) में अक्षयवट

को श्यामवट कहा गया है। हवेनत्सांग (७वीं शती) ने अक्षयवट को संगम के पश्चिम दिशा में होना बताया है। ऐसा लगता है कि किले का निर्माण करते समय अकबर ने उसे कटवा दिया था, परन्तु “अक्षय” होने के कारण वह नष्ट न हो सका। वाल्मीकि रामायण में वनगमन के समय देवी सीता द्वारा अक्षयवट की पूजा-अर्चना का प्रसंग प्राप्त होता है। भरद्वाज मुनि श्यामवृक्ष (अक्षयवट) के दर्शन पूजन की आज्ञा सीता जी को देते हैं –

ततो नयग्रोधमासाधमहान्तं हरितच्छदम्।
 परीतं बहुभिवृक्षै श्यामं सिद्धोपसेवितम्॥
 तस्मिन् सीताघजलिं कृत्वा प्रयुञ्जीताशिशं क्रियाम्।
 समासाद्य च तं वृक्षं वसेद् वातिक्रमेत वा॥

18.6 पंचकोशी (क्रोशी) परिक्रमा

पुराणों में लिखा है कि संगम से पाँच कोस पूर्व में दुर्वासा ऋषि के आश्रम (कंकराकोटवा) से पश्चिम में पाँच कोस (वनखण्डी) पर शिव के स्थान से दक्षिण की ओर पाँच कोस पर पर्णास मुनि के आश्रम (पनासा क्षेत्र) से उत्तर की तरफ पाँच कोस पर पण्डलेश्वरनाथ (पड़िला महादेव) तक का क्षेत्र पंचक्रोशी या पंचकोशी के नाम से जाना जाता है।

इस परिक्रमा को संगम से शुरू करके अरैल के सुधारस आदि तीर्थों से होते हुए वेणीमाधव व सोमेश्वरनाथ जी के मंदिर तक जाना चाहिए। बाद में गंगातट पर स्थित कुबेरतीर्थ, वायुतीर्थ आदि तीर्थों के दर्शन करते हुये नागेश्वर के निकट से कम्बलाश्वतरनाथ (छिवकी स्टेशन के पास) रामसागर तालाब पर रात्रि में विश्राम करना चाहिए। बीकर में शिव दर्शन के पश्चात् यमुना के पार बनखण्डी महादेव का दर्शन कर बेगमसराय होते हुए गंगा के पार पड़िला महादेव के मानस तीर्थ और नागेश्वर शिव के पास छतनाग में रुकना चाहिए। तदुपरान्त शंखमाधव, व्यास आश्रम, समुद्रकूप तथा ऐलतीर्थ आदि का दर्शन करते हुए दशाश्वमेध घाट पर आना चाहिए। वहाँ से गंगा पार करके अक्षयवट के दर्शन के बाद संगम में स्नान करके पंचक्रोशी यात्रा को समाप्त करना चाहिए।

पंचक्रोशी यात्रा करने में अक्षम, कमजोर, वृद्ध यात्रियों को अन्तर्वेदी की परिक्रमा करके अपने मनोरथ को पूर्ण करना चाहिए। अन्तर्वेदी की यात्रा संगम से शुरू करके अक्षयवट होते हुए यमुना के किनारे-किनारे मनकामेश्वरनाथ और बलुवाघाट से सिंधुसागर पर जाना चाहिए। मीरापुर में ललिता देवी के दर्शन करके अतरसुइया से होकर गड़हीसराय के वरुणकूप का दर्शन करना चाहिए। तत्पश्चात् सूर्यकुण्ड होकर भरद्वाज आश्रम पहुँचें और विश्राम करें। तदनन्तर नागवासुकि, दारागंज के वेणीमाधव, दशाश्वमेध में शिव के दर्शनों के बाद दुर्वासा तीर्थ से वट वृक्ष तक जाकर संगम स्नान करने के बाद अन्तर्वेदी यात्रा को समाप्त करना चाहिए।

18.7 प्रयाग में त्रिवेणी के तट पर कल्पवास

प्रयाग के तट पर प्रतिवर्ष माघमास में कल्पवास करने की धार्मिक परम्परा है। इसका महत्त्व कुम्भ के विशेष अवसर पर और अधिक बढ़ जाता है। प्रयाग में प्रत्येक 12 वर्षों के अन्तराल में लगने वाला कुम्भ पर्व माघमास में ही लगता है जिसका आरंभ मकर संक्रान्ति के पर्व से होता है। प्रत्येक 12वें वर्ष जब बृहस्पति मेष राशि में तथा सूर्य और चन्द्र मकर राशि में होते हैं तब तीर्थराज प्रयाग में माघमास की अमावस्या के दिन ‘कुम्भ’ के अमृतकाल का दुर्लभ योग प्राप्त होता है। माघमास में प्रयाग में रहकर नियमपूर्वक मास पर्यन्त त्रिवेणी तट पर ‘कल्पवास’ और संगम स्नान करने से उत्तमोत्तम फल की प्राप्ति होती है और मनुष्य को स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

प्रयाग में माघमास में कल्पवास का महत्त्व अत्यधिक माना गया है सभी तीर्थों में श्रेष्ठ होने के कारण प्रयाग को तीर्थराज कहा गया है। मत्स्यपुराण में कहा गया है कि प्रयाग में प्रवेश मात्र ही पापों से छुटकारा दिलाने वाला है –

प्रयागस्य प्रवेशे तु पापं नश्यति तत्क्षणात्

— मत्स्यपुराण 14/42

प्रयाग में निवास करने के गर्व से ऋषि-मुनि तथा देवतागण भी अछूते नहीं थे। कूर्मपुराण में वर्णन प्राप्त होता है –

तत्र देवा महादेवो रुद्रेऽवात्सीन्नरेश्वर।

समास्ते भगवान् ब्रह्मा स्वयम्भूः सहदेवतैः॥ – कूर्मपुराण 36/16

पद्मपुराण में भी प्रयाग में वास करने का माहात्म्य वर्णित है –

प्रयागं तीर्थमाश्रित्य वैकुण्ठं यान्ति तेऽचिरात्।

ये वसिष्ठादयस्तत्र ऋशयः सनकादयः॥ – पद्मपुराण – 6/24

माघमास में गंगा, यमुना तथा सरस्वती के संगम क्षेत्र में नियमपूर्वक वास यज्ञ के समान फलदायी माना गया है। इस कल्पवास में गृहस्थ को पति-पत्नी के साथ नियमानुसार तथा विधवा स्त्री को अकेले नियमानुसार त्रिवेणी के तट पर मास पर्यन्त निवास कर प्रतिदिन ब्राह्मण भोजन, भूमि शयन, दानादि करना चाहिए। इस अवसर पर दीपदान का भी विशेष महत्त्व शास्त्रों में बताया गया है। कल्पवास का संकल्प पूर्ण होने पर या 12 वर्षों तक निरन्तर कल्पवास कर लेने पर इसके उद्घापन का भी विधान किया गया है।

प्राचीनकाल से आजतक भारतीय जनमानस में कल्पवास के प्रति आस्था बनी हुई है। लाखों श्रद्धालु प्रतिवर्ष माघमास में और कुम्भ के अवसर मोक्षदायिनी गंगा के तट पर कल्पवास करते हैं।

18.8 गंगा-स्नान की धार्मिक परम्परा

प्रयाग में मोक्षदायिनी गंगा, सूर्यतनया यमुना तथा अन्तःसलीला सरस्वती के संगम स्थल पर स्नान की महिमा का अनन्त वर्णन शास्त्रों एवं पुराणों में भरा पड़ा है। सभी कर्मकाण्डों, धार्मिक क्रियाओं में गंगा स्नान (नदी स्नान) का अत्यधिक महत्त्व है। लाखों तीर्थयात्री प्रतिवर्ष माघ के महीने में प्रयाग आकर आस्था की डुबकी लगाते हैं। यही संख्या कुम्भ में करोड़ों तक पहुँच जाती है। मान्यता है कि संगम में स्नान करने से आत्मा शुद्ध होती है, पिछले जन्मों के पापों का विनाश होता है, देवी-देवता प्रसन्न होते हैं और हमें मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। पूर्व की इकाई में गंगा स्नान से मिलने वाले फलों को हम पढ़ चुके हैं।

प्रयाग में गंगा स्नान का अत्यधिक महत्त्व है। यहाँ के हजारों स्थानीय लोग प्रतिदिन गंगा स्नान करते हैं। गंगाजल पान तथा आचमन का भी अत्यधिक महत्त्व है। प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान गंगाजल के बिना अधूरा रह जाता है।

18.9 प्राणोत्सर्ग की परम्परा

प्राचीनकाल के कई ऐसे प्रसंग प्राप्त होते हैं जब लोगों ने यहाँ आकर अपना प्राणोत्सर्ग किया था। कायाक्लेश द्वारा भी प्राणोत्सर्ग का उल्लेख मिलता है। हवेनसांग ने वट-वृक्ष से कूद कर प्राण त्याग करने का उल्लेख किया है। प्रयाग में प्राणों का त्याग करने की परम्परा का उल्लेख साहित्यिक एवं अभिलेखीय ग्रंथों में भी प्राप्त होता है। वर्तमान में, संगम के तट पर अन्त्येष्टि की परम्परा है। दूर-दराज से लोग यहाँ अपने आत्मीय जनों का शव लेकर आते हैं तथा गंगा के किनारे उन्हें मुखाग्नि देते हैं।

संभवतः नदी संस्कृति के महत्त्व के कारण ही यह परम्परा यहाँ विकसित हुई होगी। सनातन संस्कृति के कर्मकाण्ड में नदियों का तथा जल का बहुत अधिक महत्त्व बताया गया है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गये प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अन्त में दिए गये बोध प्रश्नों के सम्भावित उत्तर से मिलान कीजिए।

1. प्रयाग की किसी एक धार्मिक परम्परा के विषय में बताइये।

2. माघ-मास में किये जाने वाले दान की वस्तुओं के नाम बताइये।

3. अक्षयवट के दर्शन से क्या फल प्राप्त होता है ?

4. प्रयाग में किस परिक्रमा का महत्त्व है ?

18.10 सरांश

कुम्भ भारतवर्ष के चारों स्थानों — हरिद्वार, नासिक, उज्जैन तथा प्रयाग में प्रत्येक 12 वर्षों के अन्तराल पर लगता है। नदियों से घिरे होने के कारण ही प्राचीन काल से यहाँ यह मेला या पर्व आयोजित हो पाया क्योंकि किसी नागरीय संस्कृति के विकसित होने में वहाँ के संसाधनों का भी महत्त्व होता है। इस दृष्टि से प्रयाग का विशेष महत्त्व है क्योंकि यहाँ तीन नदियों का संगम है। यहाँ की भूमि प्राचीन काल से ही धर्म-कर्म की भूमि मानी गई है। यहाँ किये गए सभी धार्मिक कार्यों का कई गुना फल प्राप्त होता है। वर्तमान में भी जनमानस गंगा जी, यमुना के प्रति बहुत अधिक आस्था रखता है और त्रिवेणी दर्शन-स्नानादि क्रियाएँ सम्पन्न करता है। प्रयाग की त्रिवेणी पर लाखों लोग प्रतिवर्ष स्नान करने तथा मुण्डन आदि के लिए आते हैं। आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिक यहाँ देहान्त के बाद परिजनों के शव की अत्येष्टि गंगा के किनारे लाकर करते हैं।

18.11 अभ्यास के प्रश्न

1. प्रयाग में की जाने वाली धार्मिक प्रक्रियाओं को संक्षिप्त उल्लेख कीजिए।
2. 'कल्पवास' किसे कहते हैं ? इसकी अवधि क्या है ?
3. प्रयाग में होने वाले मुण्डन संस्कार का फल बताइए।
4. प्राणोत्सर्ग की परम्परा से क्या समझते हैं ?

18.12 चर्चा के बिन्दु

1. प्रयाग में किये जाने वाले धार्मिक कृत्यों पर चर्चा कीजिए।
2. प्राणोत्सर्ग की परम्परा पर चर्चा कीजिए।

18.13 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. प्रयाग में संगम के किनारे मुण्डन संस्कार का विशेष महत्त्व है। यहाँ विधवा स्त्रियों के मुण्डन का तथा सौभाग्यवती स्त्रियों के वेणीदान का विशेष महत्त्व है।
2. माघ-मास में तिलदान, जलदान, तुलादान, कन्यादान, गोदान, स्वर्णदान, शैय्यादान आदि का विशेष महत्त्व है।
3. अक्षयवट के दर्शन से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं।
4. प्रयाग में पंचकोशी परिक्रमा का महत्त्व है।

18.14 कुछ उपयोगी-पुस्तकें

1. रामनरेश त्रिपाठी, कुम्भ दर्शन – 2001, इलाहाबाद, सूचना सम्पर्क एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश
- 2- प्रदीप कुमार केसरवानी, प्रयाग कुम्भ, विश्व की सांस्कृतिक विरासत, 2019 – सम्राट हर्षवर्द्धन शोध संस्थान, प्रयागराज – ISBN – 978-93-84999-02-5
3. रामनरेश त्रिपाठी, त्रिवेणिका, माघ मेला त्रिवेणी महोत्सव, 2008 – त्रिवेणी महोत्सव समिति, इलाहाबाद
- 4- मीनू अग्रवाल, कुम्भ पर्व प्रयाग, 2013 – राजपाल एंड कम्पनी, इलाहाबाद – ISBN – 81-89538-13-6

इकाई – 19 : प्रयागराज के ऐतिहासिक एवं धार्मिक दर्शनीय स्थल

इकाई की रूपरेखा

- 19.0 प्रस्तावना
- 19.1 उद्देश्य
- 19.2 प्रयागराज के ऐतिहासिक दर्शनीय स्थल
 - 19.2.1 भरद्वाज आश्रम
 - 19.2.2 श्रृंगवेरपुर
 - 19.2.3 कौशाम्बी
 - 19.2.4 लाक्षागिरि
 - 19.2.5 झूंसी (प्रतिष्ठानपुर)
 - 19.2.6 कड़ा
 - 19.2.7 भीटा
 - 19.2.8 अरैल
 - 19.2.9 संगम दुर्ग (किला)
 - 19.2.10 खुसरो बाग
 - 19.2.11 मिंटो पार्क
 - 19.2.12 अशोक स्तम्भ
 - 19.2.13 मेयो मेमोरियल हॉल
 - 19.2.14 आनन्द भवन
 - 19.2.15 इलाहाबाद विश्वविद्यालय
 - 19.2.16 कम्पनी बाग एवं आजाद पार्क
- 19.3 प्रयाग के धार्मिक दर्शनीय—स्थल
 - 19.3.1 द्वादश—माधव
 - 19.3.2 श्री तुलसीदासजी का स्थान
 - 19.3.3 सरस्वती कूप
 - 19.3.4 बंधवा के हनुमानजी
 - 19.3.5 पातालपुरी मंदिर
 - 19.3.6 शंकर विमान मण्डपम्
 - 19.3.7 दशाश्वमेध घाट
 - 19.3.8 समुद्र कूप
 - 19.3.9 वेणीमाधव मन्दिर
 - 19.3.10 नागवासुकी मन्दिर

- 19.3.11 मनकामेश्वर मन्दिर
- 19.3.12 राम बाग
- 19.3.13 अलोपीदेवी मन्दिर
- 19.3.14 शिवकुटी मन्दिर (शिरोकोटि)
- 19.3.15 नारायण आश्रम
- 19.3.16 श्री हनुमत निकेतन
- 19.3.17 ऑल सेन्ट्स कैथीड्रल (पत्थर का गिरजाघर)
- 19.3.18 कमोरिननाथ महादेव मंदिर
- 19.3.19 गुरुद्वारा पक्की संगत
- 19.3.20 ललिता देवी मंदिर
- 19.3.21 कल्याणी देवी मंदिर
- 19.3.22 पंचमुखी महादेव मंदिर
- 19.3.23 बलुआघाट और बारहदरी
- 19.3.24 नवग्रह मंदिर
- 19.3.25 देवराहा बाबा आश्रम
- 19.4 प्रयागराज के तीर्थ
- 19.5 सारांश
- 19.6 अभ्यास के प्रश्न
- 19.7 चर्चा के बिन्दु
- 19.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 19.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

19.0 प्रस्तावना

कुम्भ प्रत्येक वर्षों के बाद आयोजित होने वाला एक ऐसा पर्व है जिसमें प्राचीन काल से ही लाखों लोग बिना किसी आमंत्रण के स्वतः ही प्रयाग आते रहे हैं। भारतीय संस्कृति तथा विशेषकर ग्रामीण लोक संस्कृति का उत्कर्ष धार्मिक एवं सामाजिक आयोजन पर अधिक होता है। विशेषरूप से जब प्रयाग को तीर्थराज को संज्ञा प्राप्त है, ऐसे में बड़ी संख्या में श्रद्धालु कुम्भ पर्व पर तथा उससे अतिरिक्त वर्ष पर्यन्त प्रयागराज आते रहते हैं। यहाँ संगम में स्नान का विशेष महत्त्व होता है। प्रयागाष्टक में कहा गया है —

श्रुति प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं पुराणमप्यत्र परं प्रमाणम् ।

यत्रास्ति गंगा यमुना प्रमाणं स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥

तीर्थराज प्रयाग अपने में अनेक तीर्थों को समेटे हुए है —

त्रिवेणीं माधवं सोमं भरद्वाजं च वासुकिम् ।

वन्देऽक्षयवटं शेशं प्रयागं तीर्थनायकम् ॥

त्रिवेणी, द्वादश माधव, अक्षयवट आदि तीर्थों के कारण प्रयाग 'तीर्थराज' की गरिमा को धारण करता है। इन सब के अतिरिक्त प्रयाग का ऐतिहासिक महत्त्व भी बहुत अधिक रहा है। रामायण, महाभारत के काल से ही प्रयाग

का वर्णन मिलने लगता है। झूँसी भी चन्द्रवंशीय राजाओं की राजधानी हुआ करता था। आज भी अनेक ऐतिहासिक एवं धार्मिक दर्शनीय स्थल प्रयाग में हैं। जिनका अपना-अपना विशेष महत्त्व है।

19.1 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद प्रयागराज के ऐतिहासिक स्थलों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- इस इकाई के अध्ययन के बाद प्रयाग के ऐतिहासिक महत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रयाग के दर्शनीय धार्मिक स्थलों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

19.2 प्रयागराज के ऐतिहासिक दर्शनीय स्थल

19.2.1 भरद्वाज आश्रम

प्रयाग के गंगा-यमुना के संगम स्थल के निकट ऋषि भरद्वाज का आश्रम स्थित है। इसका वर्णन बौद्ध ग्रंथ (दिव्यावदान, पृ. 315) तथा रामायण (अयो. 54/9) में है। वनवास के समय श्रीराम, लक्ष्मण तथा सीता के साथ भरद्वाज आश्रम आये थे तथा यहाँ से चित्रकूट गये थे।

ऐसा कहा जाता है कि गंगा उस समय इस आश्रम के पास ही बहती थी। यहाँ भरद्वाज ऋषि द्वारा स्थापित भारद्वाजेश्वर महादेव का लिंग है। उसके आस-पास अनेक देवी-देवताओं के मन्दिर हैं।



श्रीराम की खोज में जाते हुए भरतजी गुरु वशिष्ठ के साथ यहाँ से होकर गये थे। ऋषि भरद्वाज, आश्रम के कुलपति कहलाते थे। यह उस समय का बड़ा गुरुकुल था। हजारों मुनि एवं छात्र यहाँ विद्यादान प्राप्त करते थे। धर्म, ज्ञान तथा तीर्थ निवास की इच्छा से प्रयाग आने वाले अधिकांशतः लोग यहाँ अवश्य दर्शन करते हैं। यह स्थान पं. जवाहरलाल नेहरू के आवास आनन्द भवन के समीप पड़ता है।

19.2.2 शृंगवेरपुर

सिंगरौर (शृंगवेरपुर) भी प्रयाग का एक ऐतिहासिक स्थल है। भगवान राम ने वनवास के समय यहाँ पर गंगा को पार किया था। यह स्थान इलाहाबाद से 35 किलोमीटर (22 मील) दूर पश्चिम-उत्तर की ओर एक ऊँचे से कगार पर है।

कहा जाता है कि यहाँ शृंगी ऋषि का आश्रम था। शृंगी ऋषि, शमीक ऋषि के पुत्र थे तथा यहीं पर बरगद के पेड़ से लटककर तपस्या करते थे। महाराज दशरथ का पुत्रयेष्टि यज्ञ इन्होंने ही कराया था, जिससे राजा दशरथ को

चार पुत्र प्राप्त हुए थे—राम, भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न। यहीं गंगा तट पर श्रृंगी ऋषि की समाधि है। पुरातत्त्व की खुदाई में यहाँ हिन्दू—मुस्लिम काल के ढेर सारे सिक्के मिले हैं। वर्तमान में श्रृंगवेरपुर के घाट का सरकार द्वारा सौन्दर्यीकरण किया गया है।

19.2.3 कौशाम्बी

1949—1951 ई. तक किये गये अनुसंधानों से कौशाम्बी की ऐतिहासिकता महाभारतयुगीन मानी जाती है। लगभग 590 ई. पूर्व में वत्सराज उदयन के समय से कौशाम्बी का वर्णन प्राप्त होता है। नन्दों, मौर्यों और गुप्तों से भी कौशाम्बी का जुड़ाव रहा। यह स्थान ब्राह्मण, जैन तथा बौद्धों का आध्यात्मिक केन्द्र रहा है। यहीं पर छठें तीर्थंकर का जन्म हुआ था (आवस्सक निज्जुति, 382)। यहाँ पर पद्मप्रभु का मंदिर है, जिसमें चन्दनबाला की प्रतिमा स्थापित है। प्रयाग से लगभग 48 किलोमीटर (30 मील) दक्षिण—पश्चिम में यमुना तट पर स्थित कोसम स्थल को प्राचीन कौशाम्बी माना गया है। समुद्रगुप्त के स्तम्भ लेख में कौशाम्बी का उल्लेख हुआ है।

कौशाम्बी की खुदाई में घोषिताराम, कुक्कुटाराम और पावारिक (पावरिया) आलम्बन नामक तीन बौद्ध विहार के अवशेष प्राप्त हुए हैं। जिसका विस्तृत विवरण बौद्ध ग्रंथों तथा चीनी यात्रियों के यात्रा विवरणों से प्राप्त होता है —

1. थेर उरुधम्मरक्खित के नेतृत्व में घोषिताराम से लगभग तीस हजार भिक्षु ईशा पूर्व प्रथम शती में राजा दुड्ढगामिणी के शासन काल में लंका गये थे (महावंश, पृ. 228)।
2. फाह्यान (पाँचवीं शती) ने कौशाम्बी में अधिकांशतः हीनयान मत के अनुयायी बौद्ध स्थाविरों को देखा था।
3. सातवीं शती ई. में ह्वेनत्सांग ने दस से अधिक संघाराम को ध्वस्त अवस्था में देखा था।
4. सम्राट अशोक ने घोषिताराम के पास 200 फीट से ऊँचा एक स्तूप बनवाया था जो अब मात्र 91 फीट का रह गया है और चौकोर है। यहाँ बुद्ध तथा बोधिसत्त्वों तथा अन्य देवी—देवताओं की मूर्तियाँ थीं।

समय—समय पर यहाँ से प्राप्त सामग्रियों में अभिलेखों, विहारों तथा स्तूप के अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण कला—वस्तुएँ भी सम्मिलित हैं। यहाँ भूरे रंगवाले मिट्टी के बर्तन (750 ई.), चिकने काले मृणपात्र (600 ई. पूर्व से 100 ई. पूर्व तक) तथा चिकनी मिट्टी के पालिशदार काले बर्तन बनाने का उद्योग, भवन निर्माण के अवशेष (250 ई. पूर्व से 200 ई. तक), सिक्के, मनके, मुहरें और हथियार आदि तथा बहुसंख्यांक मूर्तियाँ शकों तथा पहवों से संबंधित एवं मृणमूर्तियाँ ब्राह्मण, बौद्ध और जैन तीनों धर्मों से सम्बन्धित प्राप्त हुई हैं।

19.2.4 लाक्षागिरि

यह प्राचीन ऐतिहासिक स्थल इलाहाबाद से लगभग 39 किलोमीटर पूर्व में तथा हंडिया स्टेशन से दक्षिण लगभग 5 किलोमीटर की दूरी पर है। 1951 ई. में इसकी खुदाई में जो वस्तुएँ मिली हैं उनमें मृणमूर्तियाँ, सुराहियों के टुकड़े, प्रस्तर प्रतिमाएँ, धातु के टुकड़े और दो सिक्के विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनसे इस स्थल का प्राचीन महत्त्व सिद्ध होता है। लाक्षागृह का अधिकांश अंश गंगा की धारा से कटकर विलुप्त हो गया है। यहाँ जैन तथा ब्राह्मण धर्मों के मन्दिर तथा अनेक देवी प्रतिमाएँ स्थापित थीं। इसका संबंध महाभारत के समय के लाक्षागृह से भी जोड़ा जाता है।

19.2.5 झूंसी (प्रतिष्ठानपुर)

गंगा के पार पूर्व में प्रयाग के प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों में झूंसी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पुराणों में इसे प्रतिष्ठानपुर कहा गया है। यह स्थान चन्द्रवंशीय राजाओं की राजधानी रहा है। चन्द्रवंशीय राजा पुरुरवा की राजधानी होने का उल्लेख कालिदास के प्रसिद्ध नाटक विक्रमोर्वशीय में प्राप्त होता है। समुद्रगुप्त के सम्मान में उनके आमात्य हरिश्चण का शिलालेख भी यहाँ प्राप्त हुआ है। यहाँ गंगा तटों को देखकर ऐसा लगता है कि झुंसी के भू—गर्भ में अनेक गढ़, मन्दिर तथा भवन समाये हुए हैं।

यहाँ पर विजयपालदेव के पौत्र तथा राज्यपालदेव के पुत्र त्रिलोचनपाल का एक 1027 ई. का दानपत्र प्राप्त हुआ है, जिसमें प्रतिष्ठानपुरवासी ब्राह्मणों के लिए एक गाँव दान में दिये जाने का उल्लेख हुआ है।

19.2.6 कड़ा

प्रयाग नगर से 58 किलोमीटर दूर स्थित कड़ा क्षेत्र एक महत्वपूर्ण स्थल है। इसका ऐतिहासिक महत्त्व मध्ययुगीन हिन्दू शासकों से प्रारम्भ होकर लगभग 600 वर्षों मुगलों के शासन तक मौजूद रहा। यहाँ एक ध्वस्त दुर्ग के अवशेष प्राप्त हुए हैं, जिससे महाराज जयचन्द ने बनवाया था। कड़ा से दो अभिलेख भी मिले हैं। पहला कन्नौज के परिहारवंशीय शासक यशपाल का (1035 ई.) और दूसरा रेवा नरेश रामचन्द्र (1559 ई.) का है।

शाहबुद्दीन गोरी ने जयचन्द को मारकर 12वीं शती में कड़ा को अपने अधिकार में कर लिया और प्रयाग को अपनी सूबेदारी बनाया। कुतुबुद्दीन ऐबक ने इस स्थान को अपने गुरु कुतुबुद्दीन मदनी को भेंट कर दिया था, जिसकी कब्र आज भी कड़े में मौजूद है। बाद में यहाँ खिलजियों, लोदियों और लोहानियों का भी शासन रहा। शाहशाह अकबर ने कड़ा को जिला बना दिया था, जिसमें लगभग चौदह परगने सम्मिलित थे।

19.2.7 भीटा

प्रयाग से पश्चिम की ओर लगभग 24 किलोमीटर पर यह स्थान है। विद्वानों ने भीटा को 'वीर चरित' में वर्णित प्राचीन विटभयपट्टन नामक नगर के रूप में माना है। जो तीर्थंकर महावीर के समय (500 ई. पूर्व) विकसित हुआ। जैन ग्रन्थ में इसे राजा उदयन की राजधानी भी बताया गया है।

भीटा के प्राचीन अवशेषों में नगर तथा गढ़ और अन्य अनेक ऐतिहासिक वस्तुएँ, जिनमें शिलालेख भी सम्मिलित हैं, प्राप्त हुई थीं। एक अन्य शिलालेख में यहाँ का नाम 'बिछग्राम' मिलता है।

19.2.8 अरैल

संगम के दक्षिण में यमुना के पार अरैल नाम का एक गाँव है। इसका प्राचीन नाम अलर्कनगर, अलर्कपुर अथवा अलर्कपुरी बताया जाता है। 'तीर्थचिन्तामणि' में प्रयाग के तीन कुण्डों में से एक अलर्कनगर में बताया गया है। इसका सम्बन्ध काशी के राजा दिवोदास के प्रपौत्र राजा अलर्क से माना जाता है।



मुगल शासन से पूर्व लगभग 13वीं शती में इस पर सोमवंशीय रायसेन का शासन था, जो कि मुस्लिम आक्रमणकारियों द्वारा मारा गया। वर्तमान में यमुना नदी पर नये पुल का निर्माण किया जा चुका है।

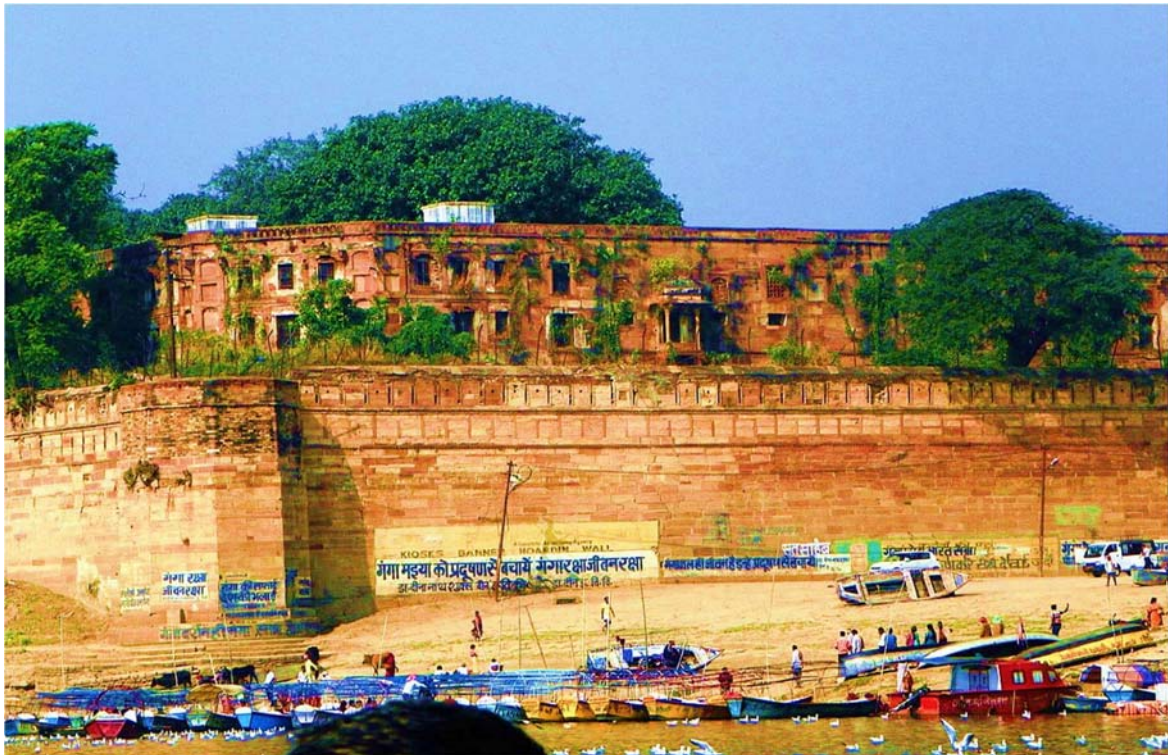
महाप्रभु चौतन्य यमुना पार कर यहीं वल्लभाचार्य से मिलने उनके आश्रम आये थे। यहाँ पर वल्लभाचार्य

(15वीं शती) द्वारा संस्थापित वैष्णव सम्प्रदाय की एक प्रसिद्ध गद्दी से इसकी प्राचीनता स्वयं सिद्ध होती है।

यहाँ प्रसिद्ध संत सच्चा बाबा का आश्रम तथा एक संस्कृत महाविद्यालय भी वर्तमान में है। महेश योगी जी का एक भव्य मन्दिर भी वर्तमान में निर्माणाधीन है।

19.2.9 संगम दुर्ग (किला)

अकबर के अमर स्मारकों में प्रयाग के संगम स्थल पर बना दुर्ग और बांध विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 14 नवम्बर, 1583 ई. को इसका निर्माण कार्य शुरू हुआ था। माना जाता है कि उस समय इसके निर्माण में लगभग 6 करोड़ 17 लाख 20 हजार 200 रुपये खर्च हुए थे।



आगरा और दिल्ली के दुर्गों की भाँति यह दुर्ग भी लाल पत्थर से निर्मित और लगभग वैसे ही विशाल द्वार वाला है। कहते हैं कि आठ महीने में किले का जितना भाग बनता था, वह वर्षाकाल में गंगा-यमुना के बहाव से कट जाता था। बादशाह ने चार बार प्रयत्न किया परन्तु विफल रहा। तब शहंशाह ने यहाँ के महान वैष्णव सन्त और सिद्ध पुरुष देवमुरारी जी से सहायता माँगी। स्वामी जी ने शहंशाह के दीवान को तुलसी दल और सफेद चन्दन देकर उसे गंगा-यमुना में डाल देने को कहा। ऐसा कहा जाता है कि स्वामी जी के इस उपाय के बाद कोई क्षति नहीं हुई और किला बनकर तैयार हो गया। पूरा किला चार मुख्य भागों में बँटा था। पहला, बादशाह के लिए दूसरा, बेगमों तथा शाहजादों के लिए तीसरा, अन्य परिवारजनों के लिए और चौथा, सैनिकों तथा नौकर-चाकरों के लिए था। अंग्रेजों का आधिपत्य होने के बाद 1838 ई. के लगभग इसका पुनर्निर्माण किया गया। अंग्रेजों ने इसको अपने शस्त्रागार तथा सैनिक छावनी के रूप में परिवर्तित कर दिया था।

प्रयाग की कलेक्टरी में सुरक्षित 1860 ई. की एक मिसिल से ज्ञात होता है कि इस किले में तेईस महल, तीन शयनागार, पच्चीस दरवाजे, तेईस बुर्जे, दो सौ सत्तर भवन, एक सौ छिहत्तर कक्ष, दो खासो आम, सत्तर तहखाने, सात दालान, बीस तबेले, एक बावड़ी, पाँच कूप और एक नहर (जमुना) थी। सेना के अधिकार क्षेत्र में होने के कारण इसके वर्तमान स्वरूप पर प्रकाश डालना संभव नहीं है।

19.2.10 खुसरो बाग

खुल्दाबाद क्षेत्र के लगभग सत्रह बीघे भूमि पर खुसरो बाग बना है। यहाँ शहंशाह जहाँगीर के पुत्र खुसरो की कब्र है जो पूर्व में गुम्बदनुमा इमारत में है।



पश्चिम की इमारत में जहाँगीर की पुत्री सुल्तानुन्निसा की कब्र है ऐसा कहा जाता है कि उसने अपने जीवनकाल में ही उसे बनवा दिया था। उत्तर व दक्षिण की ओर व बड़े-बड़े द्वार हैं। जो एक ओर खुल्दाबाद सब्जीमंडी तथा दूसरा लीडर रोड पर स्टेशन के सामने खुलता है। यहाँ कला और प्रकृति का सुन्दर समन्वय है।

19.2.11 मिंटो पार्क

1857 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन भारत से समाप्त होने के बावद इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया का शासन घोषित हुआ, जिसकी घोषणा वायसराय लार्ड मिंटो ने यमुना के तट पर किया। उन्हीं की स्मृति में वहाँ बाग और स्तम्भ लगवाकर उस स्थान का नाम मिंटो पार्क रखा गया जो वर्तमान समय में 'महामना मदन मोहन मालवीय पार्क' के नाम से जाना जाता है।

19.2.12 अशोक स्तम्भ

प्रयाग में सम्राट अशोक का स्तम्भ है। प्राचीन समय में लोग इसे 'भीम का गदा' भी कहते थे। इस स्तम्भ का ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत अधिक महत्त्व है। इसकी लम्बाई 35 फीट है। इस पर अंकित अभिलेख से पता चलता है कि यह ईस्वी सन् 232 से पहले स्थापित किया गया था। इसके मुख्य लेखों का महत्त्व इतिहास में बहुत अधिक है।



19.2.13 मेयो मेमोरियल हॉल

अर्ल आर्च मेओ भारत के गवर्नर जनरल थे, सन् 1872 में उनकी हत्या कर दी गयी। उन्हीं की स्मृति में लाल ईंटों का एक विशाल भवन बनवाकर लार्ड मेओ की संगमरमर की मूर्ति लगाई गई थी। शहर के मध्य में स्थित इस इमारत का नाम बदलकर अमिताभ बच्चन स्पोर्ट्स कॉम्प्लेक्स कर दिया गया है। यहाँ खेल-कूद का प्रशिक्षण दिया जाता है।



19.2.14 आनन्द भवन

भरद्वाज आश्रम के समीप ही पं. मोतीलाल नेहरू द्वारा बनवाया गया आनन्द भवन है, जहाँ स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की अनेक बैठकें हुआ करती थीं। पं. मोतीलाल नेहरू के पुत्र पंडित जवाहर लाल नेहरू भी यहीं रहते थे। उनकी पुत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी भी यहीं से कांग्रेस से जुड़ी थीं। आनन्द भवन अब राष्ट्रीय सम्पत्ति है। इस भवन के परिसर में एक वेधशाला है तथा यहाँ एक पुस्तक बिक्री स्थल भी है। यात्रियों की भीड़ यहाँ प्रतिदिन लगी रहती है।



19.2.15 इलाहाबाद विश्वविद्यालय

आनन्द भवन से थोड़ी दूरी पर इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय और उसके छात्रावास हैं। विश्वविद्यालय का विज्ञान विभाग म्योर सेंट्रल कॉलेज में लगता है जिसमें एक प्रक ऊँचा टावर और सुन्दर पत्थर का बना हाल है। इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय की इमारतें ऊँचे-ऊँचे गुम्बदों एवं मीनारों वाली हैं। इस पहले पूर्व के आक्सफोर्ड के नाम से जाना जाता था।



19.2.16 कम्पनी बाग एवं आजाद पार्क

नगर के उत्तरी भाग में दक्षिणी क्षेत्र के पास यह पार्क स्थित है। पहले इसके मध्य में महारानी विक्टोरिया की भव्य मूर्ति लगी थी जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हटा दी गयी है। इसके अन्दर एक पुस्तकालय है जिसमें पत्थर पर सुन्दर नक्काशी की हुई है। इसी पार्क के अन्दर देश के महान स्वतंत्रता सेनानी शहीद चन्द्रशेखर आजाद की आदमकद प्रतिमा लगाई गई है जहाँ पर चन्द्रशेखर आजाद ने ब्रिटिश सरकार से अन्तिम मोर्चा लिया था।



इस बाग के अन्दर डॉ. गंगानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत मानित विश्वविद्यालय, प्रयाग संगीत समिति, हिन्दुस्तानी एकादमी और एक संग्रहालय भी हैं। इस संग्रहालय में अनेक ऐतिहासिक मूर्तियाँ, जवाहरलाल नेहरू को प्राप्त उपहार, अनेक प्रसिद्ध कलाकारों के चित्र और पुराने सिक्कों का विशाल संग्रह है। इसी के सामने सुमित्रानन्दन पंत बाल उद्यान (हाथी पार्क) है जो बच्चों के आकर्षण का केन्द्र है।



वर्तमान में सभी प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों के स्वरूप में काफी परिवर्तन हुआ है। कम्पनी बाग को एक नया स्वरूप प्राप्त हो गया है। संगम क्षेत्र में किला अब सैनिक छावनी में परिवर्तित कर दिया गया है। प्राचीन पवित्र अक्षयवट अब तक सामान्य रूप से दर्शनीय नहीं था, परन्तु वर्तमान में योगी आदित्यनाथ के प्रयासों तथा जन-सामान्य के आग्रह पर प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र दामोदर दास मोदी जी ने इसके दर्शन का लाभ सबको सुलभ कराया है।

19.3 प्रयाग के धार्मिक दर्शनीय-स्थल

संगम या त्रिवेणी के चतुर्दिक क्षेत्र को प्रयाग कहा गया है। पुराणों एवं अन्य शास्त्रीय प्रमाणों के आधार पर सम्पूर्ण प्रयाग क्षेत्र को तीन भागों में बाँटा जा सकता है। 1. संगम या त्रिवेणी 2. प्रयाग तथा 3. प्रयागमण्डल।

प्रयागमण्डल का सम्पूर्ण क्षेत्र मत्स्यपुराण के अनुसार 5 योजन विस्तृत माना गया है। इस क्षेत्र में प्रवेश करते ही व्यक्ति को अश्वमेघ यज्ञ का फल प्राप्त होता है –

पञ्चयोजन विस्तीर्ण प्रयागस्य तु मण्डलम्।

प्रविष्टमात्रे तद्भूमाश्वमेघः पदे पदे।। – मत्स्यपुराण – 108/9

इस क्षेत्र की रक्षा स्वयं ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश करते हैं। मत्स्य पुराण के अनुसार प्रतिष्ठान के उत्तर में गुप्त रूप में ब्रह्मा, वेणीमाधव के रूप में विष्णु तथा अक्षयवट के रूप में शिव निवास करते हैं। इसलिए गन्धर्वों से युक्त देवता-गण, सिद्ध-गण, ऋशि पापों से इस प्रयाग मण्डल की रक्षा करते हैं –

प्रयागं निवसन्त्येते ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।

उत्तरेण प्रतिष्ठानाच्छाद्यना ब्रह्म तिष्ठति।।

वेणीमाध्वरूपी तु भगवांस्तत्र तिष्ठति।

महेश्वरो वटो भूत्वा तिष्ठते परमेश्वरः।।

ततो देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्शयः।

रक्षन्ति मण्डलं नित्यं पापकर्मनिवारणात्।।

19.3.1 द्वादश—माधव

1. श्री आदिवट माधव (त्रिवेणी संगम)
2. श्री असि माधव (नागवासुकि मन्दिर)
3. श्री संकष्टहर माधव (प्रतिष्ठानपुर, झूंसी)
4. श्री शंख माधव (छतनाग, मुंशी बगीचा, झूंसी)
5. श्री आदिवेणी माधव (अरैल)
6. श्री चक्र माधव (अरैल)
7. श्री गदा माधव (छिवकी)
8. श्री पद्म माधव (बीकर देवरिया)
9. श्री मनोहर माधव (जानसेनगंज)
10. श्री बिन्दु माधव (द्रौपदी घाट)
11. श्री वेणी माधव (निराला मार्ग, दारागंज)
12. श्री अनन्त माधव (ऑर्डिनेन्स डिपो फोर्ट)

19.3.2 श्री तुलसीदासजी का स्थान

प्रयाग के दारागंज मोहल्ले में संत श्री तुलसीदासजी का बड़ा स्थान अपना अलग ही महत्त्व रखता है। मानस के रचयिता श्री तुलसीदासजी के समकालीन रहे सिद्ध महात्मा श्री देवमुरारीजी ने इस स्थान की स्थापना की। उन्होंने अपने गुरु तुलसीदास के नाम पर इस स्थान को बनवाया था, जो वर्तमान में वैष्णवों की पूजास्थली है।

19.3.3 सरस्वती कूप

सरस्वती कूप का उल्लेख मत्स्य एवं वाराह पुराणों में मिलता है। इस कूप के निकट अंकित शिलालेख का तात्पर्य यह है कि हंसरूपी इस बावली में स्नान करने तथा इससे आचमन करने से हंसगति अर्थात् मोक्ष प्राप्त होता है। इसलिए इसे हंसतीर्थ भी कहते हैं। यह गंगा के पूर्वी तट पर किले के अंदर स्थित है।

19.3.4 बंधवा के हनुमानजी

त्रिवेणी के पावन तट पर किले के समीप ही लेटे हुए हनुमान जी का मंदिर है। जिसके बारे में कहा जाता है कि कानपुर के एक भक्त ने मूर्ति को नाव द्वारा वाराणसी से लाकर त्रिवेणी में स्नान करवाना चाहा परन्तु भारी होने के कारण वह



सफल न हो सका। तब प्रयाग के हनुमान भक्त महावीरदास के कहने पर कानपुर के भक्त ने मूर्ति वहीं छोड़ दी। जो उसी अवस्था में आज भी है। अंग्रेजों ने भी उस मूर्ति को हटाना चाहा परन्तु वह और नीचे धँस गयी। यह देखकर तत्कालीन रईस लाला वंशीधर ने वहाँ पक्का तालाब बनवाकर मंदिर में जाने-आने के लिए सीढ़ियाँ बनवा दीं। जहाँ हमेशा यात्रियों की भीड़ लगी रहती है। शाम के समय उनका श्रृंगार होता है और मंगलवार तथा शनिवार को उनके दर्शन के लिए मेला-सा लगा रहता है। इसकी स्थापना के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं।

हनुमान जी पाताल जाकर अहिरावण का वधकर श्रीराम और लक्ष्मण जी को मुक्त कराकर लाने वाले विशाल और भव्य स्वरूप की प्रतिमा यहाँ पर स्थापित है। हनुमान जी के बाएँ पैर के नीचे पाताल की देवी 'कामदा' और दाहिने पैर के नीचे 'अहिरावण' दबा हुआ है। दाहिनी भुजा के नीचे 'मकरध्वज' तथा दाहिनी भुजा में गदा है। बाएँ हाथ में हनुमान जी श्रीराम और लक्ष्मण को सम्भाले हुए हैं। प्रतिवर्ष माँ गंगा अपने पवित्र जल से लेटे हनुमान जी को अवश्य एक बार स्नान कराती है। स्थानीय लोगों में इस दृश्य को लेकर सदैव उत्सुकता बनी रहती है।

19.3.5 पातालपुरी मंदिर

बंधवा के पास लेटे हनुमान जी के मंदिर से कुछ दूरी पर किले में स्थित प्रयागराज के तीर्थों में पातालपुरी के इस मन्दिर का बड़ा माहात्म्य है। यह किले के अन्दर पृथ्वी के गर्भ में स्थित है, जहाँ विशाल एवं भव्य पत्थर की देवी-देवताओं तथा ऋषि-मुनियों की लगभग 50 मूर्तियाँ स्थापित हैं। इस स्थान की लम्बाई लगभग 90 फुट और चौड़ाई लगभग 50 फुट है। यह लगभग सौ पत्थर के स्तम्भों पर टिका हुआ है। इसी के गर्भ में परम पुण्य फलदायी अक्षयवट है। कहते हैं कि इसके दर्शन मात्र से मनुष्य को सभी पापों से मुक्ति मिल जाती है। चीनी यात्री ह्वेनत्सांग ने अपने यात्रा-वृत्तान्त में इसका उल्लेख किया है। इस मन्दिर का जीर्णोद्धार 1735 ई. में बाजीराव पेशवा ने करवाया था।



19.3.6 शंकर विमान मण्डपम्

गंगा के किनारे बंधवा पर लेटे हनुमानजी मन्दिर से कुछ फासले पर बाँध के ऊपर कांची कामकोटि पीठ के शंकराचार्य चन्द्रशेखरेन्दु सरस्वती की इच्छा से 1986 ई. में



यहाँ तीन मंजिला 130 फुट ऊँचा मन्दिर बनकर तैयार हुआ। इसमें कामाक्षी, बालाजी तथा शिवजी की मूर्तियाँ स्थापित हैं तथा यहाँ मन्दिर में एक हजार शिवलिंग बने हुए हैं एवं 51 शक्तिपीठों के स्वरूप भी बनाये गये हैं। दीवारों पर रामायण, शिवलीला और शंकराचार्य की कथाएँ अंकित हैं जो अपने आप में अनूठी हैं।

19.3.7 दशाश्वमेध घाट

गंगा के पश्चिमी तट पर दारागंज में दशाश्वमेध घाट पर एक विशाल मन्दिर है। मन्दिर के गर्भगृह में दशाश्वमेध महादेव और ब्रह्मेश्वर महादेव के दो काले पत्थर के लिंग हैं, जिनके बीच में एक त्रिशूल गड़ा है। मत्स्यपुराण के अनुसार इस स्थान पर ब्रह्मा ने सृष्टि रचना हेतु दस अश्वमेध यज्ञ किये थे। महाभारत में भी इसकी महिमा वर्णित है। मन्दिर के पास ही महाप्रभु चौतन्य स्वामी का पीठ भी है। दस अश्वमेध यज्ञों के कारण ही इस स्थान को दशाश्वमेध कहते हैं –

दशाश्वमेधकं नाम तीर्थं तत्रापरं भवेत् – मत्स्यपुराण

19.3.8 समुद्र कूप

नारद, कूर्म और मत्स्यपुराणों के अनुसार प्रयाग की पूर्वी सीमा पर समुद्र कूप स्थित है। वर्तमान में, यह कूप झूंसी में गंगा के किनारे एक विशाल ऊँचे टीले पर स्थित है। इस कूप का व्यास 15 फुट है। कुछ विद्वानों के अनुसार इसका निर्माण समुद्रगुप्त ने कराया था इसीलिए इसे समुद्रकूप कहते हैं।



19.3.9 वेणीमाधव मन्दिर

श्री वराहपुराण तथा मत्स्यपुराण में कहा गया है कि प्रयाग में श्री हरि वेणीमाधव के रूप में विराजमान हैं। दारागंज में वेणीमाधव का मन्दिर बहुत प्राचीन है। इसमें राधा और कृष्ण की आकर्षक मूर्तियाँ हैं। वेणीमाधव द्वादश-माधव में से एक हैं।



19.3.10 नागवासुकी मन्दिर

दारागंज मुहल्ले में वासुकी स्थान पर गंगा के किनारे नागवासुकी मन्दिर है, जो प्रयाग मण्डल के उत्तरी ध्रुव पर स्थित है। इस मन्दिर के गर्भगृह में नाग-नागिन की सर्वछत्रधारी 10वीं शताब्दी की मानवी प्रतिमा हैं। गणेश और पार्वती की भी प्रतिमाएँ दर्शनीय हैं। यहाँ प्रतिवर्ष नागपंचमी के दिन बड़ा मेला लगता है। गंगा स्नान के

लिए यहाँ घाट पर सीढ़ियाँ बनी हैं। यहाँ पौराणिक महत्त्व भोगवती कुण्ड का है, जिसके दर्शन का अनन्त फल बताया गया है।



19.3.11 मनकामेश्वर मन्दिर

प्रयाग माहात्म्य में 'कामेश्वरोपि यत्रास्ते तस्य तीर्थस्य दैवतम्' कहकर मनोरथ सिद्धिदाता के रूप में इसकी वन्दना की गयी है। अक्षयवट के दर्शन के पश्चात् मनकामेश्वर महादेव का दर्शन करने का उल्लेख शास्त्रों में है। यह मन्दिर किले के पश्चिम में यमुना नदी के किनारे मिंटो पार्क के पास स्थित है। मन्दिर में शिवजी का काले पत्थर का लिंग स्थापित है। शिवलिंग के पास नन्दी बैल और गणेशजी की प्रतिमाएँ हैं। मन्दिर के बगल में एक पक्का घाट बना है। यह स्थान अत्यन्त रमणीक और जागृत है। धर्मसम्राट करपात्री जी महाराज ने प्रयाग प्रवास के समय यहीं निवास किया था।



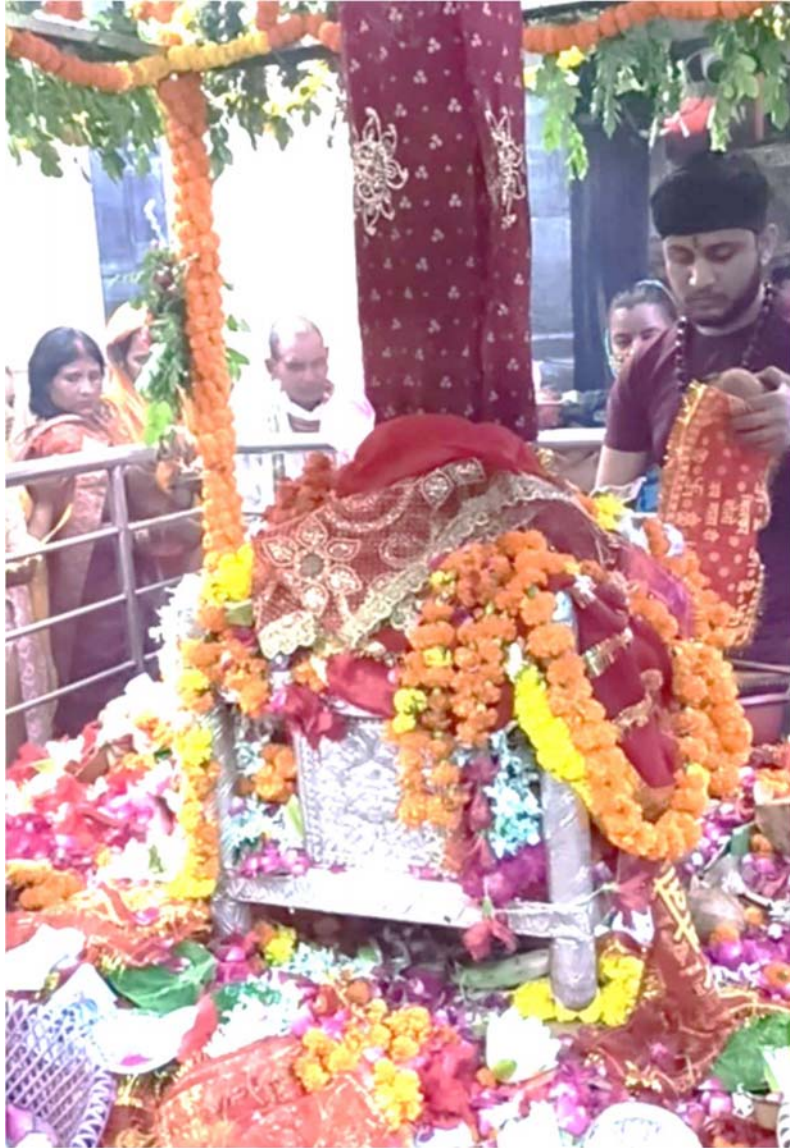
19.3.12 राम बाग

शिवकुटी मन्दिर के पास ही रायबहादुर रामचरणदास का बनवाया हुआ एक बाग गंगातट पर है। यहाँ अतिसुन्दर एक बारहदरी नक्काशीदार पत्थर की बनी है। यहाँ से फाफामऊ पुल और गंगा जी का मनोरम दृश्य दिखायी देता है। यहाँ वर्ष भर नगर के नागरिक आज्ञा लेकर पिकनिक मनाने आते रहते हैं। लाला रामचरण दास जी के नाम पर ही इस स्थान का नामकरण हुआ था।

19.3.13 अलोपीदेवी मन्दिर

दारागंज के पश्चिम में अलोपशंकरी देवी का मन्दिर है। इस प्राचीन मन्दिर में कोई प्रतिमा नहीं है। गर्भगृह के बीचोबीच एक कुण्ड तथा चबूतरे पर रंगीन कपड़े के साथ एक झूला लटकता रहता है, इसी पर लोग फूलमाला चढ़ाकर दंडवत करते हैं। तन्त्रचूड़ामणि के अनुसार 51 शक्तिपीठों में अलोपीदेवी भी हैं। ऐसी जनश्रुति है कि सती के

हाथ की एक अँगुली यहाँ पर गिरी थी। प्रत्येक नवरात्रों पर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है। इसी देवी के नाम पर इस स्थान का नाम अलोपीबाग पड़ा है।



19.3.14 शिवकुटी मन्दिर (शिरोकोटि)

नगर के उत्तरी छोर पर गंगा के किनारे कुबेर तीर्थ, नाग तीर्थ, भार्गव, गालव और चामर तीर्थ हैं। शिवकुटी नाम का प्राचीन मन्दिर है। पद्मपुराण के पाताल खण्ड के 88वें अध्याय में इन तीर्थों का वर्णन है। कहा जाता है कि वन जाते समय श्रीराम ने यहाँ शिवलिंग की पूजा की थी।

शिवलिंग के अतिरिक्त यहाँ माता पार्वती की एक सिद्धमूर्ति खड़ी अवस्था में है जो समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाली है। यहाँ एक पत्थर की सीढ़ियों वाला घाट भी बना है। श्रावण के प्रत्येक सोमवार को हजारों श्रद्धालु यहाँ पूजन करने आते हैं और श्रावण शुक्ल पक्ष की अष्टमी को हर वर्ष मेला लगता है। पद्मपुराण के अनुसार यहाँ कोटि-कोटि तीर्थों का निवास है।

19.3.15 नारायणी आश्रम

शिवकुटी क्षेत्र में ही नेपाल कोठी की एक महिला (रानी) ने एक आश्रम स्थापित किया था। वे नारायण महाप्रभु के नाम से विख्यात हुईं। श्री 1008 श्री नारायण महाप्रभु के आश्रम में लक्ष्मी नारायण का एक भव्य मन्दिर है। उसी परिसर में दुर्गा जी का मन्दिर, निःशुल्क औषधालय और बालिका हाईस्कूल भी स्थित है। सम्पूर्ण परिसर

अत्यन्त रमणीय और विशाल है। इस आश्रम में केवल महिलाओं को ही निवास की अनुमति प्राप्त है।



19.3.16 श्री हनुमत निकेतन

प्रयाग के सिविल लाइन्स क्षेत्र में कमला नेहरू रोड पर पं. रामलोचन ब्रह्मचारी ने एक भव्य हनुमान मन्दिर का निर्माण कराया था। यहाँ दो मन्दिर हैं। मुख्य मन्दिर में हनुमान जी की भव्य खड़ी प्रतिमा है, उनके दायीं ओर सिंहवाहिनी दुर्गाजी और बायीं ओर श्रीराम सीता-लक्ष्मण की संगमरमर की मूर्तियाँ हनुमानजी की मूर्ति के आगे विशाल कक्ष है। दूसरे मन्दिर में उमा-महेश्वर की सपरिवार और सवाहन खड़ी मूर्तियाँ और सुरे एवं लक्ष्मीनारायण की वाहन सहित छोटी मूर्तियाँ हैं। उसी बड़े हाल में एकादश शिवलिंग, महासरस्वती और राधा-कृष्ण की भी प्रतिमाएँ हैं। मन्दिर परिसर में व्यायामशाला, योगालय, पुस्तकालय, दातव्य आयुर्वेदिक एवं होमियोपैथी औषधालय और अतिथिशाला है। अक्सर यहाँ पर गरीबों के इलाज के लिए निःशुल्क शिविर भी लगाये जाते हैं। मन्दिर के प्रांगण में संस्थापक पं. रामलोचन ब्रह्मचारी की आदमकद संगमरमर की प्रतिमा लगी है। मन्दिर के मुख्य द्वार पर गेट के ऊपर भीष्म पितामह की रथ पर आरुढ़ मूर्ति है।



19.3.17 ऑल सेन्ट्स कैथीड्रल (पत्थर का गिरजाघर)

सिविल लाइन्स में स्थित इस गिरजाघर का निर्माण ब्रिटिश वास्तुविद् विलियम एमर्सन ने अपनी देखरेख में

कराया था। यह चर्च सम्पूर्ण भारतवर्ष में सर्वोत्तम कैथीड्रल माना जाता है। इसका शिल्प अतिसुन्दर है। इसका निर्माण एक गोल घेरे में हुआ है। इस चर्च में 600 लोग एक साथ आराधना कर सकते हैं।



19.3.18 कमोरिननाथ महादेव मंदिर

यह शिव मन्दिर सूरजकुण्ड मुहल्ले के पास रेलवे कालोनी में स्थित है। यह प्राचीन मन्दिर है। यहाँ पंचमुखी महादेव की मूर्ति है। शिवरात्रि को यहाँ बड़ा मेला लगता है। किवदन्ती के अनुसार इस मन्दिर का संबंध कामदेव के भस्म होने से माना जाता है।

19.3.19 गुरुद्वारा पक्की संगत

प्रयागराज का सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रतिष्ठित यह गुरुद्वारा महामना मालवीय नगर में स्थित है। श्री गुरु तेगबहादुर ने सं. 1723 (1666 ई.) में यहाँ छः महीने से अधिक रहकर अकाल पुरुष की आराधना की थी। उनके साथ उनकी माता और पत्नी भी थीं। यहाँ एक प्राचीन कृपाण व बड़ा शंख रखा है। इस गुरुद्वारे का प्रबन्ध श्री निर्मल पंचायती अखाड़ा, कनखल, हरिद्वार करता है।

19.3.20 ललिता देवी मंदिर

प्रयाग में यमुना के किनारे मीरापुर मोहल्ले में स्थित माँ ललिता देवी की गणना शक्तिपीठों में मानी जाती है। पद्म, ब्रह्म तथा शिव पुराणों तथा देवी भागवत में लिखा है कि यहाँ सती के दाहिने हाथ की एक अँगुली गिरी थी। ककरहा घाट के मार्ग में स्थित इस मन्दिर की जीर्णोद्धार श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी ने 1987 ई. में करवाया था। तब से आज तक इसका विकास बराबर होता आ रहा है। यह मंदिर प्रयाग के मीरापुर इलाके में है। जहाँ दोनों नवरात्रियों में मेला लगता है। जनश्रुति है कि यहाँ पर पाण्डवों ने भी पूजा की थी।



19.3.21 कल्याणी देवी मंदिर

कल्याणी देवी का मंदिर 108 शक्तिपीठों में से एक है। यहाँ माँ कल्याणी की चतुर्भुजी 32 अंगुल ऊँची सिंह पर सवार मूर्ति है। शीर्ष पर एक आभा-चक्र तथा मस्तक पर योनि, लिंग एवं फणीन्द्र सुशोभित हैं। पुरातत्त्वविदों के अनुसार कल्याणी देवी का यह विग्रह 1500 से 2500 वर्ष पुराना है। यहाँ दोनों नवरात्रियों, चैत्र कृष्णपक्ष की अष्टमी को मेला लगता है। इन्हीं देवी कल्याणी के कारण इस पूरे क्षेत्र को कल्याणी देवी के नाम से जानते हैं। मत्स्यपुराण के 108वें अध्याय में वर्णन प्राप्त होता है।



19.3.22 पंचमुखी महादेव मंदिर

यह मन्दिर यमुना जी जाने के मार्ग पर (तिलक नगर में) स्थित है। मन्दिर के गर्भगृह में एक ही अर्घ्य के भीतर पाँच शिवलिंग स्थापित हैं। यह मन्दिर लगभग 200 वर्ष पुराना है। जन-श्रुति है कि इन लिंगों के आकार में लगातार वृद्धि होती रहती है।

19.3.23 बलुआघाट और बारहदरी

पंचमुखी महादेव तथा ललिता देवी मन्दिर से थोड़ा आगे यमुना तट पर बने पक्के घाट और सुन्दर नक्काशीदार बारहदरी शिल्प का अद्भुत नमूना हैं। यहाँ पर कार्तिक मास में एक महीने का मेला लगता है जिसका अपना एक अलग महत्त्व है। इसे यमुनाजी का मेला या कार्तिक मेला भी कहा जाता है।



19.3.24 नवग्रह मंदिर

रामबाग (पत्थरचट्टी रामलीला मैदान) में एक विशालकाय एवं अनुपम नवग्रह मंदिर का निर्माण किया गया है। इस मंदिर की कलाकृति अनुपम है जो दर्शकों का मन मुग्ध कर लेती है। यहीं पर मंदिर प्रांगण से सटा हुआ दक्षिणमुखी श्रीहनुमानजी का प्राचीन मंदिर है। यहाँ भक्तों की सभी मनोकामना पूर्ण होती है।



19.3.25 देवराहा बाबा आश्रम

झूंसी में शास्त्री पुल के नीचे ही सिद्ध पुरुष देवराहा बाबा का आश्रम है। जहाँ पर एक मंचान गंगा की धारा

के बीचोबीच बना है जिस पर बाबा रहा करते थे। आज भी उस स्थान पर मंच के ऊपर अखंड दीप जलता रहता है। यह बहुत ही सिद्ध स्थान है।

19.4 प्रयागराज के तीर्थ

प्रयाग के तीर्थों का ज्ञान हमें कल्पवासियों द्वारा की जाने वाली 'अन्तर्वेदी परिक्रमा' तथा 'बहिर्वेदी परिक्रमा' से होता है। अन्तर्वेदी परिक्रमा का प्रारंभ त्रिवेणी में स्नान तथा वेणीमाधव के पूजन से प्रारंभ होती है। इस परिक्रमा का क्रम यमुना जी में मधुकुल्या, घृतकुल्या, निरंजन तीर्थ, आदित्य तीर्थ, ऋणमोचन तीर्थ, पापमोचन तीर्थ, परशुराम तीर्थ, गोघट्टन तीर्थ, पिशाचतीर्थ, मनकामेश्वर तीर्थ, कपिल, इनद्रेश्वर शिव, तक्षक कुण्ड, तक्षकेश्वर शिव, कालिचन्द्र, चक्रतीर्थ, सिन्धु सागर तीर्थ है। सड़क मार्ग द्वारा जाने वाले तीर्थों में पाण्डवकूप, वरुणकूप, कश्यप तीर्थ, द्रव्येश्वर नाथ शिव तीर्थ, सूर्यकुण्ड, भरद्वाज आश्रम, भरद्वाजेश्वर, सीतारामश्रम, विश्वामित्राश्रम, गौतमाश्रम, जमदिग्नि आश्रम आदि तीर्थ हैं। इस प्रकार बहिर्वेदी परिक्रमा के स्थानों की भी गणना है। इन परिक्रमाओं द्वारा प्रयाग के पुण्य क्षेत्रों का ज्ञान होता है। 'प्रयागाष्टक' के एक श्लोक में प्रयाग की महिमा बताई गई है –

तीथीवली यस्य तु कण्ठभागे, दानावली वल्गति पादभूत।

व्रतावली दक्षिणबहुमूले स तीर्थराजो जयति प्रयागः॥

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. प्रयाग में अक्षयवट कहाँ स्थित है ?

.....

2. त्रिवेणी में किन-किन नदियों की धाराएँ प्रवाहित हैं ?

.....

3. प्रयाग में स्थित प्रसिद्ध शक्तिपीठ कौन-कौन से हैं ?

.....

4. प्रयाग में स्थित अकबर का किला किस स्थान पर है ?

.....

5. कम्पनी बाग का दूसरा नाम आजाद पार्क क्यों है ?

.....

19.5 सारांश

कुम्भ प्रत्येक वर्षों के बाद आयोजित होने वाला एक ऐसा पर्व है जिसमें प्राचीन काल से ही लाखों लोग बिना किसी आमंत्रण के स्वतः ही प्रयाग आते रहे हैं। भारतीय संस्कृति तथा विशेषकर ग्रामीण लोक संस्कृति का उत्कर्ष धार्मिक एवं सामाजिक आयोजन पर अधिक होता है। यहाँ संगम में स्नान का विशेष महत्त्व होता है। आज भी अनेक ऐतिहासिक एवं धार्मिक दर्शनीय स्थल प्रयाग में हैं। जिनका अपना-अपना विशेष महत्त्व है। प्रयाग के गंगा-यमुना के संगम स्थल के निकट ऋषि भरद्वाज का आश्रम स्थित है। सिंगरौर (श्रृंगवेरपुर) भी प्रयाग का एक ऐतिहासिक स्थल है। गंगा के पार पूर्व में प्रयाग के प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों में झूंसी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। संगम के दक्षिण में यमुना के पार अरैल नाम का एक गाँव है। अकबर के अमर स्मारकों में प्रयाग के संगम स्थल पर बना दुर्ग और बांध आदि अनेक ऐतिहासिक स्थल विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके साथ-साथ प्रयाग में अनेक

धार्मिक दर्शनीय स्थल भी हैं जिनका प्राचीनकाल से अत्यन्त महत्त्व रहा है।

19.6 अभ्यास के प्रश्न

1. प्रयाग में स्थित द्वादश माधव का संक्षिप्त परिचय दीजिए
2. प्रयागराज के कुछ प्रमुख दर्शनीय स्थलों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
3. प्रयागराज में स्थित ऐतिहासिक स्थलों का वर्णन कीजिए।
4. ऐतिहासिक महत्त्व से आप क्या समझते हैं ?
5. इलाहाबाद विश्वविद्यालय कहाँ पर स्थित है ?
6. कम्पनी बाग के अन्दर और क्या-क्या महत्त्वपूर्ण चीजें हैं ?

19.7 चर्चा के बिन्दु

1. प्रयागराज में स्थित ऐतिहासिक दर्शनीय स्थलों की चर्चा कीजिए।
2. प्रयागराज में स्थित धार्मिक स्थलों की चर्चा कीजिए।

19.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. प्रयाग में अक्षयवट संगम के किनारे किले के अंदर स्थित है।
2. त्रिवेणी में गंगा, यमुना तथा सरस्वती की धाराएँ प्रवाहित होती हैं।
3. प्रयाग में अलोपशंकरी, ललिता देवी तथा कल्याणी देवी शक्तिपीठ है।
4. प्रयाग में अकबर का किला संगम के तट पर स्थित है।
5. कम्पनीबाग का दूसरा नाम आजाद पार्क इसलिए है क्योंकि यहाँ स्वतंत्रता के लिए अंग्रेजों से लड़ते हुए चन्द्रशेखर आजाद शहीद हुए थे।

19.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. अग्रवाल, स्मिता (2019), प्रयाग माहात्म्य और कुम्भ, अर्पित प्रकाशन, झूँसी, इलाहाबाद।
2. अग्रवाल, मीनू रानी (2013), कुम्भ पर्व प्रयाग, राजपाल एंड कम्पनी, इलाहाबाद।

इकाई – 20 : कुम्भ मेला प्रशासन प्रबन्धन और स्वास्थ्य योजनाएँ

इकाई की रूपरेखा

- 20.1 प्रस्तावना
- 20.2 उद्देश्य
- 20.3 कुम्भ मेला परिचय
- 20.4 कुम्भ मेला प्रशासन का महत्व
- 20.5 कुम्भ मेला का प्रशासनिक ढांचा
- 20.6 कुम्भ मेला में सार्वजनिक सेवाओं की व्यवस्था
- 20.7 कुम्भ मेला में तकनीकी नवाचार
- 20.8 कुम्भ मेला में चुनौतियाँ और समाधान
- 20.9 प्रशासनिक नियोजन, समन्वय और क्रियान्वयन
- 20.10 रणनीतिक योजना: महाकुम्भ प्रशासन की रीढ़
- 20.11 तकनीकी एकीकरण: महाकुम्भ प्रबंधन में नवाचार
- 20.12 मानवीय प्रयास: योजना के पीछे के लोग
- 20.13 चुनौतियाँ और उपलब्धियाँ: जटिलता से निदान
- 20.14 स्वास्थ्य योजनाएँ
- 20.15 सड़क यातायात प्रबंधन
- 20.16 रेल यातायात प्रबंधन
- 20.17 जल यातायात प्रबंधन
- 20.18 अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन
- 20.19 भीड़ नियंत्रण एवं प्रबंधन
- 20.20 घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन
- 20.21 एनडीआरएफ (राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया बल)
- 20.22 स्वास्थ्य योजनाएँ
- 20.23 एयर ऍंबुलेंस
- 20.24 सारांश
- 20.25 अभ्यास के प्रश्न
- 20.26 चर्चा के बिन्दु
- 20.27 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 20.28 कुछ उपयोगी पुस्तकें

20.1 प्रस्तावना

कुम्भ सनातन संस्कृति में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कुम्भ मेला आयोजित करने के लिए केंद्र एवं

प्रदेश सरकार द्वारा इसका प्रशासन प्रबंधन एवं स्वास्थ्य व्यवस्थाओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है। प्रबंधन के अंतर्गत आयोजन, संगठन निर्माण, स्टाफिंग, नेतृत्व करना तथा संगठन अथवा स्थल एवं स्थिति पर नियंत्रण करना आदि आते हैं। स्वास्थ्य सेवाएँ भी कुम्भ जैसे बड़े आयोजन जहाँ करोड़ों की संख्या में श्रद्धालु आते हैं, उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखना एवं कोई भी आपातकालीन स्थिति पर लोगों को स्वास्थ्य सेवा प्रदान करना उद्देश्य होता है। जहाँ पर प्रशासन भीड़ के व्यापक नियंत्रण एवं उसके सुनियोजित तरीके से चलने फिरने एवं रहने की व्यवस्था पर ध्यान देता है वहीं प्रशासन यह भी निश्चित करता है कि कोई आपदा कुम्भ मेले के समय पर ना घटित हो। इसके लिए व्यापक आपदा प्रबंधन का इंतजाम किया जाता है। यह आपदा प्रबंधन जल थल एवं वायु तीनों के सामंजस्य एवं तकनीकी के उपयोग के माध्यम से किया जाता है। जहाँ विशेष तरह के ड्रोन होते हैं जो किसी भी अवांछनीय ड्रोन जो कि मेले में बिना इजाजत के उड़ रहे हो उसको मार गिराने में एवं निष्क्रिय करने में सक्षम होते हैं। नदी में भी विशेष पैरामिलिट्री एवं आपदा प्रबंधन के दल मोटर बोट पर पूरे मेला क्षेत्र में स्थित रहते हैं ताकि कोई भी श्रद्धालु के साथ नदी में कोई भी घटना घटित ना हो। इसी तरह जल थल एवं वायु मार्ग से मेला क्षेत्र को जोड़ा जाता है ताकि यात्री एवं श्रद्धालु सुगम तरीके से मेले क्षेत्र तक पहुंच सकें। रेलवे विशेष ट्रेनों के द्वारा श्रद्धालुओं के आवागमन का विशेष प्रबंध करती है तो रोडवेज भी विशेष बसों के द्वारा श्रद्धालुओं को मेले के स्थान तक लाने ले जाने का कार्य करती है। तकनीक के दौर में नए हवाई अड्डे का निर्माण कर देश विदेश से श्रद्धालु मेला क्षेत्र तक पहुंच सकते हैं। आज हाईटेक तकनीक का उपयोग कर रेलवे ने सिग्नल सिस्टम को, रेलवे स्टेशनों को करोड़ों की संख्या में यात्री के आने पर प्रवेश एवं निकास का मार्ग, टिकट लेने की व्यवस्था, जलपान की व्यवस्था, भीड़ प्रबंधन की व्यवस्था आदि का विशेष प्रबंध करती है। जिस नगर में कुम्भ मेला का आयोजन होता है उसके एवं उसके आसपास के सभी नगरों के हॉस्पिटल में बेड की संख्या एवं डॉक्टर दवाई आधुनिक चिकित्सा प्रणाली के माध्यम से स्वास्थ्य सेवाओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

20.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. कुम्भ मेले का प्रबंधन एवं उसके विभिन्न आयाम को समझ सकेंगे।
2. कुम्भ मेले में यातायात व्यवस्था से परिचित हो सकेंगे।
3. कुम्भ मेले में स्वास्थ्य व्यवस्था की जानकारी प्राप्तकर उससे लाभान्वित हो सकेंगे।
4. आपदा प्रबंधन से परिचित हो सकेंगे।
5. नवाचार व्यवस्था से परिचित हो सकेंगे।

20.3 कुम्भ मेला परिचय

कुम्भ मेला विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन है, जो भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता की अनूठी छवि प्रस्तुत करता है। हर 12 वर्ष पर प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में आयोजित यह मेला करोड़ों श्रद्धालुओं को अपनी ओर आकर्षित करता है। इसमें भक्तगण पवित्र नदियों में स्नान कर आत्मिक शुद्धि की कामना करते हैं। इसका धार्मिक और पौराणिक महत्व गहरा है। समुद्र मंथन की कथा के अनुसार, अमृत कलश की बूंदें इन चार स्थानों पर गिरीं, जिससे इन स्थानों को विशेष आध्यात्मिक महत्व प्राप्त हुआ।

कुम्भ मेले का आयोजन एक अत्यंत जटिल और व्यापक प्रशासनिक प्रक्रिया है। इस आयोजन में लाखों लोगों की उपस्थिति इसे दुनिया का सबसे बड़ा मानव सभा स्थल बनाती है। इस आयोजन की सफलता प्रशासन और प्रबंधन की कुशलता पर निर्भर करती है, क्योंकि यह न केवल एक धार्मिक आयोजन है, बल्कि आधुनिक प्रबंधन की चुनौतियों और नवाचारों का भी आदर्श प्रस्तुत करता है। भीड़ प्रबंधन, यातायात नियंत्रण, स्वास्थ्य सेवाओं का संचालन, स्वच्छता व्यवस्था, और सुरक्षा प्रबंधन जैसी जटिल समस्याओं का समाधान करना मेले के लिए आवश्यक है।

20.4 कुम्भ मेला प्रशासन का महत्व

कुम्भ मेला प्रशासन का प्रमुख उद्देश्य इस विशाल जनसमूह का प्रबंधन करना है। प्रशासनिक टीम को कई बुनियादी कामों को सुनिश्चित करना होता है, जैसे—

- **सुरक्षा**—लाखों लोगों की भीड़ को संभालना, उनकी सुरक्षा और भलाई सुनिश्चित करना।
- **स्वच्छता और स्वास्थ्य**— मेले में महामारी, पानी की कमी या किसी अन्य स्वास्थ्य संकट से बचाव के उपाय करना।
- **यातायात और पार्किंग व्यवस्था**— लाखों वाहनों और लोगों की आवाजाही को व्यवस्थित करना।
- **आवास व्यवस्था**— श्रद्धालुओं के लिए अस्थायी शिविरों (टेंट) और अन्य आवास की व्यवस्था करना।
- **संचार व्यवस्था**— पूरे मेला क्षेत्र में संचार के साधनों को सक्षम बनाना ताकि कोई भी आपातकालीन स्थिति का त्वरित समाधान किया जा सके।
- **सार्वजनिक सुविधाएँ**— स्वच्छता, पानी, शौचालय, चिकित्सा सेवाएँ आदि की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

20.5 कुम्भ मेला का प्रशासनिक ढांचा

कुम्भ मेला प्रशासन एक बहुस्तरीय संरचना है, जिसमें विभिन्न सरकारी विभाग और स्थानीय प्रशासन शामिल होते हैं। इसे व्यवस्थित करने के लिए उत्तरदायी एजेंसियाँ और विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है।

20.5.1 मुख्य आयोजन समिति

मुख्य आयोजन समिति, जिसे 'कुम्भ मेला आयोजन समिति' कहा जाता है, इसका प्रमुख कार्य मेलों के समग्र प्रबंधन का निरीक्षण और निगरानी करना होता है। इसमें राज्य और केंद्रीय सरकार के अधिकारी, प्रशासनिक कर्मचारी, पुलिस, स्वास्थ्य सेवाएँ, और अन्य सरकारी विभाग शामिल होते हैं।

20.5.2 स्थानीय प्रशासन

स्थानीय प्रशासन का कार्य कुम्भ मेला के क्षेत्रीय पहलुओं को संभालना होता है। इसमें नगर निगम, जिला प्रशासन, पुलिस विभाग, जल आपूर्ति और स्वच्छता विभाग, विद्युत विभाग, और यातायात विभाग शामिल होते हैं। स्थानीय प्रशासन मेलों के सही ढंग से संचालन के लिए जिम्मेदार होता है।

20.5.3 सुरक्षा और पुलिस बल

कुम्भ मेला की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भारी संख्या में पुलिस बल और सुरक्षा गार्ड तैनात किए जाते हैं। मेला क्षेत्र में सुरक्षा चाक-चौबंद रहती है, और श्रद्धालुओं की सुरक्षा के लिए विशेष चौकियाँ और पिकेट्स लगाए जाते हैं।

20.5.4 स्वास्थ्य सेवाएँ

कुम्भ मेला में भारी भीड़ होने के कारण स्वास्थ्य सेवाओं का प्रबंधन बहुत चुनौतीपूर्ण होता है। विशेष रूप से चिकित्सा सुविधाओं, अस्पतालों, मोबाइल स्वास्थ्य केंद्रों, और चिकित्सकों की तैनाती पर ध्यान दिया जाता है। एंबुलेंस सेवाएँ और आपातकालीन मेडिकल टीमों भी तैनात रहती हैं।

20.5.5 यातायात व्यवस्था

कुम्भ मेला के दौरान यातायात व्यवस्था सबसे बड़ा चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। लाखों लोग एक ही स्थान पर आते हैं, जिससे सड़कें जाम हो सकती हैं। इस समस्या को दूर करने के लिए परिवहन विभाग पहले से कई योजनाएँ तैयार करता है, जिसमें वैकल्पिक मार्गों का निर्माण, पार्किंग स्थल, और सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था का प्रबंधन शामिल है।

20.6 कुम्भ मेला में सार्वजनिक सेवाओं की व्यवस्था

कुम्भ मेला में सबसे बड़ी चुनौती करोड़ों लोगों के लिए सार्वजनिक सेवाओं की व्यवस्था करना है। इसमें निम्नलिखित सेवाएँ शामिल हैं—

20.6.1 पानी की आपूर्ति

कुम्भ मेला में लाखों लोग उपस्थित होते हैं, इसलिए पानी की आपूर्ति का प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। नगर निगम और जल विभाग मिलकर पर्याप्त पानी की आपूर्ति सुनिश्चित करते हैं। विशेष टैंकरों के माध्यम से पानी उपलब्ध कराया जाता है, और सार्वजनिक शौचालयों में साफ पानी उपलब्ध होता है।

20.6.2 स्वच्छता व्यवस्था

कुम्भ मेला का सबसे बड़ा आकर्षण है यहाँ की स्वच्छता। मेला क्षेत्र में साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखा जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष सफाई कर्मचारी और मशीनें तैनात की जाती हैं।

20.6.3 आवास व्यवस्था

कुम्भ मेला में आने वाले श्रद्धालुओं के लिए अस्थायी आवास की व्यवस्था की जाती है। टेंट सिटी बनाकर लाखों श्रद्धालुओं को ठहरने की सुविधा प्रदान की जाती है। इन टेंटों में सभी आवश्यक सुविधाएँ होती हैं, जैसे पानी, शौचालय, और बिजली।

20.6.4 संचार व्यवस्था

मेला क्षेत्र में संचार व्यवस्था को बेहतर बनाने के लिए मोबाइल नेटवर्क, इंटरनेट, और टेलीफोन सेवाओं का विस्तार किया जाता है। सूचना केंद्र स्थापित किए जाते हैं, ताकि श्रद्धालुओं को किसी भी प्रकार की जानकारी मिल सके।

20.7 कुम्भ मेला में तकनीकी नवाचार

कुम्भ मेला में प्रशासन को प्रभावी बनाने के लिए नए तकनीकी नवाचारों का उपयोग किया जाता है। इनमें से कुछ प्रमुख तकनीकी पहलू निम्नलिखित हैं—

20.7.1 ड्रोन और निगरानी कैमरे

ड्रोन और उच्च तकनीकी कैमरों के माध्यम से पूरे मेला क्षेत्र की निगरानी की जाती है। इससे सुरक्षा सुनिश्चित होती है और प्रशासन को भी क्षेत्र के भीतर चल रही गतिविधियों का पता चलता रहता है।

20.7.2 स्मार्ट कार्ड और आर.एफ.आई.डी

कुम्भ मेला में श्रद्धालुओं के लिए स्मार्ट कार्ड और **आर.एफ.आई.डी (Radio Frequency Identification)** सिस्टम का उपयोग किया जाता है। इससे लोगों की पहचान और उनकी स्थिति का पता आसानी से चल जाता है। यह कार्ड विभिन्न सुविधाओं का उपयोग करने में मदद करता है और भीड़ को व्यवस्थित करता है।

20.7.3 स्मार्ट शौचालय और स्वचालित जल आपूर्ति

स्वच्छता बनाए रखने के लिए स्मार्ट शौचालयों का निर्माण किया जाता है। इन शौचालयों में पानी की आपूर्ति स्वचालित होती है, और साफ-सफाई भी बेहतर रहती है।

20.7.4 मोबाइल ऐप्स

कुम्भ मेला में आने वाले श्रद्धालुओं के लिए विशेष मोबाइल ऐप्स बनाए जाते हैं, जिनमें मेला क्षेत्र की मानचित्र जानकारी, चिकित्सा सुविधाएँ, पार्किंग स्थल, और अन्य आवश्यक जानकारी उपलब्ध होती है।

बोध प्रश्न

1. मुख्य आयोजन समिति किसको कहा जाता है

.....

2. स्थानीय प्रशासन का कुम्भ मेला में क्या कार्य होता है

.....

3. ड्रोन की कुम्भ मेले में क्या उपयोगिता है

20.8 कुम्भ मेला में चुनौतियाँ और समाधान

कुम्भ मेला में विभिन्न प्रकार की चुनौतियाँ होती हैं, जिनका समाधान प्रशासन को करना होता है।

20.8.1 भीड़ प्रबंधन

कुम्भ मेला में लाखों लोग एक ही समय में उपस्थित होते हैं, और बड़ी भीड़ को संभालना प्रशासन के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। इसके समाधान के लिए बेहतर यातायात और सुरक्षा व्यवस्था, और पंक्तियाँ बनाकर भीड़ को नियंत्रित किया जाता है।

20.8.2 प्राकृतिक आपदाएँ

कुम्भ मेला के दौरान कभी-कभी मौसम की स्थिति खराब हो सकती है। प्रशासन द्वारा पहले से आपातकालीन योजनाएँ तैयार की जाती हैं, जैसे कि बाढ़ की स्थिति में सुरक्षा उपाय और चिकित्सा सेवाएँ।

20.8.3 स्वास्थ्य संकट

कुम्भ मेला में महामारी के फैलने का खतरा रहता है। इसलिए स्वास्थ्य विभाग पहले से तैयार रहता है और संक्रमण फैलने से बचने के लिए टीकाकरण, सैनिटेशन, और सोशल डिस्टेंसिंग जैसी व्यवस्था करता है।

20.9 प्रशासनिक नियोजन, समन्वय और क्रियान्वयन

महाकुम्भ मेला, लाखों लोगों का पवित्र समागम, आध्यात्मिकता की सीमाओं को पार करता है और एक प्रशासनिक चमत्कार बन जाता है, जहाँ सावधानीपूर्वक नियोजन, समन्वय और क्रियान्वयन अव्यवस्थित संगम को आस्था के सामंजस्यपूर्ण सिम्फनी में बदल देता है। भारत में चार पवित्र नदी तटों पर चक्रीय रूप से आयोजित होने वाला यह भव्य आयोजन न केवल देश की आध्यात्मिक विविधता का प्रमाण है, बल्कि एक अद्वितीय प्रशासनिक कौशल भी प्रदर्शित करता है जो असंख्य तीर्थयात्रियों की सुरक्षा, कल्याण और निर्बाध अनुभव सुनिश्चित करता है। जब हम महाकुम्भ मेले की प्रशासनिक पेचीदगियों का पता लगाते हैं, तो हम उन रणनीतियों, प्रौद्योगिकियों और मानवीय प्रयासों को उजागर करते हैं जो इस विशाल आयोजन को संगठनात्मक उत्कृष्टता के विस्मयकारी प्रदर्शन में बदल देते हैं।

महाकुम्भ मेले का विशाल आकार मन को झकझोर देने वाला है। लाखों तीर्थयात्री, साधु और पर्यटक कई सप्ताह तक निर्धारित नदी तटों पर एकत्र होते हैं, जिससे एक गतिशील, हमेशा बदलता शहर बनता है, जिसके लिए अभूतपूर्व तार्किक सटीकता की आवश्यकता होती है। प्रशासनिक चुनौतियाँ बहुआयामी हैं, जिनमें भीड़ प्रबंधन, स्वच्छता, स्वास्थ्य सेवा, सुरक्षा, परिवहन और संचार शामिल हैं।

महाकुम्भ मेले की जटिलता को समझने के लिए तीर्थयात्रियों की विविध आवश्यकताओं को स्वीकार करना आवश्यक है, जो विभिन्न क्षेत्रों, सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि और सांस्कृतिक संदर्भों से आते हैं। प्रशासनिक मशीनरी को इन व्यक्तियों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए, जबकि पूरे आयोजन का सुचारु संचालन सुनिश्चित करना चाहिए।

20.10 रणनीतिक योजना: महाकुम्भ प्रशासन की रीढ़

- **बुनियादी ढांचे का विकास:** सड़कें, पुल, पट्टन पुल, अस्थायी घाट और परिसंचारी क्षेत्र, टेंट और अस्थायी अस्पताल सहित अस्थायी बुनियादी ढांचे का निर्माण एक महत्वपूर्ण घटक है। बुनियादी ढांचे को न केवल लोगों की भारी आमद को समायोजित करना चाहिए, बल्कि क्षेत्र की पर्यावरणीय परिस्थितियों का भी सामना करना चाहिए।

- **यातायात और परिवहन:** तीर्थयात्रियों की अभूतपूर्व संख्या को देखते हुए, यातायात और परिवहन का प्रबंधन एक बहुत बड़ा काम है। लोगों की आवाजाही को सुविधाजनक बनाने के लिए बसों, ट्रेनों और यहां तक कि नावों की विशेष व्यवस्था की जाती है। अव्यवस्था को रोकने के लिए यातायात को परिवर्तित किया जाता है और भीड़ को नियंत्रित करने के उपाय किए जाते हैं।
- **स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन:** लाखों लोगों द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट का निपटारा एक महत्वपूर्ण चुनौती है। स्वच्छता और सफाई बनाए रखने के लिए अस्थायी शौचालय, अपशिष्ट संग्रह बिंदु और पुनर्चक्रण सुविधाओं को रणनीतिक रूप से रखा जाता है। नियमित सफाई और अपशिष्ट निपटारा के लिए विशेष टीमें तैनात की जाती हैं।
- **स्वास्थ्य सुविधाएँ:** तीर्थयात्रियों की भलाई सुनिश्चित करना सर्वोच्च प्राथमिकता है। स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करने के लिए अस्थायी अस्पताल, चिकित्सा शिविर और आपातकालीन प्रतिक्रिया दल स्थापित किए जाते हैं। सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए टीकाकरण अभियान और जागरूकता कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं।
- **सुरक्षा उपाय:** सभा की विशालता को देखते हुए, सुरक्षा एक सर्वोपरि चिंता है। प्रशासन कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ मिलकर मजबूत सुरक्षा उपायों को लागू करता है, जिसमें कर्मियों की तैनाती, निगरानी प्रणाली और आपातकालीन प्रतिक्रिया दल शामिल हैं।
- **संचार नेटवर्क:** समन्वय और आपातकालीन प्रतिक्रिया के लिए प्रभावी संचार नेटवर्क स्थापित करना आवश्यक है। प्रशासन यह सुनिश्चित करता है कि विश्वसनीय संचार चैनल मौजूद हों, जिसमें रेडियो, मोबाइल नेटवर्क और अन्य तकनीकें शामिल हों।

20.11 तकनीकी एकीकरण: महाकुम्भ प्रबंधन में नवाचार

हाल के वर्षों में, कुम्भ मेले के प्रशासन में दक्षता बढ़ाने और संचालन को सुव्यवस्थित करने के लिए प्रौद्योगिकी का महत्वपूर्ण उपयोग हुआ है। डेटा एनालिटिक्स, मोबाइल एप्लिकेशन और अन्य डिजिटल समाधानों के एकीकरण ने इस विशाल आयोजन के प्रबंधन में क्रांति ला दी है। कुछ प्रमुख तकनीकी हस्तक्षेपों में शामिल हैं:

- **डिजिटल मैपिंग और जीआईएस:** कुम्भ मेला क्षेत्र की डिजिटल मैपिंग के लिए भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) तकनीक का उपयोग किया जाता है। यह स्थानिक नियोजन, भीड़ की निगरानी और बुनियादी ढांचे के विकास में सहायता करता है। वास्तविक समय का डेटा आयोजन की गतिशील प्रकृति को प्रबंधित करने के लिए सूचित निर्णय लेने में मदद करता है।
- **मोबाइल एप्लिकेशन:** समर्पित मोबाइल एप्लिकेशन तीर्थयात्रियों को आवश्यक जानकारी प्रदान करते हैं, जिसमें कार्यक्रम कार्यक्रम, मानचित्र, आपातकालीन संपर्क और वास्तविक समय अपडेट शामिल हैं। ये ऐप प्रशासन और तीर्थयात्रियों के बीच संचार की सुविधा प्रदान करते हैं, जिससे समग्र अनुभव और पहुंच में वृद्धि होती है।
- **सीसीटीवी निगरानी:** सुरक्षा और भीड़ की निगरानी के लिए कुम्भ मेला क्षेत्र में व्यापक सीसीटीवी नेटवर्क तैनात किए गए हैं। इससे प्रशासन को उभरती स्थितियों पर तुरंत प्रतिक्रिया करने और तीर्थयात्रियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने में मदद मिलती है।
- **बायोमेट्रिक पहचान:** कुछ महाकुम्भ मेलों में भीड़ नियंत्रण और सुरक्षा के लिए बायोमेट्रिक पहचान प्रणाली का प्रयोग किया गया है। तीर्थयात्री स्वेच्छा से अपना बायोमेट्रिक डेटा पंजीकृत करते हैं, जिससे प्रवेश और निकास की प्रक्रिया आसान हो जाती है।
- **ड्रोन तकनीक:** ड्रोन का प्रयोग हवाई निगरानी, भीड़ की निगरानी और आपदा प्रतिक्रिया के लिए किया जाता है। ये हवाई उपकरण पूरे क्षेत्र का एक विहंगम दृश्य प्रदान करते हैं, जिससे त्वरित निर्णय लेने और कुशल संसाधन आवंटन में सहायता मिलती है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

4. स्मार्ट शौचालय किसे कहते हैं?

.....

5. डिजिटल मैपिंग का कुम्भ मेले में क्या उपयोग है?

.....

6. कुम्भ मेले में बायोमेट्रिक पहचान का प्रयोग क्यों किया जाता है?

.....

20.12 मानवीय प्रयास: योजना के पीछे के लोग

कुम्भ मेले की प्रशासनिक मशीनरी और तकनीकी नवाचारों के पीछे अनगिनत लोग हैं जो इस ऐतिहासिक आयोजन की सफलता सुनिश्चित करने के लिए अथक परिश्रम कर रहे हैं। प्रशासनिक कार्यबल में सरकारी अधिकारी, कानून प्रवर्तन कर्मी, स्वास्थ्य सेवा पेशेवर, स्वयंसेवक और सहायक कर्मचारी शामिल हैं।

- **प्रशासनिक अधिकारी:** स्थानीय अधिकारियों से लेकर उच्च पदस्थ नौकरशाहों तक के सरकारी अधिकारी नियोजन, समन्वय और निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनकी जिम्मेदारियाँ कई क्षेत्रों में फैली हुई हैं, जिनमें बुनियादी ढाँचा विकास, सुरक्षा, स्वास्थ्य सेवा और जनसंपर्क शामिल हैं।
- **कानून प्रवर्तन:** कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए बड़ी संख्या में पुलिस और अर्धसैनिक बलों को तैनात किया जाता है। भीड़ नियंत्रण, यातायात प्रबंधन और तीर्थयात्रियों की सुरक्षा सुनिश्चित करना उनकी जिम्मेदारियों के अभिन्न अंग हैं।
- **स्वास्थ्य सेवा पेशेवर:** डॉक्टर, नर्स और चिकित्सा कर्मचारी विभिन्न स्वास्थ्य सुविधाओं और चिकित्सा शिविरों में तैनात रहते हैं। उनकी भूमिका में तत्काल चिकित्सा सहायता प्रदान करना, आपात स्थितियों का प्रबंधन करना और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना शामिल है।
- **स्वयंसेवक:** अनगिनत स्वयंसेवक, जो अक्सर गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) या धार्मिक संस्थाओं से जुड़े होते हैं, कुम्भ मेले के सुचारु संचालन में निस्वार्थ भाव से योगदान देते हैं। वे भीड़ प्रबंधन में सहायता करते हैं, तीर्थयात्रियों को जानकारी प्रदान करते हैं, और विभिन्न क्षमताओं में सहायता प्रदान करते हैं।
- **सहायक कर्मचारी:** कुम्भ मेले की रसद व्यवस्था में सफाई कर्मचारी, ड्राइवर, रसोइया और रखरखाव कर्मी सहित विविध सहायक कर्मचारी शामिल हैं। तीर्थयात्रियों के लिए स्वच्छ, सुरक्षित और कार्यात्मक वातावरण बनाने में उनके प्रयास महत्वपूर्ण हैं।

20.13 चुनौतियाँ और उपलब्धियाँ: जटिलता से निदान

महाकुम्भ मेले का प्रशासनिक चमत्कार अपनी चुनौतियों से रहित नहीं है। मौसम की स्थिति, रसद संबंधी बाधाओं और इतने बड़े पैमाने पर लोगों के आने की अप्रत्याशितता सहित कई जटिल कारकों के बीच तालमेल बिठाना, अंतर्निहित कठिनाइयों को जन्म देता है। हालांकि, कुम्भ मेला प्रशासन ने लगातार इस अवसर पर लचीलापन और अनुकूलनशीलता का प्रदर्शन किया है।

- **पर्यावरण संबंधी चिंताएँ:** लाखों लोगों की मेजबानी करने से होने वाले पर्यावरणीय प्रभाव को कम करके नहीं आंका जा सकता। अपशिष्ट प्रबंधन प्रथाओं, पर्यावरण-अनुकूल बुनियादी ढाँचे और जागरूकता अभियानों के माध्यम से पर्यावरणीय गिरावट को कम करने के प्रयास किए जाते हैं।

- **सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौतियाँ:** इतनी बड़ी भीड़ के स्वास्थ्य और स्वच्छता को सुनिश्चित करना एक कठिन काम है। संक्रामक रोगों के जोखिम को कम करने के लिए टीकाकरण अभियान, स्वास्थ्य सेवा शिविर और स्वच्छता उपायों को लागू किया जाता है।
- **रसद जटिलता:** लाखों लोगों की आवाजाही और आवास का प्रबंधन करने के लिए जटिल योजना की आवश्यकता होती है। यातायात की भीड़, अस्थायी बस्तियाँ और घटना की गतिशील प्रकृति वास्तविक समय में समायोजन और त्वरित निर्णय लेने की मांग करती है।
- **सांस्कृतिक और धार्मिक संवेदनशीलता:** कुम्भ मेला सिर्फ एक रसद संबंधी अभ्यास नहीं है। यह सांस्कृतिक और धार्मिक भावनाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। तीर्थयात्रियों की विविध मान्यताओं और प्रथाओं के प्रति संवेदनशीलता सद्भाव और समावेशिता बनाए रखने में महत्वपूर्ण है।
- **सुरक्षा संबंधी चिंताएँ:** लोगों की विशाल संख्या को देखते हुए, सुरक्षा एक सर्वोपरि चिंता है। प्रशासन को भगदड़, प्राकृतिक आपदाओं और चिकित्सा संकटों सहित आपात स्थितियों के लिए तैयार रहना चाहिए, जिसके लिए मजबूत आकस्मिक योजनाओं की आवश्यकता होती है।

इन चुनौतियों के बावजूद, महाकुम्भ मेला प्रशासन ने ऐसा वातावरण बनाने में उल्लेखनीय सफलता हासिल की है, जिससे लाखों लोग सुरक्षा, स्वास्थ्य या सांस्कृतिक संवेदनशीलता से समझौता किए बिना दिव्य संगम का अनुभव कर सकें।

20.14 स्वास्थ्य योजनाएँ

महाकुम्भ-2025 में आने वाले श्रद्धालुओं को योगी सरकार वर्ल्ड क्लास स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराएगी। इसके लिए स्वास्थ्य संबंधी 18 प्रोजेक्ट पर करीब 125 करोड़ रुपये की धनराशि खर्च की जा रही है। इससे मेला क्षेत्र, प्रयागराज शहर के अस्पताल और मेला क्षेत्र के रास्ते में पड़ने वाले सीएचसी-पीएचसी को अपग्रेड किया जा रहा है। साथ ही इन्हे हाइटेक टेक्नोलॉजी से लैस किया जा रहा है। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के निर्देश पर श्रद्धालुओं को बेहतर स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने के लिए मेला क्षेत्र में 43 अस्थायी अस्पताल बनाए जाएँगे, जबकि शहर के चार अस्पतालों में 305 बेड रिजर्व किये जाएँगे। वहीं आकस्मिक सेवाओं के लिए 24 घंटे डॉक्टर्स और पैरामेडिकल स्टाफ तैनात रहेंगे।

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ महाकुम्भ-2025 को दिव्य, भव्य और सुरक्षित आयोजित कराने के लिए लगातार बैठक कर आवश्यक दिशा-निर्देश दे रहे हैं। इसी के तहत उन्होंने महाकुम्भ-2025 में आने वाले श्रद्धालुओं को वर्ल्ड क्लास स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराने के निर्देश दिये हैं। ऐसे में सीएम योगी की मंशा के अनुरूप प्रयागराज में स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़े 18 प्रोजेक्ट संचालित हैं, जिसे करीब 125 करोड़ की लागत से धरातल पर उतारा जाएगा। महाकुम्भ मेला अधिकारी ने बताया कि स्वास्थ्य संबंधी कार्यों के लिए शासन की ओर अब तक 41.73 लाख का बजट जारी किया जा चुका है जबकि 57.97 लाख की धनराशि को हरी झंडी दे दे है। उन्होंने बताया कि जल्द ही यह धनराशि जारी कर दी जाएगी। सबसे पहले शासन ने शहर के चार अस्पताल मोती लाल नेहरू चिकित्सालय (कॉल्विन), तेज बहादुर सप्रू (बेली) अस्पताल, राजकीय क्षय रोग चिकित्सालय टेलियरगंज और जिला महिला चिकित्सालय (डफरिन) अस्पताल के अपग्रेडेशन के लिए 28 करोड़ रुपये जारी किये गये थे, जिसका काम चल रहा है। इन अस्पतालों में श्रद्धालुओं के लिए 305 बेड रिजर्व किये गये हैं। वहीं डफरिन अस्पताल में महिला श्रद्धालुओं के लिए 50 बेड रिजर्व किये गये हैं। इसके अलावा एंबुलेंस, बायो मेडिकल वेस्ट मैनेजमेंट, शव वाहन, डिजास्टर मैनेजमेंट और ऑफिस के लिए 13.73 लाख रुपये आवंटित किये गये हैं। उन्होंने बताया कि इस धनराशि से 125 रोड एंबुलेंस, 20 रिवर एंबुलेंस और 1 एयर एंबुलेंस की तैनाती की जाएगी।

मेला क्षेत्र में तैनात होंगे 407 डॉक्टर्स, 24 घंटे गाइनेकोलॉजिस्ट भी मौजूद रहेंगी। कुम्भ मेला क्षेत्र में श्रद्धालुओं को 24 घंटे स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए 407 डॉक्टर्स की तैनाती की जाएगी। इसके साथ ही 182 नर्सिंग स्टाफ, 150 वार्ड बॉयज, 354 फार्मासिस्ट और 60 लैब टेक्नीशियन की भी तैनाती होगी। महाकुम्भ में बड़ी संख्या में महिला श्रद्धालुओं के आने की संभावना है। ऐसे में उन्हें बेहतर स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराने के लिए विशेष इंतजाम किये जा रहे हैं। मेला क्षेत्र में स्थित अस्पतालों में तीन शिफ्ट में 48 महिला चिकित्सक अपनी सेवाएँ देंगी। इसके अलावा मेला क्षेत्र में 24 घंटे गाइनेकोलॉजिस्ट भी तैनात रहेंगी। सेंट्रल अस्पताल में लेबर रूम

की स्थापना की जा रही है। साथ ही 40 स्पेशलिस्ट डॉक्टर्स की टीम पर रहेगी। इसके अलावा सीएचसी और पीएचसी में भी 24 घंटे आकस्मिक सेवाएँ उपलब्ध रहेंगी। यहां पर अतिरिक्त दवाइयां, मरहम-पट्टी समेत अन्य चीजों के पर्याप्त इंतजाम करने के निर्देश दिये गये हैं।

48 बेड महिलाओं और 15 बेड बच्चों के लिए रहेंगे रिजर्व। सीएम योगी की मंशा के अनुरूप महाकुम्भ मेला क्षेत्र के अस्पतालों में महिलाओं और बच्चों के अलग-अलग वार्ड बनाए जाएंगे। इसके लिए 6 गाइनेकोलॉजिस्ट और 6 पीडियाट्रिक को शिफ्टवार तैनात किया जाएगा। यह सभी 24 घंटे अपनी सेवाएँ देंगे। उन्होंने बताया कि मेला क्षेत्र में 100 बेड का एक अस्थायी सेंट्रल अस्पताल बनाया जाएगा। इसमें 30 बेड महिलाओं और 10 बेड बच्चों के लिए रिजर्व रहेंगे।

सेंट्रल अस्पताल में 10 बेड महिलाओं और 3 बेड बच्चों के लिए रिजर्व किये जाएंगे। इसी तरह सेक्टर अस्पतालों में 8 बेड महिलाओं और 2 बेड बच्चों के लिए रिजर्व किये जाएंगे। यहां पर बाल रोग विशेषज्ञ परामर्शदाता की तैनाती की जाएगी। इतना ही नहीं मेला क्षेत्र में नशा मुक्ति केंद्र की स्थापना की जाएगी, जहां पर काउंसलर द्वारा लोगों को नशे के दुष्प्रभाव के बारे में बताया जाएगा।

20.15 सड़क यातायात प्रबंधन

कुम्भ मेले में सड़क यातायात प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की आवाजाही को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए विशेष यातायात प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें यातायात के प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात संकेतों का प्रबंधन करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में सड़क यातायात प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

- **यातायात प्रबंधन योजना:** एक विस्तृत यातायात प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें यातायात के प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात संकेतों का प्रबंधन करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।
- **यातायात संकेत और मार्गदर्शन:** यातायात संकेतों और मार्गदर्शन के माध्यम से लोगों को यातायात के नियमों और व्यवस्था के बारे में जानकारी दी जाती है।
- **आपातकालीन सेवाएँ:** आपातकालीन सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि एम्बुलेंस, फायर ब्रिगेड, और पुलिस।
- **सुरक्षा उपाय:** सुरक्षा उपायों की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि सीसीटीवी कैमरे, सुरक्षा गार्ड, और बैरिकेडिंग।

20.16 रेल यातायात प्रबंधन

कुम्भ मेले में रेल यातायात प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की आवाजाही को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए रेलवे प्रशासन द्वारा विशेष यातायात प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें यातायात के प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात संकेतों का प्रबंधन करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में रेल यातायात प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

1. **विशेष ट्रेनें:** कुम्भ मेले के दौरान विशेष ट्रेनें चलाई जाती हैं जो श्रद्धालुओं को उनके गंतव्य तक पहुंचाने में मदद करती हैं।
2. **रेलवे स्टेशनों का विस्तार:** कुम्भ मेले के दौरान रेलवे स्टेशनों का विस्तार किया जाता है ताकि अधिक यात्रियों को सुविधा प्रदान की जा सकें।
3. **यातायात प्रबंधन:** रेलवे प्रशासन द्वारा यातायात प्रबंधन के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जिसमें

यातायात के प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात संकेतों का प्रबंधन करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

4. **सुरक्षा उपाय:** कुम्भ मेले के दौरान रेलवे स्टेशनों और ट्रेनों में सुरक्षा उपायों की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि सीसीटीवी कैमरे, सुरक्षा गार्ड, और बैरिकेडिंग।
5. **यात्री सेवाएँ:** कुम्भ मेले के दौरान यात्री सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि भोजन, पानी, और चिकित्सा सेवाएँ।

20.17 जल यातायात प्रबंधन

कुम्भ मेले में जल यातायात प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की आवाजाही को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए विशेष यातायात प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें यातायात के प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात संकेतों का प्रबंधन करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में जल यातायात प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

- **नदी तटों पर सुरक्षा व्यवस्था:** नदी तटों पर सुरक्षा व्यवस्था की जाती है ताकि श्रद्धालुओं को सुरक्षित स्नान करने की सुविधा प्रदान की जा सके।
- **नाव और नौकायन व्यवस्था:** नाव और नौकायन व्यवस्था की जाती है ताकि श्रद्धालुओं को नदी पार करने की सुविधा प्रदान की जा सके।
- **आपातकालीन व्यवस्था:** आपातकालीन सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि एम्बुलेंस, फायर ब्रिगेड, और पुलिस।
- **यातायात की व्यवस्था:** यातायात प्रबंधन के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जिसमें यातायात के प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात संकेतों का प्रबंधन करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

20.18 अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन

कुम्भ मेले में अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों के द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट कचरे को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए विशेष अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें अपशिष्ट कचरे को इकट्ठा करने, उसे अलग करने, और उसका निपटान करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

1. **अपशिष्ट (कचरा) संग्रहण:** अपशिष्ट कचरे को इकट्ठा करने के लिए विशेष कंटेनर और डस्टबिन की व्यवस्था की जाती है।
2. **अपशिष्ट (कचरा) अलगाव:** अपशिष्ट कचरे को अलग करने के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जैसे कि जैविक और अजैविक अपशिष्ट कचरे को अलग करना।
3. **अपशिष्ट (कचरा) निपटान:** अपशिष्ट कचरे का निपटान करने के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जैसे कि अपशिष्ट कचरे को जलाने या उसे रिसाइकल करने के लिए।
4. **स्वच्छता अभियान:** कुम्भ मेले के दौरान स्वच्छता अभियान चलाया जाता है, जिसमें लोगों को स्वच्छता के महत्व के बारे में जागरूक किया जाता है।
5. **अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन के लिए तकनीकी सहायता:** अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन के लिए तकनीकी सहायता की जाती है, जैसे कि अपशिष्ट कचरे को इकट्ठा करने और उसे अलग करने के लिए मशीनों का उपयोग करना।

20.19 भीड़ नियंत्रण एवं प्रबंधन

कुम्भ मेले में भीड़ नियंत्रण एवं प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की आवाजाही को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए विशेष भीड़ नियंत्रण एवं प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें भीड़ को नियंत्रित करने, भीड़ के प्रवाह को नियंत्रित करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में भीड़ नियंत्रण एवं प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

1. **भीड़ नियंत्रण योजना:** भीड़ नियंत्रण योजना तैयार की जाती है, जिसमें भीड़ को नियंत्रित करने, भीड़ के प्रवाह को नियंत्रित करने, और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए व्यवस्था की जाती है।
2. **बैरिकेडिंग और रूट डाइवर्जन:** बैरिकेडिंग और रूट डाइवर्जन की व्यवस्था की जाती है ताकि भीड़ को नियंत्रित किया जा सके और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया की जा सके।
3. **सुरक्षा बलों की तैनाती:** सुरक्षा बलों की तैनाती की जाती है ताकि भीड़ को नियंत्रित किया जा सके और आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया की जा सके।
4. **आपातकालीन सेवाएँ:** आपातकालीन सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि एम्बुलेंस, फायर ब्रिगेड, और पुलिस।
5. **संचार व्यवस्था:** संचार व्यवस्था की जाती है ताकि आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया की जा सके।
6. **भीड़ प्रबंधन तकनीकी:** भीड़ प्रबंधन तकनीकी का उपयोग किया जाता है, जैसे कि सीसीटीवी कैमरे, ड्रोन, और सोशल मीडिया मॉनिटरिंग।
7. **स्वास्थ्य सेवाएँ:** स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि मेडिकल कैम्प, एम्बुलेंस, और हेल्पलाइन नंबर।

20.20 घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन

कुम्भ मेले में घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की आवाजाही को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए विशेष घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें घाटों की सुरक्षा, स्वच्छता, और सुव्यवस्था के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

1. **घाटों की सुरक्षा:** घाटों की सुरक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जैसे कि घाटों पर रेलिंग, सुरक्षा कैमरे, और सुरक्षा गार्ड की तैनाती।
2. **घाटों की स्वच्छता:** घाटों की स्वच्छता के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जैसे कि घाटों पर स्वच्छता कर्मचारियों की तैनाती, स्वच्छता उपकरणों की व्यवस्था, और घाटों की नियमित सफाई।
3. **घाटों की सुव्यवस्था:** घाटों की सुव्यवस्था के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जैसे कि घाटों पर यातायात प्रबंधन, पार्किंग की व्यवस्था, और घाटों के आसपास के क्षेत्रों की सुव्यवस्था।
4. **आपातकालीन सेवाएँ:** आपातकालीन सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि एम्बुलेंस, फायर ब्रिगेड, और पुलिस।
5. **संचार व्यवस्था:** संचार व्यवस्था की जाती है ताकि आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया की जा सके।
6. **सुरक्षा बलों की तैनाती:** सुरक्षा बलों की तैनाती की जाती है ताकि घाटों पर सुरक्षा और सुव्यवस्था

बनाए रखी जा सके।

7. **घाटों के आसपास के क्षेत्रों की सुव्यवस्था:** घाटों के आसपास के क्षेत्रों की सुव्यवस्था के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जैसे कि पार्किंग की व्यवस्था, यातायात प्रबंधन, और घाटों के आसपास के क्षेत्रों की स्वच्छता।

20.21 एनडीआरएफ (राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया बल)

एनडीआरएफ (राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया बल) कुम्भ मेले में प्रशासन की मदद करने के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य करता है। यहाँ कुछ प्रमुख कार्य हैं:

1. आपदा प्रबंधन

- **आपदा प्रतिक्रिया:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में किसी भी प्रकार की आपदा की स्थिति में त्वरित प्रतिक्रिया करने के लिए तैयार रहता है।
- **जोखिम मूल्यांकन:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में संभावित जोखिमों का मूल्यांकन करता है और उनके लिए तैयारी करता है।

2. सुरक्षा और सुरक्षा उपाय

- **सुरक्षा गार्ड:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में सुरक्षा गार्ड की तैनाती करता है ताकि श्रद्धालुओं की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके।
- **सुरक्षा उपकरण:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में सुरक्षा उपकरणों की व्यवस्था करता है, जैसे कि सीसीटीवी कैमरे, मेटल डिटेक्टर, और बम निरोधक उपकरण।

3. चिकित्सा सेवाएँ

- **चिकित्सा शिविर:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में चिकित्सा शिविर की व्यवस्था करता है ताकि श्रद्धालुओं को चिकित्सा सेवाएँ प्रदान की जा सकें।
- **चिकित्सा कर्मचारी:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में चिकित्सा कर्मचारियों की तैनाती करता है ताकि श्रद्धालुओं को चिकित्सा सेवाएँ प्रदान की जा सकें।

4. अन्य कार्य

- **संचार व्यवस्था:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में संचार व्यवस्था की व्यवस्था करता है ताकि आपातकालीन स्थितियों में त्वरित प्रतिक्रिया की जा सके।
- **सहयोग:** एनडीआरएफ कुम्भ मेले में अन्य एजेंसियों और संगठनों के साथ सहयोग करता है ताकि श्रद्धालुओं की सुरक्षा और सुविधा सुनिश्चित की जा सके।

20.22 खाद एवं रसद प्रबंधन

कुम्भ मेले में खाद एवं रसद प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों के लिए खाद्य सामग्री और अन्य आवश्यक वस्तुओं की व्यवस्था करना शामिल है। इसके लिए विशेष खाद एवं रसद प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें खाद्य सामग्री की खरीद, भंडारण, और वितरण के लिए व्यवस्था की जाती है।

कुम्भ मेले में खाद एवं रसद प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय –

1. **खाद्य सामग्री की खरीद:** कुम्भ मेले में खाद्य सामग्री की खरीद के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जिसमें स्थानीय किसानों और व्यापारियों से खाद्य सामग्री की खरीद की जाती है।
2. **भंडारण और वितरण:** खाद्य सामग्री के भंडारण और वितरण के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जिसमें खाद्य सामग्री को सुरक्षित और स्वच्छ तरीके से भंडारित किया जाता है और आवश्यकतानुसार वितरित किया

जाता है।

3. **रसद व्यवस्था:** कुम्भ मेले में रसद व्यवस्था के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जिसमें आवश्यक वस्तुओं की खरीद, भंडारण, और वितरण के लिए व्यवस्था की जाती है।
4. **स्वच्छता और सुरक्षा:** खाद्य सामग्री और रसद व्यवस्था में स्वच्छता और सुरक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है, जिसमें खाद्य सामग्री को सुरक्षित और स्वच्छ तरीके से भंडारित किया जाता है और आवश्यकतानुसार वितरित किया जाता है।
5. **आपातकालीन सेवाएँ:** आपातकालीन सेवाओं की व्यवस्था की जाती है, जैसे कि एम्बुलेंस, फायर ब्रिगेड, और पुलिस।

20.23 एयर एंबुलेंस

महाकुम्भ में प्रदेश सरकार ने स्वास्थ्य सेवाओं को विश्वस्तरीय बनाने के लिए ऐसी चाकचौबंद व्यवस्था की है जिसमें एयर एंबुलेंस तक की सुविधा फ्री में दी जाएगी। मेला क्षेत्र के अस्पतालों में किसी भी श्रद्धालु की जान सांसत में पड़ी, एम्स दिल्ली या एसजीपीजीआई रेफर करने की नौबत आई तो मेला प्राधिकरण के पैनल से अनुमति लेकर उसे एयर एंबुलेंस से भेजा जाएगा।

जिस कंपनी की एयर एंबुलेंस रहेगी उसी की ए.एल.एस. (एडवांस लाइफ सपोर्ट सिस्टम) एंबुलेंस, मरीज को अस्पताल से बमरौली हवाई अड्डे तक ले जाएगी। जिस हवाई अड्डे पर एयर एंबुलेंस उतरेगी वहां से संबंधित अस्पताल तक दूसरी एलएस की सेवा रहेगी।

एयर एंबुलेंस सेवा के लिए स्वास्थ्य विभाग और मेला प्राधिकरण के संयुक्त समझौता पत्र पर प्रोटोकाल तैयार होना है। इसमें मरीजों को एम्स या एसजीपीजीआई भेजने के नियम निर्धारित किए जाएंगे। एक बात समान रहेगी कि मरीज की श्रेणी में कोई भेद नहीं रखा जाएगा और एयर एंबुलेंस की सेवा उसे फ्री में दी जाएगी।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

7 कुम्भ मेले में प्रशासन द्वारा घाटों पर क्या व्यवस्था एवं प्रबंध किया जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

8 एनडीआरएफ राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया दल की कुम्भ मेले में क्या भूमिका होती है?

.....

.....

.....

.....

20.24 सारांश

कुम्भ मेला का आयोजन प्रशासनिक और प्रबंधन दृष्टिकोण से एक जटिल कार्य है। लाखों लोगों की भीड़, और अपर्याप्त संसाधनों के बावजूद कुम्भ मेला प्रशासन अपनी योजना और व्यवस्थाओं के माध्यम से एक बेहतरीन

उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस मेले की सफलता भारत के प्रशासनिक ढांचे, कार्यशीलता, और सामूहिक प्रयासों का परिचायक है।

यह आयोजन न केवल भारत, बल्कि पूरी दुनिया को यह संदेश देता है कि प्रभावी प्रशासन और प्रबंधन से कोई भी चुनौती दूर की जा सकती है, चाहे वह धार्मिक आयोजन हो या कोई अन्य बड़े स्तर का आयोजन।

भारतीय उपमहाद्वीप में हिंदू मठों के साथ-साथ दार्शनिक चर्चाओं और बहसों के लिए प्रमुख हिंदू सभाएँ शुरू करने के उनके प्रयासों के एक हिस्से के रूप में, इस त्यौहार का श्रेय पारंपरिक रूप से 8वीं शताब्दी के हिंदू दार्शनिक और संत आदि शंकराचार्य को दिया जाता है। हालाँकि, 19वीं शताब्दी से पहले कुम्भ मेला कहे जाने वाले इन सामूहिक तीर्थयात्राओं का कोई ऐतिहासिक साहित्यिक साक्ष्य नहीं है। ऐतिहासिक पांडुलिपियों, और शिलालेखों, में हिंदू धर्म में वार्षिक माघ मेले के पर्याप्त सबूत हैं — जिसमें 6 या 12 वर्षों के बाद समय-समय पर बड़ी सभाएँ होती हैं — जहां तीर्थयात्री भारी संख्या में इकट्ठा होते थे और जहां अनुष्ठानों में से एक में पवित्र स्नान भी शामिल था। मैकलीन के अनुसार, औपनिवेशिक युग के दौरान सामाजिक-राजनीतिक विकास और ओरिएंटलिज्म की प्रतिक्रिया के कारण प्राचीन माघ मेले को आधुनिक युग के कुम्भ मेले के रूप में पुनः ब्रांडेड और पुनर्गठित किया गया, खासकर 1857 के भारतीय विद्रोह के बाद।

20.25 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भ मेला परिचय एवं उसके महत्व की व्याख्या करें।
2. कुम्भ मेला प्रशासन कैसे कार्य करता है।
3. कुम्भ मेले के प्रशासनिक ढांचे के बारे में विस्तार से समझाइये।
4. कुम्भ मेलों में कौन कौन सी सार्वजनिक सेवाएँ होती हैं।
5. कुम्भ मेले में तकनीकी नवाचार पर एक लेख लिखें।
6. 'कुम्भ मेले में चुनौतियाँ और समाधान' पर अपने विचार व्यक्त करें।
7. प्रशासनिक नियोजन, समन्वय और क्रियान्वयन की समीक्षा कैसे कुम्भ मेले में की जाती है।
8. राजनीतिक योजना को क्यों महाकुम्भ प्रशासन की रीढ़ क्यों कहा जाता है?
9. तकनीकी एकीकरण कैसे महाकुम्भ प्रबंधन के नवाचार में सहयोग करता है?
10. कुम्भ मेले में मानवीय प्रयास एवं योजना के पीछे के लोग के बारे में एक लेख लिखें।
11. कुम्भ मेले में क्या क्या चुनौतियाँ प्रशासन के सामने होती हैं? उन जटिलता से प्रशासन कैसे निपटता है?
12. महाकुम्भ मेले में कौन-कौन सी स्वास्थ्य योजना, सरकार द्वारा चलाई जाती है ?
13. एयर एंबुलेंस क्या है, इसका उपयोग कुम्भ मेले में कैसे होता है ?

20.26 चर्चा के बिन्दु

- तकनीकी एकीकरण, नवाचार एवं महाकुम्भ प्रबंधन पर चर्चा कीजिए।
- महाकुम्भ में सरकार द्वारा चलाई गई स्वास्थ्य योजनाओं पर चर्चा कीजिए।
- सड़क एवं रेल यातायात प्रबंधन पर चर्चा कीजिए।
- अपशिष्ट (कचरा) प्रबंधन पर चर्चा कीजिए।

20.27 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. मुख्य आयोजन समिति, जिसे 'कुम्भ मेला आयोजन समिति' कहा जाता है, इसका प्रमुख कार्य मेलों के समग्र प्रबंधन का निरीक्षण और निगरानी करना होता है। इसमें राज्य और केंद्रीय सरकार के अधिकारी, प्रशासनिक

कर्मचारी, पुलिस, स्वास्थ्य सेवाएँ, और अन्य सरकारी विभाग शामिल होते हैं।

- 2 स्थानीय प्रशासन का कार्य कुम्भ मेला के क्षेत्रीय पहलुओं को संभालना होता है। इसमें नगर निगम, जिला प्रशासन, पुलिस विभाग, जल आपूर्ति और स्वच्छता विभाग, विद्युत विभाग, और यातायात विभाग शामिल होते हैं। स्थानीय प्रशासन मेलों के सही ढंग से संचालन के लिए जिम्मेदार होता है।
- 3 ड्रोन और उच्च तकनीकी कैमरों के माध्यम से पूरे मेला क्षेत्र की निगरानी की जाती है। इससे सुरक्षा सुनिश्चित होती है और प्रशासन को भी क्षेत्र के भीतर चल रही गतिविधियों का पता चलता रहता है।
- 4 स्वच्छता बनाए रखने के लिए स्मार्ट शौचालयों का निर्माण किया जाता है। इन शौचालयों में पानी की आपूर्ति स्वचालित होती है, और साफ-सफाई भी बेहतर रहती है।
- 5 कुम्भ मेला क्षेत्र की डिजिटल मैपिंग के लिए भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) तकनीक का उपयोग किया जाता है। यह स्थानिक नियोजन, भीड़ की निगरानी और बुनियादी ढांचे के विकास में सहायता करता है। वास्तविक समय का डेटा आयोजन की गतिशील प्रकृति को प्रबंधित करने के लिए सूचित निर्णय लेने में मदद करता है।
- 6 कुछ महाकुम्भ मेलों में भीड़ नियंत्रण और सुरक्षा के लिए बायोमेट्रिक पहचान प्रणाली का प्रयोग किया गया है। तीर्थयात्री स्वेच्छा से अपना बायोमेट्रिक डेटा पंजीकृत कराते हैं, जिससे प्रवेश और निकास की प्रक्रिया आसान हो जाती है।
- 7 कुम्भ मेले में घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की आवाजाही को सुरक्षित और सुव्यवस्थित तरीके से प्रबंधित करना शामिल है। इसके लिए विशेष घाटों की व्यवस्था एवं प्रबंधन योजना तैयार की जाती है, जिसमें घाटों की सुरक्षा, स्वच्छता, और सुव्यवस्था के लिए व्यवस्था की जाती है।
- 8 एनडीआरएफ (राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया बल) कुम्भ मेले में प्रशासन की मदद करने के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य करता है जैसे आपदा प्रबंधन सुरक्षा और सुरक्षा उपाय चिकित्सा सेवाएँ संचार व्यवस्था

20.28 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- कुम्भ मेला के पीछे ये हैं ज्योतिषीय और पौराणिक कारण अभिगमन तिथि 2021-12-12.
- कुम्भ मेला (Kumbh Mela) इतिहास महत्व और आयोजन— राधे राधे (अंग्रेज़ी में)— अभिगमन तिथि 2021-01-29.
- संग्रहीत प्रति मूल से 27 अक्टूबर 2015 को पुरालेखित— अभिगमन तिथि 17 नवंबर 2015.
- संग्रहीत प्रति मूल से 18 नवंबर 2015 को पुरालेखित— अभिगमन तिथि 17 नवंबर 2015.
- संग्रहीत प्रति मूल से 30 अक्टूबर 2015 को पुरालेखित— अभिगमन तिथि 17 नवंबर 2015.
- संग्रहीत प्रति मूल से 16 जुलाई 2015 को पुरालेखित— अभिगमन तिथि 15 जुलाई 2015.

इकाई – 21 : कुम्भ पर्व एवं समावेशी भारतीय संस्कृति

इकाई की संरचना

- 21.1 प्रस्तावना
- 21.2 उद्देश्य
- 21.3 कुम्भ पर्व की चिरन्तनता
- 21.4 समावेशन की अवधारणा
- 21.5 संस्कृति की अवधारणा
- 21.6 समावेशन एवं शिक्षा
- 21.7 समावेशी भारतीय संस्कृति
- 21.8 सारांश
- 21.9 अभ्यास के प्रश्न
- 21.10 चर्चा के बिन्दु
- 21.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 21.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

21.1 प्रस्तावना

भारत, अपनी विविधता में एकता का अनुपम उदाहरण है। यहां अनेक भाषाएँ, धर्म, जातियाँ और संस्कृतियाँ एक साथ रहती हैं। फिर भी, भारतीयों में एक गहरा सांस्कृतिक बंधन है जो उन्हें एक सूत्र में बांधे रखता है। यह बंधन सदियों से चली आ रही परंपराओं, रीति-रिवाजों और मूल्यों पर आधारित है। कुम्भ मेला इसी सांस्कृतिक बंधन का एक जीवंत उदाहरण है। कुम्भ मेला भारत का सबसे बड़ा धार्मिक मेला है। यह हर बारह साल में चार पवित्र नदियों – गंगा, यमुना, गोदावरी और शिप्रा के तट पर आयोजित किया जाता है। लाखों लोग इस मेले में भाग लेते हैं, चाहे वे किसी भी धर्म या जाति के हों। कुम्भ मेला न केवल एक धार्मिक आयोजन है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति का एक महान उत्सव भी है। कुम्भ का सम्बन्ध समुद्र मंथन की पौराणिक कथा से माना जाता है। इस कथा के अनुसार, देवताओं और असुरों ने मिलकर समुद्र मंथन किया था, जिससे अमृत निकला था। अमृत को पाने के लिए देवताओं और असुरों के बीच युद्ध हुआ था। इस युद्ध के दौरान अमृत की कुछ बूंदें चार स्थानों पर गिरी थीं, जहां आज कुम्भ मेले का आयोजन होता है। कुम्भ मेला धार्मिक महत्व के साथ-साथ सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व भी रखता है। यह मेला लोगों को एक साथ लाता है और उन्हें अपनी संस्कृति और परम्पराओं से जोड़ता है। कुम्भ मेले में लोग विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते हैं, जैसे कि संगीत, नृत्य और नाटक। यह मेला भारत की सांस्कृतिक विरासत का एक जीवंत प्रदर्शन है। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति की समावेशी प्रकृति का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह मेला सभी लोगों को एक साथ लाता है, चाहे वे किसी भी धर्म, जाति या समुदाय से हों। कुम्भ मेले में लोग एक-दूसरे के साथ मिलकर रहते हैं, खाते हैं और पीते हैं। यह मेला लोगों को एक-दूसरे के प्रति सहनशीलता और सम्मान का भाव विकसित करने में मदद करता है। भारत की समावेशी संस्कृति विभिन्न धर्मों, दर्शनों और विचारधाराओं को समाहित करने की क्षमता रखती है। भारत की इस समावेशी संस्कृति ने देश को दुनिया में एक अद्वितीय स्थान दिया है। कुम्भ मेला इस बात का प्रमाण है कि भारतीय संस्कृति कितनी समृद्ध और विविध है। यह मेला हमें याद दिलाता है कि हम सभी एक हैं और हमें एक साथ रहना चाहिए। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति की एक अनमोल धरोहर है और हमें इसे संजोकर रखना चाहिए। इस इकाई में समावेशन की अवधारणा, सांस्कृतिक विरासत का स्वरूप एवं कुम्भ पर्व के संदर्भ में सर्वसमावेशी भारतीय संस्कृति का विस्तृत वर्णन किया गया है।

21.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएंगे कि –

1. कुम्भ के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
 2. कुम्भ पर्व की चिरन्तनता के विषय में समग्र ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
 3. समावेशन की अवधारणा को समझ कर आत्मसात कर सकेंगे।
 4. भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
 5. महाकुम्भ के सम्बन्ध में अपने विचार अभिव्यक्त कर सकेंगे।
-

21.3 कुम्भ पर्व की चिरन्तनता

कुम्भ पर्व, विश्व का सबसे बड़ा और सबसे पुराना धार्मिक समागम है। यह केवल एक मेला नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिकता और इतिहास का एक जीवंत प्रतीक है। लाखों लोग हर बारह वर्ष में चार पवित्र नदियों – गंगा, यमुना, गोदावरी और शिप्रा के तट पर आयोजित होने वाले इस मेले में भाग लेने के लिए आते हैं। कुम्भ पर्व की उत्पत्ति के बारे में कई पौराणिक कथाएँ प्रचलित हैं। सबसे प्रसिद्ध कथा समुद्र मंथन से जुड़ी हुई है, जिसमें देवताओं और असुरों ने मिलकर अमृत निकाला था। इस दौरान कुछ अमृत की बूँदें चार स्थानों पर गिरी थीं, जहाँ आज कुम्भ मेला आयोजित किया जाता है। कुम्भ पर्व का महत्व केवल धार्मिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक भी है। यह मेला लोगों को एक साथ लाता है, उन्हें अपनी संस्कृति और परंपराओं से जोड़ता है और आध्यात्मिक जागरण का अवसर प्रदान करता है। कुम्भ पर्व भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का एक जीवंत उदाहरण है। कुम्भ शब्द का अर्थ है 'घट' या 'कलश'। यह प्रतीकात्मक रूप से ब्रह्मांड, जीवन और ज्ञान का प्रतिनिधित्व करता है। कुम्भ मेले में स्नान करने से पापों का नाश होता है और मोक्ष प्राप्त होता है ऐसा माना जाता है। कुम्भ का इतिहास बहुत पुराना है। वेदों, पुराणों और महाकाव्यों में कुम्भ का उल्लेख मिलता है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी कुम्भ पर्व के बारे में अपने यात्रा वृत्तांत में लिखा है। कुम्भ पर्व, भारतीय संस्कृति की समावेशी प्रकृति का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह मेला सभी लोगों को एक साथ लाता है, चाहे वे किसी भी धर्म, जाति या समुदाय से हों। कुम्भ मेले में लोग एक-दूसरे के साथ मिलकर रहते हैं, खाते हैं और पीते हैं। यह मेला लोगों को एक-दूसरे के प्रति सहनशीलता और सम्मान का भाव विकसित करने में मदद करता है। यह मेला हमें याद दिलाता है कि हम सभी एक हैं और हमें एक साथ रहना चाहिए। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति की एक अनमोल धरोहर है और हमें इसे संजोकर रखना चाहिए।

कुम्भ पर्व की कुछ विशेषताएँ

- विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक समागम – लाखों लोग इस मेले में भाग लेते हैं।
- सांस्कृतिक एकता – यह मेला भारत की सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है।
- आध्यात्मिक जागरण – यह मेला लोगों को आध्यात्मिक जागरण का अवसर प्रदान करता है।
- सांस्कृतिक विरासत – कुम्भ पर्व भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का एक जीवंत उदाहरण है।
- समाज सेवा – मेले के दौरान कई सामाजिक सेवा कार्य किए जाते हैं।
- पर्यटन – कुम्भ पर्व एक प्रमुख पर्यटन स्थल है।

कुम्भ पर्व, भारतीय संस्कृति की एक अद्वितीय और महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह मेला न केवल धार्मिक महत्व का है, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व का भी है। कुम्भ पर्व भारत की एकता और अखंडता का प्रतीक है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. कुम्भ पर्व एवं मेले की परंपरा को क्या माना जाता है ?

2. प्रयाग की धरती पर कुम्भ पर्व कितने दिनों तक चलता है ?

3. प्रतीकात्मक रूप से कुम्भ को किसका प्रतीक माना जाता है ?

4. मृत्तिका निर्मित जल कलश किसके लिए संबोधित किया जाता है?

5. कुम्भ किस काल में आध्यात्मिकता का प्रतीक था?

21.4 समावेशन की अवधारणा

समावेशन अर्थात् सभी को एक साथ सम्मिलित करना। यह एक ऐसा शब्द है जिसे हम अक्सर सुनते हैं। यह एक ऐसी अवधारणा है जो सदियों से भारतीय संस्कृति में रची-बसी रही है, लेकिन हाल के वर्षों में वैश्विक स्तर पर इसने विशेष महत्व प्राप्त किया है। भारतीय संस्कृति एवं साहित्य में समावेशन का विचार बहुत पहले से मौजूद है। हमारे शास्त्रों, पुराणों और महाकाव्यों में हमेशा से सभी जीवों की समानता और एकता पर जोर दिया गया है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' इसी बात का प्रमाण है। इसका अर्थ है, 'सारा संसार एक परिवार है।' यह विचार हमें सिखाता है कि हम सभी एक दूसरे से जुड़े हुए हैं और हमें भेदभाव से ऊपर उठकर एकजुट होना चाहिए। हालांकि, पाश्चात्य देशों में समावेशन की अवधारणा को हाल ही में अधिक महत्व दिया जाने लगा है। यहां समावेशन को विविधता से जोड़कर देखा जाता है। इसका मतलब है कि सभी लोगों को, चाहे वे किसी भी जाति, धर्म, लिंग या सामाजिक पृष्ठभूमि के हों, समाज की मुख्य धारा में शामिल किया जाए। समावेशन का लक्ष्य है कि सभी लोग शिक्षा, रोजगार और अन्य सामाजिक सुविधाओं का समान रूप से लाभ उठा सकें। इसका मतलब है कि दिव्यांग बच्चों, दलितों, आदिवासियों और अन्य वंचित वर्गों के लोगों को भी समान अवसर दिए जाएँ। समावेशन की अवधारणा में जाति, धर्म, वर्ग, लिंग आदि जैसे कृत्रिम विभाजनों को खत्म करने का विचार निहित है। इसका मतलब है कि सभी लोगों को समानता के साथ देखा जाए और उनके साथ भेदभाव न किया जाए। समावेशन का मतलब केवल लोगों को एक साथ लाना ही नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि सभी लोग अपनी क्षमताओं के अनुसार विकसित हो सकें। इसके लिए सभी लोगों को एक-दूसरे के विचारों और संस्कृतियों का सम्मान करना चाहिए। समावेशन एक प्रक्रिया है, एक लक्ष्य नहीं। यह एक ऐसा सतत प्रयास है जिसके लिए सभी को मिलकर काम करना होता है। समावेशी संस्कृति में सभी लोगों को समान अधिकार और अवसर मिलते हैं। यह एक ऐसी संस्कृति है जिसमें सभी लोग एक-दूसरे का सम्मान करते हैं और एक-दूसरे की मदद करते हैं। समावेशन न केवल एक सामाजिक मूल्य है, बल्कि यह आर्थिक विकास के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है। जब सभी लोग अपने पूर्ण क्षमता के साथ काम करते हैं, तो समाज का विकास होता है। समावेशन एक ऐसी अवधारणा है जो व्यक्ति के

आंतरिक और बाहरी दोनों पहलुओं को गहराई से प्रभावित करती है। यह न केवल व्यक्ति को समाज के साथ जोड़ती है बल्कि उसके भीतर एकता और सामंजस्य की भावना को भी जगाती है। समावेशन की प्रक्रिया में व्यक्ति आनंद, उल्लास और अपनत्व का अनुभव करता है, जिससे वह समाज के कल्याण के लिए प्रेरित होता है। समावेशन के माध्यम से व्यक्ति में आत्म-अनुभूति, प्रतिबद्धता, स्व-बन्धन, सह-अस्तित्व और सहनशीलता जैसे गुणों का विकास होता है। वह आदर्शों, आस्थाओं और सदाचारों के प्रति समर्पित हो जाता है और एक सार्वभौमिक दृष्टिकोण अपनाता है। विश्व के सभी धर्म और संस्कृतियाँ मानवीय गरिमा को सर्वोपरि मानती हैं और मानवीय मूल्यों को संरक्षित करती हैं। भले ही सभी धर्म और उनकी संस्कृतियाँ परस्पर भिन्न हों, लेकिन वे सभी एक सार्वभौमिक संदेश देते हैं जो मानवता के कल्याण के लिए समर्पित है। आधुनिक समय में मानव निर्मित विभेदों और संघर्षों को समाप्त करने के लिए समावेशन एक महत्वपूर्ण उपकरण है। यह गलत मानसिकता, नकारात्मक दृष्टिकोण और स्वार्थ को दूर करके एक ऐसी संस्कृति का निर्माण करता है जिसमें सभी को समान रूप से स्वीकार किया जाता है।

21.5 संस्कृति की अवधारणा

कोई भी समाज या राष्ट्र अपनी भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, बौद्धिक और शैक्षिक विशेषताओं के समूह से मिलकर बनता है, और इन्हीं सभी से मिलकर एक संस्कृति का निर्माण होता है। यह संस्कृति किसी राष्ट्र की आत्मा होती है, जो उसके नागरिकों के विचारों को दर्शाती है। व्यक्ति अपनी संस्कृति से जुड़कर विभिन्न गतिविधियों में भाग लेता है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति ज्ञानी, नैतिक और सम्य बनता है। इस प्रकार, मनुष्य के सभी कार्यों, व्यवहारों, उत्पादन और विकास का संयुक्त रूप संस्कृति है। संस्कृति के माध्यम से सत्य, शिव और सुंदर के लिए मनुष्य के मन में आकर्षण पैदा होता है।

यहाँ सम्यता और संस्कृति में अंतर समझना महत्वपूर्ण है। सम्यता किसी समाज या राष्ट्र का बाहरी रूप है, जैसे कपड़े, जबकि संस्कृति उसकी आत्मा है। सम्यता भौतिक चीजों से जुड़ी होती है, जबकि संस्कृति भौतिकता से ऊपर उठकर विचारों और आध्यात्मिकता की ओर बढ़ती है। सम्यता और संस्कृति दोनों ही मानव विकास के दो पहलू हैं। सम्यता विकास के भौतिक पहलू को दर्शाती है, जबकि संस्कृति विकास के सूक्ष्म आन्तरिक तत्वों को दर्शाती है।

‘संस्कृति’ शब्द ‘सम’ उपसर्ग और संस्कृत के ‘कृ’ धातु से बना है, जिसका अर्थ सजाना, संवारना या सुधारना होता है। ‘संस्कृति’ शब्द के दो भागों में विभाजन करने पर ‘सम्’ और ‘कृति’ शब्द मिलते हैं, जिसका अर्थ होता है सम्यक प्रकार से किया गया कार्य या व्यवहार। यह परिष्कृत या परिमार्जित करने की प्रक्रिया को दर्शाता है। अंग्रेजी में ‘संस्कृति’ को ‘कल्चर’ कहा जाता है, जो यूनानी शब्द ‘कल्चुरा’ से लिया गया है जिसका अर्थ उत्पादन या परिष्कार है।

शाब्दिक अर्थ में, संस्कृति किसी राष्ट्र के लोगों की वह संचित निधि है जो पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होती रहती है और इसमें ज्ञान, आदर्श, विश्वास, जीवन शैली, रीति-रिवाज, मान्यताएँ और मूल्य शामिल होते हैं। जे. रोसेक के अनुसार, संस्कृति किसी विशेष समय और स्थान पर रहने वाले लोगों के जीवन जीने के तरीके को दर्शाती है। मैलिनोव्सकी के अनुसार, संस्कृति में उपयोगी वस्तुएँ, साधन, प्रथाएँ और आदतें शामिल होती हैं जो मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। किसी भी समाज या राष्ट्र की संस्कृति में कुछ प्रमुख विशेषताएँ होती हैं, जैसे –

1. संस्कृति एक गतिशील प्रक्रिया है यह जन्मजात नहीं होती, बल्कि समाज के सदस्यों द्वारा रची और विकसित की जाती है।
2. संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होती रहती है।
3. समाज की संरचना, जैसे कि सामाजिक वर्ग, धर्म, और इतिहास, संस्कृति को आकार देती है।
4. संस्कृति में सर्वकल्याणकारी और आदर्शवादी मान्यताएँ और परंपराएँ होती हैं।
5. संस्कृति लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करती है और उन्हें संतुष्टि प्रदान करती है।
6. संस्कृति लोगों को अपने परिवेश के साथ समायोजित होने और अभिसरण करने में मदद करती है।

7. संस्कृति समाज के विकास, उन्नति, और संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
8. संस्कृति में विचार और व्यवहार दोनों शामिल होते हैं, जो दृढ़ता और व्यावहारिकता को दर्शाते हैं।
9. संस्कृति में रहन-सहन, वेशभूषा, खान-पान, आदर्श, मूल्य, ज्ञान, विश्वास आदि सभी शामिल होते हैं जो समाज के बारे में बहुत कुछ बताते हैं।
10. संस्कृति समय के साथ बदलती रहती है और नए विचारों और प्रथाओं को अपनाती है।
11. दुनिया में विभिन्न प्रकार की संस्कृतियां हैं, जो लोगों की विभिन्नता को दर्शाती हैं।
12. संस्कृति लोगों को एक साझी पहचान प्रदान करती है।
13. संस्कृति में मूल्य होते हैं जो समाज के सदस्यों के व्यवहार को निर्देशित करते हैं।
14. संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक विरासत में मिलती है।
15. संस्कृतियां एक-दूसरे से प्रभावित होती हैं और आपस में मिलती-जुलती हैं।
16. संस्कृति को संरक्षित करना महत्वपूर्ण है ताकि भविष्य की पीढ़ियों को इसका लाभ मिल सके।

संस्कृति को एक चमकदार मोती की तरह माना जा सकता है जिसमें कई रंगीन पहलू होते हैं। अलग-अलग समाजशास्त्रियों ने संस्कृति के इन पहलुओं को अलग-अलग तरीकों से वर्गीकृत किया है। उदाहरण के लिए, क्यूबर के अनुसार, संस्कृति में भाषा, ज्ञान, विश्वास, प्रथाएँ, कला, तकनीक, आदर्श और नियम जैसे आठ प्रमुख तत्व होते हैं। जबकि मैकाइवर और पेज के अनुसार, संस्कृति में व्यवहार प्रतिमान, विचारधारा, कला, साहित्य, धर्म और मनोरंजन जैसे छह प्रमुख तत्व होते हैं। संस्कृति मानव जीवन को समृद्ध और जीवंत बनाती है और हमें आस्था प्रदान करती है। यह हमें अपने आसपास के वातावरण के अनुकूल बनने, सामाजिक संबंधों को मजबूत बनाने, व्यक्तित्व का विकास करने और नैतिक मूल्यों को अपनाने में मदद करती है।

संस्कृति को दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है: भौतिक संस्कृति और अभौतिक संस्कृति। भौतिक संस्कृति में वे सभी चीजें आती हैं जो मूर्त रूप में होती हैं, जैसे घर, मशीनें, कपड़े, आदि। इसे सभ्यता भी कहा जा सकता है। जबकि अभौतिक संस्कृति में वे सभी चीजें आती हैं जो मूर्त नहीं होती हैं, जैसे भाषा, धर्म, मूल्य, आदि। यह वास्तविक संस्कृति मानी जाती है। मनुष्य के जीवन जीने का तरीका ही उसकी संस्कृति है। विभिन्न समूहों के अलग-अलग विश्वास और प्रथाएँ होने के कारण, एक ही राष्ट्र में कई तरह की उपसंस्कृतियां पाई जाती हैं। उदाहरण के लिए, उत्तर भारत की संस्कृति दक्षिण भारत की संस्कृति से अलग होती है। ये उपसंस्कृतियां स्थान, धर्म या जाति जैसी विभिन्नताओं के कारण बनती हैं।

आज के दौर में कोई भी देश अपनी सीमाओं के भीतर रहकर विकास नहीं कर सकता। हर देश को दुनिया के अन्य देशों के साथ अच्छे संबंध बनाकर सहयोग करना होता है, ताकि उसके नागरिकों का जीवन बेहतर हो सके। भारत के पहले प्रधानमंत्री, पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि दुनिया बहुत बदल गई है और अब हमें एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करना होगा। इसलिए, वैश्विक स्तर पर सांस्कृतिक सद्भाव और समावेश बहुत महत्वपूर्ण है। इसका मतलब है कि सभी देशों के लोग अपनी छोटी-छोटी सीमाओं को छोड़कर एक-दूसरे के साथ मिलजुलकर रहें। इससे दुनिया में शांति और विकास होगा।

यह स्वाभाविक है कि हर देश के लोग अपनी संस्कृति, रीति-रिवाज और धर्म से जुड़े होते हैं। लेकिन कभी-कभी लोग अपने देश से इतना अधिक जुड़ जाते हैं कि वे दूसरे देशों के लोगों को कमतर समझने लगते हैं। यह एक संकीर्ण सोच है जो किसी भी देश की तरक्की में बाधा डालती है। इस तरह की सोच के कारण देशों के बीच ईर्ष्या, नफरत और युद्ध जैसी स्थितियां पैदा हो जाती हैं। इसलिए दुनिया में शांति और विकास के लिए सांस्कृतिक सद्भाव बहुत जरूरी है। इसका मतलब है कि सभी देशों के लोग एक-दूसरे की संस्कृति का सम्मान करें और मिल-जुलकर रहें। जब हम एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करेंगे, तो हम सभी मुश्किलों का सामना कर सकते हैं और एक-दूसरे से बहुत कुछ सीख सकते हैं। सांस्कृतिक सद्भाव से दुनिया भर में व्यापार और वाणिज्य को बढ़ावा मिलता है और सभी देशों का विकास होता है। यह सभी लोगों को बराबर के अधिकार देता है और मानवता के प्रति विश्वास को बढ़ाता है।

निश्चित रूप से दुनिया में शांति और विकास के लिए सभी देशों को अपनी छोटी सी सोच से ऊपर उठकर एक-दूसरे के साथ मिलजुलकर रहना चाहिए। सांस्कृतिक सद्भाव का मतलब है कि सभी देशों के लोग एक-दूसरे की संस्कृति का सम्मान करें और एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करें। इससे देशों के बीच होने वाले झगड़े और युद्ध रुकेंगे और पूरी दुनिया में शांति और विकास होगा। सांस्कृतिक सद्भाव से हम सभी देशों के लोगों को विश्व नागरिक बनने का मौका मिलता है। इससे हम सभी मिलकर दुनिया की समस्याओं का समाधान कर सकते हैं और एक बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

21.6 समावेशन एवं शिक्षा

संस्कृति और शिक्षा, मानव जीवन के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं। संस्कृति हमें एक समृद्ध परिवेश और व्यवस्था प्रदान करती है, जबकि शिक्षा हमारे व्यक्तित्व का विकास करती है। अगर कोई व्यक्ति सही तरह से शिक्षित नहीं होता है तो वह अपनी संस्कृति को पूरी तरह से समझ नहीं पाता। शिक्षा के माध्यम से ही हम अपनी संस्कृति के बारे में जानते हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि शिक्षा, संस्कृति को आगे बढ़ाने का एक जरिया है। शिक्षा और संस्कृति का आपस में गहरा संबंध है। यही कारण है कि शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का सांस्कृतिक विकास करना है। संस्कृति और शिक्षा एक-दूसरे के पूरक हैं। जब दोनों मिलकर काम करते हैं, तभी व्यक्ति का सर्वांगीण विकास संभव होता है। ए० के० सी० ओटावे ने कहा है कि "शिक्षा किसी भी समाज की पूरी संस्कृति पर आधारित होती है।" और थ्योडोर व्रामेल्ड ने कहा है कि "संस्कृति के तत्वों से ही शिक्षा का निर्माण होता है और ये ही तत्व शिक्षा के उद्देश्यों को भी निर्धारित करते हैं।" इसका मतलब है कि संस्कृति के बिना शिक्षा अधूरी है और शिक्षा के बिना संस्कृति आगे नहीं बढ़ सकती। इसलिए हर समाज अपनी संस्कृति के अनुसार ही अपने लोगों को शिक्षित करता है।

शिक्षा, किसी भी संस्कृति के विकास और संरक्षण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह न केवल संस्कृति को नई ऊर्जा देती है बल्कि इसे समय के साथ बदलते हुए समाज के अनुरूप भी बनाती है।

शिक्षा, किसी भी समाज की सांस्कृतिक समृद्धि और एकता में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह न केवल व्यक्ति को अपनी संस्कृति के बारे में जानकारी देती है बल्कि उसे अन्य संस्कृतियों के प्रति सम्मान और सहनशीलता भी सिखाती है।

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) का गठन पूरी दुनिया में शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने और शांति स्थापित करने के उद्देश्य से किया गया था। यूनेस्को का मानना है कि शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति, मानव विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं और इनके माध्यम से ही हम एक बेहतर दुनिया का निर्माण कर सकते हैं। यूनेस्को का मानना है कि शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति के माध्यम से हम एक ऐसी दुनिया का निर्माण कर सकते हैं जहां सभी लोग शांति और सद्भाव के साथ रह सकें।

यूनेस्को ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शांति स्थापित करने के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात कही है। उन्होंने कहा है कि युद्धों की शुरुआत लोगों के मन से होती है। अगर हमें दुनिया में शांति स्थापित करनी है तो हमें लोगों के मन में बदलाव लाना होगा। यूनेस्को का मानना है कि शांति सिर्फ राजनीतिक समझौतों से नहीं आ सकती है। इसके लिए हमें लोगों के दिलों और दिमाग में शांति की भावना पैदा करनी होगी। हमें शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति के माध्यम से लोगों को एक-दूसरे के प्रति सम्मान और सहनशीलता सिखानी होगी। यूनेस्को ने यह भी कहा है कि हमें मानवता और संस्कृति को बचाना और फैलाना होगा। जब हम अपनी संस्कृति को समझेंगे और दूसरे लोगों की संस्कृतियों का सम्मान करेंगे, तभी हम एक शांतिपूर्ण दुनिया का निर्माण कर सकते हैं। यूनेस्को का यह कहना है कि हमें सभी देशों को मिलकर काम करना चाहिए और एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए। जब हम सभी मिलकर काम करेंगे तभी हम एक शांतिपूर्ण दुनिया का निर्माण कर सकते हैं।

बोध प्रश्न—

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

6. शिक्षा संस्कृति को किस प्रकार से प्रभावित करती है ?

7. थ्योडोर व्रामेल्ल के अनुसार शिक्षा तथा संस्कृति के संबंध को स्पष्ट कीजिए।

8. संस्कृत शब्द का विच्छेद करने पर कितने शब्द प्राप्त होते हैं ?

9. कल्चर शब्द यूनानी भाषा के किस शब्द से बना है ?

10. समाज एवं राष्ट्र की संस्कृति में पायी जाने वाली दो विशेषताओं को लिखिए।

21.7 समावेशी भारतीय संस्कृति

कुम्भ मेला विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक समागम है। भारत में सदियों से मेलों और उत्सवों का विशेष महत्व रहा है और कुम्भ मेला इसी परंपरा का सबसे बड़ा उदाहरण है। लाखों श्रद्धालु पवित्र नदियों में स्नान करने, पूजा करने और धार्मिक अनुष्ठान करने के लिए यहां एकत्र होते हैं। कुम्भ मेले के शुरुआत के बारे में कोई ठोस ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलते हैं। विभिन्न पौराणिक कथाओं में इसके प्रारंभ के बारे में अलग-अलग मत पाए जाते हैं। कुम्भ मेले का महत्व सिर्फ धार्मिक ही नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक भी है। यह लोगों को एक साथ लाता है और सामाजिक एकता को बढ़ावा देता है। कुम्भ मेला भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का प्रतीक है और स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी बढ़ावा देता है। कुम्भ मेले की विशेषताएँ हैं— विभिन्न अखाड़ों के साधु-संतों का जमावड़ा, शाही स्नान, संत महात्माओं का आगमन और लाखों श्रद्धालुओं की उपस्थिति। कुम्भ मेले का प्रतीकात्मक अर्थ देव और असुर, सत् और असत्, पक्ष और विपक्ष जैसे विरोधी तत्वों के बीच संघर्ष और सामंजस्य को भी माना जाता है। यह भारत की सांस्कृतिक विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और लाखों लोगों के लिए आस्था का केंद्र है।

संक्षेप में कहें तो यह रचनात्मक विचारों का आदान-प्रदान, ज्ञान का संगम और विवेकशीलता के माध्यम से नकारात्मकता को कम करने का एक प्रयास है। यह एक ऐसा मंच है जहां लोग एकजुट होकर इस पवित्र उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

कुम्भ मेले के दौरान लाखों तीर्थयात्री, साधु और ज्ञानी एक साथ आते हैं और एक छोटे से भारत का रूप ले लेते हैं। बदलते समय के साथ भी कुम्भ मेले की धार्मिक आस्थाएँ बनी हुई हैं। यह मेला भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को दुनिया के सामने पेश करता है। कुम्भ मेला अध्यात्म के गूढ़ रहस्यों पर चर्चा करता है और लोगों को एक बेहतर जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है। कुम्भ मेला धर्म के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का भी संदेश देता है। कल्पवास के दौरान लोग संयम, अनुशासन और पर्यावरण के प्रति प्रेम का प्रदर्शन करते हैं। कुम्भ मेला नदी संस्कृति से जुड़ा हुआ है और यह लोगों को आध्यात्मिक ऊर्जा प्राप्त करने और मनन करने का अवसर प्रदान करता है। प्रयाग कुम्भ का विशेष महत्व है क्योंकि यहां तीन नदियों – गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम होता है। कुम्भ मेले के दौरान खगोलीय घटनाएँ भी होती हैं और लोग यहां आकर मनीषियों के विचारों को सुनते हैं और आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करते हैं।

कुम्भ पर्व एक ऐसा विचार मंच है जो समाज में नई सोच और आध्यात्मिक जागृति एवं चेतना को जन्म देता है। प्रत्येक वर्ष लगने वाले कुम्भ मेले के बीच का समय कई प्रश्नों, चुनौतियों सम्भावनों और नवीन विचारों को लेकर आता है। आज के समय में जब ज्ञान का प्रवाह बहुत तेज है, तब भी प्राचीन भारतीय ज्ञान को आम लोगों

तक पहुंचाना एक बड़ी चुनौती है। कुम्भ मेले में साधु, संत, मनीषी और आराधक अपने ज्ञान और अनुभव को आम लोगों के साथ आदान-प्रदान करते हैं। इस तरह कुम्भ मेला लोगों को ज्ञान का अमृतपान कराता है और उन्हें आध्यात्मिक रूप से समृद्ध और सशक्त बनाता है।

कुम्भ मेले का आयोजन तब होता है जब खगोलीय ग्रहों की स्थिति अनुकूल होती है। सूर्य को प्राण, चंद्र को मन और बृहस्पति को बुद्धि का प्रतीक माना जाता है। प्रयाग कुम्भ के लिए इन तीनों ग्रहों का विशेष संयोग आवश्यक होता है। जब बुद्धि, मन और प्राण एक साथ मिलते हैं तो मनुष्य अपनी क्षमताओं को पूरी तरह से विकसित कर पाता है।

यह एक ऐसा मंच है जहां विभिन्न समुदायों के लोग एक-दूसरे के साथ मिलते हैं और एक-दूसरे को समझते हैं। कुम्भ मेला लोगों को जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्रवाद से ऊपर उठकर एकजुट होने का अवसर देता है। कुम्भ मेला भारतीय धर्म और संस्कृति को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह लोगों को योग, अध्यात्म और कल्पवास के बारे में ज्ञान कराता है। कुम्भ मेला पर्यावरण संरक्षण, आपदा प्रबंधन और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देने में भी मदद करता है। यह लोगों को भौगोलिक ज्ञान, परिवहन और सुरक्षा के बारे में जागरूक करता है। कुल मिलाकर, कुम्भ मेला मानवता को एकजुट करने और एक बेहतर, सशक्त एवं सुदृढ़ समाज बनाने में योगदान देता है।

कुम्भ मेला सिर्फ भारत के लोगों के लिए ही नहीं बल्कि पूरी सृष्टि के लिए भारतीय संस्कृति का एक अनमोल खजाना है। यह मेला भारत की विभिन्न संस्कृतियों, रीति-रिवाजों, परंपराओं, धार्मिक विश्वासों और विचारों को एक साथ लाता है। कुम्भ मेला लोगों को भारत की समृद्ध विरासत के बारे में बताता है और उनके मन में भारत के प्रति सम्मान और गर्व का भाव पैदा करता है। इस तरह कुम्भ मेला भारत को विश्व पटल पर एक सम्मानित स्थान दिलाता है।

कुम्भ मेले में सिर्फ हिंदू ही नहीं, बल्कि विभिन्न धर्मों, जातियों और विभिन्न पृष्ठभूमि के लाखों लोग एक साथ आते हैं। वे अपने सभी मतभेदों को भुलाकर गंगा और यमुना नदी में स्नान करते हैं और भारत की एकता को मजबूत करते हैं। यह मेला नैतिक मूल्यों की शिक्षा का एक अनूठा मंच है। कुम्भ मेला लोगों को निरंतर आगे बढ़ने और अच्छा इंसान बनने के लिए प्रेरित करता है। यह एक ऐसे समाज का निर्माण करता है जहां सभी लोग समान हों और एक-दूसरे का सम्मान करें। कुम्भ मेला संतुलित, सक्षम और समावेशी व्यक्तित्वों का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कुम्भ मेला सिर्फ एक धार्मिक आयोजन नहीं है, बल्कि यह जीवन के हर पहलू से जुड़ा हुआ है। यहां ज्ञान का भंडार मौजूद है। यह मेला भारत की समृद्ध इतिहास, दर्शन और संस्कृति को प्रदर्शित करता है। विदेशी विद्वान भी भारत की इस विरासत को समझने के लिए कुम्भ मेले में आते हैं। भारत जैसा विविधतापूर्ण देश में जहां कई धर्म, भाषाएँ और संस्कृतियाँ एक साथ रहती हैं, वहां कुम्भ मेला एकता का प्रतीक है। यह एक ऐसा मंच है जहां सभी लोग एक साथ आकर अपनी संस्कृति को साझा करते हैं। कुम्भ मेला राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और सामाजिक एकता को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कल्पवास के दौरान लोगों को अमरत्व का अनुभव होता है। यह अमरत्व कोई भौतिक वस्तु नहीं है, बल्कि ज्ञान और विवेक का फल है जो कल्पवास के दौरान सत्संग और विभिन्न जानकारीयों से मिलता है। गंगा, यमुना और सरस्वती नदी की पवित्रता के कारण कुम्भ मेला लोगों को बहुत आकर्षित करता है।

कुम्भ मेला वैज्ञानिक, भौगोलिक, खगोलीय और पर्यावरणीय दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है। यहां देश के विभिन्न हिस्सों से व्यापारी, शिल्पी और कलाकार आते हैं और अपने उत्पाद प्रदर्शित करते हैं। इससे लोगों को विभिन्न प्रकार के ज्ञान और कला से रूबरू होने का मौका मिलता है।

कुम्भ मेले में आने वाले लोगों को भौगोलिक, पर्यावरणीय और यातायात के बारे में भी बहुत कुछ सीखने को मिलता है। गंगा, यमुना और सरस्वती नदी के संगम पर लाखों लोग एक साथ आते हैं और विभिन्न प्रकार के ज्ञान और संस्कृति का लाभ उठाते हैं। यह मेला सामाजिक एकता और मानव कल्याण को बढ़ावा देता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

11. समावेशन के माध्यम से व्यक्तियों में किस प्रकार के गुणों का विकास होता है ?

12. कल्पवास के दौरान लोग किसका प्रदर्शन करते हैं ?

13. सूर्य, चंद्र बृहस्पति को किसका प्रतीक माना जाता है ?

14. कुम्भ मेला किसका प्रतीक है ?

21.8 सारांश

समावेशित अस्तित्व भारतीय जन मानस में विद्यमान दृढ़ इच्छा शक्ति व जिजीविषा की अक्षुण्ण सांस्कृतिक परंपरा को प्रदर्शित करता है। इसी समावेशन व चेतना के परिणाम स्वरूप हमारे देश में आने वाले अधिकांश विदेशी प्रभाव हमारी संस्कृति को थोड़ा बहुत प्रभावित करते हुए इसी में समाहित होते रहे हैं।

निसंदेह समावेशी चिंतन के दार्शनिक दृष्टिकोण ने भारत को एक सुदृढ़ निरंतरता वैचारिक समरसता तथा स्वाभाविक स्थायित्व प्रदान करने में लगातार महत्वपूर्ण योगदान किया है। प्रस्तुत इकाई में कुम्भ पर्व के परिप्रेक्ष्य में सर्व समावेशी भारतीय संस्कृति में निहित समावेशिता की प्रवृत्ति एवं उसकी प्रासंगिकता पर समसामयिक एवं प्रासंगिक है।

कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति की समावेशी प्रकृति का एक जीवंत उदाहरण है। यह मेला लोगों को एक साथ लाता है और उन्हें अपनी संस्कृति और परंपराओं से जोड़ता है। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति की एक अनमोल धरोहर है और हमें इसे संजोकर रखना चाहिए।

21.9 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भ की चिरंतनता का वर्णन कीजिए।
2. कुम्भ आध्यात्मिक जागरण का मंच है, व्याख्या कीजिए।
3. समावेशन की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
4. संस्कृति की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
5. समावेशी भारतीय संस्कृति का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

21.10 चर्चा के बिन्दु

1. कुम्भ पर्व एवं भारतीय संस्कृति पर चर्चा कीजिए।
2. सर्वसमावेशी कुम्भ पर वृहद चर्चा कीजिए।

खण्ड-6 कुम्भ पर्व की शाश्वतता

21.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अनादि
2. चालीस दिनों तक
3. ब्रह्मांड
4. कुम्भ
5. वैदिक काल
6. शिक्षा संस्कृति को निम्न प्रकार से प्रभावित करती है –
 - **नई संस्कृति का निर्माण** – शिक्षा के माध्यम से नए विचारों और दृष्टिकोणों का विकास होता है। ये नए विचार संस्कृति में नए बदलाव लाते हैं और इसे समृद्ध बनाते हैं।
 - **पुरानी परंपराओं का पुनर्मूल्यांकन** – शिक्षा हमें पुरानी परंपराओं और रीति-रिवाजों पर सवाल उठाने और उनका पुनर्मूल्यांकन करने का मौका देती है। जो परंपराएँ अब प्रासंगिक नहीं रह गई हैं, उन्हें त्यागने में मदद करती है।
7. थ्योडोर ब्रामेलड ने कहा है कि “संस्कृति के तत्वों से ही शिक्षा का निर्माण होता है और ये ही तत्व शिक्षा के उद्देश्यों को भी निर्धारित करते हैं।”
8. संस्कृति शब्द का विच्छेद करने पर सम् और कृति नामक दो शब्द प्राप्त होते हैं।
9. कल्चर शब्द यूनानी भाषा के ‘कल्चुरा’ से लिया गया है
10. समाज एवं राष्ट्र की संस्कृति में पायी जाने वाली दो विशेषताएँ निम्नवत् हैं –
 - संस्कृति एक गतिशील प्रक्रिया है यह जन्मजात नहीं होती, बल्कि समाज के सदस्यों द्वारा रची और विकसित की जाती है।
 - संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होती रहती है।
11. समावेशन के माध्यम से व्यक्ति में आत्म-अनुभूति, प्रतिबद्धता, स्व-बन्धन, सह-अस्तित्व और सहनशीलता जैसे गुणों का विकास होता है। वह आदर्शों, आस्थाओं और सदाचारों के प्रति समर्पित हो जाता है और एक सार्वभौमिक दृष्टिकोण अपनाता है।
12. कल्पवास के दौरान लोग संयम, अनुशासन और पर्यावरण के प्रति प्रेम का प्रदर्शन करते हैं।
13. सूर्य को प्राण, चंद्र को मन और बृहस्पति को बुद्धि का प्रतीक माना जाता है।
14. कुम्भ मेला आध्यात्मिकता एवं एकता का प्रतीक है।

21.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16. भारतीय संस्कृति, नरेन्द्र मोहन, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
17. सर्वसमावेशी संस्कृति कुम्भ, प्रकाशक—कुलसचिव उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय प्रयागराज, मुद्रक—चंद्रकला यूनिवर्सल प्रा0 लि0, जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज।
18. वैदिक साहित्य और संस्कृति, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली-7
19. हिन्दू दर्शन: एक समकालीन दृष्टि, डॉ. कर्णसिंह, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
20. भारतीय समाज व संस्कृति, रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली-7

21. अग्रवाल, मीनू (2013) : कुम्भ पर्व प्रयाग, इलाहाबाद: राजपाल एंड कम्पनी ।
22. क्रासा, मिलोस्लाव (19
- 23.
24. 65): कुम्भ मेला: द ग्रेटेस्ट पिलग्रीमेज इन द वर्ल्ड', न्यू ओरिन्ट
25. गुप्ता, एस.पी. एवं अलका गुप्ता (2019): भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन ।
26. गुप्ता, मोतीलाल (2013): भारत में समाज, जयपुर: राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी ।
27. दिनकर, रामधारी सिंह (2009): संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन
28. दूबे, देवी प्रसाद (2009): कुम्भपर्व प्रयाग, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन
29. दूबे, डी.पी. (सं.) (2013): कुम्भ मेला, पिलग्रीमेज टू द ग्रेटेस्ट कॉस्मिक फेयर इलाहाबाद: सोसाइटी ऑफ पिलग्रीमेज स्टडीज ।
30. दूबे, एच. एन. (2012): भारतीय संस्कृति, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन ।
31. नेहरू, जवाहरलाल (1961): द डिस्कवरी ऑफ इंडिया, न्यू देल्ही: नेहरू मेमोरियल फण्ड ।
32. महात्मा गाँधी (2010): हिन्द स्वराज, इलाहाबाद: कस्तूरबा गाँधी केन्द्र: प्रभात प्रकाशन
33. बनर्जी, एन. एन. (1977): पूर्ण कुम्भ एट प्रयाग, हिन्दुत्व, 9-10

इकाई – 22 : भारतीय साहित्य में कुम्भ

इकाई की रूपरेखा

22.1 प्रस्तावना

22.2 उद्देश्य

22.3 भारतीय प्राचीन ग्रंथों में कुम्भ

22.3.1 वेदों और उपनिषदों में

22.3.2 पुराणों में कुम्भ

22.4 संस्कृत साहित्य में कुम्भ

22.5 मध्यकालीन साहित्य में कुम्भ

22.6 आधुनिक हिंदी साहित्य में कुम्भ

22.7 लोक साहित्य में कुम्भ

22.8 सारांश

22.9 अभ्यास के प्रश्न

22.10 चर्चा के बिंदु

22.11 बोध प्रश्न और उनके उत्तर

22.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

22.1 प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति और परंपरा का इतिहास सदियों पुराना और अत्यंत समृद्ध है। इसमें धार्मिक आयोजनों और मेलों का विशेष स्थान रहा है, और इनमें से कुम्भ मेला अद्वितीय है। कुम्भ केवल एक धार्मिक आयोजन नहीं है, बल्कि यह भारत की सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक संरचना और आध्यात्मिक चेतना का प्रतीक भी है। इसे विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक और सांस्कृतिक उत्सव माना जाता है, जहाँ लाखों श्रद्धालु, संत, महात्मा, तीर्थयात्री, और पर्यटक एकत्रित होते हैं। महाकुम्भ मेला विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक समागम है, जो भारत की पवित्र नदियों के किनारे लाखों श्रद्धालुओं, संतों, और भक्तों को एकत्रित करता है। प्रत्येक 12 वर्षों में होने वाला यह पर्व न केवल धार्मिक आस्था का प्रतीक है, बल्कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अद्वितीय परिचायक भी है। यह पर्व न केवल धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है बल्कि भारतीय समाज की एकता, सहिष्णुता और विविधता को भी दर्शाता है। यह मेला न केवल भारत में, बल्कि पूरे विश्व में एक विशेष स्थान रखता है, प्रत्येक महाकुम्भ में अनेक विदेशी श्रद्धालु, योगी तथा पर्यटक भाग लेने आते हैं। कुम्भ ने भारतीय संस्कृति, योग और आध्यात्मिकता को विश्व पटल पर स्थापित किया है। इसके आयोजन को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी सराहा गया है, एवं संयुक्त राष्ट्र द्वारा 'मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मान्यता प्राप्त है।

कुम्भ का उल्लेख वेदों, पुराणों, और महाकाव्यों में मिलता है। अमृत मंथन की कथा से जुड़ा यह मेला प्रयागराज, नासिक, हरिद्वार एवं उज्जैन में पवित्र नदियों के किनारे आयोजित होता है। इसका स्वरूप इतना विशाल है कि यह साहित्य, कला, और लोककथाओं का अनिवार्य हिस्सा बन गया है। भारतीय साहित्य ने कुम्भ को केवल एक धार्मिक आयोजन के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक परिदृश्य के रूप में चित्रित किया है।

संस्कृत साहित्य में कुम्भ का उल्लेख धार्मिक महत्व के साथ-साथ गूढ़ आध्यात्मिक रहस्यों के रूप में किया गया है। वहीं हिंदी साहित्य में कुम्भ को एक जन-आंदोलन, सामाजिक मेलजोल और मानवीय अंतःक्रिया के प्रतीक

के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आधुनिक युग के लेखकों ने कुम्भ मेले को धार्मिकता और समाज के मध्य पुल के रूप में देखा है। यात्रा वृत्तांतों में यह उत्सव न केवल धार्मिक यात्राओं का केंद्र है, बल्कि जीवन के विविध पहलुओं और मानवीय संवेदनाओं का जीवंत चित्रण भी करता है। कुम्भ का महत्व केवल धार्मिकता तक सीमित नहीं है। यह आयोजन विभिन्न वर्गों, संस्कृतियों, और जीवन के दृष्टिकोणों को एक साथ जोड़ता है। साहित्य में कुम्भ मेला, भारत की सामाजिक जटिलताओं और आध्यात्मिक ऊँचाइयों का प्रतिबिंब है। यह न केवल परंपराओं को सहेजने का माध्यम है, बल्कि समकालीन परिवेश में इसके गहन अर्थों को समझने का अवसर भी प्रदान करता है।

22.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययनोपरांत आप—

- कुम्भ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को आप समझ सकेंगे।
- भारतीय साहित्य में कुम्भ के वर्णन को आप समझ सकेंगे।
- कुम्भ के माध्यम से विभिन्न भारतीय संस्कृतियों और परंपराओं के समन्वय को समझ सकेंगे।
- कुम्भ के बहुआयामी पक्षों के समझ सकेंगे।
- विभिन्न कालों में इसके साहित्यिक चित्रण को समझ सकेंगे।

22.3 भारतीय प्राचीन ग्रंथों में कुम्भ

भारतवर्ष में कुम्भ भिन्न-भिन्न चार स्थानों पर प्रमुख पवित्र नदियों के तट पर आयोजित होता है—

हरिद्वार कुम्भ— हरिद्वार कुम्भ के विषय में स्कंद पुराण में वर्णित है कि—

“पदमिनी नायके मेषे कुम्भ राशिगते गुरौ।

गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भ नामा तदोत्तमः।।”

अर्थात् गुरु के कुम्भ राशि में संचरण करने पर जब सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है तो उस समय हरिद्वार में कुम्भ महापर्व का संयोग बनता है।

इसी हरिद्वार कुम्भ के विषय में धर्म सिंधु नामक पुस्तक में वर्णित है कि—

“कुम्भ राशि गते जीवे मेषराशि रवौ।

हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्तिः वर्जनम् ।।

लोके कुम्भः इतिख्यातः जानीयात् सर्वकामदः।

गंगायां स्नानं माहात्म्यं नालं वक्तुं चतुर्मुखः।।”

अर्थात् जब वृहस्पति कुम्भ राशि में प्रवेश करता है और सूर्य मेष राशि में स्थित होता है, तब कुम्भ मेले का विशेष बल संयोग बनता है ऐसे समय में हरिद्वार में गंगा में किये स्नान से मनुष्य को पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है तथा मोक्ष प्राप्त होता है। यह कुम्भ स्नान संसार में प्रसिद्ध है और सभी इच्छाओं की पूर्ति करने वाला माना गया है। अतः गंगा में स्नान का इतना महत्व है कि स्वयं चतुर्मुख ब्रह्मा भी इसका संपूर्ण वर्णन करने में असमर्थ है।

प्रयाग कुम्भ —

प्रयागराज में कुम्भ माघ मास की अमावस्या को जब गुरु, वृषभ राशि में तथा सूर्य एवं चंद्रमा मकर राशि में संचरण करते हैं तो प्रयागराज में कुम्भ पर्व का संयोग बनता है। जैसा कि स्कंद पुराण वर्णित है—

“मकरे च दिवानाथे वृषराशि गते गुरौ।

प्रयागे कुम्भ योगे वै माघ मासे विधुक्षये ।।”

उज्जैन कुम्भ—

उज्जैन क्षिप्रा नदी तट पर स्थित है जो महाकालेश्वर का क्षेत्र है। पौराणिक काल से ही वैशाख शुक्ल पूर्णिमा को जब गुरु, सिंह राशि में होते हैं, सूर्य मेष राशि में और चन्द्रमा, तुला राशि में हो तो उस वर्ष अवन्तिकापुरी उज्जैन में क्षिप्रा नदी के तट पर कुम्भ महापर्व मनाए जाने संयोग बनता है। इसको सिंहस्थ पर्व भी कहा गया है। स्कन्दपुराण के अनुसार इसमें स्वाति नक्षत्र का भी योग होता है—

“सिंह राशि गते जीवे मेषस्थे च दिवाकरे ।

तुलाराशि गते चन्द्रे स्वाति नक्षत्र संयुते ।।”

उज्जयिनी का प्राचीन नाम अवन्तिकापुरी था। यह विक्रमादित्य की राज्यस्थली थी। उन्होंने शकों को परास्त कर, नर्मदा से पंजाब की उत्तरी सीमा तक राज्य विस्तार कर विक्रमी सम्वत् चलाया और उज्जैन के वैभव को शीर्ष तक पहुँचाया।

नासिक कुम्भ—

नासिक महाराष्ट्र में गोदावरी नदी तट पर स्थित है। दक्षिण में गोदावरी गंगा की तरह पूजनीय रही है स्कन्द पुराणा के अनुसार जब वृश्चिक राशि में गुरु संचरण करते हैं तब नासिक में कुम्भ पर्व पड़ता है। इस अवसर पर श्रद्धालु लोग गोदावरी के पावन तट पर स्नान करते हैं। नासिक क्षेत्र में सीता गुफा है, जहाँ पंचवटी वृक्ष थे, जिससे इस स्थान का नाम पंचवटी पड़ा। वनवास के समय राम ने भी इसी स्थान पर निवास किया था। जिससे इसकी पवित्रता और बढ़ गई।

22.3.1 वेदों और उपनिषदों में—

वेदों में कुम्भ को जल और सृष्टि का स्रोत माना गया है। ऋग्वेद में कुम्भ को जल के भंडार और यज्ञ के घट के रूप में संदर्भित किया गया है। यजुर्वेद में कुम्भ को दिव्य और शुद्धता का प्रतीक बताया गया है। ऋग्वेद में प्रयाग का वर्णन मिलता है, जिसमें गंगा, यमुना, सरस्वती के संगम त्रिवेणी का उल्लेख है—

सितासिते सरिते यत्र संगथे, तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति ।

ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते, जनासो अमृतत्वं भजन्ते ।।

(ऋक. 10/17/5 के अनन्तर परिशिष्ट खिलपाठ अध्याय 3 सूक्त 14)

यत्र गंगा च यमुना यत्र प्राची सरस्वती ।

वत्र सोमेश्वरो देवस् तत्र मामृतकृधीन्द्रायो परिश्रवा ।।

(ऋक. संहिता 9/113/11 के अनन्तर खिलपाठ 2/12)

उपनिषदों में कुम्भ को प्रतीकात्मक रूप में उपयोग किया गया है, कुम्भ को शरीर और उसमें स्थित आत्मा का प्रतीक माना गया है। यह ब्रह्मांड और सृजन की अनंतता का भी प्रतीक है।

22.3.2 पुराणों में कुम्भ—

भारतीय पौराणिक ग्रंथों में कुम्भ का महत्वपूर्ण स्थान है। यह मुख्य रूप से समुद्र मंथन की कथा से जुड़ा हुआ है, जो मत्स्य पुराण, स्कंद पुराण विष्णु पुराण, भागवत पुराण, महाभारत के आदि पर्व, वन पर्व और अन्य ग्रंथों में वर्णित है। इन ग्रंथों में कुम्भ का वर्णन मुख्य रूप से समुद्र मंथन की कथा के संदर्भ में किया गया है। यह कथा देवताओं और असुरों के बीच अमृत प्राप्ति के लिए हुए संघर्ष का वर्णन करती है। इस कथा में कुम्भ (अमृत कलश) को अमरत्व और दिव्य शक्ति का प्रतीक माना गया है। यदि बात प्रयाग कुम्भ की महात्म्य की किया जाये तो प्रयाग ब्रह्मा की यज्ञ वेदी रहा है। सृष्टि रचना से पूर्व ब्रह्मा ने प्रयाग को पवित्र भूमि मानकर यहाँ यज्ञ अनुष्ठान किया था। वामन पुराण के अनुसार ब्रह्मा की पाँच यज्ञवेदियाँ हैं, जहाँ—जहाँ उनके द्वारा यज्ञ किया गया। प्रयाग इसमें से

मध्यमा वेदी है—

प्रयागो मध्यमा वेदिः पूर्व वेदिः गया शिरः।

विरजा दक्षिणा वेदिरनन्त फलदायिनी।

प्रतीचो पुष्करा वेदिस्त्रिभिः कुण्डैरलंकृता।

समन्तपञ्चका योक्ता वेदिरेवोत्तराऽव्यया ॥ (वामन पुराण 23/19–20)

प्रयाग में स्नान से मुक्ति प्राप्त होती है इस विषय में पुराणों में अनेकशः उल्लेख है—

यत्र गंगा च यमुना यत्र चौव सरस्वती।

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च मुक्तिभागी न संशयः ॥

(पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय 23 श्लोक 14)

गंगायमुनयोर्मध्ये यत्र गुप्ता सरस्वती।

प्रयागः स तु विज्ञेयः सर्वपाप प्रणाशनः ॥

(स्कन्द पुराण अवन्तिखण्ड 2/71/62)

प्रयाग का वर्णन श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण में अयोध्याकाण्ड के 50 से 52 सर्ग में उपलब्ध होता है। महाभारत के आदि पर्व के अध्याय 55, वन पर्व के अध्याय 87, उद्योग पर्व के अध्याय 144 तथा अनुशासन पर्व के अध्याय 15 में मिलता है। इसके अतिरिक्त कूर्म पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय 36, मत्स्य पुराण के अध्याय 104, 106 एवं 109, अग्नि पुराण के अध्याय 111, वामन पुराण के अध्याय 22, वाराह पुराण के अध्याय 138 में तथा महाभारत के वन पर्व अध्याय 85 तथा 87 में पाण्डवों की तीर्थयात्रा के प्रसंग का भी प्रयाग का वर्णन मिलता है। महाकवि कालिदास के रघुवंश महाकाव्य में भी प्रयाग का वर्णन है।

वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड 23/24 में यह वर्णन है कि वन—गमन के दौरान चित्रकूट जाते समय सीता माँ ने पातिव्रत धर्म के पालन के सामर्थ्य हेतु प्रयाग संगम स्थित अक्षयवट वृक्ष से आशीर्वाद की आकांक्षा की थी। लंका विजयोपरांत अनन्तर पुष्पक विमान से लौटते समय भगवान राम ने सीता जी से इस प्रयाग स्थित अक्षयवट वृक्ष को नमन करने के लिए कहा था।

वाल्मीकि रामायण में कहा गया है कि राम अपने वनवास काल में जब ऋषि भारद्वाज से मिलने गए तो वार्तालाप में ऋषिवर ने कहा कि हे राम, गंगा—यमुना के संगम का जो स्थान है वह बहुत ही पवित्र है आप वहां भी रह सकते हैं। इससे भी अमृत कुम्भ कथा के संकेत मिलते हैं।

22.4 संस्कृत साहित्य में कुम्भ

संस्कृत साहित्य के अनेक प्राचीन ग्रंथों में कुम्भ का उल्लेख है। कालिदास की रचनाओं में कुम्भ का उल्लेख विभिन्न संदर्भों में किया गया है। यहाँ उनके प्रमुख काव्यों और नाटकों से कुम्भ के उल्लेख के उदाहरण दिए जा रहे हैं:

महाकवि कालिदास ने मेघदूत काव्य में कवि भारत के भौगोलिक सौंदर्य को प्रस्तुत करते हुए संपूर्ण भारतवर्ष का दर्शन करवा रहा है। विशाल भारत के विभिन्न स्थलों का साक्ष्य का यहाँ सजीव वर्णन हुआ है। यहां आम्रकूट पर्वत, विंध्याचल पर्वत और विंध्याचल से होता हुआ उज्जैन महाकाल दर्शन शिप्रा स्नान कुम्भ मेले का महत्त्व से आगे बढ़ते हुए देवगिरि पर्वत, देवगिरि से कुरुक्षेत्र और कुरुक्षेत्र से हिमालय की ओर हिमालय से कैलाश पर्वत— मानसरोवर और अलकापुरी की यात्रा को सुंदर काव्यांजलि में प्रस्तुत किया है।

रघुवंश महाकाव्य में यज्ञों और अभिषेकों में प्रयुक्त कुम्भ का उल्लेख मिलता है। यहाँ यज्ञ के दौरान स्वर्ण और रत्नजटित कुम्भ का उल्लेख है, जिसमें जल रखा गया है और राजा का अभिषेक किया गया।

अक्षयवट की प्रशंसा करते हुए महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य में ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है—

त्वया पुरस्तादुपयाचितो यः

सोऽयं वटः श्याम इति प्रतीतः।

राशिर्मणीनामिव गरुडानां

सपद्मरागः फलितो विभाति।। (रघुवंश, सर्ग 13, श्लोक 53)

इस श्लोक में वट वृक्ष की दिव्यता और उसकी सुंदरता को रेखांकित करता है। कवि इसे एक अलौकिक दृष्टि से देखता है और वृक्ष की हरियाली, उसकी शाखाओं पर पक्षियों के झुंड और उसके चमकते हुए लाल फलों को मणियों के समूह जैसा बताता है। यह प्रकृति के सौंदर्य और उसके प्रति आभार को प्रकट करता है।

अभिज्ञानशाकुंतलम्

अभिज्ञानशाकुंतलम् में प्रकृति के सौंदर्य का वर्णन करते हुए कुम्भ का उल्लेख मिलता है। गंगा के पवित्र और दिव्य स्वरूप का वर्णन करते हुए यह बताता है कि गंगा का जल न केवल भौतिक रूप से शुद्ध करने वाला है, बल्कि इसका आध्यात्मिक महत्व भी है। इसे तीनों लोकों में प्रवाहित कर, भगवान ने इसे समस्त प्राणियों के लिए कल्याणकारी बनाया। गंगा का जल देवताओं द्वारा भी आदरपूर्वक ग्रहण किया जाता है। यहाँ शकुंतला की तुलना करते हुए उनके अंग को कुम्भ के समान दर्शाया गया है। यह सौंदर्य, मातृत्व और पूर्णता का प्रतीक है।

कुमारसम्भवम् में कुम्भ का उल्लेख प्राकृतिक जल स्रोतों और पर्वतों के आकार के लिए किया गया है। “हिमालयस्य स्थूलकायः कुम्भसन्निभः।” यहाँ हिमालय के स्थायित्व और विशालता की तुलना कुम्भ के आकार से की गई है।

हर्षवर्धन के काल में प्रयाग (आधुनिक इलाहाबाद) में कुम्भ मेले के आयोजन का उल्लेख प्रमुख रूप से बाणभट्ट द्वारा रचित “हर्षचरित” में मिलता है। इसके अलावा, चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी अपने यात्रा विवरण में हर्षवर्धन द्वारा प्रयाग में आयोजित महादान और कुम्भ के समान धार्मिक आयोजन का वर्णन किया है।

प्रमुख प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकें जो कुम्भ से संबंधित हैं:

हर्षचरितः

बाणभट्ट ने इसमें हर्षवर्धन के जीवन, उनके कार्यों और प्रयाग में आयोजित महादान का वर्णन किया है। यह महादान कुम्भ मेले के रूप में स्थापित धार्मिक परंपरा का हिस्सा माना जाता है। हर्षवर्धन ने हर पांच वर्ष में प्रयाग में एक महान धार्मिक अनुष्ठान का आयोजन किया, जिसे “महादान” कहा जाता था। इसमें उन्होंने अपनी संपत्ति, धन, और सामग्री का दान किया। इस परंपरा को बाद में कुम्भ मेले की परंपरा के साथ जोड़ा गया।

ह्वेनसांग के यात्रा-वृत्तांत (सी-यू-की):

ह्वेनसांग ने अपनी यात्रा के दौरान प्रयाग में हर्षवर्धन द्वारा आयोजित धार्मिक अनुष्ठानों और जनसमूह का वर्णन किया, जो कुम्भ मेले जैसी परंपरा की पुष्टि करता है।

अल-बरूनी (11वीं शताब्दी) ने अपनी पुस्तक किताब-उल-हिंद में हरिद्वार और प्रयाग के कुम्भ मेले का विवरण दिया है। उन्होंने इसे भारत के सबसे बड़े धार्मिक आयोजनों में से एक बताया है।

22.5 मध्यकालीन साहित्य में कुम्भ

मध्यकालीन भक्ति साहित्य में संत कवियों ने कुम्भ के आयोजन को आत्मिक मुक्ति का साधन बताया है।

निर्गुण भक्ति कवि कबीर के साहित्य में कुम्भ का उल्लेख प्रतीकात्मक रूप में मिलता है। कबीर के साहित्य में कुम्भ का प्रयोग सूक्ष्म आध्यात्मिक शिक्षाओं को सरल और प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त करने के लिए किया गया है। यह उनके रहस्यवाद और भक्ति परंपरा का एक अभिन्न हिस्सा है। कुम्भ उनके दर्शन और आध्यात्मिक विचारों को अभिव्यक्त करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। कबीर कुम्भ को आत्मा, शरीर और जीवन के गहरे अर्थों को समझाने के लिए प्रयोग करते हैं। यहाँ कुम्भ का वर्णन मुख्य रूप से दो संदर्भों में किया गया है:

शरीर और आत्मा का प्रतीक:

कबीर के भजनों और साखियों में कुम्भ को शरीर के रूप में देखा गया है, जो आत्मा (जल) को धारण करता है। उनके अनुसार, जब यह कुम्भ टूटता है, तो जल (आत्मा) ब्रह्म में विलीन हो जाता है। यह जीवन की क्षणभंगुरता और आत्मा की अमरता का प्रतीक है। वे कहते हैं—

“जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी।

फूटा कुम्भ जल जलहिं समाना, यह तथ कहै ग्यानी।”

अर्थात् जब कुम्भ जल में होता है, तो घड़े के भीतर और बाहर दोनों ओर जल होता है। इसी प्रकार, आत्मा (घड़े का भीतर का जल) और ब्रह्म (बाहर का जल) अलग नहीं हैं। दोनों एक ही हैं, केवल भ्रम या अज्ञान के कारण वे अलग दिखाई देते हैं। जब कुम्भ फूट जाता है (शरीर नष्ट हो जाता है), तो भीतर का जल बाहरी जल में समा जाता है। इसका अर्थ है कि आत्मा ब्रह्म में विलीन हो जाती है।

तुलसीदास ने ‘रामचरितमानस’ में प्रयागराज के स्नान को पुण्यदायी बताया है। “प्रयागराज तहँ कुम्भ नहाई। तुलसी सहस्रन्ह सिव सेवक जाई।” यह वर्णन प्रयाग में कुम्भ स्नान की पवित्रता और मोक्षदायिनी क्षमता को दर्शाता है।

श्रीरामचरितमानस में ही प्रयागराज के महत्व का वर्णन बहुत रोचक और विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए कहा गया है—

माघ मकरगत रवि जब होई। तीरथ पतिहिं आव सब कोई॥

देव दनुज किन्नर नर श्रेणी। सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी॥

पूजहिं माघव पद जल जाता। परसि अछैवट हरषहिं गाता॥

भरद्वाज आश्रम अति पावन। परम रम्य मुनिवर मन भावन ॥

तहां होइ मुनि रिसय समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा ॥

तीर्थराज प्रयाग की महिमा का वर्णन महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में अयोध्याकाण्ड की कई चौपाइयों में इस प्रकार किया है—

“छेत्रु अगम गढु गाढ सुहावा। सपनेहुं नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा॥

सेन सकल तीरथ बर बीरा। कलुष अनीक दलन रनधीरा॥”

प्रयाग क्षेत्र ही दुर्गम, मजबूत और सुंदर गढ़ (किला) है, जिसको स्वप्न में भी (पाप रूपी) शत्रु नहीं पा सके हैं। संपूर्ण तीर्थ ही उसके श्रेष्ठ वीर सैनिक हैं, जो पाप की सेना को कुचल डालने वाले और बड़े रणधीर हैं।

“संगमु सिंहासनु सुठि सोहा। छत्रु अखयबटु मुनि मनु मोहा॥

चवैर जमुन अरु गंग तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद मंगा॥”

गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम ही उसका अत्यन्त सुशोभित सिंहासन है। अक्षयवट छत्र है, जो मुनियों के भी मन को मोहित कर लेता है। यमुनाजी और गंगाजी की तरंगें उसके (श्याम और श्वेत) चवैर हैं, जिनको देखकर ही दुःख और दरिद्रता नष्ट हो जाती है।

इसी प्रकार विनय पत्रिका में प्रयागराज तीर्थ की महत्ता:

“गंग जमुन संगम शुभ तीरथ, सबहि मनोहर लागा।”

इस पंक्ति में प्रयाग के संगम की महिमा का उल्लेख है। हालांकि यहां कुम्भ का सीधा उल्लेख नहीं है, लेकिन प्रयाग में संगम पर स्नान की महत्ता कुम्भ मेले की ओर भी संकेत करती है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने गंगा एवं यमुना के संगम का चित्रण करते हुए कवितावली में लिखा है कि यमुना की नीली धाराएँ, गंगा के श्वेत तरंगों में मिलकर इस तरह उसमें विलीन हो जाती हैं, जैसे इधर-उधर कामधेनु के सफेद रंग के छिटके हुए बछड़े हरी-हरी घास चर रहे हों।

सोहे सितासित को मिलबो, 'तुलसी' हुलसी हिय-हेरि हलोरे।
मानो हरे-तून चारु चरै, बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे॥

श्रीरामचरितमानस में प्रयाग के माहात्म्य का अद्भुत वर्णन मिलता है—

मुद मंगलमय सन्त समाजू। जिमि जग जंगम तीरथ राजू॥
राम-भक्ति जहँ सुरसरि धारा। सरसइ ब्रह्म विचार प्रचारा॥
विधि-निषेध-मय कलि-मल-हरनी। करम-कथा रवि-नन्दिनि बरनी॥
हरि-हर-कथा विराजति बेनी। सुनत सकल मुद-मङ्गल-देनी॥
बटु-विस्वास अचल निज-धर्मा। तीरथ राज-समाज सु-कर्मा॥
सबहि सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सारद समन-कलेसा॥
अकथ अलौकिक तीरथ राऊ। देइ सद्य फल प्रकट प्रभाऊ॥
सुनि समुझहिं जन मुदित-मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत-तनु, साधु-समाज प्रयाग॥
मज्जन-फल पेषिय तत-काला। काल होहिं पिक बकउ मराला॥
सुनि आचरज करइ जनि कोई। सत-सङ्गति-महिमा नहिं गोई॥

अतः स्पष्ट है कि तुलसीदास ने सीधे कुम्भ मेले के आयोजन का विस्तृत वर्णन नहीं किया है, लेकिन उनके ग्रंथों में प्रयाग, हरिद्वार और संगम जैसे तीर्थ स्थलों की महत्ता पर अनेकों बार प्रकाश डाला गया है। कुम्भ का संदर्भ अक्सर तीर्थ स्नान और मोक्षदायिनी शक्ति के रूप में उनके साहित्य में मिलता है। इस प्रकार, तुलसीदास ने कुम्भ के महत्व को तीर्थ स्नान और धार्मिक अनुष्ठानों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्त किया।

22.6 आधुनिक हिन्दी साहित्य में कुम्भ

आधुनिक हिन्दी साहित्य में कुम्भ मेले का वर्णन सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से किया गया है। प्रेमचंद के कथा साहित्य में मेलों का वर्णन सामाजिक व्यवस्था के चित्रण के रूप में हुआ है। पंत के काव्य प्रकृति सौंदर्य के रूप में प्रयाग त्रिवेणी का मनोरम चित्रण हुआ है, निराला, महादेवी वर्मा, नागार्जुन की कविताओं में कुम्भ मेले का दृश्य अत्यंत जीवंत है। शिवप्रसाद सिंह के उपन्यासों में समाज के विभिन्न वर्गों का कुम्भ में सहभागिता दर्शाया गया है।

प्रेमचंद ने कुम्भ मेले और मेलों को भारतीय समाज की धार्मिकता, सामाजिकता और आर्थिक गतिविधियों के प्रतीक के रूप में देखा है। उनका कथन है:

“मेला केवल धार्मिक आस्था का केंद्र नहीं, बल्कि यह भारतीय ग्रामीण जीवन के व्यापार, मनोरंजन और सामुदायिकता का संगम है।”

उन्होंने कुम्भ जैसे मेलों को केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे समाज में हो रहे आर्थिक और सांस्कृतिक बदलावों के प्रतीक के रूप में चित्रित किया। उनकी दृष्टि में कुम्भ जैसे मेले उस समय के भारतीय समाज की जटिलताओं, वर्गभेद, और जीवन संघर्षों को उजागर करते थे। कुम्भ का वर्णन करते हुए उन्होंने इस बात पर बल दिया कि यह एक ऐसा स्थल है, जहां लोग अपनी धार्मिकता के साथ-साथ अपनी सामाजिक और आर्थिक आवश्यकताओं को भी पूरा करते हैं।

अज्ञेय कुम्भ मेले को केवल धार्मिक आयोजन के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय समाज की विविधता और एकता का प्रतीक मानते हैं। उनके अनुसार, यह ऐसा मंच है, जहां देश के विभिन्न हिस्सों से आए लोग अपनी आस्थाओं और जीवन संघर्षों को साथ लाते हैं।

अपने साहित्य में उन्होंने एक वृद्ध साधु का वर्णन किया है, जो वर्षों से आत्मिक शांति की तलाश में कुम्भ मेले में आता है। वहां वह साधु विभिन्न साधकों, भिक्षुओं और तीर्थयात्रियों से मिलता है। मेले की भीड़ में वह अपने खोए हुए शिष्य को पहचानता है। यह घटना कुम्भ की पृष्ठभूमि में मानव संबंधों और मोक्ष की तलाश का प्रतीक बनती है।

“कुम्भ की भीड़ में हर चेहरा एक कहानी कहता है। कोई शांति की खोज में है, तो कोई व्यापार की तलाश में। लेकिन हर व्यक्ति, चाहे वह अनजान हो या परिचित, इस मेले का हिस्सा है और एक गहरी सांस्कृतिक कड़ी से जुड़ा हुआ है।”

इसी प्रकार फणीश्वरनाथ रेणु ने अपनी ‘तीर्थोदक’ कहानी के माध्यम से लोकसमाज में बूढ़ों के मन में चली आ रही तीर्थ की लालसा को उजागर किया है। आज का आधुनिक समाज जहां एक तरफ रोजगार के पलायन नए-नए सपने देखने, धर्म-समाज से कटकर जीवन में कुछ सजोने कि जुगतमें लगा रहता है, धर्म को ढकोसला मानता है, वहीं रेणु प्रगतिशील विचार रखते हुए भी लल्लूकी मां के माध्यम से तीर्थ की लालसा को उजागर करते हैं। वह लिखते हैं—“ नाती पोते मेरे गंगा नहा आए और मैं अभागी ऐसी की गंगा की कौन कहे पौषी-पूर्णिमा में कभी कोसी की किसी गढ़हिया में भी एक डुबकी नहीं लगा पाई।” और इस प्रकार रोकने टोकने झिड़कियां सुनने के बाद भी लल्लूकी मां यात्रा पर निकल जाती है। वास्तव में देखा जाय तो रेणु ने सामाजिक परंपरा में रची बसी लोक जीवन की छवि को बड़ी गहराई से उकेरा है और एक सजक कहानीकार की भांति रेणु ने समाज के अंतर्मन के विभिन्न पहलुओं को छुआ है।

सूर्यकांत त्रिपाठी ‘निराला’ ने अपनी कविताओं और गद्य में कुम्भ के भव्य और आध्यात्मिक चित्रण किए हैं। उनकी कविताओं में मेले की धार्मिकता के साथ-साथ मानवीय संघर्ष का वर्णन मिलता है।

“गंगा के तट पर, जब कुम्भ मेला लगता है, तो मानो ब्रह्मांड स्वयं साकार हो उठता है।”

मन्नू भंडारी ने अपनी कहानी “एक प्लेट सैलाब” कुम्भ मेले की भीड़ और उसमें मानवीय त्रासदी को दिखाती है।

“कुम्भ केवल धार्मिकता नहीं, यह भीड़ की असलियत और इंसानी कमजोरियों को भी उजागर करता है।”

इसी प्रकार महादेवी वर्मा ने अपनी कृति ठाकुर बाबा (संस्मरण) में कुम्भ में कल्पवास के दौरान स्वयं द्वारा आश्रय दिए गए एक वृद्धि व्यक्ति एवं उसके परिवार का वर्णन किया है जो कुम्भ मेले में तीर्थ यात्रा पर आया हुआ है। इस दौरान कुम्भ में होने वाली अनेक गतिविधियों का बहुत ही मनोरम वर्णन मिलता है।

सुमित्रानंदन पंत ने अपने काव्य पल्लव में त्रिवेणी के सौंदर्य को उपमान बनाया है—

“तुम्हारे छूने में था प्राण, संग में पावन गंगा स्नान।

तुम्हारी वाणी में कल्याणी, त्रिवेणी की लहरों का गान।।”

22.7 लोक साहित्य में कुम्भ

लोकगीतों और लोकगाथाओं में भी कुम्भ का चित्रण होता है। लोक साहित्य में कुम्भ को समाज में एकता और सहयोग का प्रतीक माना गया है। लोक साहित्य में कुम्भ का वर्णन अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति, धार्मिकता, और सामूहिकता का प्रतीक है, जिसे लोकगीतों, कहावतों, लोक कथाओं, और लोक नाटकों के माध्यम से पीढ़ियों तक जीवंत बनाए रखा गया है। लोक साहित्य में कुम्भ को धार्मिक, सांस्कृतिक, और मानवीय भावनाओं के विविध रंगों के साथ चित्रित किया गया है। लोक साहित्य भारतीय समाज की सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं का सजीव प्रतिबिंब है, और इसमें कुम्भ मेले का महत्वपूर्ण स्थान है। कुम्भ का वर्णन लोकगीतों, भजनों, लोककथाओं और कहावतों में मिलता है, जो इसकी धार्मिक महत्ता और सांस्कृतिक विविधता को उजागर करते हैं। लोक साहित्य में कुम्भ न केवल एक धार्मिक आयोजन के रूप में, बल्कि समाज की एकता, सामंजस्य और आध्यात्मिक चेतना के प्रतीक के रूप में भी प्रकट होता है।

लोक साहित्य में कुम्भ को पवित्रता, मोक्ष और ईश्वर से जुड़ने का अवसर माना गया है। यह आयोजन

गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर होने वाले स्नान के महत्व को रेखांकित करता है। लोकगीतों में इसे “अमृत स्नान” के रूप में वर्णित किया गया है, जो आत्मा को शुद्ध और जीवन को पवित्र बनाता है। भजनों और आरतियों में कुम्भ मेले की धार्मिक महत्ता, साधु-संतों के प्रवचन और ईश्वर की भक्ति का उल्लेख होता है। संत कवियों ने लोक साहित्य में कुम्भ की गहरी व्याख्या की है। कबीरदास ने इसे आंतरिक शुद्धि और आत्मा के जागरण का प्रतीक माना। उनके दोहों में कुम्भ स्नान का वर्णन आध्यात्मिक चेतना से जुड़ा हुआ है। तुलसीदास और सूरदास जैसे संतों ने भी इसे मानव जीवन के धर्म और आध्यात्मिकता के संगम के रूप में प्रस्तुत किया।

ग्रामीण भारत में गाए जाने वाले लोकगीतों में कुम्भ मेले की महिमा का वर्णन मिलता है। इन गीतों में कुम्भ मेले में शामिल होने वाले तीर्थयात्रियों की आस्था, गंगा स्नान की पवित्रता और संतों के प्रवचनों की महत्ता का उल्लेख होता है। कई गीतों में परिवार, समाज और धर्म के बीच तालमेल को दर्शाया गया है। लोककथाओं में कुम्भ को अमृत कलश की कहानी से जोड़ा गया है। समुद्र मंथन के दौरान अमृत प्राप्त करने के लिए देवताओं और असुरों की प्रतिस्पर्धा का वर्णन कई कहानियों में मिलता है। इन कथाओं में कुम्भ का स्थान मोक्ष और आध्यात्मिक ऊर्जा के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

लोक साहित्य में कुम्भ को सामाजिक एकता और सांस्कृतिक मेलजोल का प्रतीक माना गया है। यह मेला विभिन्न जातियों, धर्मों और पंथों के लोगों को एक मंच पर लाता है। लोकगीतों और भजनों में इसका वर्णन “संगम” के रूप में होता है, जहां सभी भेदभाव समाप्त हो जाते हैं और सभी लोग एक समान ईश्वर की भक्ति में लीन हो जाते हैं। कुम्भ मेले को परंपरा और आधुनिकता का संगम भी माना गया है। यह आयोजन न केवल धार्मिक, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का भी केंद्र है। लोक कथाओं और गीतों में इसे जीवन के उत्सव और आस्था के पर्व के रूप में चित्रित किया गया है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1 कुम्भ मेले की पौराणिक कथा किस घटना से जुड़ी हुई है?

2 भारतीय साहित्य में कुम्भ का धार्मिक और दार्शनिक महत्व क्या है?

3 कुम्भ मेले का वर्णन आधुनिक भारतीय साहित्य में किन साहित्यकारों ने किया है?

4 कुम्भ मेले का लोक साहित्य में क्या महत्व है?

5 कुम्भ मेला भारतीय समाज की किस विशेषता का प्रतीक है?

22.8 सारांश

भारतीय साहित्य में ‘कुम्भ’ एक अद्वितीय सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक प्रतीक के रूप में स्थापित है। यह न केवल भारतीय आध्यात्मिकता और परंपराओं का दर्पण है, बल्कि इसका प्रभाव साहित्य, कला, संस्कृति और समाज पर भी व्यापक रूप से दिखाई देता है। भारतीय साहित्य में कुम्भ मेले की पृष्ठभूमि समुद्र मंथन की कथा से जुड़ी है। यह कथा विष्णु पुराण, भागवत पुराण, महाभारत और रामायण जैसे प्राचीन ग्रंथों में वर्णित है। कुम्भ का

प्रतीक 'अमृत' को दर्शाता है, जो जीवन, ज्ञान और मोक्ष का प्रतीक है। कुम्भ मेला भारतीय धार्मिक साहित्य में सनातन धर्म के मूल तत्वों, जैसे कर्म, ज्ञान और भक्ति, को मूर्त रूप में प्रस्तुत करता है। आद्य शंकराचार्य जैसे संतों ने इस परंपरा को वैदिक ज्ञान और उपनिषदों के तत्वों से जोड़ा। कई कवियों और लेखकों ने इसे आत्मा की शुद्धि और मोक्ष की प्राप्ति के संदर्भ में व्याख्यायित किया है।

कुम्भ मेला केवल धार्मिक आयोजन नहीं है यह भारतीय समाज की विविधता और एकता को भी प्रतिबिंबित करता है। साहित्य में इसे एक ऐसा मंच बताया गया है जहां अलग-अलग पृष्ठभूमि के लोग एकत्र होकर सांस्कृतिक आदान-प्रदान करते हैं। भारतीय साहित्य में कुम्भ केवल धार्मिक आयोजन या प्रतीक मात्र नहीं है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति, परंपराओं और मान्यताओं का जीवन्त प्रतीक है। यह अद्वितीय आयोजन भारतीय समाज की आध्यात्मिकता, एकता और विविधता का प्रतिनिधित्व करता है। साहित्यकारों और कवियों ने इसे मानव जीवन के हर पहलू से जोड़ा है—कृष्णधर्मिकता से लेकर सामाजिक सामंजस्य तक। कुम्भ की यह साहित्यिक विरासत भारतीय सांस्कृतिक धरोहर को सशक्त करती है और उसकी गहराई को उजागर करती है।

22.9 अभ्यास के प्रश्न

- भारतीय साहित्य में कुम्भ मेले के महत्त्व पर प्रकाश डालें।
- संस्कृत साहित्य में कुम्भ मेले का वर्णन किन-किन ग्रंथों में मिलता है? विस्तार से समझाएँ।
- भक्ति आंदोलन के कवियों ने कुम्भ को किस प्रकार प्रस्तुत किया है?
- आधुनिक हिंदी साहित्य में कुम्भ मेले का सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष कैसे चित्रित किया गया है?
- लोक साहित्य में कुम्भ के महत्त्व पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।
- कबीर के साहित्य में कुम्भ शब्द से क्या अभिप्राय है?

22.10 चर्चा के बिन्दु

- ❖ कुम्भ की पौराणिक पृष्ठभूमि पर चर्चा करें।
- ❖ कुम्भ के धार्मिक और दार्शनिक महत्त्व पर चर्चा करें।
- ❖ कुम्भ के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर चर्चा करें।
- ❖ कुम्भ के साहित्यिक वर्णन पर चर्चा करें।
- ❖ लोक साहित्य और परंपरा में कुम्भ पर चर्चा करें।

22.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. कुम्भ मेले की पौराणिक कथा समुद्र मंथन से जुड़ी हुई है, जिसमें देवताओं और असुरों ने अमृत प्राप्त करने के लिए मिलकर मंथन किया था। अमृत कलश से कुछ बूंदें प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में गिरीं, जहां कुम्भ मेले का आयोजन होता है।
2. कुम्भ भारतीय साहित्य में आत्मा की शुद्धि, जीवन के अर्थ, मोक्ष और सनातन धर्म के मूल तत्वों—कर्म, ज्ञान और भक्ति—के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह धार्मिक आयोजन वैदिक और उपनिषद् साहित्य में गहराई से निहित है।
3. आधुनिक भारतीय साहित्य में धर्मवीर भारती, इलाचंद्र जोशी, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत और अन्य साहित्यकारों ने कुम्भ मेले के सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पहलुओं का वर्णन किया

है।

4. लोक साहित्य में कुम्भ मेले का महत्व धार्मिक भजनों, लोकगीतों और लोककथाओं में प्रकट होता है। यह आयोजन लोक जीवन के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक आयामों को उजागर करता है और संत कवियों, जैसे कबीर और तुलसीदास, की रचनाओं में भी दिखाई देता है।
5. कुम्भ मेला भारतीय समाज की विविधता और एकता का प्रतीक है। यह विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को एक मंच पर लाता है और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देता है।
ये प्रश्न विषय की गहरी समझ विकसित करने और साहित्यिक दृष्टि से कुम्भ की महत्ता को समझने में सहायक हैं।

22.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- ❖ भारत में कुम्भ— धनंजय चोपड़ा
- ❖ सांस्कृतिक जागरण का महापर्व कुम्भ— गुंजन अग्रवाल
- ❖ कुम्भ विजन 2025— गोविंद कुमार सक्सेना
- ❖ कुम्भ आस्था का प्रतीक— संजय चतुर्वेदी
- ❖ कुम्भ ऐतिहासिक वाङ्मय — हैरम्ब चतुर्वेदी वाणी प्रकाशन
- ❖ प्रयागराज कुम्भ कथा — डा. राजेंद्र त्रिपाठी रसराज
- ❖ कुम्भ आस्था का प्रतीक — ज्ञान गंगा
- ❖ संगम की रेती के चालीस दिन
- ❖ समाचार पत्र—पत्रिकाओं के लेख

इकाई – 23 : पर्यावरण एवं कुम्भ

इकाई की रूपरेखा

- 23.1 प्रस्तावना
- 23.2 उद्देश्य
- 23.3 कुम्भ मेला : एक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ
- 23.4 पर्यावरणीय चुनौतियाँ और कुम्भ मेला
 - 23.4.1 जल स्रोतों का प्रदूषण
 - 23.4.2 कचरा और अपशिष्ट प्रबन्धन
 - 23.4.3 जलवायु परिवर्तन और तापमान का प्रभाव
 - 23.4.4 प्राकृतिक संसाधनों का अत्याधिक उपयोग
- 23.5 कुम्भ मेला और पर्यावरणीय संरक्षण के उपाय
 - 23.5.1 प्लास्टिक मुक्त कुम्भ
 - 23.5.2 जल संरक्षण और नदी की सफाई
 - 23.5.3 अपशिष्ट प्रबन्धन
 - 23.5.4 सौर ऊर्जा का उपयोग
 - 23.5.5 पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता
- 23.6 कुम्भ मेला और सतत विकास
- 23.7 सारांश
- 23.8 अभ्यास के प्रश्न
- 23.9 चर्चा के बिन्दु
- 23.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 23.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

23.1 प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति की जीवनशैली, आचार-विचार एवं मूल्यों का एक समुच्चय है। इसी सांस्कृतिक विरासत का एक विराट प्रतीक है – कुम्भ मेला। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक हिस्सा है, जो न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि सांस्कृतिक और पर्यावरणीय दृष्टि से भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसे दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक और सांस्कृतिक मेला माना जाता है। यह मेला चार प्रमुख स्थानों कृष्णागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिककृष्ण में आयोजित होता है। कुम्भ मेला, जो भारत के विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक पहलुओं को प्रदर्शित करता है, पर्यावरण से भी गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। लाखों की संख्या में श्रद्धालु एकत्र होते हैं, जो नदियों में पवित्र स्नान करते हैं और विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान करते हैं। इस विशाल आयोजन के पर्यावरण पर गहरे प्रभाव पड़ सकते हैं, लेकिन पिछले कुछ वर्षों में इन प्रभावों को कम करने के लिए कई कदम भी उठाए गए हैं।

23.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जयें कि –

1. कुम्भ और पर्यावरण के बीच के सम्बन्धों को विस्तार से समझ सकेंगे।
 2. पर्यावरणीय संरक्षण के उपायों और चुनौतियों पर अध्ययन कर सकेंगे।
-

23.3 कुम्भ मेला : एक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सन्दर्भ

कुम्भ मेला भारत का एक प्राचीन और ऐतिहासिक धार्मिक मेला है, जिसे विश्व धरोहर स्थल के रूप में यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त है। कुम्भ मेला का आयोजन चार प्रमुख स्थानों पर होता है—कृष्णागराज, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक। कुम्भ मेला का आयोजन लगभग हर 12 साल में एक बार होता है। प्राचीन मान्यता के अनुसार इन चार स्थानों पर प्रत्येक 12 वर्ष में कुम्भ एवं प्रत्येक 6 वर्ष पर अर्ध-कुम्भ मेले का आयोजन होता है। वर्तमान में शासन ने इन मेलों के नामकरण में परिवर्तन करते हुए 6 वर्ष पर होने वाले मेले का नाम कुम्भ तथा 12 वर्ष पर होने वाले मेले का नाम महाकुम्भ कर दिया है। यह मेला न केवल धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति का प्रतीक भी है। यह आयोजन सांस्कृतिक धरोहर के रूप में यूनेस्को द्वारा भी मान्यता प्राप्त है। यह मेला हिन्दू धर्म के अनुयायियों के लिए एक बहुत ही पवित्र और धार्मिक उत्सव है, लेकिन इसकी विशालता और श्रद्धालुओं की संख्या के कारण, इसका पर्यावरण पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है।

23.4 पर्यावरणीय चुनौतियाँ और कुम्भ मेला

कुम्भ मेला का आयोजन हजारों—लाखों श्रद्धालुओं को आकर्षित करता है। लाखों लोग यहाँ एकत्र होकर नदियों में स्नान करते हैं और विभिन्न धार्मिक गतिविधियों में भाग लेते हैं। यह विशाल जनसमूह स्वाभाविक रूप से पर्यावरण पर प्रभाव डालता है। इस मेले के आयोजन के दौरान पर्यावरणीय दृष्टिकोण से कई चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं। इन चुनौतियों का सामना करना सरकार और स्थानीय प्रशासन के लिए एक बड़ी जिम्मेदारी है। पर्यावरणीय दृष्टि से यह मेला निम्न प्रमुख चुनौतियों का सामना करता है –

23.4.1. जल स्रोतों का प्रदूषण

कुम्भ मेले के दौरान, लाखों श्रद्धालु पवित्र नदियों में स्नान करते हैं, जो पर्यावरणीय दृष्टि से एक गंभीर मुद्दा है। नदियों में स्नान करते समय श्रद्धालु पानी में अपने शारीरिक अशुद्धियों को छोड़ते हैं। इसके अलावा श्रद्धालु अनेक धार्मिक और सांस्कृतिक अनुष्ठान करते करते समय सामग्री को नदी में प्रवाहित करते हैं, जिससे जल में प्रदूषण बढ़ता है। पवित्र नदियों में बढ़ते प्रदूषण के कारण जल में विभिन्न रासायनिक पदार्थ, तेल, और अन्य प्रदूषक जमा हो जाते हैं, जो जलजीवों के लिए खतरे का कारण बनते हैं। इसके अलावा, प्रदूषित जल के कारण स्थानीय निवासियों के लिए पानी की उपलब्धता और गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है। हालांकि, सरकार और स्थानीय प्रशासन द्वारा नदी की सफाई और जल गुणवत्ता की निगरानी के लिए प्रयास किए जाते हैं, फिर भी यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

23.4.2 कचरा और अपशिष्ट प्रबंधन

कुम्भ मेला में लाखों श्रद्धालु होते हैं और इस विशाल जनसमूह के कारण अपशिष्ट प्रबंधन एक बड़ी चुनौती बन जाता है। कुम्भ मेला जैसे विशाल आयोजनों में अपार मात्रा में कचरा उत्पन्न होता है, जिसमें प्लास्टिक, कागज, खाद्य पदार्थों के पैकेट और अन्य घरेलू वस्तुएँ शामिल होती हैं। कचरे का उचित निस्तारण और प्रबंधन चुनौतीपूर्ण होता है, क्योंकि मेले में उपस्थित लोगों की संख्या बहुत अधिक होती है। कचरे का उचित निस्तारण न होने पर यह नदियों में बहकर जल प्रदूषण बढ़ा सकता है। प्लास्टिक का अत्यधिक उपयोग और नदियों में कचरे का प्रवाह पर्यावरणीय संकट को और बढ़ाता है। इसके अलावा, कचरे को नष्ट करने के लिए किए गए उपायों में अक्सर ढिलाई होती है, जिससे पर्यावरणीय संकट उत्पन्न होता है। इसके परिणामस्वरूप, भूमि और जल स्रोतों में प्रदूषण

बढ़ता है, जिससे पर्यावरण पर प्रतिकूल असर पड़ता है।

23.4.3 जलवायु परिवर्तन और तापमान का प्रभाव

कुम्भ मेला के आयोजन के दौरान जलवायु परिवर्तन और तापमान के प्रभावों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। कुम्भ मेला में हर साल बड़ी संख्या में श्रद्धालु आते हैं, और उनके लिए अस्थायी शिविर, शौचालय, पानी और अन्य बुनियादी सुविधाओं का प्रबंधन करना एक कठिन कार्य होता है। इन सुविधाओं के संचालन के लिए बड़े पैमाने पर ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो जीवाश्म ईंधन पर निर्भर होती है। इससे जलवायु परिवर्तन और कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि हो सकती है। इसके अलावा, कुम्भ मेला के आयोजन के दौरान तापमान में बदलाव और मौसम की अनिश्चितताओं का प्रभाव भी पड़ सकता है, जिससे यह आयोजन पर्यावरणीय दृष्टि से और अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाता है।

23.4.4 प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग

कुम्भ मेला के आयोजन के दौरान अस्थायी शिविरों, शौचालयों, और अन्य बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग किया जाता है। पानी, बिजली, और अन्य संसाधनों की भारी मांग होती है, जो उनके दीर्घकालिक संरक्षण के लिए खतरा उत्पन्न कर सकती है।

23.5 कुम्भ मेला और पर्यावरणीय संरक्षण के उपाय

हालांकि कुम्भ मेला पर्यावरण पर दबाव डालता है, लेकिन इस आयोजन के पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए कई उपाय किए गए हैं। सरकार और स्थानीय प्रशासन ने मिलकर कुम्भ मेला के आयोजन में पर्यावरणीय संरक्षण के लिए कई सकारात्मक कदम उठाए हैं। इनमें से कुछ प्रमुख उपाय निम्नलिखित हैं –

23.5.1 प्लास्टिक मुक्त कुम्भ

कुम्भ मेला के आयोजन में प्लास्टिक के उपयोग को कम करने के लिए कई प्रयास किए गए हैं। कुम्भ मेला में प्लास्टिक बैग्स, बोतल्स और अन्य प्लास्टिक उत्पादों के उपयोग पर प्रतिबंध लगाने के लिए सरकार और स्थानीय प्रशासन ने कई उपाय किए हैं। प्लास्टिक के उपयोग को कम करने के लिए पुनः उपयोग योग्य सामग्री का प्रयोग बढ़ावा दिया जाता है। कुम्भ मेले में प्लास्टिक बैग्स और अन्य प्लास्टिक वस्तुओं की जगह कपड़े के बैग्स और अन्य पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित विकल्पों को बढ़ावा दिया जाता है। इसके अलावा, प्लास्टिक कचरे को नदियों में बहने से रोकने के लिए स्वच्छता अभियानों का आयोजन किया जाता है। साथ ही, प्लास्टिक कचरे के निस्तारण के लिए विशेष अभियान चलाए गए हैं।

23.5.2 जल संरक्षण और नदी की सफाई

कुम्भ मेला के दौरान नदी की सफाई और जल संरक्षण के लिए कई कदम उठाए जाते हैं। नदी में बढ़ते प्रदूषण को रोकने के लिए, सरकार द्वारा विशेष सफाई अभियान चलाए जाते हैं, और नदी के किनारे पर कचरा एकत्रित किया जाता है। साथ ही, जल स्तर के संरक्षण के लिए जलाशयों का उचित प्रबंधन किया जाता है। गंगा नदी के लिए 'नमामि गंगे' योजना जैसी पहलें भी कुम्भ मेला के दौरान लागू की जाती हैं, जो नदी की स्वच्छता और जल गुणवत्ता को सुनिश्चित करती हैं। साथ ही, जल संरक्षण के उपायों के तहत नदी के पानी के स्तर को बनाए रखने के लिए कार्य किए जाते हैं।

23.5.3 अपशिष्ट प्रबंधन

कुम्भ मेले में उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट को ठीक से प्रबंधित करने के लिए विभिन्न उपाय किए जाते हैं। स्वच्छता कर्मचारियों को उचित प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि वे कचरे को वर्गीकृत करके उसे सही तरीके से नष्ट कर सकें। कचरे का संग्रहण, निस्तारण और पुनः उपयोग के लिए विभिन्न योजनाएँ बनाई जाती हैं तथा उन्हें लागू किया जाता है। कचरे को अलग करने के लिए रंगीन बैग्स का वितरण किया जाता है, और लोगों को कचरा डालने के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध कराया जाता है। स्वच्छता अभियान चलाए जाते हैं, ताकि लोग कचरे को सही स्थान पर डालें और पर्यावरण पर कम प्रभाव पड़े।

23.5.4 सौर ऊर्जा का उपयोग

कुम्भ मेला के दौरान ऊर्जा की बड़ी मात्रा की आवश्यकता होती है, जो मुख्य रूप से जीवाश्म ईंधन से प्राप्त होती है। लेकिन सौर ऊर्जा का उपयोग बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं। कुम्भ मेला के आयोजन में ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग किया जाने लगा है। सौर पैनल्स का प्रयोग करके, मेले में बिजली की आपूर्ति की जाती है, जिससे प्रदूषण में कमी आती है और जलवायु परिवर्तन पर सकारात्मक असर पड़ता है। यह कदम पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यधिक लाभकारी है।

23.5.5 पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता

कुम्भ मेला के आयोजकों और सरकार द्वारा श्रद्धालुओं में पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता फैलाने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इन कार्यक्रमों के माध्यम से श्रद्धालुओं और लोगों को स्वच्छता एवं पर्यावरण के संरक्षण के महत्व के बारे में बताया जाता है, ताकि वे स्वच्छता और पर्यावरणीय जिम्मेदारी को समझें और उसे अपनाएँ साथ ही वे अपने-अपने स्तर पर पर्यावरणीय जिम्मेदारी का पालन कर सकें। पर्यावरण संरक्षण के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ाने के लिए विज्ञापन, पोस्टर और कैम्पेन चलाए जाते हैं।

23.6 कुम्भ मेला और सतत विकास

कुम्भ मेला को एक सतत विकास मॉडल के रूप में देखा जा सकता है। सतत विकास का उद्देश्य पर्यावरण, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन बनाए रखना है। कुम्भ मेला जैसे बड़े आयोजनों को यदि सतत विकास के सिद्धांतों के अनुरूप चलाया जाए, तो पर्यावरणीय दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है। कुम्भ मेला को एक सतत और पर्यावरणीय दृष्टि से जिम्मेदार आयोजन बनाने के लिए विभिन्न स्तरों पर प्रयास किए जा रहे हैं। मेले के आयोजन से होने वाले पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए तकनीकी और प्रबंधकीय उपायों का उपयोग किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, मेले में जल, ऊर्जा और कचरे के प्रबंधन में सुधार लाकर, प्रदूषण को कम किया जा सकता है, और स्थानीय समुदायों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को भी बेहतर बनाया जा सकता है। जलवायु परिवर्तन और पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के लिए इसे एक मॉडल के रूप में देखा जा सकता है, जो अन्य बड़े आयोजनों में भी लागू किया जा सकता है।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. महाकुम्भ का आयोजन कितने वर्षों में होता है ?

2. प्रयाग में किन-किन नदियों का संगम है ?

23.7 सारांश

कुम्भ मेला एक अद्वितीय धार्मिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय घटना है जो भारतीय समाज के विविध पहलुओं को दर्शाता है। कुम्भ मेला भारतीय संस्कृति और धर्म का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि पर्यावरणीय दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। हालांकि, इस विशाल आयोजन के पर्यावरणीय प्रभाव हो सकते हैं, लेकिन सही प्रबंधन और संरक्षण उपायों के माध्यम से इन प्रभावों को कम किया जा सकता है। सरकार, स्थानीय

प्रशासन और नागरिक समाज की संयुक्त पहलें कुम्भ मेला को पर्यावरणीय दृष्टि से अधिक स्थिर और जिम्मेदार बनाने में मदद कर सकती हैं। पर्यावरणीय संरक्षण के उपायों और जागरूकता के जरिए कुम्भ मेला न केवल श्रद्धालुओं के लिए, बल्कि पूरे समाज और प्रकृति के लिए एक सकारात्मक संदेश दे सकता है। कुम्भ मेला का आयोजन अगर सतत विकास के सिद्धांतों पर आधारित हो, तो यह न केवल श्रद्धालुओं के लिए, बल्कि पर्यावरण के लिए भी लाभकारी हो सकता है।

23.8 अभ्यास के प्रश्न

1. कुम्भ का पर्यावरणीय दृष्टि से क्या महत्व है ?
2. प्रदूषण के प्रकार का वर्णन कीजिए।
3. अपशिष्ट प्रबन्धन पर टिप्पणी लिखिए।

23.9 चर्चा के बिन्दु

1. शिक्षार्थी कुम्भ एवं पर्यावरण के बीच सम्बन्धों पर चर्चा करेंगे।
2. शिक्षार्थी कुम्भ के दौरान आने वाली चुनौतियों को समझ सकेंगे।

23.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 12
2. गंगा, यमुना एवं सरस्वती।

23.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. मुखर्जी, राधामुकुन्द प्राचीन भारत।
2. हिन्दू दर्शन : एक समकालीन दृष्टि, डॉ० कर्ण सिंह, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।

इकाई – 24 : आध्यात्मिक पर्यटन और कुम्भ

इकाई की रूपरेखा

- 24.1 प्रस्तावना
- 24.2 उद्देश्य
- 24.3 पर्यटन की परिभाषा
- 24.4 पर्यटन का स्वरूप
 - 24.4.1 पर्यटन के प्रकार
- 24.5 पर्यटन के प्रकार
- 24.6 आध्यात्मिकता
- 24.7 आध्यात्मिक पर्यटन
- 24.8 भारत में आध्यात्मिक पर्यटन
 - 24.8.1 जिज्ञासा ज्ञान की जननी है
- 24.9 सरांश
- 24.10 अभ्यास के प्रश्न
- 24.11 चर्चा के बिन्दु
- 24.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 24.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

24.1 प्रस्तावना

इस इकाई में पर्यटन के साथ साथ आध्यात्मिक पर्यटन को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। आध्यात्मिक पर्यटन को पर्यटन से जोड़कर उसके महत्व को समझाने का प्रयास किया गया है। लीग ऑफ नेशन्स ने 1937 में पर्यटन को परिभाषित करते हुए कहा था कि पर्यटन एक ऐसी सामाजिक गतिविधि है, जिसमें एक व्यक्ति किसी देश में अपने निर्धारित कार्यक्रम के अलावा 24 घंटे या उससे ज्यादा ठहरता है। आध्यात्मिक पर्यटन भी इसी प्रकार का एक पर्यटन है जहां आप स्वयं को समझने और साथ साथ अपनी आध्यात्मिक शक्ति को जागृत करने का प्रयास करते हैं।

24.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे कि—

- आध्यात्मिक पर्यटन को परिभाषित कर सकेंगे।
- आध्यात्मिक पर्यटन की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- आध्यात्मिकता के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- भारतीय सनातन ज्ञान परंपरा को समझ सकेंगे।
- भारत के प्राचीन आध्यात्मिक जीवन एवं आधुनिक जीवन को समझ सकेंगे।
- कुम्भ के महत्व को समझ सकेंगे।

24.3 पर्यटन की परिभाषा

मानव अपने स्वरूप में ही घुमक्कड़ रहा है होमो सेपियंस सबसे अस्तित्व में आए वह पूरी अफ्रीका से पूरी दुनिया में फैलते चले गए। इसलिए मनुष्य स्वभाव होता पर्यटक होता है छोटे बच्चों को भी सबसे ज्यादा पसंद घूमना ही रहता है। इससे शास्त्री ढंग से पर्यटन की संज्ञा दी जाती है। पर्यटन (Tourism) एक ऐसी गतिविधि है, जिसमें लोग अपने निवास स्थान से बाहर किसी अन्य स्थान पर यात्रा करते हैं और वहां की संस्कृति, इतिहास, प्राकृतिक सौंदर्य और अन्य आकर्षणों का अनुभव करते हैं।

24.4 पर्यटन का स्वरूप

ऐतिहासिक परिवर्तनों के साथ-साथ पर्यटन की परिभाषा भी परिवर्तित होती रही है। हुनजिकर (Hunziker) और क्राफ (Krapf) के अनुसार –“पर्यटन प्रवासियों के ठहरने और भ्रमण करने से उत्पन्न होने वाले संबंधों और परिघटना का योग है, शर्त यह है कि यह ठहराव स्थाई न हो और वे किसी प्रकार की कमाई करने न आए हों।” इस परिभाषा में भ्रमण और ठहराव पर जोर दिया गया है पर इसमें दिनभर के भ्रमण, व्यापार-यात्राओं और इनसे जुड़ी गतिविधियों को छोड़ दिया गया है।

लीग ऑफ नेशन्स ने 1937 में पर्यटन को परिभाषित करते हुए कहा था कि पर्यटन एक ऐसी सामाजिक गतिविधि है, जिसमें एक व्यक्ति किसी देश में अपने निर्धारित कार्यक्रम के अलावा 24 घंटे या उससे ज्यादा ठहरता है। पर इस परिभाषा की सीमा यह है कि इसमें घरेलू पर्यटन को छोड़ दिया गया है और केवल अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन पर बल दिया गया है।

1963 में पर्यटन पर हुए रोम सम्मेलन में पर्यटक (टूरिस्ट) के स्थान पर आगंतुक (विजिटर) शब्द के इस्तेमाल का सुझाव दिया गया और पर्यटन को परिभाषित करते हुए कहा गया कि इसे अपने देश या अपने कार्य स्थान को छोड़कर दूसरे देश में आगमन के रूप में देखा जाना चाहिए। इसके पक्ष में निम्नलिखित कारण प्रस्तुत किए गए।

(क) पर्यटन –एक ऐसी गतिविधि है जिसमें एक आगंतुक अपने आराम, व्यापार, परिवार, मिशन या बैठक के लिए कम से कम 24 घंटे ठहरता है।

(ख) सैर-सपाटा –यह एक ऐसी गतिविधि है जिसमें एक आगंतुक 24 घंटे से कम रुकता है पर इसमें यात्रा कर रहे (जो अभी रास्ते में हैं) लोगों को शामिल नहीं किया जाता है। इस परिभाषा में घरेलू पर्यटकों को शामिल नहीं किया गया है पर इसमें दिन में आने वाले आगंतुकों को शामिल किया गया है।

1976 में ब्रिटेन की टूरिज्म सोसाइटी ने भी पर्यटन की अवधारणा को स्पष्ट करने की कोशिश की। उनके अनुसार– पर्यटन एक अस्थाई और लघु अवधि गतिविधि है जिसमें लोग कुछ समय के लिए अपने कार्य-स्थलों, घरों, निवास-स्थानों से बाहर निकलकर दूसरी जगह जाते हैं। वहां रहते हैं और काम करते हैं। इन स्थानों में रुकने के दौरान उनकी गतिविधियां, दिन के आगमन और सैर-सपाटे को भी पर्यटन में शामिल किया जाता है।”

AIDST ने 1981 में इस अवधारणा को सुधार कर प्रस्तुत किया और कहा कि–“घर के माहौल के बाहर होने वाली गतिविधियों को पर्यटन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इन गतिविधियों का चुनाव लोग अपनी रुचि से करेंगे। पर्यटन में घर से बाहर रात्रि ठहराव शामिल हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है।” इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि पर्यटन की सीमा और क्षेत्र में विस्तार हुआ है। अब पर्यटन की अवधारणा में सभी प्रकार के खाली समय व्यतीत करने की गतिविधियों को शामिल किया जाता है। आज हम सामूहिक या जन पर्यटन को इस रूप में परिभाषित कर सकते हैं कि कोई व्यक्ति अपने घर से कुछ अनोखा देखने के लिए निकलता है पर उसे घर जैसा माहौल न मिल पाने के कारण असंतोष होता है। इस परिभाषा से सम्पूर्ण विश्व की पर्यटन की दिशा और झुकाव का पता चलता है जो पश्चिमी समाजों में केंद्रित हैं जहां 60 प्रतिशत अंतर्राष्ट्रीय पर्यटक आते हैं और जहां से 70 प्रतिशत पर्यटक बाहर घूमने निकलते हैं। पर्यटन का नियंत्रण पश्चिम में होने के कारण इसकी अवधारणाएँ भी वहीं से प्रभावित तथा संचालित होती हैं। ये अवधारणाएँ पश्चिमी समाजों से प्रभावित होती हैं और गैर-पश्चिमी

संस्कृतियों और विकासशील समाजों की भ्रमण विरासत का इसमें कोई योग नहीं होता।

पर्यटकों के एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमने या पर्यटन को निम्नलिखित श्रेणियों में बांटा जाता है—

- अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन, जब यात्रा एक देश से दूसरे देश के बीच होती है, और
- घरेलू पर्यटन, जब यात्रा देश के भीतर होती है अर्थात् पर्यटक अपने देश के भीतर यात्राएँ करता है या प्रस्थान और गंतव्य स्थल एक ही देश में स्थित होता है।

24.4.1 पर्यटन के प्रकार

1. आध्यात्मिक पर्यटन : धार्मिक स्थलों की यात्रा करना।
2. प्राकृतिक पर्यटन : प्राकृतिक स्थलों जैसे कि पहाड़, नदियाँ, और वन्य जीवन की यात्रा करना।
3. सांस्कृतिक पर्यटन : स्थानीय संस्कृति और परंपराओं का अनुभव करना।
4. आवासीय पर्यटन : लंबे समय के लिए किसी अन्य स्थान पर रहना।

पर्यटन के लाभ :

1. आर्थिक विकास : पर्यटन स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देता है।
2. सांस्कृतिक आदान-प्रदान : पर्यटन स्थानीय संस्कृति और परंपराओं को बढ़ावा देता है।
3. प्राकृतिक संरक्षण : पर्यटन प्राकृतिक स्थलों के संरक्षण को बढ़ावा देता है।
5. आध्यात्मिक विकास : पर्यटन से जो सर्वाधिक लाभ स्वयं की खोज होती है ,यह एक तरह से व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास में सबसे अधिक योगदान देता है

24.5 आध्यात्मिकता

आध्यात्मिकता (Spirituality) का शाब्दिक अर्थ आत्मा में अवस्थित होना है, यह भौतिक सत्ता के बजाए अभौतिक सत्ता को प्राथमिकता देती है, इसलिए उसका स्वरूप और दृष्टिकोण अभौतिकवादी होता है।

आध्यात्मिकता एक व्यक्तिगत और व्यक्तिपरक अनुभव है, जिसमें व्यक्ति अपने जीवन के अर्थ, उद्देश्य और मूल्यों की खोज करता है। यह एक प्रकार की आत्म-खोज और आत्म-साक्षरता है, जिसमें व्यक्ति अपने जीवन को अधिक अर्थपूर्ण और संतुष्ट बनाने के लिए प्रयास करता है।

आध्यात्मिकता के कुछ मुख्य पहलू हैं—

1. **आत्म-खोज** : आध्यात्मिकता में व्यक्ति अपने जीवन के अर्थ, उद्देश्य और मूल्यों की खोज करता है।
2. **आत्म-साक्षरता** : आध्यात्मिकता में व्यक्ति अपने जीवन को अधिक अर्थपूर्ण और संतुष्ट बनाने के लिए प्रयास करता है।
3. **ध्यान और प्रार्थना** : आध्यात्मिकता में ध्यान और प्रार्थना महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
4. **नैतिकता और मूल्य** : आध्यात्मिकता में नैतिकता और मूल्यों का महत्व होता है।
5. **आध्यात्मिक अनुभव** : आध्यात्मिकता में आध्यात्मिक अनुभवों का महत्व होता है, जैसे कि ध्यान, प्रार्थना और आध्यात्मिक अनुभव।

आध्यात्मिकता अपने स्वरूप में अभौतिकवादी दृष्टिकोण लिए होती है। अभौतिक सत्ता (Non & Physical Entity) एक ऐसी सत्ता या अस्तित्व है जो भौतिक जगत से परे होता है और जिसका अस्तित्व भौतिक शरीर या पदार्थ से स्वतंत्र होता है।

भारतीय सनातन परंपरा में अभौतिक सत्ता के कुछ उदाहरण हैं —

1. **आत्मा**— हिंदू धर्म और अन्य कई धर्मों में आत्मा को एक अभौतिक सत्ता माना जाता है जो शरीर के मरने के बाद भी अस्तित्व में रहती है।
2. **परमात्मा**— हिंदू धर्म और अन्य कई धर्मों में परमात्मा को एक अभौतिक सत्ता माना जाता है जो सृष्टि का स्रोत और नियंत्रक है।
3. **देवता**— हिंदू धर्म और अन्य कई धर्मों में देवताओं को अभौतिक सत्ता माना जाता है जो विभिन्न कार्यों और शक्तियों के लिए जिम्मेदार होते हैं।
4. **आत्मा की अमरता**— कई संस्कृतियों में अमरता को माना जाता है जो मृत्यु के बाद भी अस्तित्व को स्वीकार करता है।

इन्हीं अभौतिक सत्ताओं को प्राथमिकता देने से अभौतिकवादी दृष्टिकोण हमारे व्यक्तित्व का हिस्सा बन जाता है। यह एक ऐसा दृष्टिकोण है जो भौतिक जगत से परे होता है और जो अभौतिक सत्ताओं जैसे कि आत्मा, परमात्मा और देवताओं के अस्तित्व और महत्व पर केंद्रित होता है।

अभौतिकवादी दृष्टिकोण के कुछ मुख्य पहलू हैं –

1. **आध्यात्मिकता** : अभौतिक दृष्टिकोण आध्यात्मिकता पर केंद्रित होता है और आत्मा और परमात्मा के बीच संबंध को समझने का प्रयास करता है।
2. **अभौतिक सत्ताएँ** : अभौतिक दृष्टिकोण अभौतिक सत्ताओं, जैसे कि आत्मा, परमात्मा, और देवताओं के अस्तित्व और महत्व पर केंद्रित होता है।
3. **नैतिकता और मूल्य** : अभौतिक दृष्टिकोण नैतिकता और मूल्यों पर केंद्रित होता है और व्यक्ति को अपने जीवन में नैतिक और मूल्यवान निर्णय लेने के लिए प्रेरित करता है।
4. **आत्म-साक्षरता** : अभौतिक दृष्टिकोण आत्म-साक्षरता पर केंद्रित होता है और व्यक्ति को अपने जीवन के उद्देश्य और अर्थ को समझने के लिए प्रेरित करता है।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण के लाभ –

1. **आध्यात्मिक विकास** : अभौतिक दृष्टिकोण आध्यात्मिक विकास और आत्म-साक्षरता को बढ़ावा देता है।
2. **नैतिक मूल्य** : अभौतिक दृष्टिकोण नैतिक मूल्यों और नैतिकता को बढ़ावा देता है।
3. **आत्म-विश्वास** : अभौतिक दृष्टिकोण आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान को बढ़ावा देता है।
4. **सामाजिक संबंध** : अभौतिक दृष्टिकोण सामाजिक संबंधों और सामुदायिक भावना को बढ़ावा देता है।

इस प्रकार आध्यात्मिकता जीवन को संपूर्णता प्रदान करती है आध्यात्मिकता मानसिक शांति और तनावमुक्ति प्रदान करती है। आध्यात्मिकता आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान बढ़ाती है। आध्यात्मिकता नैतिक मूल्यों और नैतिकता को बढ़ावा देती है। आध्यात्मिकता सामाजिक संबंधों और सामुदायिक भावना को बढ़ावा देती है। आध्यात्मिकता आध्यात्मिक विकास और आत्म-साक्षरता को बढ़ावा देती है।

24.6 आध्यात्मिक पर्यटन

आध्यात्मिक अनुभूति के तरीके प्राचीन काल से ही प्रचलित रहे हैं। कभी कोई पूजा पाठ हो या फिर ध्यान लगाना या फिर प्रकृति में ही अपने को निमग्न कर देना रहा है। इसका स्वरूप मूलतः व्यक्ति केंद्रित रहा है, तथापि समय के साथ जब जिज्ञासाएँ बढ़ी तो लोगों ने धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यात्राएँ करना शुरू किया। इन्हीं यात्राओं ने धीरे-धीरे आध्यात्मिक चेतना का विकास करना आरंभ कर दिया। और पूरी दुनिया में एक नए पर्यटन का स्वरूप आया जिससे धार्मिक सांस्कृतिक पर्यटन कहा जाने लगा। इसी के मूल में आध्यात्मिक पर्यटन निहित होता है जो कि आसपास के विषयों को या फिर पर्यटन स्थलों को अपने आध्यात्मिक विकास से जोड़कर देखता है। इसका उद्देश्य किसी भौतिक लाभ प्राप्त करना नहीं होता है, बल्कि स्वयं में मानसिक शांति नैतिक मूल्यों का विकास और कहीं-कहीं स्वयं की खोज भी बन जाता है।

इस प्रकार आध्यात्मिकता पर्यटन (Spiritual Tourism) एक प्रकार का पर्यटन है जिसमें लोग आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करने और अपने आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध बनाने के लिए विभिन्न स्थलों की यात्रा करते हैं।

आध्यात्मिकता पर्यटन के कुछ मुख्य पहलू हैं –

1. **आध्यात्मिक स्थलों की यात्रा** : लोग आध्यात्मिक स्थलों जैसे कि मंदिर, चर्च, मस्जिद, और अन्य धार्मिक स्थलों की यात्रा करते हैं।
2. **आध्यात्मिक अनुभव** : लोग आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों और गतिविधियों में भाग लेते हैं, जैसे कि ध्यान, प्रार्थना, और आध्यात्मिक व्याख्यान।
3. **सांस्कृतिक अनुभव** : लोग स्थानीय संस्कृति और परंपराओं के बारे में जानने के लिए स्थानीय समुदायों के साथ बातचीत करते हैं और उनकी गतिविधियों में भाग लेते हैं।

आध्यात्मिकता पर्यटन के लाभ :

1. **आध्यात्मिक विकास** : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को अपने आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध बनाने में मदद करता है।
2. **सांस्कृतिक ज्ञान** : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को स्थानीय संस्कृति और परंपराओं के बारे में जानने का अवसर प्रदान करता है।
3. **आत्म-विश्वास** : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान बढ़ाने में मदद करता है।
4. **सामाजिक संबंध** : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को स्थानीय समुदायों के साथ बातचीत करने और उनकी गतिविधियों में भाग लेने का अवसर प्रदान करता है।

24.7 भारत में आध्यात्मिक पर्यटन

आज इस भौतिकवादी समय में अधिकतर लोगों का जीवन अस्त-व्यस्त है। हर क्षेत्र में जहाँ व्यक्ति भौतिक सुख के लिए साधन तो प्राप्त कर लेता है परन्तु उसके साथ ही उसकी सुख-शांति, स्वास्थ्य का अभाव होने लगता है तथा अशांति व कई बीमारियाँ स्वतः ही उपहार स्वरूप प्राप्त होने लगती हैं।

प्राचीन काल से ही भारत समृद्धशाली संस्कृति एवं विशाल विरासत वाला राष्ट्र रहा है। यहाँ विविधता में एकता है। यहाँ के कण-कण में एक आध्यात्मिकता है। प्रत्येक स्थान-स्थान पर महापुरुषों, संत, समाज सुधारकों, शहीदों एवं भगवान के भ्रमण के स्थान मिलते हैं। इसलिए इन स्थानों को आध्यात्मिक पर्यटन के रूप में जाना जाने लगा। दक्षिण भारत कई धार्मिक तीर्थ स्थानों का केन्द्र है। तिरुपति, भगवान वेंकटेश्वर का निवास स्थान है एवं यह सबसे अधिक दर्शनीय धार्मिक केंद्र है। श्रीशैलम, श्री मल्लिकार्जुन का निवास, भारत के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। अमरावती का शिव मंदिर पंचारामों में से एक, तथा यादगिरिगुहा, विष्णु के अवतार श्री लक्ष्मी नरसिंह का निवास स्थान है। वारंगल में रामप्पा मंदिर और हजार स्तंभों का मंदिर, कतिपय बारीक मंदिर नक्काशियों के लिए प्रसिद्ध हैं। अमरावती, नागार्जुन कोंडा, भट्टीप्रोलु, घंटशाला, नेलकोंडपल्ली, धूलिकट्टा, बाविकोंडा, तोटलकोंडा, शालिगुंडेम, पावुरालकोंडा, शंकरम, फणिगिरि और कोलनपाका में कई बौद्ध केंद्र हैं।

हिमालय में बसे चार-धाम, चार सबसे पवित्र और श्रद्धा युक्त मंदिर बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री और यमुनोत्री हैं। अमृतसर में स्वर्ण मंदिर भारत के सबसे सम्मानित गुरुद्वारों में से एक और सिक्खों का सबसे अधिक प्रसिद्ध मंदिर है।

आध्यात्मिक पर्यटन किसी विशेष धर्म से संबंधित ना होकर समस्त धर्मों का समन्वय है। यह एक ऐसा पर्यटन है जहाँ व्यक्ति आत्मशोधन व आत्म परिष्कार के लिए यात्रा करता है। यह स्थान विशेष के वातावरण तथा वहाँ चल रहे क्रियाओं द्वारा परिवर्तित व्यक्तित्व से संबंधित है। आध्यात्मिक पर्यटन संस्थान के महत्व तथा वहाँ चल रहे क्रियाओं के महत्व को दर्शाता है। यह स्थान मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा अथवा चर्च आदि से तथा उनसे संबंधित

क्रियाएँ तथा नदी किनारे पर बैठकर साधना करना या पर्वत यथा गोवर्धन, गिरनार, सतपुड़ा, विंध्याचल आदि की परिक्रमा भी हो सकती है।

तैत्तिरीयोपनिषद् के शिक्षावल्ली के ग्यारहवें अनुवाक अनुसार **“अतिथि देवो भवः”** की उक्ति में आध्यात्मिक पर्यटन का विशाल स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। भारतीय पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये वर्ष 2003 में **“अतिथि देवो भवः”** को अतुल्य भारत के अंतर्गत इस्तेमाल करना प्रारम्भ किया गया ताकि विभिन्न देशों से लोग भारत में पर्यटन करने आएँ। नवीन संदर्भ में आध्यात्मिक पर्यटन स्थल से तात्पर्य ऐसा स्थल, जहाँ व्यक्ति अपनी आंतरिक चेतना के विकास की प्राप्ति करता है न की किसी धर्म या धार्मिक व्यक्ति से संबंधित स्थल की। आध्यात्मिक पर्यटन सार्वभौमिक तत्व है और इसका अनुसरण करने वालों का किसी विशेष धर्म से संबंधित होना जरूरी नहीं। इस दृष्टि से भारत भूमि पर अनेक ऐसे पर्यटन स्थल हैं जहाँ कुछ समय गुजारने पर व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिष्कार होने लगता है, उसमें लोक-कल्याण के भाव तरंगित होने लगते हैं। इस विषय का सबसे बड़ा पर्यटन स्थल हिमालय क्षेत्र माना जा सकता है जहाँ रहकर अनेक संत, महात्माओं, ऋषियों, विदेशी पर्यटकों, साहित्यकारों, पर्वतारोहियों और पर्यटकों आदि ने आध्यात्मिक पर्यटन का लाभ प्राप्त किया है। उन्होंने हिमालय के उस आध्यात्मिक वातावरण से साहस, शौर्य, पराक्रम, विपरित परिस्थितियों में रहने के गुणों को विकसित किया।

24.8 कुम्भ मेले में आध्यात्मिक पर्यटन

भारत आध्यात्मिक पर्यटन की दृष्टि से समृद्ध है, अनेक स्थान भारत ही नहीं दुनिया भर के पर्यटकों को आकर्षित करते हैं जो स्वयं में आध्यात्मिक चेतना महसूस करना चाहते हैं। दुनिया के आठ प्रमुख धर्म में से चार धर्मों की उत्पत्ति यहीं हुई है। शेष धर्म भी यहां पर पूरी तरह से समृद्ध और विकसित हुए हैं। इन्हीं आध्यात्मिक चेतना का प्रतीक कुम्भ मेला माना जाता है।

कुम्भ मेला एक धार्मिक और सांस्कृतिक उत्सव है, जो हर चार वर्ष में चार अलग-अलग स्थानों पर आयोजित होता है। इलाहाबाद (प्रयागराज), हरिद्वार, उज्जैन और नासिक। यह मेला विशेष रूप से हिन्दू धर्म के अनुयायियों के लिए महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इसमें लाखों श्रद्धालु पवित्र नदियों में स्नान करने के लिए आते हैं। कुम्भ मेला एक तरह से धार्मिक पर्यटन का एक बड़ा केंद्र बन जाता है, जिसमें न केवल भारत से बल्कि दुनिया भर से लोग आते हैं।

कुम्भ मेले में पर्यटन के कुछ महत्वपूर्ण पहलू हैं :

- 1. धार्मिक महत्व :** यह मेला हिन्दू धर्म के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि यह माना जाता है कि यहाँ स्नान करने से आत्मा को शुद्धि मिलती है और पापों से मुक्ति मिलती है। इसमें लाखों लोग अपनी आस्था के चलते आते हैं, जो इसे एक बड़ा धार्मिक आकर्षण बनाते हैं।
- 2. सांस्कृतिक अनुभव :** कुम्भ मेला भारत की विविधता और सांस्कृतिक धरोहर का एक अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करता है। मेले में श्रद्धालुओं के अलावा, साधू-संन्यासी, योगी, और भारतीय पारंपरिक नृत्य, संगीत, और कला प्रदर्शन भी देखने को मिलते हैं।
- 3. आकर्षण और यात्रा :** कुम्भ मेला न केवल धार्मिक अनुभव है, बल्कि पर्यटकों के लिए एक सांस्कृतिक आकर्षण भी है। यहाँ पर विभिन्न प्रकार के स्टॉल्स, स्थानीय हस्तशिल्प, खाद्य पदार्थ, और पारंपरिक कपड़े बिकते हैं, जो पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।
- 4. विकसित बुनियादी ढांचा :** मेले के आयोजन के दौरान, इन स्थानों पर बड़े पैमाने पर बुनियादी ढांचे का विकास होता है, जिसमें अस्थायी शहरों का निर्माण, स्वास्थ्य सुविधाएँ, परिवहन व्यवस्था और सुरक्षा के उपाय शामिल होते हैं। यह पर्यटकों के लिए एक सुविधाजनक यात्रा अनुभव प्रदान करता है।
- 5. अंतरराष्ट्रीय पर्यटन :** कुम्भ मेला विश्वभर के धार्मिक और सांस्कृतिक पर्यटकों को आकर्षित करता है। इसके चलते भारत के पर्यटन उद्योग को वैश्विक पहचान मिलती है, और विदेशी पर्यटकों के लिए यह एक अद्वितीय यात्रा अनुभव प्रदान करता है।

कुम्भ मेले में पर्यटन का महत्व इसलिए भी बढ़ता है क्योंकि यह न केवल धार्मिक आस्था और परंपरा से जुड़ा होता है, बल्कि यह भारतीय संस्कृति, इतिहास, और धार्मिक विविधता का भी परिचायक है।

24.8.1 जिज्ञासा ज्ञान की जननी है

जिज्ञासा मानवमात्र को विकास और प्रगति के लिए सम्पूर्ण विश्व में प्रेरित करती रही है। तथापि भारत के मनीषियों ने जिज्ञासा को जिस प्रकार संस्थागत बनाने का प्रयास किया है, वह अन्यत्र नहीं देखा जाता है। उन्होंने जिज्ञासा को व्यक्तिगत स्तर से ऊपर उठाकर सामूहिक या सामाजिक स्तर पर खड़ा किया है। जिज्ञासा के इस सामूहिकरण के रूप में जहाँ एक ओर अनेक भव्य मन्दिरों और दुर्भेद्य दुर्गों का निर्माण हुआ, वहीं अनेक दर्शनों, मतों तथा साधन-पद्धतियों का सृजन किया गया है। यहाँ धर्म, दर्शन और साधना मात्र व्यक्तिगत चिन्तन भक्त के स्तर पर नहीं रहे हैं बल्कि उनका सामूहिकरण या संस्थागत रूप हो गया है। वास्तव में वे संस्था हैं, जिनमें व्यक्ति की अपेक्षा समूह और मेला आदि संस्थाओं को जन्म दिया गया है। अमृत महाकुम्भ पर्व इसी सामूहिक जिज्ञासा का एक ज्वलन्त उदाहरण है। विशेष रूप से यह प्रयाग के त्रिवेणी संगम तट पर प्रति द्वादश वर्ष लगता है और यहाँ एक माह तक हिन्दू धर्म और दर्शन की सभी धाराओं के अनुयायी अपने-अपने मत के अनुसार जीवनयापन करते हुए ब्रह्मलोक के कल्पवास का आनन्द लेते हैं। हिन्दू धर्म और दर्शन की दृष्टियों से देखने पर प्रयाग का महाकुम्भ मेला आध्यात्मिक मंदिर है जिसमें अनेक प्रकोष्ठ, कक्ष, दीर्घा, प्राचीरें और गोपुरम् हैं। लगता है यह मेला विविध धर्मों को प्रस्तुत करने वाला एक जीवन्त श्रृंखलाबद्ध परिदृश्य है।

इस दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि महाकुम्भ मेला का धार्मिक एवं दार्शनिक अनुशीलन करने से हिन्दू धर्म के सभी मत-मतान्तरों का हृदयग्राही परिचय मिल जाता है। विभिन्न साधनाओं को मेले की जीवन-शैली एवं दिनचर्या में देखा जा सकता है। इसे उनके संगीत कार्यक्रम, मंदिर-निर्माण, यज्ञ-भूमि निर्माण आदि में सांस्कृतिक महत्व को परखा जा सकता है। विभिन्न शिविरों में उनके यहाँ विराजमान पुरुषों को देखकर तथा उनके अनुयायियों के स्वाध्याय को देखकर समझा जा सकता है। आध्यात्मिक लक्ष्यों को उनके सत्संग से जाना जा सकता है। उनके दीक्षा समारोह से समझा जा सकता है। इन धर्माचार्यों अथवा साधकों की कितनी श्रेणियाँ हैं, वे कैसे आध्यात्म जगत् में विकास करते हैं इसे उनके साथ रहने वाले अनेक महापुरुषों के सत्संग से जाना जा सकता है। इस प्रकार महाकुम्भ मेला अध्यात्म साधना और धर्म दर्शन का पाठ प्रस्तुत करता है। वह हिन्दू धर्म के उस सिद्धान्त को प्रत्यक्ष बना देता है जिसे विविधता में एकता कहा जाता है। कहना नहीं होगा कि यदि किसी को हिन्दू धर्म को देखना या हिन्दू भावनाओं के आदर्शों को समझना हो तो उसे महाकुम्भ पर्व का दर्शन करना चाहिए और सभी धार्मिक शिविरों को अपने प्रत्यक्ष तथा अनुमान से समझने का प्रयास करना चाहिए।

त्रिवेणी संगम विविधता में एकता का सर्वोच्च उदाहरण है। तीन वेणियों के होते हुए भी संगम एक है। इसका क्या तात्पर्य है? वे कौन तीन वेणियाँ हैं? उनका अर्थ क्या है? उनके संगम का क्या मूल्य है? इन प्रश्नों के उत्तर एक नहीं हैं। भौगोलिक दृष्टि से यह गंगा और यमुना का तथा अन्तः सलिला सरस्वती का संगम है। भूगर्भ विद्या की दृष्टि से यह तीन अन्तः सलिलाओं का संगम है, जिन्हें गंगा, यमुना और सरस्वती कहा जाता है। और जो पृथिवी के नीचे होगी और यमुना के समानान्तर प्रवाहित हो रही है। जब से सरस्वती विनसन स्थान पर लुप्त हुई है, तब से उसका अन्दरूनी प्रवाह यमुना के अन्दरूनी प्रवाह के साथ-ही-साथ नीचे बह रहा है और इन दोनों का संगम प्रयाग में गंगा के साथ होता है। योग की दृष्टि से यह संगम इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाडियों का संगम है, जो प्रत्येक पिण्ड में है। पुनश्च आदि शंकराचार्य ने त्रिवेणी को प्रतीकों के रूप में लिया है। उनको आज भी भारत की जनता मानती है। उनकी व्याख्या के अनुसार त्रिवेणी तीनों लोकों का पर्याय है। तीन पापों को (दैहिक, दैविक, भौतिक, दुःखों को) दूर करने का साधन है। धर्म, अर्थ और काम इस त्रिवर्ग को देनेवाले हैं। वेदत्रयी (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद) का यह प्रतीक है। और भी, सरस्वती रूप में ब्रह्मा, यमुना रूप में सूर्य तथा गंगा रूप में भगवान् शंकर का माधव या विष्णु से जो मिलन है वह त्रिवेणी है।

आध्यात्मिक अनुभव पाने की पराकाष्ठा कुम्भ मेले में देखने को मिलती है। आज भी महाकुम्भ पर्व के किसी भी शिविर में जाने से प्रवचन सुनने को मिलता है कि गंगा भक्ति है, यमुना कर्म है और सरस्वती ज्ञान है। इस प्रकार ये धाराएँ क्रमशः भक्तियोग, कर्मयोग और ज्ञानयोग के प्रतीक के रूप में हैं। उनका संगम इन धाराओं या साधनाओं का लक्ष्य है, जिसे भगवत्प्राप्ति कहा जाता है। इसी आस्था और विचार के कारण त्रिवेणी स्नान को भगवत्प्राप्ति के रूप में माना जाता है। जिसका विश्लेषण युग-युगों से हो रहा है उसी को रस रूप में "रसो वै सः" कहकर व्याख्यायित किया गया है। वही एकरस त्रिवेणी संगम कहा जाता है। उसमें स्नान करने से "रसो वै सः" का अनुभव होता है। अनेक साधकों ने इस अनुभव को प्राप्त करके अपने आध्यात्मिक अनुभव को पराकाष्ठा तक पहुँचाया है, आज भी पहुँचा रहे हैं। जब शिविरों में संगीत कार्यक्रम किया जाता है तो उसका भी लक्ष्य उसी

एकरस में आह्वान करना है, जिसका अवगाहन श्रोतागण त्रिवेणी संगम से स्पर्श द्वारा करते हैं, कर चुके हैं या करने वाले हैं। सप्त संगीत, दर्शन और धर्म इसी एकरस को प्राप्त करने की साधना हैं।

बोध प्रश्न –

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए हुए रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

(ख) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलान कीजिए।

1. लीग आफ नेशनस के अनुसार पर्यटन की परिभाषा बताइए।

.....
.....

2. पर्यटन के लाभों की चर्चा करें।

.....
.....

3. आध्यात्मिक पर्यटन के लाभ बताइए।

.....
.....

4. अतिथि देवो भव से क्या तात्पर्य है।

.....
.....

24.9 सारांश

भारत समृद्धशाली संस्कृति एवं विशाल विरासत वाला राष्ट्र रहा है। यहाँ विविधता में एकता है। यहाँ के कण-कण में एक आध्यात्मिकता है। प्रत्येक स्थान-स्थान पर महापुरुषों, संत, समाज सुधारकों, शहीदों एवं भगवान के भ्रमण के स्थान मिलते हैं। इसलिए इन स्थानों को आध्यात्मिक पर्यटन के रूप में जाना जाने लगा। कुम्भ में विभिन्न शिविरों में उनके यहाँ विराजमान पुरुषों को देखकर तथा उनके अनुयायियों के स्वाध्याय को देखकर समझा जा सकता है। आध्यात्मिक लक्ष्यों को उनके सत्संग से जाना जा सकता है। उनके दीक्षा समारोह से समझा जा सकता है। इन धर्माचार्यों अथवा साधकों की कितनी श्रेणियाँ हैं, वे कैसे आध्यात्म जगत् में विकास करते हैं इसे उनके साथ रहने वाले अनेक महापुरुषों के सत्संग से जाना जा सकता है। कुम्भ मेला का धार्मिक एवं दार्शनिक अनुशीलन करने से हिन्दू धर्म के सभी मत-मतान्तरों का हृदयग्राही परिचय मिल जाता है। विभिन्न साधनाओं को मेले की जीवन-शैली एवं दिनचर्या में देखा जा सकता है।

24.10 अभ्यास के प्रश्न

1. आध्यात्मिक पर्यटन को व्याख्यायित कीजिए।
2. पर्यटन और आध्यात्मिकता पर्यटन के प्रमुख अंतर को समझाइए
3. कुम्भ मेला के आयोजन और उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।

24.11 चर्चा के बिन्दु

1. आध्यात्मिक पर्यटन के विभिन्न क्षेत्रों की चर्चा करें।
 2. कुम्भ मेले में पर्यटन के क्या-क्या स्थान हो सकते हैं।
 3. आध्यात्मिक अनुभव की चर्चा करें।
 4. जिज्ञासा ज्ञान की जननी है चर्चा करें।
-

24.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लीग ऑफ नेशन्स ने 1937 में पर्यटन को परिभाषित करते हुए कहा था कि पर्यटन एक ऐसी सामाजिक गतिविधि, है, जिसमें एक व्यक्ति किसी देश में अपने निर्धारित कार्यक्रम के अलावा 24 घंटे या उससे ज्यादा ठहरता है। पर इस परिभाषा की सीमा यह है कि इसमें घरेलू पर्यटन को छोड़ दिया गया है और केवल अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन पर बल दिया गया है।
 2. पर्यटन से होने वाले लाभ
 1. आर्थिक विकास : पर्यटन स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देता है।
 2. सांस्कृतिक आदान-प्रदान : पर्यटन स्थानीय संस्कृति और परंपराओं को बढ़ावा देता है।
 3. प्राकृतिक संरक्षण : पर्यटन प्राकृतिक स्थलों के संरक्षण को बढ़ावा देता है।
 4. आध्यात्मिक विकास : पर्यटन से जो सर्वाधिक लाभ स्वयं की खोज होती है ,यह एक तरह से व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास में सबसे अधिक योगदान देता है।
 3. आध्यात्मिक पर्यटन के लाभ :
 1. आध्यात्मिक विकास : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को अपने आध्यात्मिक जीवन को समृद्ध बनाने में मदद करता है।
 2. सांस्कृतिक ज्ञान : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को स्थानीय संस्कृति और परंपराओं के बारे में जानने का अवसर प्रदान करता है।
 3. आत्म-विश्वास : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान बढ़ाने में मदद करता है।
 4. सामाजिक संबंध : आध्यात्मिकता पर्यटन लोगों को स्थानीय समुदायों के साथ बातचीत करने और उनकी गतिविधियों में भाग लेने का अवसर प्रदान करता है।
 4. तैत्तिरीयोपनिषद् के शिक्षावल्ली के ग्यारहवें अनुवाक अनुसार **“अतिथि देवो भवः”** की उक्ति में आध्यात्मिक पर्यटन का विशाल स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। भारतीय पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये वर्ष 2003 में **“अतिथि देवो भवः”** को अतुल्य भारत के अंतर्गत इस्तेमाल करना प्रारम्भ किया गया ताकि विभिन्न देशों से लोग भारत में पर्यटन करने आएँ।
-

24.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3. भारतीय संस्कृति, नरेन्द्र मोहन, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. प्रयाग कुम्भ विश्व की सांस्कृतिक विरासत, प्रदीप कुमार केसरवानी, संरचना प्रकाशन, प्रयागराज।

नोट

नोट

नोट

નોટ

નોટ